सर्वदेव प्रतिष्ठा प्रकाश

ॐ

सर्वदेव-प्रतिष्ठा प्रकाशः

लेखक-सम्पादक

कृष्णानन्द शास्त्री

(कर्मकाण्ड प्रदीप, दुर्गार्चन सृति, वेदोक्त पुराणोक्त नित्यकर्म पद्धति एवं देव पूजा पद्धति सहित आदि पुस्तकों के लेखक)

प्रकाशक

भारतीय संस्कृत भवन

माई हीरां गेट, जालन्धर शहर-144008

समर्पणम्

योगियों के हृदय में
निवास करने वाले
महर्षि वाल्मीकि के आराध्य
कोटि-कोटि भारत के जनमानस के पूज्य
भक्तराज हनुमान के हृदय में निवास
करने वाले
सन्त तुलसी दास के इष्ट
मर्यादा पुरुषोत्तम
भगवान् श्री राम जी
के चरणों में
भक्ति और श्रद्धा के साथ

कृष्णानन्द शास्त्री

"श्रीशोऽवतु"

प्रस्तावना

सुविदितमेवैतद्धार्मिक सकल सद्विद्या विशारदानां कर्मठमहानुभावानां, यत्किल परम कारुणिक श्री परमात्मा सकल सृष्टि जीवानामुपकारार्थं ब्रह्मणो मुखारविन्दात्पुरुषार्थ चतुष्टय साधनोपयोगि कर्मानुष्ठानोद्वोधकांश्चतुरो वेदानाविर्भावयामासेति। ते च कर्मकाण्डोपासना—काण्ड, ज्ञान—काण्डात्मकाः।

ज्ञातमेव तत्रभवतां भवतां यदस्मिन् खलु संसारे ऐहिक पारलौकिक सुखसाधनभूतं कर्मकाण्डमेववेदमूलतयाऽस्मिन् भारतीयानां शिरोरत्नतामारोहति। तत्र कलि प्रभावेण यवन राज्य समये भारतीयानां बहवो धर्मग्रन्थाः विनष्टाः। ये चोपलभ्यन्ते तेऽपि प्रायो दाक्षिणात्यानां मैथिलानां चेति। वहवः कर्मकाण्ड ग्रन्थाः प्रामाणिकाः सन्ति, परञ्च तेषाम्मध्ये प्रचलितानि सर्वाणि कार्याणि न प्रतिपादितानि। अतस्तैः ग्रन्थैः च सर्वाणि प्रचलित कर्माणि कारयितुं न शक्नुवन्तीतिसाधारणजनेभ्यः प्रच्छन्नं निगूढतत्त्वमेव परिपालयन्ति।

उपासनायाञ्च येषां यद्देवनिष्ठा भवन्ति तेषां तेमोपलब्ध्यर्थं तद्देवता प्रतिमावश्यकत्वम्। प्रतिमायाश्च यथाशास्त्रं प्रतिष्ठामन्तरा न भक्त मनोरथ साधन शक्ति सम्पन्नत्वमिति तद्बोधक ग्रन्थस्याप्यावश्यकत्वम्। सर्वेषां कर्मणां विधिरनायासेन कर्मकाण्डिनामपि सम्यग् ज्ञातो न भवति। देवानां प्रतिष्ठादि कारयितुं बहवः ग्रन्थाः बहुभिराचार्य्य वर्यैः निबद्धाः। परञ्चैतदर्थ मार्ग प्रदर्शकत्वेन यादृशो सरला पद्धति रपेक्ष्यते तादृशी न काऽपि समुपलभ्यते। अतश्च सर्वेषामेवोपकाराय सर्वदेवानां प्रतिष्ठाकर्मणां "सर्व देव प्रतिष्ठा प्रकाश" दर्पणभूतोऽयं संग्रहःकर्म काण्डनिष्णात विद्वद्वर्य जालन्धर वास्तव्य पण्डित कृष्णानन्द शास्त्रिणा निबद्धः। अत्र च सर्वे विषयाः सम्पूर्ण मन्त्रादि निर्देश पूर्वक गणपत्यादि पूर्वाङ्गपूजन-कुण्डमण्डप रचना वेदसूक्तादि पाठ, जलाधिवासन ध्वजारोहण प्रासादोत्सर्ग मूर्तिस्थापानादि सांगोपांगविधि सहिताः निबद्धाः। अस्य चोपयोगिता ग्रन्थाबलोकनेन भविष्यतीति-एतत् कृते शास्त्रिणम्प्रति कोटिशो धन्यवादः प्रदीयन्ते मया येन खलु महाभागेन महता परिश्रमेण ग्रन्थोऽयं प्रकाशितः। भवतां पुरतोऽस्यद्वितीय संस्करणञ्च विराजते।

किम्बहुना ग्रन्थोऽयं सज्जनानां निर्मत्सराणां द्विजाति बटूनां कृते भृशमुपकारकं पाण्डित्यप्रदं पुण्यलाभञ्च प्रदास्यति इति मे दृढविश्वासः।

भास्कर ज्यौतिष सदन

सपाटू (सोलन)

(हि० प्र०)

विदुषामनुचरः

श्रीधराचार्य

ज्योतिषाचार्य

पुराण कर्मकाण्ड आचार्य

विषय सूची

प्रथम दिन का कृत्य समाप्त

द्वितीय दिन कृत्यम्

तृतीय दिन कृत्यम्

प्रतिष्ठाकर्म समाप्त

भूमिका

हिन्दू परम्परा में मन्दिरों को भगवान् की देह और उसके घर के रूप में समझा जाता है। प्राचीन काल से मन्दिरों की दीवारों पर चित्रकारी, मीनाकारी, पशु-पक्षियों, वनस्पतियों और देवी-देवताओं के मिथकीय कथाओं के चित्र भी अंकित होते रहे। जिनके माध्यम से प्रकृति का आन्तरिक चित्रण रहता था।

मन्दिर की छत पर यान्त्रिक विधिविधानों से भद्रमण्डल आदि चित्रित रहते थे। कथा-कीर्तन के लिए बनाए गये आंगनों को भी सजाया जाता था। मन्दिर के गर्भ गृह का स्थान मन्दिर के प्रांगण की अपेक्षा उत्तरोत्तर ऊंचा होता जाता था। जिसमें अध्यात्म रक्षक मन्दिर का देवता निवास करता था। (गर्भ गृह) व्यक्ति के आध्यात्मिक पद के उच्च शिखर पर पहुंचने की खोज का प्रतिनिधित्व करता था। मन्दिर के प्रांगण व मन्दिर भवन-सभी पवित्र आकार के यन्त्रों की मण्डल की योजना पर आधारित होते थे।

ये वास्तु-यन्त्र के नक्शे के रूप में न होकर उन सिद्धान्तों के योजना-रूप होते थे जिन पर मन्दिर की पवित्र सीमाओं का निर्माण होता था।

वास्तु पुरुष मण्डल—अधिकतर पुरातन शिल्पी बताते हैं कि हिन्दू मन्दिर में यन्त्र के आकार की आकृति अवश्य होनी चाहिए, जिसे वास्तुपुरुष मण्डल कहा जाता है, प्राचीन नगर भी इन्हीं यन्त्रों पर आश्रित होकर निर्मित होते रहे। ये यन्त्र वास्तव में ब्रह्माण्ड का अंकन होते हैं, जो परम-पुरुष को मण्डल में एक शरीरी के रूप में अंकित करते हैं। वास्तु का अर्थ है शारीरिक रूप से विद्यमान स्थान (पुरुष) सृष्टि रचयिता। (मण्डल) बहुकोणीय या बहुभुजी बन्द आकृति। वास्तु पुरुष-मण्डल के नक्शे की अपेक्षा उसके आकार से सम्बन्धित है। मण्डल या यन्त्र एक मानसिक तथा काल्पनिक रचना हैं। जबकि मन्दिर पदार्थों से बनता है। उसी मानसिक कल्पना को साकार रूप देने का एक प्रयत्न है।

यद्यपि वास्तु पुरुष मण्डल कई वर्गों का एक वर्ग होता है, तथापि उसे अन्य आकारों में भी ढाला जा सकता है। साधारण वास्तु पुरुष-मण्डल ८ × ८ = ६४ वर्गों से या ९ × ९ = ८१ वर्गों से बना है। जिसका बीच का भाग चार वर्गों या नौ वर्गों में मन्दिर के देवता के लिए नियत रहता है, जिसे गर्भ गृह कहा जाता है।

इसके अतिरिक्त अधिक जटिल १०२४ वर्ग का मण्डल भी बनाया जा सकता है, इसके आन्तरिक भाग में गर्भ गृह बनाया जाता है। मध्य में १२ वर्ग देवताओं की पीठिका के लिये निर्धारित रहते हैं, जिसकी आठों दिशाओं में विशेष अन्तराल का प्रावधान है, जिससे देवता-शरीर के ३२ (बत्तीस) शकुन जुड़े हुए हैं, २८ चन्द्रमा से सम्बन्धित (नक्षत्र रूप मे) चार अयनान्त (विषुवतास्त्र) के अधिपति से सम्बन्धित। इस प्रकार यह साधारण

वास्तुचक्र (ग्राफ) दिशाओं की आकृति की शक्ति ही नहीं दर्शाता अपितु ज्योतिष-शास्त्रीय महत्त्व भी प्रदर्शित करता है, यह दिन, मास, वर्ष का कालचक्र प्रस्तुत करता है ।
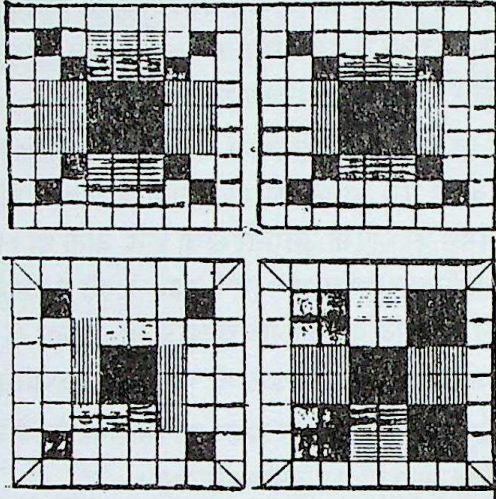
देवप्रतिष्ठा में हम वास्तु मण्डल की स्थापना करते हैं, उसका पूजन करते हैं वहां प्रतिमा की स्थापना भी करते हैं, यह कार्य वास्तु मण्डल के महत्त्व को व्यक्त करता है । इसी प्रकार जब हम न्यासविधि करते हैं, वहां कालचक्र के सभी तत्त्वों के न्यास का विधान है । जो हमारी प्राचीन विधि का द्योतक है । यद्यपि वह वास्तु मण्डल या यन्त्र उच्चस्तरीय गाणतिक और प्रतीकात्मक आकृति का है, तथापि यह मण्डल देवता की पीठिका को बताने में सहायता करता है ।

वास्तव में मन्दिर निर्माण के समय ही वास्तु पुरुष का मण्डल निर्मित होना चाहिये ताकि उसके अनुसार पीठिका (गर्भ गृह) का ज्ञान हो सके । जिससे वास्तु मण्डल में स्थित (परम)—पुरुष अपनी शक्ति प्रदान कर वास्तु मण्डल को वास्तु पुरुष (मन्दिर भवन) में परिवर्तित कर सके । जिससे मन्दिर के कण-कण में उसकी शक्ति व्याप्त हो सके ।

शक्ति और योगिनी यन्त्र—तन्त्र-शास्त्र में शक्ति की पूजा में, मन्दिर-निर्माण में यन्त्र का विशेष महत्त्व है । यन्त्र केवल वास्तु योजना की प्रेरणा ही नहीं होते अपितु ये भवन के परिधान में संश्लिष्ट होते हैं । यन्त्र बना कर गर्भ गृह और मन्दिर के महत्त्वपूर्ण स्थलों की नींव में रखे जाते हैं । यन्त्र मन्दिर की भीतरी और बाहरी दीवारों पर अंकित मूर्तियों के विषय में भी प्रभावशाली भूमिका निभाते हैं । पहले समय में प्राचीन मन्दिरों में यन्त्र के रूप में विश्व की धुरी के रूप में एक कीली धरती में गाड़ दी जाती थी, इसे यन्त्र-गर्भ कहा जाता था, उस कील के चारों ओर दस चिह्न अंकित किये जाते थे आठ आठों दिशाओं के, एक अधोविन्दु तथा एक शिरोचिह्न (ख मध्य) अंकित किये जाते थे,

जिनमें प्रत्येक का विशिष्ट अलौकिक महत्त्व होता था। ये दस बिन्दु मन्दिर की रूप-रेखा तैयार करते थे। निर्माण अन्तर से बाह्योन्मुख होता जाता। जो कि यन्त्र की पूजा और ध्यान के समानान्तर होता, कीलक बिन्दु समान शक्ति पीठ में (मन्दिर में) जिस योगिनी यन्त्र के लेखन का विधान है वह भी मन्दिर निर्माण की योजना में कोई संकेत नहीं करता। अपितु देवी मन्दिर के निर्माण में देवी की शक्ति के उच्च स्थान का संकेत अवश्य देता था।
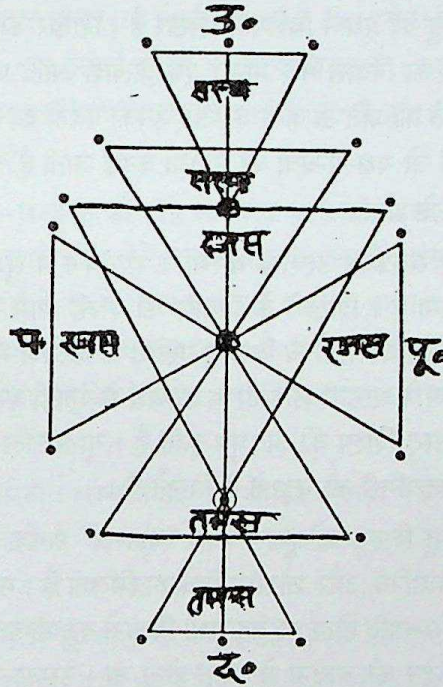
योगिनी यन्त्र पहले गर्भ गृह की नींव पर लिखा जाता है, फिर उसकी पूजा की जाती है, इन प्राथमिक अनुष्ठानों के बाद उसे नींव में अत्यन्त पवित्रता से स्थापित कर दिया जाता है। सृष्टि के विभिन्न तत्त्वों को समाहित करता हुआ योगिनी यन्त्र का प्रतीकात्मक अर्थ भी वास्तु पुरुष मण्डल की तरह जटिल है। उत्तर से दक्षिण की रेखा पर बने तीन बिन्दु सत्व, रजस्, तमस् के प्रतीक हैं। रजस् के तीन त्रिभुज विश्व सृजन में कार्यरत गतिशीलता के प्रतीक हैं। सत्त्व के दो त्रिभुज अवरोही क्रम के द्योतक हैं। रजस् के त्रिभुज तमस् और सत्व की विरोधी शक्तियों को संतुलित करते हुए प्रतीत होते हैं।

ये सात त्रिभुज जगज्जननी देवी के उपाधिभूत हैं।

योगिनी यन्त्र की त्रिभुजों के बाहरी बिन्दुओं पर चौंसठ योगिनी विद्यमान हैं। ये चौंसठ योगिनी दिन-रात की प्रतीक हैं। दिन-रात में तीस मुहूर्त होते हैं, १५ दिन में, १५ रात में। एक-एक मुहूर्त की दो योगिनी स्वामी हैं, इसके अतिरिक्त सूर्योदय व सूर्यास्त की सन्धियों की गणना भी होती हैं, अतः ये ६४ (चौंसठ) योगिनी दिन-रात की रक्षक देवी हैं।

मन्दिर-वास्तु

मन्दिर वास्तु की प्रधान विशेषता शिखर है। शिखर की रूप-रेखा पर्वतों से ली गई है। देवताओं का निवास मेरु. मन्दिर एवं कैलाश आदि पर्वतों पर था। इसीलिये मन्दिरों में देवताओं की प्रतिष्ठा करने के लिए उनको पर्वतों का रूप दिया गया। मन्दिरों के बाहरी भागों में जो यक्ष-गन्धर्वों की मूर्तियां बनाई जाती हैं, वे पर्वतों पर क्रीड़ा करने वाले यक्ष-गन्धर्वों के द्योतक हैं।

शिखरों का सर्वप्रथम उल्लेख वाल्मीकि रामायण में सुग्रीव के गुहा-प्रासादों के वर्णन में किया गया है। शिखरों के निर्माण की शैली आगे चलकर गुहा-मन्दिरों में मिलती है। इस शैली का सर्वोच्च विकास एलोरा के कैलाश मन्दिर में हुआ। जिसको राष्ट्र कूट राजा कृष्ण ने आठवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में पहाड़ी पर बनवाया था। यह गुहा मन्दिर भारतीय वास्तु शिल्प की अद्‌भुत कृति है। गुप्त काल के बने हुए गुहा-मन्दिर भोपाल राज्य में उदयगिरी की चट्टानों में मिलते हैं।

प्राचीन वास्तु शिल्प का पूरा परिचय "मानसर" नामक ग्रन्थ से प्राप्त होता है। इसमें शिल्प का वैज्ञानिक और शास्त्रीय विवेचन मिलता है। मानसर के अनुसार वास्तु शिल्प का आचार्य स्थपति होता था, वह सभी विज्ञानों का पण्डित, सावधान, आचार्यवान, उदार, सरल, ईर्षा द्वेष की भावना से रहित होता था। उसका प्रथम सहायक सूत्रग्राही गणितज्ञ होता था, जो स्थान का माप करता था। इसीलिए प्रासाद प्रतिष्ठा में स्थपित नामक देव के निमित्त कलश स्थापन, आहुति आदि भी दी जाती हैं।

मन्दिर वास्तु—मन्दिर मुख्यतया धार्मिक वास्तु है, जिसे हम भारतीय वास्तु की एकमात्र विभूति कहें तो भी अत्युक्ति नहीं होगी। इसका विकास भारत के किसी विशेष सम्प्रदाय से नहीं वरन् मनुष्य की आकृति पूजा की भावना से हुआ। मनुष्य ने ईश्वर, देवता अथवा महापुरुष की उपासना के लिये जो मूर्ति अथवा प्रतीक बनाये, उन्हें क्रम के अनुसार पवित्र भवनों में स्थापित किया। ये भवन विभिन्न रूपों और आकारों में विकसित हुए। नाना-रूपों में इनके विकसित होने के कारण हैं, सामग्री का उपयोग एवं धार्मिक भावना, कृत्य और विश्वास। इनके विकास का जो भी कारण रहा हो, यह निर्विवाद है

कि भारत के सभी मतों एवं धर्मावलम्वियों ने इन्हें अपनाया। समय-समय पर अनेक राजाओं द्वारा भिन्न-भिन्न शैलियों, भिन्न-भिन्न आकारों, भिन्न-भिन्न शिल्पों में भारत के **सभी** प्रान्तों में मन्दिरों का निर्माण हुआ, आज भी दक्षिण भारत के मन्दिरों की शिल्प कलाओं को देखते हुए आश्चर्य होता है। भारत में आक्रमणकारी मुसलमानों ने हज़ारों मन्दिरों को तोड़ा, नष्ट किया, विद्रूपित किया, जिससे भारत की पुरातन शिल्पकला को आघात पहुंचा।

आज भी जगह-जगह मन्दिरों का निर्माण हो रहा हैं, जहां इसकी प्रतिष्ठा को अक्षुण्ण बनाये रखने की बात है, वहां इसकी सुरक्षा भी अत्यावश्यक है। कालान्तर में भारत में रहने वाले बाबर जैसे आततायियों की सन्तानें इन मन्दिरों को हाथ न लगा सकें। ऐसी सुरक्षा होना आवश्यक है।

धार्मिक महत्त्व—संस्कृति की दृष्टि से भारत का अतीत इतना गौरव पूर्ण रहा है कि उससे आज भी हमें प्रगतिशील होने का प्रोत्साहन मिलता है। संस्कृति के अभ्युत्थान के लिए देश को भारतीयता के रंग में रंगना अभीष्ट है। प्राचीन भारत के स्वतन्त्र निवासियों ने जो योजनायें सामाजिक संगठन एवं अभ्युदय के लिये बनाई थीं और उस दिशा में जो अनुभव किये थे, उनका समुचित उपयोग आधुनिक भारत के राजनैतिक दलों ने राष्ट्र के निर्माण में बिल्कुल नहीं किया।

प्राचीनकाल में भारतीय संस्कृति का यश समस्त एशिया में ही नहीं, अपितु यूरोप और अफ्रीका के कई देशों में भी पहुंचा था। आध्यात्मिक एवं आधिभौतिक क्षेत्र में भारत एशिया के समस्त देशों का नेता था।

सहस्त्रों वर्षों पहले से ही भारत के यूनान और मिस्त्र आदि देशों से राजनीतिक तथा व्यापारिक सम्बन्ध रहे थे। मगर भारत पर भिन्न-भिन्न समयों में होने वाले आक्रमणों के कारण, मुसलमान आतताइयों के आक्रमणों एवं उनके शासक बन जाने के कारण भारत को अन्धकार के युग में जाना पड़ा। इस भारत की प्राचीन संस्कृति को नष्ट करने में इन आतताइयों ने पूरा प्रयास किया। भारत के स्वतन्त्र हो जाने के पश्चात् भी छद्म धर्म निरपेक्ष राजनीति ने भारतीय संस्कृति का गला घोटे रखा, जिससे भारत का मूल निवासी 'हिन्दू' अपने संस्कारों, अपनी संस्कृति एवं अपनी ही प्रतिष्ठा को भूल बैठा, जिससे हिन्दू संस्कृति इन छद्म धर्म निरपेक्षवादियों के कारण धूमिल होती गई।

भक्ति—मन्दिर हमारी आस्था तथा श्रद्धा के केन्द्र हैं। बिना भक्ति के श्रद्धा नहीं हो सकती। भक्ति-भगवान् के प्रति परा अनुरक्ति है। भगवत्प्रेम की भावना अत्यन्त प्राचीन काल से मानव-मन को आप्लावित करती रही है। जिस दिन मानव-मन ने इस

संसार की नियामक शक्तियों से भय करने के स्थान पर प्रेम करना सीखा, उसी दिन उसमें भक्ति-भाव का बीजारोपण हुआ, जो कालान्तर में फूलता-फलता गया। वैदिक ऋषि ने उदार घोषणा की "एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति।" सत्ता तो एक ही है किन्तु विद्वान् इसे अग्नि, वरुण, यम, इन्द्र, मातरिश्वा आदि अनेकानेक नामों से उसकी क्षमताओं के कारण पुकारते रहे। वैदिक ऋषियों ने उस सत्ता को ईश, परिभू, स्वयंभू आदि कह कर पुकारा और अपना प्रेममय सम्बन्ध जोड़ा, भक्ति के मूल में श्रद्धा और प्रेम का युगपत् अस्तित्व है। उस परम तत्त्व को सत्-चित्-आनन्द स्वरूप मान कर कर्म को सत् से, ज्ञान को-चित् से और भक्ति को आनन्द से जोड़ना भी सहज सम्भव हुआ। तभी वैदिक काल का पुरुष उस शक्ति से प्रार्थना कर उठा—"ॐ असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्मा अमृतं गमय।" उसने अज्ञान रूपी अन्धकार से अपने को निकाल कर सत्य एवं प्रकाश की ओर जाने का मार्ग ढूंढा। जिससे मृत्यु की सोच को दूर कर अमृत की ओर जाने का सोचा।

कालान्तर में भक्ति-साधकों ने अपनी-अपनी रुचि और प्रीति के अनुरूप अपने-अपने इष्टदेव चुने। इन इष्टदेवों की बहुलता की ओट में जो सत्य प्रायः अन-देखा रह जाता है। वह नाम, रूप, लीला, धाम की विविधता के बावजूद सभी इष्ट देवों में तात्त्विक रूप की एकता में अन्तर्निहित रहता है। सभी सच्चिदानन्द स्वरूप एवं सृष्टि, स्थिति एवं संहार के हेतु माने जाते हैं। इसीलिये भारतीय भक्ति-साधना सभी देवी-देवताओं के प्रति समादर रखते हुए अपने इष्ट देव के प्रति अनन्यता का भाव पोषित करती है और समन्वय का पथ प्रशस्त करती है।

यही भक्ति भावना, समन्वय की भावना हमें तीर्थयात्रा के लिये प्रेरित करती है, हमारी श्रद्धा हमें आगे बढ़ने की प्रेरणा देती।

भक्ति की महिमा अनन्त है। भक्ति को इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता कि उसे करने वाला ब्राह्मण है या चाण्डाल, मुसलमान है या ईसाई, विदेशी है या स्वदेशी। प्रत्येक मानस भक्ति से ओत-प्रोत हो सकता है।

आत्मनिवेदन—भगवान् को अपना सब कुछ अर्पित कर देना ही आत्मनिवेदन है। आत्मनिवेदन के द्वारा अपने साथ एक हो जाने की प्रक्रिया का संकेत स्वयं प्रभु ने श्रीमद् भागवत् के ग्यारहवें स्कन्ध के २८वें अध्याय के ४४वें श्लोक में कहा है—निवेदितात्मा होकर जब कोई मनुष्य अपने सब कर्मों का त्याग कर देता है—अर्थात् शरीर, मन, बुद्धि आदि से होने वाले कर्मों के कर्त्तव्य, भोक्तृत्व का त्याग कर देता है, तब मैं उसका विशेष कल्याण करना चाहता हूं। तब वह अमृतत्व की उपलब्धि करता हुआ मेरे साथ एक होकर मेरे स्वरूप को प्राप्त हो जाता है।

आत्मनिवेदन की इस उच्च भूमिका पर पहुंचते-पहुंचते साधन-भक्ति कब पराभक्ति बन जाती है पता ही नहीं चलता । इसके साथ ही नवधा भक्ति, पराभक्ति या रागात्मिका भक्ति पाने के लिये ही नहीं, अपितु अवस्था विशेष में स्वयं प्रभु को भी पाने के साधन-स्वरूप है ।

उस आनन्द स्वरूप प्रभु की प्राप्ति में प्रतिबन्धक के रूप में जो हमारे दुरित हैं, पाप हैं, उनकी निवृत्ति एवं अन्तःकरण की शुद्धि कर स्वयं सान्द्र होकर पराभक्ति में परिणत हो जाना ही साधन-भक्ति का कार्य हैं । साधन-भक्ति के अन्तर्गत प्रमुख है नवधा-भक्ति । श्रवण-कीर्तन, पादसेवन आदि के द्वारा मन को एकाग्र कर प्रभु में मनोनिवेश हो जाये यही जीवन की सार्थकता है । भगवत् कृपा पर दृढ़ विश्वास और अपने साधन का सानुराग एवं सतत अभ्यास ही वह पारस है जो हमारे अभावग्रस्त दुःखमय जीवन को सच्चिदानन्द बना सकता है ।

उस परात्मशक्ति के दर्शनों की कामना ने ही प्रासादों के निर्माण में योगदान किया, जहां देव प्रतिमाओं को स्थापित किया गया । सगुण-साकार भक्ति को वैष्णवों, शैवों और शाक्तिकों ने इसको समर्थन दिया, महत्त्व दिया और दृढ़ता से घोषणा की कि परमात्मा की प्राप्ति में भक्ति का अत्यधिक महत्त्व है और भक्ति के लिये प्रतिमा का साक्षात्कार एक महत्त्वपूर्ण है । इसीलिए देवालयों की स्थापना समय-समय पर होती रही है ।

देवप्रतिष्ठा—उन देवालयों, प्रतिमाओं की स्थापना के लिए प्रतिष्ठा की आवश्यकता है, जिसके लिए मयूख-ग्रन्थों की रचना की गई, ताकि प्रतिष्ठा का विधि-विधान ज्ञात हो सके। अनेक पुराणों में भी इस विषय में अनेक स्थलों पर प्रासाद-प्रतिष्ठा के विषय में संकेत दिये गये । तदनुसार प्रतिष्ठा के विधानों को पुस्तक रूप मिल सका ।

हमारे सामने अनेक प्रतिष्ठा पद्धतियां पुस्तकाकार में उपलब्ध हैं । मगर विषय को सरल एवं क्रम में नहीं रखा गया, जिससे करवाने वाला व्यक्ति सुगमता से कार्य को सम्पन्न कर सके । इसी दृष्टि से "सर्व देव प्रतिष्ठा प्रकाश" नाम से इस पुस्तक को प्रकाशित करने की भावना प्रबल हुई ।

इस पुस्तक में मण्डपरचना, कुण्ड निर्माण आदि की विधि सरल हिन्दी में दी गई है, ताकि साधारण व्यक्ति भी इससे लाभ उठा सके । प्रतिदिन कितना कार्य करना चाहिए । इस दृष्टि से इस पुस्तक में सरलता से दे दिया गया है । सभी विधि-विधान पूर्ण रूप में विस्तार से दिये गये हैं । मन्त्रों का संकेत न देकर पूरे मन्त्र दिये गये हैं । कार्य को आरम्भ करते हुए क्रमशः सभी पूजा विधान आदि दिये गये हैं, बीच में ऐसी स्थिति न बने जिससे

व्यवधान हो जाए, इसका पूरा ध्यान रखा गया है । व्यक्ति को कार्य करते हुए कहीं रुकना नहीं पड़ेगा ।

मूर्ति-प्रतिष्ठा एक महत्त्वपूर्ण कार्य है, जिसमें पत्थर-काष्ठ आदि की निर्मित मूर्तियों में प्राणसंचार कर जीवित-सप्राण बनाया जाता है । इन सप्राण प्रतिमाओं के पूजन से व्यक्ति अपनी मनोकामनाएं पूर्ण करता है । उसकी प्रार्थना से ओत-प्रोत होकर साफल्यता प्राप्त करता है, इसलिए मूर्ति की प्रतिष्ठा पूरे विधि-विधान के साथ होनी चाहिए । इसकें लिए यजमान एवं आचार्य दोनों सहभागी हैं । पूर्ण विधि से करने पर पुण्य की प्राप्ति होगी, अधूरा कार्य करने से पाप का भागी बनना पड़ेगा ।

यह कार्य वैज्ञानिक एवं टेढ़ा है, कष्ट साध्य है, अनभिज्ञ व्यक्ति के वश की बात नहीं । विद्वान् सुयोग्य व्यक्ति ही इस कार्य को करे, तभी उपयुक्त है ।

मेरा परिश्रम कष्टसाध्य था, इतने लम्बे विधान को एक-सूत्र में बान्धने का था तथा इसमें सरलता आए, ऐसा प्रयत्न भी था । पूर्ववर्ती विद्वानों ने इन विषयों में जो कार्य किया, उनके प्रति मेरी कृतज्ञ भावना है, जिससे मुझे मार्ग दर्शन मिला । जिनकी सहायता से मैं इस कार्य को सम्पन्न कर सका ।

यह लेखन-कार्य कहां तक सफल हुआ ये विद्वान लोग ही जान सकेंगे । अज्ञ लोगों की धारणा क्या है, इसका मेरे लिये कोई महत्त्व नहीं है ।

विद्वद्वर्ग के लिए मेरी श्रद्धा है; उनके प्रति मैं सदैव नतमस्तक रहा हूं ।

परमपिता परमात्मा मेरे परिश्रम को सफल करें—

इसी भावना के साथ—

कृष्णानन्द शास्त्री

वैसाख शुक्ल तृतीया

सम्वत् २०५०

अथ कुण्डमण्डपार्थं भूमिपूजनम्

ततो यजमानः प्रतिष्ठा यागे आचार्यादि ऋत्विग् वरणं कुर्यात्। परीक्षापूर्वकमण्डपार्थं यागोचित भूमिपरिग्रहं कृत्वा दहन-खननादि-अपसारणादि शोधितां शल्यादिनिरसनपूर्वकं शुद्धादि निरसनपूर्वकं शुद्धाभिः मृद्भिरापूरितां दृढ़ां भूमिं समां मुकुरजठरवत् कृत्वा तस्यां मण्डपकुण्डादिकं विदध्यात्। तत्र पूर्वं समीपे गन्धादिकं पूजासम्भारोपकल्पनम्।

आग्नेयस्तम्भावटे स्वस्ति वाचनं सर्व देवानां पूजनं च कृत्वा आचम्य प्राणानायम्य आत्मानं पूजासामग्रीं च प्रोक्ष्य हस्ते अक्षत-पुष्पाणि च गृहीत्वा मंगलमन्त्रान् पठित्वा गणपति पूजनं च कृत्वा भूमि-पूजनं च कुर्यात्।

ध्यानम्—चतुर्भुजां शुक्लवर्णां कूर्म पृष्ठोपरि स्थिताम्। पद्मशंख-चक्र-शूल-धरां देवीं नमाम्यहम्॥ इत्येवं भूमिं ध्यात्वा—आगच्छ सर्व कल्याणि वसुधे लोकधारिणि। पृथिवी ब्रह्मदत्तासि कश्यपेनाभिवन्दिता। इति भूमिं आवाह्य—ॐ भूरसि भूमिरस्यदितिरसि विश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री। पृथिवीं यच्छ पृथिवीं दृꣳह पृथिवीं मा हिꣳसीः। इति पुष्पाञ्जलिं दद्यात्।

उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना। दंष्ट्रांगैः लीलयता देवि यज्ञार्थं प्रणमाम्यहम्॥ इति प्रणम्य अष्टांग अर्घ्यं दद्यात्—ब्रह्मानिर्मिते देवि विष्णुना शंकरेण च। पार्वत्या चैव गायत्र्या स्कन्द-वैश्रवणेन च। यमेन पूजिते देवि धर्मस्य विजिगीषया। सौभाग्यं देहि पुत्रांश्च धनं रूपं च पूजिता। गृहाणार्घ्यमिमं देवि सौभाग्यं च प्रयच्छ मे॥

"ॐ स्योना पृथिवी नो भवानृक्षरा निवेशनी। यच्छानः शर्मसप्रथाः। इति भूमौ अर्घ्य दत्त्वा—ॐ भूरसि भूमिरसि इति मन्त्रेण, ॐ भूम्यै नमः सम्पूज्य—उपचारानिमांस्तुभ्यं ददामि परमेश्वरि। भक्त्या गृहाण देवेशि त्वामहं शरणंगतः। इति पूजा निवेदनम्। ॐ सपरिवारायै भूम्यै बलिं समर्पयामि—न मम। इति गन्ध-पुष्प-पायस-लाजा-सक्तुभिः सघृतैः सदीपैः महाबलिदानं कुर्यात्।

वद्धाञ्जलिना वक्ष्यमाण श्लोकैः प्रार्थनां कृत्वा—नन्दे नन्दय बलिष्ठे वसुभिः प्रजया सह। जय भार्गवदायादे प्रजानां जयमावह॥ पूर्णे गिरीशदायादे पूर्ण कामं कुरुष्व मे। भद्रे काश्यपदायादे कुरु भद्रां मतिं मम॥ सर्ववीज समायुक्ते सर्व रत्नौषधिवृते। रुचिरं नन्दनं नन्दे वसिष्ठे रम्यतामिह॥ प्रजापतिं सुदेवीं च चतुरस्रे महीपतिः। सुभगे सुव्रते देवि गृहे काश्यपि रम्यताम्। पूजिते परमाचार्ये गन्धमाल्यै रलङ्कृते। भवभूतिकरी देवि गृहे

भार्गवि रम्यताम् । अव्यक्ते चाहते पूर्णे शुभे चाङ्गिरसः सुते । इच्छदे त्वं प्रयच्छेष्टं त्वां प्रतिष्ठाम्यहम् ॥ देशस्वामि पुरः स्वामि गृहस्वामि परिग्रहे । मनुष्यं धनहस्तश्च पशुवृद्धिकरी भव ॥ इति ॥

ॐ खड्गो वैश्वदेवः श्वा कृष्णः कर्णो गर्दभस्तरक्षुस्ते रक्षसामिन्द्राय सूकरः । सिंहो मारुतः कृकलासः पिप्पका शकुनिस्ते शरव्यायै विश्वेषां देवानां पृषतः, २४/४० । ॐ वाराहाय नमः—इति सम्पूज्य । ॐ यस्य कुर्मो गृहे हविस्तमग्ने वर्धया त्वम् । तस्मै देवा अधिब्रुवन्नयञ्च ब्रह्मणस्पति, १७/५२ ॥ ॐ कूर्माय नमः इति सम्पूज्य—ॐ स्योना पृथिवी नो भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छानः शर्मसप्रथाः ॥ ॐ अनन्ताय नमः इति सम्पूज्य प्रार्थयेत् । आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम् । पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वरि ॥ कृतैतद् भूम्यादि पूजनं कर्मणः सांगता सिद्धयर्थं आचार्याय दक्षिणाद्रव्यं दातुमहमुत्सृजे ॥

यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपो यज्ञक्रियादिषु । न्यूनं सम्पूर्णतां यातु सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥ प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताऽध्वरेषु यत् । स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः ॥

इति भूम्यादि पूजनम्

संक्षेप में मण्डप निर्माण

प्रतिष्ठादि कार्यों में मण्डप निर्माण आवश्यक एवं जटिल कार्य है । स्थान की स्थिति को देखते हुए मण्डप का आकार छोटा-बड़ा भी हो सकता है, पर १६ हाथ लम्बा, १६ हाथ चौड़ा सम चौरस चबूतरे जैसा बनाना अच्छा रहता है । ऊपर छाया हुआ हो, मध्य में चौकोने गुम्बज हों, चबूतरे की ऊंचाई एक हाथ ऊंची हो, द्वार चारों दिशाओं में बनायें । प्रवेश द्वार पश्चिम का ही होगा ।

मण्डप के चारों तरफ ज़मीन पर जौं वोने के लिए पत्थर के टुकड़ों या ईंटों से घेरा बनाना चाहिए । मण्डप के चारों ओर बारह स्तम्भ और मध्य भाग में चार स्तम्भ बनाएं। वे इस प्रकार लगाए जायें कि अग्निकोण से वायव्य कोण तक के चारों स्तम्भ एक सीध में दिखाई दें । इसी प्रकार मध्य के चारों स्तम्भ एक सीध में दिखते रहें ।

मण्डप दक्षिण उत्तर, पश्चिम पूर्व के तीन-तीन भाग करके सूत्र दें । जहां-जहां सूत्र की समाप्ति हो और जहां-जहां सन्धि हो, वहां-वहां पर अग्नि से गाड़ें । पहले बारह खम्भे बाहर के गाड़ें, पांच-पांच हाथ के अन्तर से और चूड़ के सहित दो-दो खम्भे प्रतिदिशा में हों, चारों कोनों में चार, इस प्रकार बारह खम्भे हुए । पांचवां भाग एक-एक हाथ हुआ, उसे ज़मीन में

गाड़ना । पीछे चार खम्भे चूड के साथ आठ-आठ हाथों में आठ अंगुल चौड़ा, बीच की वेदी के अग्निकोण से उसका पांचवां हिस्सा एक हाथ चौदह अंगुल सात यव और डेढ यूका प्रदक्षिण क्रम से ज़मीन में गाड़ने चाहिएं । फीते से नापने से सुभीता रहता है ।

अब सोलह खम्भों पर सोलह बल्लियां देना, उन्हें छिद्र वाली चूड़ में पहनावें । पूर्व-पश्चिम उत्तर-दक्षिण दो-दो लकड़ी अर्थात् आठ लकड़ी और चार कोणों में चार लकड़ी, ये सब अट्ठाइस लकड़ियां हुईं और मध्य में शिखर पर काठ का लट्टू बनावें ।

उसमें चारों कोनों में चार लकड़ी लट्टू में से खम्भे तक देना, ऐसा सब मिलाकर बत्तीस लकड़ियां हुईं और स्तम्भ से लेकर ४८ होती हैं ।

मध्य भाग में शिखर बनाकर कोमल बांस या चटाई या फूस आदि से चारों द्वारों को छोड़कर छा देवें तथा चारों तरफ टाटी से ढक देवें । वायुरक्षार्थ चार द्वार के दरवाज़े अलग-अलग लगावें और सोलह खम्भों में अच्छे-अच्छे वस्त्र लपेट देवें ।

तोरण

पूर्व दिशा में वड या पीपल का, दक्षिण में गूलर का, पश्चिम में पीपल या पाकर का, उत्तर में पाकर या बड़ का, सभी प्रकार की लकड़ी न मिले तो एक ही वृक्ष की लकड़ी चारों ओर लगावें ।

मण्डप के चारों ओर ध्वजा एवं पताका भी लगावें । शिव प्रतिमा के समय चारों में त्रिशूल का चिह्न, विष्णु प्रतिमा में शंख-चक्र-गदा-पद्म पूर्वादि क्रम से लगाएं, मण्डप के चारों ओर ध्वजा-पताका लगावें । त्रिकोणाकार दो हाथ चौड़ी और पांच हाथ लम्बी ध्वजा, दिशाओं के बाहन व रंग वाली हों, उसे दस हाथ के बांस के सिर पर लगावें, पीला रंग पूर्व में, लाल रंग अग्निकोणों में, काला दक्षिण में, नीला नैर्ऋत्य में, सफेद ईशान में हरा या धूम्र, वायव्य में सफेद व हरा रंग उत्तर में, सफेद रंग ईशान में, सफेद व लाल रंग ईशान पूर्व के मध्य में, पीली या काली ध्वजा नैर्ऋत्य वरुण के मध्य में लगाएं ।

दिशाओं में लगने वाली ध्वजाओं के चिह्न

पूर्व की पीली ध्वजा में हाथी, अग्नि की रक्त ध्वजा में मैंढा, दक्षिण की काली ध्वजा में महिष, निर्ऋति की नीली ध्वजा में सिंह, पश्चिम की सफेदी में मछली, वायव्य की हरे रंग की ध्वजा में हरिण, उत्तर के सफेद या हरे रंग की ध्वजा में घोड़ा, ईशान की सफेद ध्वजा में हंस, पश्चिम निर्ऋति के मध्य में पीत व काली ध्वजा में गरुड़ ।

पताका का रंग एवं चिह्न

पताका एक हाथ चौड़ी सात हाथ लम्बी होनी चाहिए, पताका के रंग भी ध्वजा की तरह होंगे । पूर्व की पताका में वज्र । अग्नि कोण में शक्ति, दक्षिण में दण्ड, नैर्ऋत्य में

खड्ग, पश्चिम में पाश। वायव्य में अंकुश, उत्तर में गदा, ईशान में त्रिशूल, पूर्व-ईशान के मध्य में कमण्डलु पश्चिम-निर्ऋति मध्य में चक्र बनाना चाहिए।

ये दस हाथ के बांस से ऊपर-विदिशा में लगाएं। मण्डप के मध्य में या ईशान में पांचरंगा महाध्वज-बैल से चिह्नित कर तीन हाथ लम्बा, चार हाथ चौड़ा हो।

स्तम्भों पर वस्त्रों के रंग

१. मण्डप के मध्य में स्थित ईशान कोण में स्तम्भ में लाल वस्त्र, २. अग्निकोण के स्तम्भ में काला, ३. नैर्ऋत्य कोण के स्तम्भ में पीला, ४. वायव्य कोण के स्तम्भ में पीला वस्त्र।

बाहरी स्तम्भों पर वस्त्रों के रंग

१. ईशान के स्तम्भ पर लाल, २. ईशान-पूर्व स्तम्भ में श्वेत, ३. पूर्व अग्निकोण मध्य में काला, ४. अग्निकोण में काला, ५. अग्निकोण दक्षिण के मध्य में सफेद, ६. दक्षिण नैर्ऋत्य कोण के मध्य पर धूम्र, ७. नैर्ऋत्य-पश्चिम मध्य में सफेद, ८. पश्चिम-वायव्य कोण में सफेद, ९. वायव्य कोण में पीला, १०. उत्तर और वायव्य कोण में पीला, ११ उत्तर-ईशान मध्य कोण में लाल वस्त्र लपेटें।

दरवाज़ों के ऊपर वाले तोरणों पर पूर्व में शंख लाल, दक्षिण में चक्र काला, पश्चिम में गदा सफेद, उत्तर में पद्म पीला।

मूर्ति प्रतिष्ठा के मुहूर्त के विषय में विचार

१. चैत्रे फाल्गुणे वापि ज्येष्ठे वा माधवे तथा।
माघे वापि सर्व देवानां प्रतिष्ठा शुभदा भवेत्॥ मत्स्य पुराण।

२. देवी की प्रतिमा प्रतिष्ठा में—
देव्याः माघेऽऽश्विने मासे उत्तमा सर्वकामदः।
न तिथिर्नच नक्षत्रं नोपवासोऽत्र कारणम्।
सर्वकालं प्रवर्तव्यं कृष्णपक्षे विशेषतः॥ देवी पुराण॥

३. धर्मसिन्धु कार के मत से—
देव्या माघेऽऽश्विने मासे उत्तमा सर्वकामदः॥

४. सात वारों में प्रतिष्ठा करने का फल—
तेजस्विनी क्षेम कृदग्निदाहविधायिनी स्याद् धनदा दृढा च।
आनन्दकृत कल्प विनाशिनी च सूर्यादि वारेषु भवत्युत्तिष्ठ॥

रविवार को की गई प्रतिष्ठा तेजस्विनी, (श्रीपति पद्धतिः) सोमवार को कल्याणकारिणी, मंगलवार को अग्नि दाहकारिणी, बुधवार को धनदायिनी, गुरुवार को बलदायिनी, शुक्रवार को आनन्दकारिणी और शनिवार को कल्पविनाशिनी होती है ॥

(क) चाण्डाल के स्पर्श से, मद्य के स्पर्श से दूषित, दुष्ट ब्राह्मण और दुष्ट क्षत्रिय के स्पर्श से मूर्ति की पुनः प्रतिष्ठा करनी चाहिए।

(ख) खण्डित, दग्ध, स्फुटित, मानहीन मूर्ति की प्रतिष्ठा पुनः करनी चाहिए।

(ग) चोर, चाण्डाल पतित, कुत्ता आदि जीव, रजस्वला स्त्री के स्पर्श होने पर मूर्ति की प्रतिष्ठा पुनः करनी चाहिए।

५. विष्णु धर्मोत्तर पुराण में—
चैत्रे वा फाल्गुने मासे ज्येष्ठे वा माधवे तथा।
माघे वा सर्व देवानां प्रतिष्ठा शुभदा सिते ॥
रिक्तान्य तिथिषु स्यात्सा वारे भौमान्यके तथा ॥

६. हेमाद्रि के कथनानुसार—विष्णु प्रतिष्ठा माघे न भवति—माघे कर्तुः विनाशः स्यात् फाल्गुने शुभदा सिता ॥

७. नक्षत्र विधान—
आषाढे द्वे तथा मूलमुत्तरत्रयमेव च। ज्येष्ठा श्रवण रोहिण्यः पूर्वाभाद्रपदा तथा। हस्तोऽश्विनी रेवती च पुष्यो मृगशिरस्तथा। अनुराधा तथा स्वाति प्रतिष्ठासु प्रशस्यते ॥
अत्र आषाढे द्वे इत्यनेन उत्तराषाढा, उत्तरा फाल्गुणी, उत्तराभाद्रपद इति त्रयाणां नक्षत्राणां कथनम् ॥

८. नरसिंह का कथन है—
तथा महाश्विनो मास उत्तमः सर्वकामदः। देवी तत्र सदा शक्रपांसुनापि प्रतिष्ठा। भवने फलदा पुंसां कर्कस्थे च वृषस्थिते। न तिथिर्नच नक्षत्रं नापि वारोऽथ कारणम्।
अर्थात्—सब कामनाओं को देने वाली श्रेष्ठ और आश्विन मास के नवरात्रों में भगवती घर में पुरुषों को फल देने वाली है। कर्क (श्रावण) वृष (ज्येष्ठ) के सूर्य में करना ठीक नहीं। वहां बार नक्षत्र तिथि आदि भी कारण नहीं होते।

९. माधवीये-मयूखे—मातृभैरव वाराह-नारसिंह—त्रिविक्रमाः। महिषासुर-हन्त्र्यश्च स्थाप्या वै दक्षिणायने।

१०. लिंग प्रतिष्ठायां हेमाद्रौ—लिंगस्थापनं तु कर्त्तव्यं शिशिरादावृतुत्रये । प्रावृषि स्थापितं लिंगं भवेद् वरयोगदम् ॥ हेमन्तो ज्ञानदं चैव शिशिरे सर्वभूतिदम् । लक्ष्मीप्रदं वसन्ते च ग्रीष्मे च जयशान्तिदम्। यतीनां सर्वकाले च लिंगस्यारोपणं मतम्। श्रेष्ठोत्तरे प्रतिष्ठा स्यादयने मुक्ति मिच्छताम् ॥ दक्षिणे तु मुमुक्षूणां मलमासे न सा द्वयोः ॥

११. माघ फाल्गुन-वैशाख-ज्येष्ठाषाढेषु पञ्चसु। प्रतिष्ठा शुभदा प्रोक्ता सर्वसिद्धिः प्रजायते । श्रावणे च नभस्ये च लिंग स्थापनमुत्तमम् । देव्याः माघाश्विने मासेऽप्युत्तमा सर्वकामदा ॥

— o —

कुण्डमण्डपसिद्धिः

मण्डप के कुण्ड बनाने के वास्ते पहिले जमीन को पहिचानना चाहिये कि यज्ञ के योग्य भूमि है कि नहीं। बाद में उस भूमि को जला देवे, जला देने के बाद जानु मात्र खनना। खनन कर मिट्टी को बराबर भर कर सीसा के प्लेट के समान चिकना करना। उस जमीन पर चार ब्राह्मण पुण्याहवाचन करें। उसके बाद यजमान कछुआ, शेष, बाराह तथा पृथिवी की फल-पुष्पादि से पूजन करे। विहित बार तथा तिथियों में मण्डप बनाने के लिये पूर्व दिशा का साधन करे।

प्रमाणं यथा शारदातिलके—नक्षत्रराशिवाराणामनुकूले शुभेऽहनि। ततो भूमितले शुद्धे तुषाराङ्गरविवर्जिते। पुण्याहं वाचयित्वा तु मण्डपं रचयेच्छुभम्।

भूमिपरीक्षा पञ्चरात्रे—ततो भूमिं परीक्षेत वास्तुज्ञानविशारदः। स्फुटिता च सशल्या च वल्मीका रोहिणी तथा। दूरतः परिवर्ज्याः भूः कर्तुरायुर्धनापहा। ईशकोणप्लवा सा च कर्तुः श्रीदा सुनिश्चितम्॥ पूर्वं पल्वा वृद्धिकरी वरदा तूत्तरा प्लवा। शेषकष्टा प्लवा भूमिर्धनायुर्गृहाशिनी॥ ब्राह्मणी घृतगन्धा स्यात् क्षत्रिया रक्तगन्धकृत्। क्षारगन्धा भवेद्वैश्या शूद्रा विट्गन्धिनी क्षितिः॥ ब्राह्मणी भूः कुशोपेता क्षत्रिया शरसंकुला। कुशकाशाकुला वैश्या शूद्रा सर्वतृणाकुला॥ अनिसिद्धा यथा कुण्डसर्वस्व-सिता पीता। तथा 'रक्ता कृष्णवर्णसमन्विता। स्थिरोदका दृढा स्निग्धा भूमिः सर्वसुखावहा॥

पूर्वदिशा का ज्ञान—१६ अंगुल के परकाल से अथवा १६ अंगुल की रस्सी से गोल वृत्त करे। उसके बीच में बारह अंगुल का नोकदार कील गाड़े। उसके सिर पर २० अंगुल की चार कील चारों दिशा से सीधी रखे, उसके बाद उस लकड़ी की छाया पहिले पहर जिस तरह गोल वृत्त में प्रवेश करे वहां पर चिह्न करे। वही पश्चिम दिशा जानना और तीसरे पहर छाया जिस स्थान से वृत्त के बाहर निकले वहां पर चिह्न करने से पूर्व दिशा जानना चाहिए।

कर्क वृश्चिक वृष मकर इन राशियों के सूर्य में पूर्व दिशा की छाया को जब उत्तरायण सूर्य रहें तो उत्तर की तरफ १ यूका चालन और सिंह कन्या तुला कुम्भ मीन मेष इन राशियों के सूर्य हों तो २ यूका चालन करे अर्थात् उस चिह्न से २ यूका हटकर चिह्न दे और मिथुन धन के सूर्य रहें तो जहां पर छाया का चिह्न है वही वास्तविक में पूर्व-पश्चिम जाने अर्थात् इसमें नहीं चलाना चाहिए। चिह्नों के और स्थान से एक-एक कील गाड़ देवे।

उत्तर—दक्षिण दिशा का ज्ञान—जैसे, पूर्व-पश्चिम का साधन करके कील दिया है उसी कील से उत्तर-दक्षिण का साधन करते हैं। जितना बड़ा मण्डप बनाना हो उसकी दूनी रस्सी ले। उसके मध्य में गांठ दे और दोनों कोर पर फन्दा बना दें। एक फन्दा पूरब की कील में फैलावे, दूसरा फन्दा पश्चिम की कील में फंसावे। बाद में मध्य की गट्ठी थाम कर बुद्धिमान् पुरुष दक्षिण व उत्तर की तरफ खींचे। जहां तक वह रस्सी जाए वहां पर एक-एक कील गाढ़ दें। इस प्रकार दक्षिण-उत्तर दिशा सिद्ध होती है।

जिस रोज दिक् साधन हो उस रोज के दिनमान को परम दिन में घटा दे। जो अंक शेष आवे उसको ५ से गुणन करे, ६ से भाग दे। तब छाया प्राप्त होती है। उदाहरण—परम दिन ३४/५, दिक् साधन दिवस का दिनमान २५/५५ को परम दिन में घटाया तो ८/१० शेष आया। इसको पांच से गुणा किया तो गुणन पर ४०/५० हुआ। इसको ६ से भाग दिया तो ६ अं० ६ यव ३ यूका की छाया जहां पर आवे उसके अग्रभाग पर चिह्न करे वही उत्तर दिशा जाने। पूर्व-पश्चिमपूर्ववत् साधे।

वृत्त पर से चतुरस्र बनाने की रीति-पूर्व पश्चिम उत्तर-दक्षिण क्रम से जो-जो चिह्न हैं उन-उन चिह्नों के शंकु में १६ हाथ की रस्सी में फन्दा लगावे। पूर्व दक्षिण के शंकु में फन्दा लगाकर अग्निकोण की तरह खींचे। फिर पश्चिम-उत्तर की शंकु में फन्दा लगाकर वायव्य कोण की तरफ खींचे। फिर उत्तर पूर्व के शंकु में फन्द लगाकर ईशान कोण की तरफ खींचे। इस प्रकार चौकोण सिद्ध होता है।

मण्डप की भूमि १ हाथ ऊंची अथवा आधा हाथ ऊंची (११ अङ्गुल) बनावे। प्रतिष्ठादि में दूसरा मण्डप करे। इस मण्डप के अतिरिक्त जितना बड़ा हो उतनी जमीन बीच में छोड़कर दूसरा मण्डप बनावे।

वास्तुशास्त्र से मण्डप का प्रमाण—दस या बारह हाथ का मण्डप **अधम** होता है। बारह हाथ व चौदह हाथ का मण्डप **मध्यम** होता है। सोलह हाथ व अठारह हाथ का मण्डप **उत्तम** होता है। तुलादान में उत्तम मण्डप **२० हाथ** का होता है और **मण्डप** की लम्बाई चौड़ाई बराबर है। याने समान चौकोर बनावे।

(पञ्चरात्रे) कनीयान् दशहस्तः स्यान्मध्यमो द्वादशोन्मितः। तथा षोडशभिर्हस्तैर्मण्डपं स्यादिहोत्तमम् ॥ दशद्वादशहस्तौ च द्विद्विवृद्धिगतः क्रमात्।

द्वार का प्रमाण—मण्डप की चारों दिशा के मध्य **२ हाथ का चौड़ा ४ दरवाजा, ४ हाथ ऊंचा अधम मंडप में,** २ हाथ ४ अङ्गुल का चौड़ा ५ हाथ ऊंचा मध्यम मण्डप में, २ हाथ ८ अंगुल का चौड़ा ५ हाथ ऊंचा दरवाजा **उत्तम मण्डप में** बनाना चाहिए।

(पञ्चरात्रे) कनिष्ठे द्विकरं द्वारं चतुरङ्गुलवृद्धितः। मध्यमोत्तरयोर्वेदी मंडपस्य त्रिभागतः ॥

मध्यवेदी मण्डप के तीसरे हिस्से में बनावे। जैसे कि मण्डप को नव कोष्ठ कर, नव कोष्ठ के बीच के कोष्ठ में १ हाथ ऊंची बराबर चतुष्कोण मध्यवेदी होती है। यदि मध्य में कुण्ड करना हो तो कुंड के पूर्व भाग में ४ हाथ की या २ हाथ की चतुष्कोण प्रधान वेदी बनावे।

(प्रमाणं शान्तिमयूखकोटिहोमे-) मध्ये तु मण्डपस्याऽपि कुण्डं कुर्याद्विचक्षणः। अष्टहस्तप्रमाणेन आयामेन तथैव च ॥१॥ कुण्डस्य पूर्वभागे तु वेदीं कुर्याद्विचक्षणः। चतुर्हस्तां समां चैव हस्तमात्रोच्छ्रितां नृप।

तुलादान में मध्यवेदी विशेष कहते हैं। अधम और मध्यम मंडप में ५ हाथ की मध्यवेदी और उत्तम मंडप में ७ हाथ लम्बी व चौड़ी और एक हाथ ऊंची मध्यवेदी बनाये। ईशान भाग में ग्रहवेदी बनावे। १ हाथ ऊंची १ हाथ चौड़ी लम्बी तीन सीढ़ी एवं अग्निकोण में योगिनी वेदी, नैर्ऋत्य में वास्तुवेदी और वायव्य में क्षेत्रपालवेदी बनावे।

तत्र प्रमाणम्—आग्नेय्यां योगिनी वेदी वास्तुवेदी तु नैर्ऋते। योगिनी वायव्ये क्षेत्रपालानां ईशाने ग्रहवेदिका। ततो वप्र-प्रमाणम्—दिगङ्गुलोच्छ्रितो वप्रः प्रथमः-खमुदाहृतः। त्र्यंगुलोच्छ्रायसंयुक्तं वप्रद्वयमथोपरि। द्वयङ्गुलस्तत्र विस्तारः सर्वेषां कथितो बुधैः।

प्रथम सीढ़ी २ अंगुल चौड़ी, २ अंगुल ऊंची, दूसरी सीढ़ी २ अंगुल चौड़ी ३ अंगुल ऊंची, तीसरी सीढ़ी २ अंगुल चौड़ी ३ अंगुल ऊंची सब वेदी में बनाना। कुछ लोग २ वप्र रखते हैं। १ वप्र २ अंगुल ऊंचा चौड़ा दूसरा उसके ऊपर ३ अंगुल ऊंचा २ अं० चौड़ा और वेदी की ऊंचाई १ बित्ता, चौड़ा एक हाथ का होता है।

१६ खम्भा गाड़ने की विधि—मंडप का दक्षिण उत्तर-पश्चिम पूर्व को तीन-तीन भाग करके सूत्र देवे। जहां-जहां सूत्र की समाप्ति और जहां-जहां सन्धि हो वहां-वहां पर अग्निकोण से गाड़े। पहले बारह खम्भा वाहर से गाड़ना, पांच-पांच हाथ के और चूड़ के सहित दो-दो खम्भे प्रतिदिशा में ८, चारों कोण में ४ एवं बाहर खम्भा पांचवां हिस्सा १ हाथ हुआ सो जमीन में गाड़ना। बाद ४ खम्भा चूड़ के सहित आठ-आठ हाथ का ८ अंगु. चौड़ा बीच की वेदी के अग्निकोण से उसका पांचवां हिस्सा १ हाथ १४ अंगु. ७ यव १४ यूका प्रदक्षिण क्रम से ज़मीन में गाड़ना। इस तरह १६ खम्भा हुआ।

शारदातिलके—स्तम्भोच्छ्राये शिलान्यासे सूत्रयोजनकीलके। खननावटसंस्कारे प्रारम्भो वह्निगोचरे।

आगे १६ खम्भों पर १६ बालिका देना। छिद्रवाली चूड़ में पहिनाना। **पूर्व पश्चिम** दक्षिण उत्तर दो-दो लकड़ी ८ लकड़ी और चार कोण में ४ लकड़ी यह २८ लकड़ी सब

हुईं और मध्य में शिखर (अर्थात् लट्टू काठ का) बनाना। उससे ४ कोनों पर ४ लकड़ी लट्टू में से खम्भे तक देना। सब मिलाकर ३२ लकड़ी हुई और स्तम्भ को लेकर ४८ हुई।

अब पहिले कहे मुताबिक **शिखर बना कर** कोमल बांस व चटाई या फूस इत्यादि से चारों द्वार को छोड़ कर छावे, व चारों तरफ टट्टी से ढांके, वायु इत्यादि के रक्षार्थ ४ द्वार की टट्टी पृथक् से लगावे और १३ खम्भों में अच्छे-अच्छे वस्त्र लपेटे और ऐना, अंबर बांधना चाहिए।

मंडल के दरवाजे से एक हाथ बाहर पूर्वादिक दिशाओं में तोरण द्वार—अधमादि मंडप के क्रम से पूर्व से वट या पीपल ५ हाथ लम्बा २ हाथ चौड़ा अधम में और मध्य में ६ हाथ लम्बा २ हाथ ६ अंगुल चौड़ा तोरण लगावे। दक्षिण में गूलर का, पश्चि में पीपल या पाकड़ का, उत्तर में पाकड़ या वट का पूर्ववत् काम में लावे। अथवा सब वृक्ष की लकड़ी न मिले तो एक ही वृक्ष का चारों द्वार बनावे। उसका पांचवां हिस्सा १ हाथ व ६ हाथ का, पांचवां हिस्सा १ हाथ, ४ अंगुल ६ यव, सात हाथ का पांचवां हिस्सा १ हाथ ४ अंगुल ४ यव ६ यूका इस हिसाब में गाड़ना चाहिए।

चारों काष्ठों में से कोई न मिले तो शमी की, जामुन की, खैर की या ताल वृक्ष की, सब न मिले तो जिस लड़की को चाहे उसी का तोरण बनावें।

स्तम्भों के ऊपर स्तम्भों का आधा फलक तीन छिद्र वाला स्तम्भों के चूड़ में पहिनाना। उसका प्रमाण—पांच हाथ का आधा २ ॥ हाथ, ६ हाथ का आधा ३ हाथ, सात हाथ का आधा ३ ॥ हाथ, इस प्रकार से अधम, मध्यम, उत्तम मंडप में क्रम से जानना। उसके ऊपर मध्य में कील देना, शिवयाग में त्रिशूल चारों दिशा में, विष्णुयाग में शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म पूर्वादि क्रम से देवे। प्रमाण—अधम में १ अं० लम्बा, २ । अं० चौड़ा २ । अं० तोरण पर गाड़ना। मध्यम में ११ अं० लं० २ । अं० चौड़ा ३ अं० गाड़ना। उत्तम में १३ अं० लम्बा ३ । अं० चौड़ा ४ अं० गाड़ना ॥ इति शैवयागे। विष्णुयागे तु ॥ अधम मंडप में शङ्ख १० अं० लम्बा २ ॥ अं० चौड़ा, मध्यम में १२ अं० लम्बा ३ अं० चौड़ा, उत्तम में १४ अं० लम्बा ३ अं० चौड़ा। अधमादि मंडप के शङ्खादि कीलों का पञ्चमांश तोरण पर गाड़े और द्वार का पांचवां हिस्सा मंडप से एक हाथ बाहर पूर्ववत् गाड़ना चाहिए।

केले से निर्मित अनेक स्तम्भों को द्वारों पर लगाकर आम के पल्लव की बन्दनवार से सम्पूर्ण मंडप को वेष्टन करे और मंडप में पञ्च रङ्गा चंदोवा लगावे। ऐसा चंवर पुष्प फलों द्वारा सुशोभित करे, ऐसा शोभायमान महामंडप शुभफल को देने वाला होता है।

अव ध्वजा का नाम कहते हैं—त्रिकोण २ हाथ चौड़ा ४ हाथ लम्बा ध्वजा दिशाओं में वाहन व रंग से युक्त व दस हाथ के बांस के सिर पर लगावे। पीला रंग पूर्व में। लाल रंग अग्निकोण में। काला दक्षिण में। नीला नैर्ऋत्य में। सफेद रंग ईशान में। धूम्र व हरा रंग वायव्य में। सफेद व हरा रंग उत्तर में। सफेद रंग ईशान में। सफेद व लाल रंग ईशान के पूर्व के मध्य में। पीत व काली ध्वजा निर्ऋति वरुण के मध्य में लगावे। अब दिशा के जो स्वामी हैं, उनके वाहन कहते है। पूर्व के पीत ध्वजा में हस्ती। अग्नि की रक्त ध्वजा में मेढ़ा। दक्षिण की कृष्णध्वजा में महिष। निर्ऋति की नील ध्वजा में सिंह। पश्चिम की सफेद ध्वजा में मछली। वायव्य के धुवां के रंग व हरे रंग की ध्वजा में हिरण। उत्तर की सफेद व हरे ध्वजा में घोड़ा। ईशान की सफेद ध्वजा में बैल। पूर्व ईशान के मध्य में सफेद व लाल ध्वजा में हंस। पश्चिम नैर्ऋति के मध्य में पीत या काली ध्वजा में गरुड़ लिखाना चाहिए।

पांचवां हिस्सा भूमि में गड़हा १, दस हाथ का पांचवां हिस्सा २ हाथ हुआ।

जैसा लोकेश का वर्ण (याने ध्वजा का रंग) पूर्व में कह आये हैं उसी प्रकार का रंग पताका का भी करें। अब उसकी लम्बाई-चौड़ाई और शस्त्र कहते हैं। पताका १ हाथ चौड़ा ७ हाथ लम्बा दशदिग्पालों के शस्त्रों से शोभित पूर्व की पताका में वज्र, अग्निकोण की पताका में शक्ति, दक्षिण की पताका में दण्ड, नैर्ऋत्य की पताका में खड्ग, पश्चिम की पताका में पाश, वायव्य की पताका में अङ्कुश, उत्तर की पताका में गदा, ईशान की पताका में त्रिशूल, पूर्वेशान के मध्य पताका में कमण्डलु और पश्चिम नैर्ऋति के मध्य पताका में चक्र लिखना चाहिए। दश हाथ के बांस के सिर पर लगाकर दिशा-विदिशा में पांचवां हिस्सा (पञ्चमांश २ हाथ) भूमि में गाड़े और मण्डप के मध्य में या ईशान में पञ्चरंगा ध्वजा एक दस हाथ लम्बा ३ हाथ चौड़ा या ३ हाथ लम्बा ५ हाथ चौड़ा जो महाध्वज है उसमें बैल लिखे, उसके कोने पर घण्टी व घुंघरू लगावे, कंवर बांधे और उसे मध्य शिखर पर लगावे। १० हाथ या १६ हाथ २१ या ३२ हाथ का बांस रहना चाहिए।

किसी का मत है कि ध्वजा १ हाथ १ बित्ता चौड़ा और पताका भी उसी नाप का बनाना चाहिए।

नवकुण्डी विधान

नवकुण्डी करना हो तो इस प्रकार के कुण्ड बनावे। यथा-पूर्व में चतुरस्र कुण्ड। अग्निकोण में योनिकुण्ड। दक्षिण में अर्ध चन्द्रकुण्ड। नैर्ऋत्य कोण में त्रिकोण कुण्ड। पश्चिम में वृत्त कुण्ड। वायव्य कोण में षट्कोणकुण्ड। उत्तर में पद्मकुण्ड। ईशान में अष्टकोण कुण्ड और अष्टास्र चतुरस्र के बीच में चतुरस्र वा वृत्त नवम आचार्य कुण्ड बनावे। यह नवकुण्ड पक्ष है।

ध्वजापताका-निवेशनचक्रम्

वज्रर रक्त	चतुष्कोण पीत	पताका	वाहन हस्ती सफेद	त्रिकोण ध्वजा पीत	पूर्व में
शक्ति पीत	चतुष्कोण रक्त	पताका	वाहन वकरा सफेद	त्रिकोण ध्वजा रक्त	अग्निकोण में
दण्ड रक्त	चतुष्कोण कृष्ण	पताका	वाहन महिष रक्त	त्रिकोण ध्वजा कृष्ण	दक्षिण दिशा में
खड्ग रक्त	चतुष्कोण नील	पताका	वाहन सिंह सफेद	त्रिकोण ध्वजा नीला	नैर्ऋत्य में
पाश धूम्र	चतुष्कोण सफेद	पताका	वाहन मछली धूम्र	त्रिकोण ध्वजा सफेद	पश्चिम में
अंकुश रक्त	चतुष्कोण धूम्र या हरा	पताका	वाहन हरिण कृष्ण	त्रिकोण ध्वजा धूम्र व हरा	वायव्य में
गदा पीत	चतुष्कोण सफेद व हरा	पताका	वाहन घोड़ा स्वर्ण रंग	त्रिकोण ध्वजा सफेद वा हरा	उत्तर में
त्रिशूल कृष्ण	चतुष्कोण सफेद	पताका	वाहन बैल रक्त	त्रिकोण ध्वजा सफेद	ईशान में
कमण्डलू रक्त या पीत	चतुष्कोण सफेद वा रक्त	पताका	वाहन हंस सफेद	त्रिकोण ध्वजा सफेद वा रक्त	ईशान पूर्व के मध्य में
चक्र चित्र-विचित्र	चतुष्कोण सफेद वा काला वा पीत	पताका	वाहन गरुड़ पीत	त्रिकोण ध्वजा, सफेद वा कृष्ण वा पीत	निर्ऋति पश्चिम के मध्य में

पञ्चकुण्डीपक्ष विधान

पूर्व में चतुरस्त्र। दक्षिण में अर्धचन्द्र। पश्चिम में वृत्त। उत्तर में पद्म। ईशान में चतुरस्त्र वा वृत्त। किसी का मत यह है कि ईशान का कुण्ड अष्टास्त्र होना चाहिए। अष्टास्त्र वृत्त नहीं। किसी का मत यह है कि जैसा कि पूर्व में कह आये हैं, वैसा रखना और एक कुण्ड का पक्ष करना हो तो पश्चिम में या उत्तर में या ईशान में बनावे। सब कुण्ड मध्य वेदी से सवा हाथ (याने ३० अङ्गुल) छोड़कर या मध्यवेदी जितनी नाप में हो उसका चौथाई हिस्सा हटकर कुण्ड बनावे। अथवा मंडप को नव कोष्ठ मण्डप का जो किया है, उन कोष्ठों के मध्य में बनावे। अथवा मंडप मध्यपक्ष का होवे तो कोई १३ अंगुल का अन्तर देकर बनाने को कहते हैं।

एक कुण्ड का विधान

एक कुण्ड की विधि में वर्णभेद से बनावे। जैसे कि ब्राह्मण के लिए चतुरस्त्र, क्षत्रिय के वास्ते वृत्त, वैश्य के वास्ते अर्धचन्द्र, शूद्र के वास्ते त्रिकोण। इस प्रकार से बनावे। अथवा चारों वर्णों के वास्ते वृत्त (गोल) या चतुरस्त्र (चौकोर) कुण्ड बनावे। यदि स्त्री कर्ता हो तो योनि कुण्ड बनाना। (या चतुरस्त्र कुण्ड बनाना)। शूद्रवद्व्यवहारात् ऐसा पूर्व लिख आये हैं कि चारों वर्ण को चतुरस्त्र बनाना चाहिए। इसलिये चतुस्त्र कहा है।

नवकुण्डीचक्रम्

दिशा	कुण्ड	फल	योन्यग्र	होता मुख
पूर्व	चतुरस्त्रकुण्ड	सिद्धिफल	दक्षिणयोनि उदगग्रा	होता उत्तर मुख
अग्नि	योनिकुण्ड	पुत्रफल	योनिकुण्ड में योनि नहीं	होता उत्तर मुख
दक्षिण	अर्धचन्द्रकुण्ड	शुभफल	दक्षिणयोनि उदगग्रा	होता उत्तर मुख
नैर्ऋति	त्रिकोण कुण्ड	शत्रुनाश	पश्चिमयोनि पूर्वाग्रा	होता पूर्व मुख
पश्चिम	वृत्त कुण्ड	शान्तिफल	पश्चिमयोनि पूर्वाग्रा	होता पूर्व मुख
वायव्य	षट्कोण कुण्ड	मृत्युछेदन फल	पश्चिमयोनि पूर्वाग्रा	होता पूर्व मुख
उत्तर	पद्मकुण्ड	वर्षाफल	पश्चिमयोनि पूर्वाग्रा	होता पूर्व मुख
ईशान	अष्टास्त्रकुण्ड	आरोग्यफल	पश्चिमयोनि पूर्वाग्रा	होता पूर्व मुख
पूर्वेशान मध्ये	चतुरस्त्र वा वृत्त कुण्ड	आचार्य कुण्ड प्रथम हवन	दक्षिणयोनि उदगग्रा	होता उत्तर मुख
एककुण्डीपक्षे चतुरस्त्रवृत्त योनिः पश्चिम पूर्वाग्रा				होता पूर्व मुख

पञ्चकुण्डीचक्रम्

पूर्व में	चतुरस्र
दक्षिण में	अर्ध चन्द्र
पश्चिम में	वृत्त
उत्तर में	पद्म
ईशान में अष्टास्र चतुरस्र वा वृत्त	

पूर्वादिक कुंडों के फल—चतुरस्र कुण्ड में सिद्धिकामना के लिए हवन करना, पुत्रकामना के लिये योनिकुण्ड में हवन करना, शुभकामना के लिये अर्धचन्द्र कुण्ड में हवन करना, शत्रुनाश के लिये त्रिकोण कुण्ड में हवन करना, शान्ति के लिये वृत्त कुण्ड में हवन करना, मृत्युच्छेदन के लिए षट्कोण कुण्ड में हवन करना, वृष्टि के लिए पद्मकुण्ड में हवन करना और आरोग्यता के लिए अष्टकोण कुण्ड में हवन करना चाहिए। इससे यह सब फल प्राप्त होता है।

अब आहुति के प्रमाण से कुण्ड की रचना कहते हैं। ५० आहुति में २१ अंगुल रत्लिमात्र का, १०० आहुति में अरत्लिमात्र २२ अं० ६ यव का, १,००० आहुति में १ हाथ २४ अं० का, १०,००० अं० में २ हाथ ३४ अं० का, १,००,००० आहुति में ४ हाथ ४८ अं० का, १०,००,००० अं० में ६ हाथ ५८ अं० ६ यव का, १,००,००,०० आहुति में ८ हाथ ६७ अं० ७ यव का और कोई आचार्य कहते हैं कि कोटि आहुति में १६ हाथ का कुण्ड बनाना चाहिए।

अब सूक्ष्म द्रव्य की आहुति के हिसाब से कुण्ड का विस्तार कहते हैं। जैसे १,००,००० आहुति में एक हाथ का, इसी प्रकार एक-एक लक्ष की वृद्धि में एक-एक हाथ की वृद्धि करता जावे, यथा—१ लाख में एक हाथ, २ लाख में दो हाथ, ३ लाख में तीन हाथ, ४ लाख में चार हाथ, ५ लाख में पांच हाथ, ६ लाख में छः हाथ, ७ लाख में सात हाथ, ८ लाख में आठ हाथ, ९ लाख में नौ हाथ, १० लाख में दस हाथ का कुण्ड बनावे। ५० लाख की आहुति में ७ हाथ का, १० लाख में ५ हाथ का, २० लाख में ६ हाथ का और पचास हज़ार में ३ हाथ का कुण्ड बनाना चाहिए।

अब १ हाथ से लेकर १० हाथ के कुण्ड तक का मान कहते हैं और क्षेत्रफल भी आगे चक्र में लिखेंगे। एक हाथ के कुण्ड में चौबीस अं० चौड़ाई-लम्बाई होती है और २ हाथ के कुण्ड में ३४ अं० ५ यव की चौड़ाई-लम्बाई होती है। ३ हाथ के कुण्ड में ४१ अं० ५ यव चौड़ाई-लम्बाई होती है। ४ हाथ के कुण्ड में ६८ अंगुल चौड़ाई-लम्बाई होती है। पांच हाथ के कुण्ड में ५३ अंगुल ५ यव चौड़ाई-लम्बाई होती है। छः हाथ के कुण्ड में ५८ अंगुल ६

यव चौड़ाई लम्बाई होती है । सात हाथ के कुण्ड में ६३ अंगुल ४ यव चौड़ाई लम्बाई होती है । आठ हाथ के कुण्ड में ६७ अंगुल ७ यव चौड़ाई लम्बाई होती है । नौ हाथ के कुण्ड में ७२ अंगुल चौड़ाई लम्बाई होती है । दस हाथ के कुण्ड में ७५ अंगुल ७ यव चौड़ाई लम्बाई होती है । अब ९ हाथ से १० हाथ तक चतुरस्त्र कुण्ड के भुज का क्षेत्रफल कहते हैं—स्थूल भुजमान से कहीं-कहीं क्षेत्रफल से विरोध करता है, जैसे दो हाथ में भुज ३४ हैं, उनको ३४ से गुणन कर १५६ होता है । परन्तु दो हाथ के क्षेत्र का फल ९ हाथ के क्षेत्रफल से दूना, ९ हाथ २४ अंगुल से गुणा किया तो ५७६ एक हाथ का क्षेत्रफल हुआ । इसी प्रकार इस क्षेत्रफल को २ से गुणा करने से २ हाथ के क्षेत्रफल ११५२ होता है । इसी तरह ३ से गुणा तो तीन हाथ का १७२८, ४ से गुणा तो ४ हाथ का २३०४, ५ से गुणा तो ५ हाथ का २८८०, ६ से ६ हाथ का ३४५६, ७ से ७ हाथ का ४०३२, ८ से ८ हाथ का ४६०८, ९ से ९ हाथ का ५१८४, १० से १० हाथ का ५७६० । इस प्रकार क्षेत्रफल ठीक करना चाहिए, क्योंकि न्यूनाधिक होने से दोष होता है ।

स्थूलभुजमानचक्रम्

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	हस्त
२४	३४	४१	४५	५३	५८	६३	६७	७२	७५	अंगुल
०	०	५	०	५	६	४	७	०	७	यव
५७६	११५२	१७२८	२३०४	२८८०	३४५६	४०३२	४६०८	५१८४	५७६०	क्षेत्र फल

अथ सूक्ष्मभुजमानचक्रम्

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	१६	हाथ
२४	३३	४१	४८	५३	५८	६३	६७	७२	७५	९६	अंगुल
०	७	४	०	५	६	३	७	४	७	०	यव
०	४	४	०	२	२	७	०	०	१	०	यूका
०	४	३	०	४	३	७	३	०	२	०	लिक्षा
०	३	४	०	६	२	२	५	०	०	०	बालाग्र
०	५	५	०	४	६	०	६	०	४	०	रथ
०	४	०	०	०	०	१	०	०	०	०	त्र्यस्त्र

कुण्डों में योनि लगाने का क्रम—पूवदि क्रम से पूर्व, आग्नेय, दक्षिण इन तीन कुण्डों में योनि दक्षिण में लगावे। उसका अग्रभाग उत्तर को करे। नैर्ऋत्य, पश्चिम, वायव्य, उत्तर, ईशान इन पांच कुण्डों में योनि पश्चिम में लगावे। इसका अग्रभाग पूर्व को यह सब आठों कुण्ड दिशा-विदिशा के हुए और नवम आचार्य कुण्ड पूर्व ईशान के मध्य में जो है उसमें दक्षिण उत्तर को योनि का अग्र करे और त्रिकोण में तथा योनि कुण्ड में योनि नहीं लगावे।

चतुरस्र कुण्ड

व्यास १ हाथ, उसको दूना करने से २ हाथ होगा। इसी प्रकार से जितना व्यास हो उसका दूना करे। उसमें सूत्र सहित पाश के ४ चिह्न करे, उसके बाद दोनों पाशों को पूर्व-पश्चिम की कील में फंसा कर दोनों की चतुर्थांश गांठ को पकड़ कर अग्नि तथा नैर्ऋत्य कोण की तरफ खींचे और वायव्य तथा ईशान कोण की तरफ खींचे तो चतुरस्र कुण्ड बराबर सिद्ध होता है। इसी प्रकार सब कुण्डों के पहले चतुरस्र क्षेत्र बना ले तब उसके ऊपर कुण्ड खींचे॥

(चतुरस्र कुण्डस्वरूपम्)
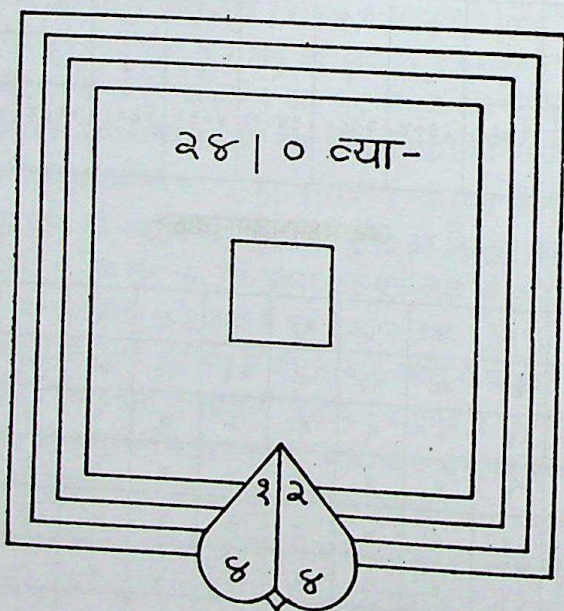
प्रकृतिक्षेत्र का २४ भाग करे। उसके ५ भाग लेवे, वह अपने बत्तीसवां हिस्सा से युक्त अर्थात् बत्तीसवां हिस्सा से युक्त करने पर ५ अं० १ यव २ यूका हुआ, इतने को

प्रकृति क्षेत्र के मध्य में आगे बढ़ावे और पीछे के दोनों भाग चतुरस्र में चारों कोण से रेखा देकर कर्णांघ्रि (दोनों के मध्य) में परकाल रखकर दो आधावृत्त करे और पार्श्व से आगे चिह्न से रेखा देने पर शुद्ध **योनिकुण्ड** होता है।

(योनिकुण्डस्वरूपम्)
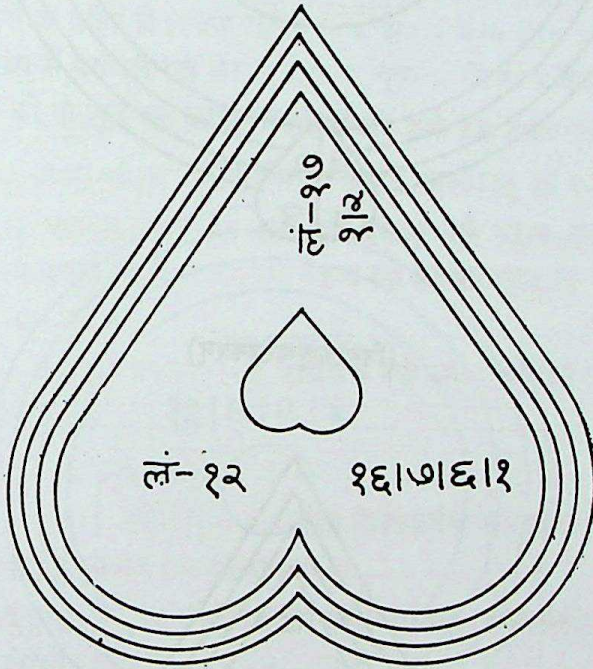
प्रकृति क्षेत्र २४ का पांचवां अंश ले (५ ।६ ।३ ।१ ।५) वह कैसा हो कि शतांश (शतांश०/०३ ।० ।४) इससे युक्त ४ अं० ६ यव ६ यूका २ लिक्षा १ बालाग्र इतना जो इषुभाग है वह २४ अं० के क्षेत्र में से घटावे तो १९ अं० १ यव १ यूका ६ लिक्षा ४ बालाग्र होगा इतने चतुरस्र के मध्य में परकाल रखकर वृत्त का आधा खींचे। वृत्तार्ध के आगे सूत्र देवे तो अर्ध चन्द्र शुद्ध होता है।

(अर्धचन्द्रस्वरूपम्)
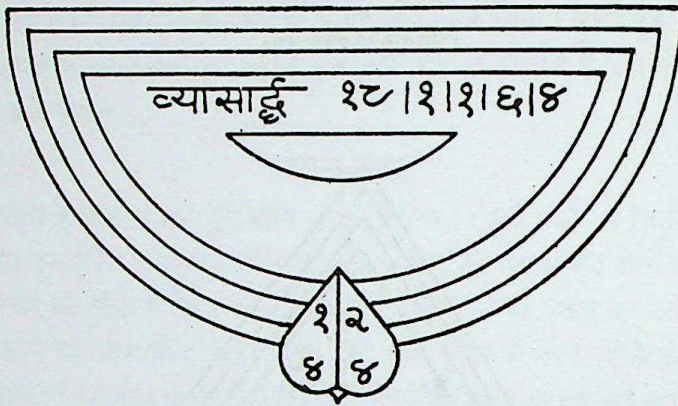
(त्रिकोणकुण्डस्वरूपम्)
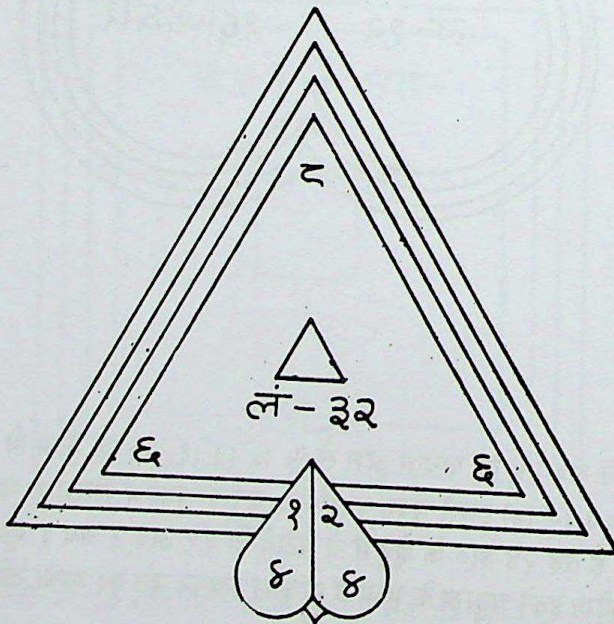
प्रकृति क्षेत्र का २४ हिस्सा करे, उसमें से तृतीयांश (याने ८ अंगु०) लेकर प्रकृति क्षेत्र, जो चतुरस्र है उसमें आगे पूर्व की तरफ बढ़ावे और २४ का चौथा हिस्सा ६ अंगुल हुआ सो छः छः अंगुल चतुरस्र की दोनों श्रेणी में दक्षिण-उत्तर की तरफ बढ़ावे। बाद में तीनों चिह्न से मिलाकर सूत्र देने से त्र्यस्र याने त्रिकोण कुण्ड सिद्ध होता है।

वृत्त कुण्ड

प्रकृति क्षेत्र के २४ भाग करे, उसमें २४ अंगुल लेवे, वह १३ अंगुल के अपने चौबीसवें हिस्से के सहित हो (२४वां हिस्सा = ४ अं० २ यू/५ लि० २ बालाग्र) तब चतुरस्र के मध्य में परकाल रख कर (१३/४/२ यूका ५ लिक्षा २ बालाग्र इतने के व्यासार्ध) वृत्त करे तो शुद्ध **वृत्त कुण्ड** होता है।

(वृत्तकुण्डस्वरूपम्)
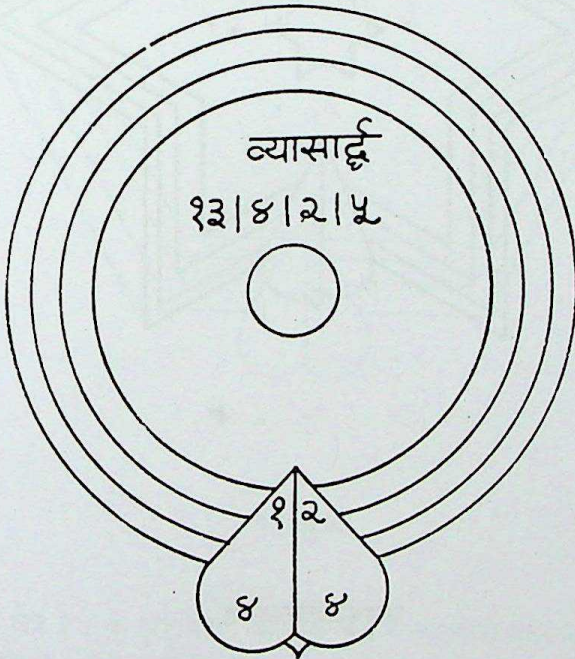
(विषमषडस्रकुण्डस्वरूपम्)

अब वायव्य कोण में षट्कोण कुण्ड कहते हैं—प्रकृति क्षेत्र १८ अंगुल उसमें से १७ अंगुल लेवे, उस अट्ठारह अंगुल का ७२वां हिस्सा युक्त हो तो बहत्तरवां हिस्सा २ यव हुआ तो १८ अंगुल १ यव के परकाल से वृत्त करना (गोल) उत्तर तरफ से उसी परकाल से वृत्त में ६ चिह्न करना। एक-एक चिह्न को छोड़कर तीसरे चिह्न पर सूत्र देने से और सब सन्धि की रेखा मिटाने से षट्कोण सिद्ध होता है।

(विषमषडस्रकुण्डस्वरूपम्)
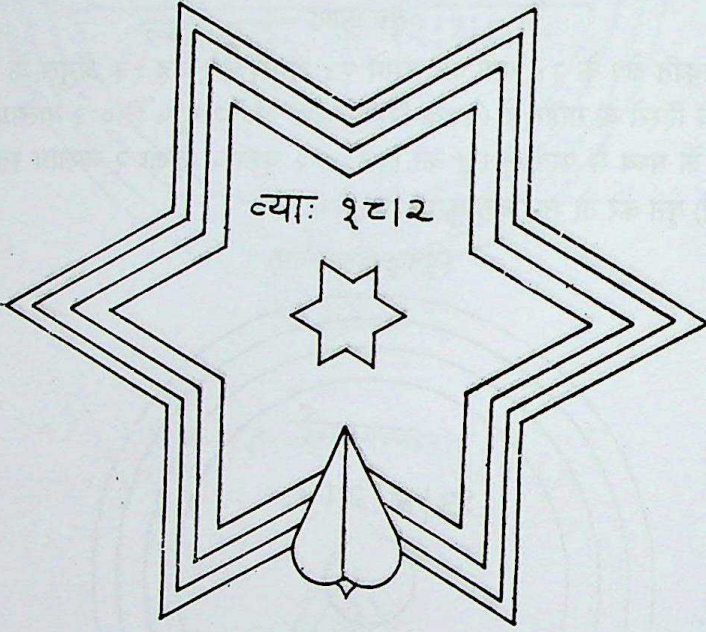
समभुजषडस्रकुण्ड

अब दूसरा षडस्रकुण्ड समभुजमृदङ्गाकार कहते हैं । प्रकृति क्षेत्र का २४ भाग करे । उसमें से तिथि भाग १५ जो हैं, वह अपने १३०वें भाग से हीन करे, हीन करने से ४ अं० ८ यव २ यूका परकाल से वृत्त (गोल) करे । उस वृत्त में उत्तर दिशा से उसी परकाल से ३ चिह्न करे । छहों चिह्नों से परस्पर सूत्र देने और संवृत्ति मिटाने से समभुज **षडस्रकुण्ड सिद्ध** होता है ।

(समभुजषडस्रकुण्डस्वरूपम्)
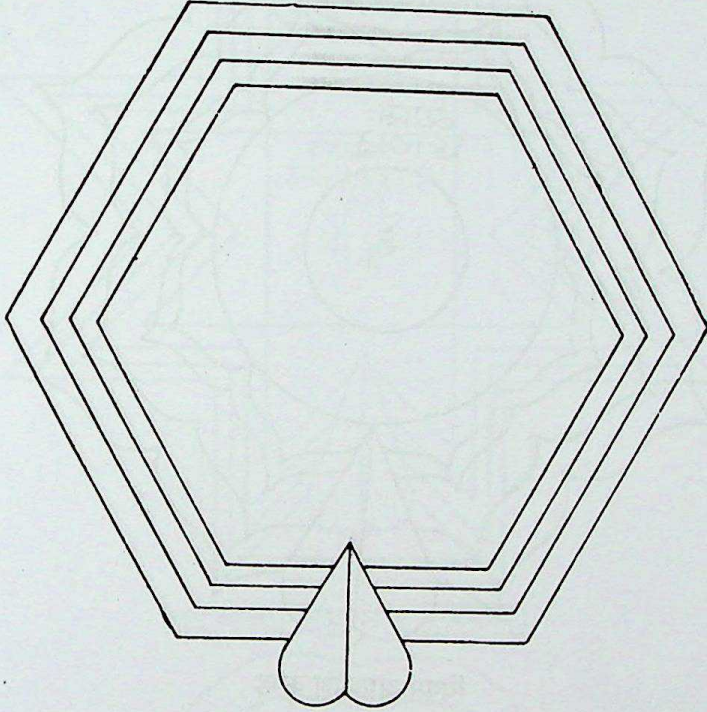
पद्मकुण्ड

प्रकृति क्षेत्र २४ के अष्टमांश एक-एक वृत्त में अष्टमांश बढ़ा-बढ़ा कर ५ वृत्त करे। परन्तु पांचवें वृत्त में वह अष्टमांश अपने ३८वें हिस्से से हीन करके उस अष्टमांश के व्यासार्ध से १ अं० ७ यव २ यूका २ लिक्षा २ बालाग्र से पांचवां वृत्त करे। पहला वृत्त ३ अंगुल, ७ यव २ यूका १ लि० २ बा० के परकाल से करके अन्तिम वृत्त में १६ चिह्न करे। दिशा-विदिशा व विदिशा-दिशा के बीच में पांचवें चिह्न पर परकाल रखकर दिशा-विदिशा में ७ पत्र करे और पत्र के मध्य तथा केसर को छोड़कर कर्णिका के मध्य में खने तो स्वच्छ **पद्मकुण्ड सिद्ध** होता है।

(पद्मकुण्डस्वरूपम्)
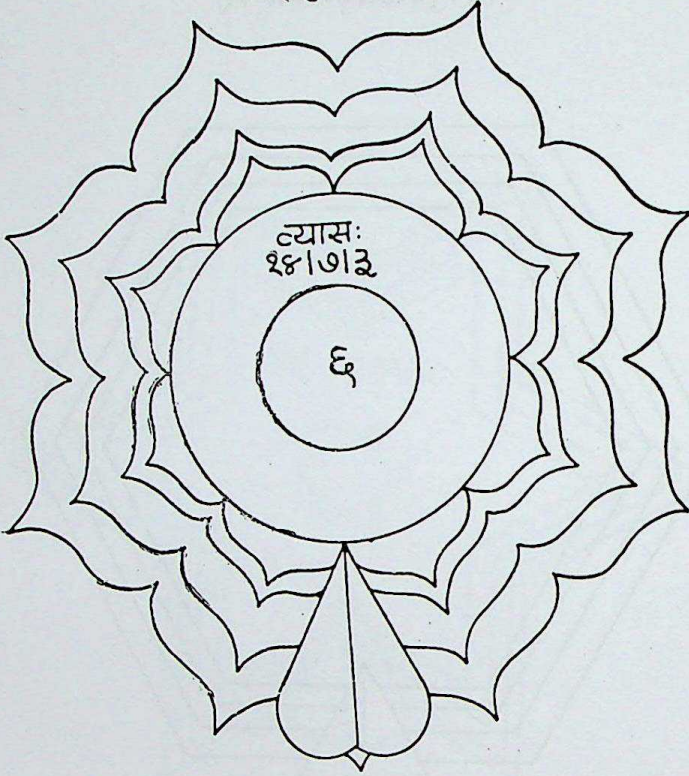
विषम अष्टकोण कुण्ड

प्रकृति क्षेत्र २४ उसमें से १० हिस्सों को अपने २८वें हिस्से के सहित लेवे तो १८ अंगुल ५ यव १ यूका लिक्षा १ बालाग्र हुआ। इतने के व्यासार्द्ध को परकाल से वृत्त करे और दिशा-विदिशा के मध्य में ८ चिह्न करे। बाद में दो-दो चिह्न के मध्य में छोड़-छोड़ कर तीसरे चिह्नों को मिला कर ८ रेखा देवे। बाद में वृत्त व सन्धियों को मिटा देवे तो विषम भुज (याने विषम **अष्टकोण कुण्ड**) होता है।

अष्टास्त्रमृदंगाकारकुण्ड

अब दूसरा यम **अष्टास्त्र मृदङ्गाकार** कुण्ड कहते हैं। प्रकृति क्षेत्र २४ अंगुल में से क्षेत्र १४ अंगुल लिया। वह १४ अंगुल कैसा हो कि अपने ४७वें अंश से युक्त हो तो १४ अंगुल २ यव ३ यूका के व्यासार्द्ध में परकाल से वृत्त करे। उस वृत्त का दिशा-विदिशाओं के मध्य में चिह्न देकर परस्पर चिह्नों को मिलाकर सूत्र देने से सम वृत्त मिलने से मृदङ्गाकार शुद्ध **सम अष्टास्त्र कुण्ड** होता है।
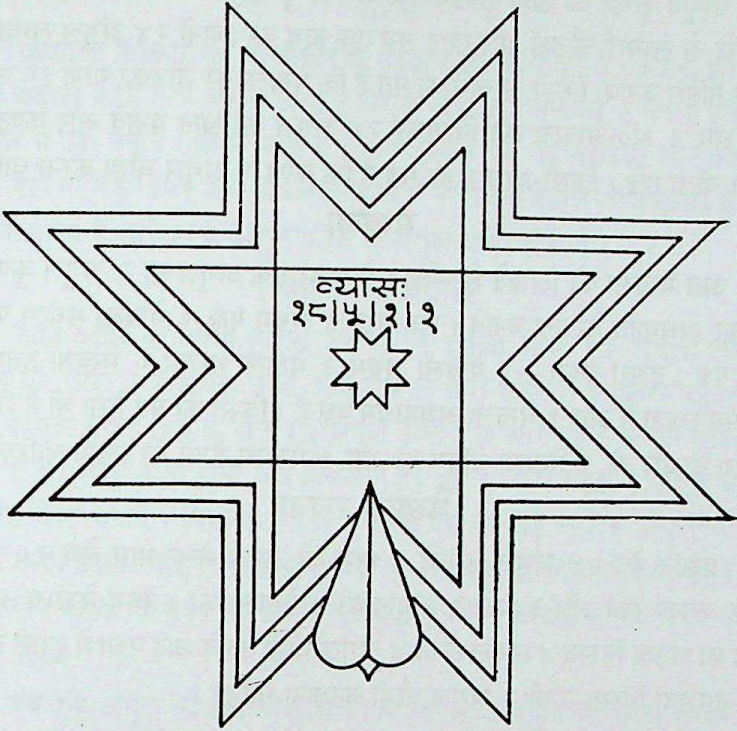
(सम अष्टास्त्रमृदङ्गाकारकुण्डस्वरूपम्)
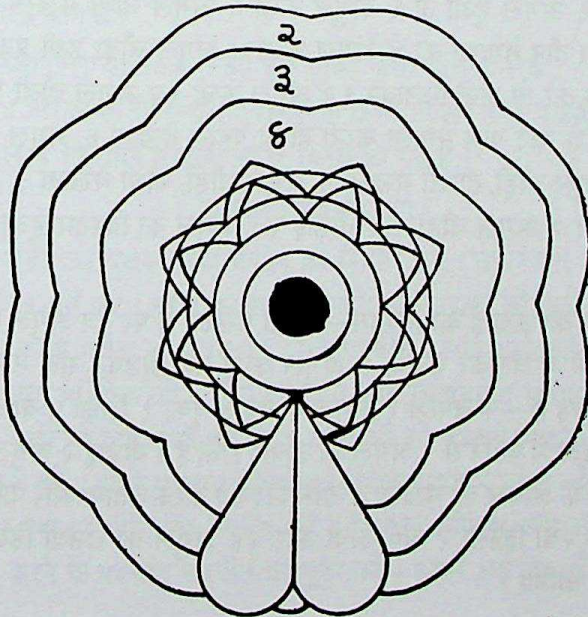
सम्पूर्ण कुण्डों का खात कुण्डमान के बराबर कुण्डाकार बनावे अर्थात् १ हाथ का कुण्ड हो तो लम्बाई-चौड़ाई और खात सब एक हाथ करे (यानी २४ अंगुल लम्बा, २४ अंगुल गहिरा बनावे) किसी आचार्य का मत है कि मेखला को छोड़कर यानी १५ अंगुल खात और ९ अं० मेखला सब मिलाकर २४ अंगुल का खात बनावे और कण्ठ एक अंगुल चौड़ा रखे। किसी आचार्य का मत है कि कुण्ड २ अंगुल चौड़ा करना चाहिएं।

मेखला

अब मेखला को लिखते हैं—खात से बाहर एक अंगुल या २ अंगुल कुण्ड को छोड़कर अधमादि मेखला बनावे। एक मेखला अधम पक्ष, २ मेखला मध्यम पक्ष, ३ उत्तम पक्ष। दूसरा प्रकार—२ मेखला अधम, ३ मेखला मध्यम, ५ मेखला उत्तम, यह पक्ष सबने कहा है और १ मेखला अधमाधम पक्ष है। किसी का मत ऐसा भी है कि तीन मेखला ब्राह्मण को, २ मेखला क्षत्रिय को और १ मेखला वैश्य को रखना चाहिए।

मेखला रचना

प्रकृति क्षेत्र २४ अंगुल, उसको ८ भाग करे, उसमें से ५ भाग लेवे, १५ अंगुल उसके बराबर खने और ३ भाग ९ अंगुल की ३ मेखला करे। प्रथम मेखला ऊपर के कुण्ड का छठवां हिस्सा ४ अंगुल ऊंची, ४ अंगुल चौड़ी उसके बाद मध्य में दूसरी मेखला नीचे बारहवां हिस्सा ऊंची २ अंगुल चौड़ी बनवाना चाहिए।

एक मेखला करने की विधि—क्षेत्र का चौथा हिस्सा क्षेत्र २४ अंगुल, उसका चौथा हिस्सा ६ अंगुल हुआ तो ६ अंगुल ऊंची ६ अंगुल चौड़ी मेखला करे। दूसरा प्रकार—समान तीन मेखला का ४ अंगुल ऊंचा ४ अंगुल चौड़ा, इसी प्रकार से दूसरी तीसरी मेखला करे तो तीनों मिलाकर १२ अंगुल ऊंची १२ अंगुल चौड़ी मेखला हुई। पहले के क्रम से यदि पांच मेखला करनी हो तो पहली मेखला ६ अंगुल चौड़ी, दूसरी मेखला ५ अंगुल चौड़ी, तीसरी मेखला ४ अंगुल चौड़ी, चौथी मेखला ३ अंगुल चौड़ी, पांचवीं मेखला २ अंगुल चौड़ी, सब चौड़ाई २० अंगुल का विस्तार हुआ और ऊंचाई ९ अंगुल है।

मेखला की ऊंचाई का विभाग—पहली मेखला से परे नव अंगुल का पञ्चमांश सब मेखलाओं में घटाकर बनावे, १ अंगुल कण्ठ को छोड़कर सब मेखला बनावे। जिसका क्रम यह है—पञ्चमांश १ अंगुल ६ यव ३ यूका १ लिक्षा ५ बालाग्र होता है। इतने सब मेखला में घटाने से ९ अंगुल की ऊंचाई होती है। चौड़ाई २ अंगुल के मुकाबले में और कुण्ड के आकार की मेखला व नाभि निश्चय करके बताना और नाभि की ऊंचाई २४ अंगुल १२वां हिस्सा २ अं० ऊंची और २४ अंगुल का छठवां हिस्सा ४ अंगुल चौड़ी बनानी चाहिए।

नाभि

कुण्ड के आकार की या कमल के आकार की नाभि बनावे। उसका प्रकार यह है कि चतुरस्त्र नाभि में २ अंगुल ऊंचा ४ अंगुल चौड़ा तीन वृत्त करें, ८ पत्र २ अंगुल के विस्तार में उसे बनावे। बाकी मध्य में जितनी जमीन बचे वह कर्णिका और केसर का स्थान याने पद्मकुण्डवत् जाने और पद्मकुण्ड में नाभि नहीं केवल कर्णिकामात्र है। एक हाथ के कुण्ड में कर्णिका ६ अंगुल ऊंची, ६ अंगुल चौड़ी होती है।

योनि का प्रकार

योनि व्यास का आधा (व्यास २४ अंगुल, इसका आधा १२ अंगुल) लम्बी ८ अंगुल की, चौड़ी १२ अंगुल ऊंची और नीचे से भारी ऊपर १ अंगुल संचलित और पृथ्वी के मूल सहित छिद्र के नाल १२ अंगुल ऊंची और आगे को १ अंगुल झुकती हुई भीतर १ अंगुल कुण्ड के बाहर अग्र निकलती हुई और मध्य में गड़हा १ अंगुल कछुआ की पीठ जैसा बनावे। मिट्टी का गोला २ दोनों पुष्ट पर रखे और १ अंगुल चौड़ी १ अंगुल ऊंची उसकी परिधि चारों तरफ रखे, यह अश्वत्थ (पीपल) पत्राकृति योनि होती है, इसे सब कुण्डों के मध्य में लगाना चाहिए और योनि के अग्रभाग के मध्य में छिद्र कर के रखे।

जब १२ अंगुल की तीनों मेखला समान चार-चार अंगुल की करनी हो तो योनि १० अंगुल चौड़ी, १५ अंगुल लम्बी और १५ अंगुल ऊंची बनावें। शेष जो है वह सब पहिले की तरह जानना।

अब स्थण्डिल का प्रकार कहते हैं। सुवर्ण जैसी मृत्तिका लेकर १ हाथ लम्बी, १ हाथ चौड़ी, ४ अंगुल ऊंची अथवा एक अंगुल ऊंची चौकोर वेदी बनावे, थोड़े हवन में और स्थण्डिल में भी योनि मेखला करना, किसी का मत है।

सर्वदेव प्रतिष्ठानुक्रमः

भूमि आदि का पूजन करके मण्डप का निर्माण करे। तत्पश्चात् शरीर शुद्धि के लिये प्रायश्चित्त कर्म करे। स्नान कर सन्ध्या-आदि कर ब्राह्मणों को बुला कर पूर्व दिशा की ओर मुख करके गणेश का पूजन करे, इसके पश्चात् कलश पूजन करे, पुण्याह वाचन करने के पश्चात् अभिषेक करे। गौर्य्यादिपूजन करने के पश्चात् घृतमातृका का पूजन करे, आयुष्य मन्त्रों का पाठ करते हुए नान्दी श्राद्ध को करे। सभी ब्राह्मणों का वरण कर मधुपर्क से पूजा करे। इसके पश्चात् सपत्नीक यजमान मण्डप में प्रवेश करे। अग्निकोण में कलश को रखकर पीठों का निर्माण करे। दिग्रक्षण, प्रोक्षण और वास्तुपूजन करे मण्डप-पूजन करने के पश्चात् भद्रपीठ की पूजा करे। उसमें सब लक्षणों से युक्त घट

की स्थापना करें। फिर अग्नि उत्तारणपूर्वक प्रधान देवता की स्थापना करे। कुण्डपूजन करने के पश्चात् अग्नि की स्थापना करे। फिर ग्रहों की स्थापना कर पूजन करे, फिर ईशान कोण में कलश की स्थापना करे, योगिनी, क्षेत्रपाल की स्थापना कर पूजन करे, फिर ईशान कोण में कलश की स्थापना करे, योगिनी, क्षेत्रपाल आदि का क्रम के अनुसार पूजन करे। कुशकण्डिका करने के पश्चात् होम कर्म करें।

इतना कर्म पहले दिन करना चाहिए।

उसी दिन सायंकाल को कर्मकुटी—जिसमें मूर्ति का निर्माण किया गया है, या मूर्ति पड़ी हुई है—उस पर कर्म करे। वहां स्थण्डिल बना कर हवन करे। वहीं जलाधिवासन करे, वहीं अन्नाधिवासन करे। दूसरे दिन देव प्रतिमा को रथ पर चढ़ा कर स्नान-मण्डप की ओर ले जाये। वहां भद्र पीठ पर देव को पूर्वाभिमुख बिठा देवे। वहां पर देवता को स्नान करवा कर ग्राम की प्रदक्षिणा करवाये। याग मण्डप में आकर मधुपर्क से देव का पूजन करे, वहां पर शय्याधिवासन करे। फिर प्रतिमा का न्यास विधान करे। निद्राकुम्भ की स्थापना कर, यथाविधि पूजन करे। देवता के निमित्त होम कर के आवरण और अभ्यर्चन करे। शान्ति और पौष्टिक हवन करके परिवार सहित देव का अधिवासन करे, फिर प्रासाद का अधिवासन करके, प्रासाद के शिखर की प्रतिष्ठा करे। तत्पश्चात् ध्वज का आरोपण करके प्रासाद की उत्सर्ग विधि को करे। तीसरे दिन देवता की प्रतिष्ठा करके परिवार की स्थापना करे। देवता के निमित्त होम करके देव से प्रार्थना करनी चाहिए। देवता का षोडशोपचार पूजन करके देवता का नामकरण करना चाहिए। देवता की प्रतिष्ठा के निमित्त मण्डलस्थ देवताओं के निमित्त हवन करना चाहिए। वहां घृत से नौ आहुतियों दें, स्विष्टकृत कार्य करे। दिक्पालों के लिए बलि दे, क्षेत्रपाल के लिये बलि दे। पूर्णाहुति देकर वसोर्द्धारा दे—त्र्यायुष कर्म करने के पश्चात् प्राशन करे, दक्षिणा दे। अभिषेक आदि करके मण्डपस्थ देवताओं का विसर्जन कर सूर्यार्घ्य देकर कर्म की समाप्ति करके ब्राह्मण भोजन करवा कर कर्म समाप्त करे।

प्रासाद पर ध्वजारोपण का विधान

पूर्वकाल में देवता और असुरों में जो भीषण युद्ध हुआ, उसमें देवताओं ने अपने अपने रथों पर जिन-जिन चिह्नों की कल्पना की, वे ही उनके ध्वज कहलाये।

ध्वज का लक्षण—ध्वज का दण्ड सीधा, व्रण रहित और प्रासाद के व्यास के बराबर लम्बा होना चाहिए अथवा चार, आठ, दस, सोलह या बीस हाथ लम्बा होना चाहिए। ध्वजा का दण्ड बीस हाथ से लम्बा नहीं होना चाहिए, सम पर्वों वाला हो, गोलाई चार अंगुल होनी चाहिए।

ध्वजा पर लगने वाला चिह्न—भगवान् विष्णु के ध्वज पर गरुड़, शिव जी की ध्वजा पर वृष, ब्रह्मा जी की ध्वजा पर पद्म, सूर्य देव की ध्वजा पर व्योम, दुर्गा की ध्वजा पर सिंह, उमा देवी की ध्वजा पर गोधा, गणपति की ध्वजा पर मूषक, श्री राम की ध्वजा पर धनुष, श्री कृष्ण की ध्वजा पर चक्र का चिह्न होना चाहिये।

दण्ड एवं पताका का रंग—विष्णु की ध्वजा का दण्ड सोने का, पताका पीत वर्ण की; शिव जी का ध्वज दण्ड चांदी का और श्वेत वर्ण की पताक़ा। ब्रह्मा का ध्वज दण्ड तांबे का और पद्म वर्ण की पताका। सूर्य नारायण का ध्वज दण्ड सोने का और व्योम के नीचे पंचरंगी पताका। कार्तिकेय का ध्वज दण्ड त्रिलोह का, मयूर के समीप चित्र वर्ण की पताका। गणपति का ध्वज दण्ड तांबे का, पताका शुक्ल वर्ण की। चामुण्डा का ध्वज दण्ड लौह का, नीले वर्ण की ध्वजा। गौरी का ध्वज दण्ड सुवर्ण का और पताका अनेक वर्ण की। भगवती का ध्वज दण्ड सर्वधातुमय, सिंह के समीप तीन रंग की पताका। श्री राम का ध्वज दण्ड सुवर्ण का, पताका केसरी रंग की। श्री कृष्ण का ध्वज दण्ड सुवर्ण का, पताका पीत वर्ण की।

ध्वज का पहले निर्माण करे, उसका अधिवासन करें। कलश स्थापन कर सर्वौषधि से मिश्रित जल से अभिषेक कर, ध्वजा का पूजन करे। स्वस्तिवाचन, मंगल कृत्य सम्पन्न कर जयघोषों के साथ ध्वज को मन्दिर पर आरूढ़ करे। ध्वजारोहण के समय अनेक प्रकार के वाद्यों को बजाए। ध्वजारोहण के बिना मन्दिर नहीं रखना चाहिये। ध्वजारोहण के समय इस मन्त्र को पढ़े—ॐ एह्येहि भगवान् ईश्वर विनिर्मित उपरिचर, वायु मार्गानुसारिन् श्री निवास रिपु दहन यक्षनिलय सर्वदेव प्रियं कुरु सान्निध्यं शान्तिं स्वस्त्ययनं च। भयं सर्वविघ्नाः व्यपसरन्तु।

एह्येहि भगवान् देव देववाहन वै खग। श्रीकरः श्री निवासश्च जय जैत्रोपशोभित। व्योमरूप महारूप धर्मात्मंस्त्वं च वै गतेः। सान्निध्यं कुरु दण्डेऽस्मिन् साक्षी च ध्रुवतां व्रज। कुरु वृद्धिं, सदा कर्तुः प्रासादस्यार्कवल्लभ।

वास्तुमण्डल के देवता

वास्तु मण्डल के ४५ देवता हैं—

शिखि, पर्जन्य, जयन्त, कुलिशायुध, सूर्य, सत्य, वृष, आकाश, वायु, पूषा, वितव्य, गुहा, यम, गन्धर्व, मगृराज, मृग, पितृगण, दौवारिक, सुग्रीव, पुष्पदन्त, वरुण, असुर, पशु, पाश, रोग, अहि, मोक्ष, भल्लाट, सोम, अदिति, दिति, अप, सावित्र, जय, रुद्र, अर्यमा, सविता, विवस्वान, विवुधाधिप, मित्र, राजयक्ष्मा, पृथ्वीधर, आपवत्स, ब्रह्मा। इन पैंतालीस देवताओं के साथ वास्तु मण्डल के बाहर ईशानकोण में चरकी, अग्निकोण में विदारी, नैर्ऋत्य कोण में पूतना, वायव्य कोण में पापराक्षसी की स्थापना करनी चाहिए।

मण्डप की पूर्वदिशा में स्कन्ध, दक्षिण में अर्यमा, पश्चिम में जृम्भक, उत्तर में पिलिपिच्छ की स्थापना करनी । वास्तुमण्डल की रेखाएं श्वेत वर्ण से तथा मध्यम कमल लाल वर्ण से तथा शेष वास्तुमण्डल को लाल रंग से रंजित करना चाहिए ।

मन्त्र—वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान् तत्त्वावेशो अनमीवो भवान्। यत् त्वेमहे प्रतितन्नो जुषस्व शं नो भवद्विपदे चतुष्पदे ॥ ऋ ७ ।५४ ।१ ॥ से स्थापना करे ।

ध्यानम्— श्वेत चतुर्भुजं शान्तं कुण्डलाद्यैरलंकृतम्,
पुस्तकं चाक्षमालां च वराभयकरं परम् ।
पितृ वैश्वनरोपेतं कुटिलभ्रूपशोभितम् ।
कराल वदनं चैव आजानुकर लम्बितम् ।

इस प्रकार ध्यान कर गन्धाक्षत—आदि से पूजन करे ।

वास्तुवेदी के मध्य में कलश की स्थापना करे । कलश में सप्तमृत्तिका, पारिजात, कृष्णशंख पुष्पी, आमलकी, खीरा, मालती, चंपक तथा ककडी—इन वनस्पतियों को छोड़े । नीम के पत्रों से कलश के मुख को वेष्टित करे । तथा पंचपल्लवों की स्थापना करे । कलश पर नारिकेल, दाडिम, धात्री तथा जम्वू फल रखे ।

अथ मण्डपादि पूजन-प्रकारः

रुद्रयाग, विष्णुयाग या मूर्ति प्रतिष्ठा के समय बनाये गये सोलह स्तम्भों वाले यज्ञमण्डप की पूजा करे। मण्डप में स्थापनीय देवताओं का पूजन आदि कर उनसे सम्बन्धित तोरणों को स्थापित करे।

विधि—सर्वौषधियुक्त जल से स्नान कर शुद्ध वस्त्र धारण करके शुक्ल वर्ण के चन्दन को लगाकर सपत्नीक यजमान आचार्य एवं ऋत्विक् सहित पूर्ण कलश को हाथ में लेकर मंगल वाद्यों की ध्वनि के साथ मण्डप में प्रवेश कर शुद्ध आसनों पर बैठकर—

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः भद्रम्पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैः स्तुष्टुवा॑ सस्तनूभिर्व्यशे महि देवहितं यदायुः।

इत्यादि वेद घोष से मण्डप का पूजन करे।

आचम्य प्राणानायम्य—संकल्पः ॐ अद्येत्यादि देशकालौ संकीर्त्य अमुकगोत्रः अमुकशर्माहं सपत्नीकोऽहं सप्रासाद विष्ण्वादि अमुकदेव प्रतिष्ठायां तदङ्गतया गणेश पूजापूर्वकं मण्डपदेवता स्थापनादिकं करिष्ये—

इति संकल्प्य—यथाविधि गणेशं संपूज्य स्तम्भपूजनं कुर्यात्।

मध्यवेद्या ईशानादितः प्रदक्षिण—क्रमेण ऐशान्यां ब्रह्माणम् पूजयेत्—

१. ब्रह्म पूजनम्—

आवाहयामि देवेशं ब्रह्ममूर्तिं पितामहम्।
पुस्तकं चाक्षसूत्रं च शूल-हस्तं कमण्डलुम्॥
हंस-पृष्ठ समारूढं देवतागण-सेवितम्।
आगच्छ भगवन् ब्रह्म प्रथमस्तम्भसंस्थितः॥

ॐ ब्रह्मजज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद् विसीमतः सुरुचो वेन आवः। स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठा सतश्च योनिमसतश्च विवः॥१३/३

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मन् इहागच्छ इह तिष्ठ इत्यावाह्य—ब्रह्मणे नमः इति गन्धादिभिः पूजयेत्।

२. विष्णु पूजनम्—आग्नेय स्तम्भे—

आवाहयामि देवेशं विष्णुं त्रैलोक्य-पूजितम्।
शंख-चक्रगदापद्म चतुर्वाहुं सुशोभनम्॥

गरुडे च समारूढं लक्ष्मीगणसमायुतम् ।
आगच्छ भगवन् विष्णो द्वितीयस्तम्भसंस्थितः ॥

ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पाᳪसुरे । ५/१५

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णो इहागच्छ इह तिष्ठ इत्यावाह्य पूजयेत् ।

३. रुद्र पूजनम्—नैर्ऋत्य स्तम्भे—

आवाहयामि देवेशं शिवं त्रैलोक्य-धारिणम् ।
वृषभे च समारूढं चन्द्रार्ध-कृतशेखरम् ।
त्रिशूलायुधसंयुक्तं मुण्डमालाविभूषितम् ॥
उमागणसमायुक्तं नागयज्ञोपवीतकम् ।
आगच्छ देव देवेश तृतीयस्तम्भसंस्थितः ॥

ॐ नमस्ते रुद्रमन्यव उतोत इषवे नमः । बाहुभ्यामुत ते नमः ।१६/१

ॐ भूर्भुवः स्वः शिव इहागच्छ इह तिष्ठ इत्यावाह्य पूजयेत् ॥

४. इन्द्रम्—वायु कोणे—

आवाहयामि देवेशं सहस्राक्षं पुरन्दरम् ।
ऐरावत-गजारूढं वज्रायुधसमन्वितम् ॥
शचीपतिं महाबाहुं नानाभरणभूषितम् ।
आगच्छ देवराजेन्द्र चतुर्थस्तम्भसंस्थितः ॥

ॐ त्रातारमिन्द्र मवितारमिन्द्रᳪ हवे हवे । सुहवᳪ शूरमिन्द्रम् । ह्वयामि शक्रम्पुरुहूतमिन्द्रं स्वस्तिनो मघवा धात्विन्द्रः ।२०/५०

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्र इहागच्छ इह तिष्ठ इत्यावाह्य पूजयेत् ।

ततो वाह्य स्तम्भेषु ईशान-कोणादारभ्य द्वादश-स्तम्भ-पूजनम् ।

५. तत्र ईशान कोणे सूर्यम्—

आवाहयामि देवेशं भास्करं तिग्मतेजसम् ।
सप्ताश्व वाहनारूढं रथे काञ्चन निर्मिते ॥
रक्ताङ्गं पद्महस्तं च त्रैलोक्य तिमिरापहम् ।
सर्व दुःखहरं देवं ब्रह्मण्यमधिक-प्रभम् ॥
आगच्छ रक्षक त्वं च पंचमस्तम्भसंस्थितः ॥

ॐ आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतम्मर्त्यञ्च। हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् ।३३/४३

ॐ भूर्भुवः स्वः सूर्य इहागच्छ इह तिष्ठ इत्यावाह्य पूजयेत्।

६. ईशान-पूर्वयोरन्तराल स्तम्भे गणेशम्—

आवाहयामि देवेशं गणनाथं विनायकम्।
लम्बोदरं महाकायं गजवक्त्रं गणेश्वरम्॥
सिद्धिबुद्धि प्रदातारं सर्व-विघ्न विनाशकम्।
सर्वेषामेव देवानां मुख्यं देवं महावलम्॥
आगच्छ गण-नाथस्त्वं षष्ठस्तम्भ समाश्रितः॥

ॐ गणानां त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियाणांत्वा प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनान्त्वा निधिपतिꣳ हवामहे।

वसो मम आहम जानि गर्भधमात्वमजासि गर्भधम्॥२३/१९

ॐ भूर्भुवः स्वः गणपते इहागच्छ इह तिष्ठ इत्यावाह्य पूजयेत्।

७. ततः पूर्वाग्न्योरन्तराल स्तम्भे यमम्—

आवाहयामि देवेशं यमं जन्तु भयंकरम्।
रौद्रमूर्तिं विरूपाक्षं कृष्णाञ्जन समप्रभम्।
माहिषे रथमारूढं दण्डायुधसमन्वितम्।
कर्मणां साक्षिणं देवं धर्मार्थ कामचिन्तनम्।
आगच्छ धर्मराजेन्द्र सप्तमस्तम्भसंस्थितः॥

ॐ यमायत्वा मखाय त्वा सूर्य्यस्य त्वा तपसे। देवस्त्वा सवितामध्वा नक्तु पृथिव्या सꣳ स्पृशस्पाहि। अर्चिरसि शोचिरसि तपोऽसि॥२७/११

ॐ भूर्भुवः स्वः यम इहागच्छ इह तिष्ठ इत्यावाह्य पूजयेत्।

८. ततोऽग्निकोण स्तम्भे शेषम्—

आवाहयामि देवेशं पाताल तल वासिनम्।
सहस्त्रशिरसं देवं फणामणि विभूषितम्॥
आशीविषशतोपेतमष्टमस्तम्भसंस्थितम्॥

ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु । ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः ॥१३/६

ॐ भूर्भुवः स्वः शेष इहागच्छ इह तिष्ठ इत्यावाह्य पूजयेत् ।

९. आग्नेय दक्षिणयोरन्तराल स्तम्भे स्कन्दम्—

आवाहयामि देवेशं षण्मुखं कृत्तिकासुतम् ।
रुद्रवीर्य समुद्भूतं देवगणसमन्वितम् ।
सर्वशास्त्रपरिज्ञातं तत्त्वज्ञं ब्रह्मवादिनम् ।
मयूरासनमारूढं सौम्यमूर्तिं शुभाननम् ।
आगच्छ देव देवेश नवमस्तम्भ संस्थितः ।

ॐ यदक्रन्द प्रथमञ्जायमान उद्यन्त्समुद्रादुतवा पुरीषात् । श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहू उपस्तुत्यं महिजातं ते अर्वन् ॥२९/१२

ॐ भूर्भुवः स्वः भो स्कन्द इहागच्छ इहतिष्ठ इत्यावाह्य पूजयेत् ।

१०. दक्षिण नैर्ऋत्यान्तराल स्तम्भे वायुम्—

आवाहयामि देवेशं भूतानां प्राणसंज्ञितम् ।
सर्वाधारं महादीप्तिं वाह्याभ्यन्तर संस्थितम् ।
कृष्णमृग समारूढं ध्वजायुध समन्वितम् ॥
आगच्छ भगवन् वायो स्तम्भेऽस्मिन् सन्निधो भव ॥२७/३२

ॐ वायो ये तो सहस्रिणो रथासस्तेभिरा गहि । नियुत्त्वान्त्सोमपीतये ।
ॐ भूर्भुवः स्वः वायो इहागच्छ इह तिष्ठ इत्यावाह्य पूजयेत् ।

११. ततो निर्ऋति स्तम्भे सोमम्—

आवाहयामि देवेशं शशिनं रात्रिनायकम् ।
क्षीरोदधि समुद्भूतं रुद्रशीर्ष निवासिनम् ।
शुद्ध स्फटिकसंकाशं मुकुटोज्ज्वल भूषितम् ।
आगच्छ सोमदेवेश स्तंभेऽस्मिन्सन्निधो भव ।

ॐ आप्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यम् । भवावाजस्य सङ्गथे । १२/११२

ॐ भूर्भुवः स्वः सोम इहागच्छ इहतिष्ठ इत्यावाह्य पूजयेत् ।

१२. ततो निर्ऋति पश्चिमयोर्मध्यस्तम्भे वरुणम्—

आवाहयामि देवेशं वरुणं जलनायकम् ।
कुम्भे रथसमारुढं श्वेताद्रि शिखरोपमम् ॥
पाशहस्तं महाबाहुं सर्वेषामभयप्रदम् ।
आगच्छ वरुणेशान द्वादशस्तम्भ संस्थितः ॥
ॐ इमम्मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय । त्वामवस्युराचके ।२१/१
ॐ भूर्भुवः स्वः वरुण इहागच्छ इह तिष्ठ इत्यावाह्य पूजयेत् ।

१३. पश्चिम वायव्योर्मध्ये स्तम्भे अष्टवसून्—

आवाहयामि देवेशान् वसूनष्टौ महावलान् ।
अश्ववाहन संयुक्तान् पुष्पमाला विभूषितान् ।
वसवोऽष्टावागच्छन्तु त्रयोदश समाश्रिताः ।

ॐ वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्त्रधारम् । देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः ।१/३

ॐ भूर्भुवः स्वः वसव इहागच्छत इह तिष्ठत इत्यावाह्य पूजयेत् ।

१४. वायव्य स्तम्भे धनदम् (कुवेरम्) —

ॐ आवाहयामि देवेशं धनदं यक्षपूजितम् ।
महाबलं दिव्यदेहं नरयानगतं विभुम् ।
दिव्यमालाम्वरधरं गदाहस्तं महाभुजम् ।
आगच्छ यक्षराज त्वं स्तम्भेऽस्मिन्सन्निधो भव ॥

ॐ वय ँ सोमव्रते तव मनस्तनूषु विभ्रतः । प्रजावन्तः सचेमहि । ३/५६

ॐ भूर्भुवः स्वः कुवेर इहागच्छ इह तिष्ठ इत्यावाह्य पूजयेत् ।

१५. वायव्योत्तरयोरन्तराल स्तम्भे वृहस्पतिम्—

आवाहयामि देवेशं गुरुं त्रैलोक्य पूजितम् ।
हेमरोचन वर्णाभं पीतस्कन्धं महौजसम् ।
देवानां मन्त्रिणं प्राज्ञं सर्वविद्या विशारदम् ।
आगच्छ देवदेवेश स्तम्भेऽस्मिन्सन्निधो भव ।

ॐ बृहस्पते अति यदर्य्यो अर्हाद्द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु। यद्दीदयच्छ्वस ऋत प्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम् ।२६/३

ॐ भूर्भुवः स्वः वृहस्पते इहागच्छ इह तिष्ठ इत्यावाह्य पूजयेत् ।

१६. उत्तरेशानयोर्मध्यस्तम्भे विश्वकर्माणम्—

आवाहयामि देवेशं विश्व कर्माणमीश्वरम् ।
शुद्धस्फटिकसंकाशं सूर्य कोटिसमप्रभम् ।
देवर्षि पितृभूतानां गर्भितारं सनातनम् ।
आगच्छ विश्व कर्मस्त्वं स्तम्भेऽस्मिन्सन्निधोभव ॥

ॐ विश्वकर्मन् हविषा वर्धनेन त्रातारमिन्द्रमकृणोरवध्यम् । तस्मै विशः समनमन्त पूर्वीरयमुग्रो विहव्यो यथासत् ॥८/४६

ॐ भूर्भुवः स्वः विश्वकर्मन् इहागच्छ इह तिष्ठ इत्यावाह्य पूजयेत् ।

इति षोडशस्तम्भ पूजनम्

अथ स्तम्भशिरसि बलिमासु बलिकाष्ठानि पूजनम्

ॐ नागमात्रे नमः इति बलिकाष्ठानि पूजयेत् ।
ॐ सर्पेभ्यो नमः इति शाखोद्वन्धनानि पूजनम् ॥

सर्वेषां नागराजानां पातालतल वासिनाम् । नागमातर आयान्तु भवन्तु सगणाः स्थिराः ॥ ॐ आयंगौः—इति मन्त्रेण सम्पूज्य नमस्कारः—ॐ नमोऽस्तु बलिकाबन्ध सुदृढत्व शुभाप्तिदम् । एनं महामण्डपन्तु रक्ष-रक्ष निरन्तरम् ॥ ॐ यतो यतः समीहते ततो नो अभयङ्कुरु । शन्नः कुरु प्रजाभ्योऽभयन्नः पशुभ्यः । प्रार्थना—शेषादि नागराजानः समस्ताः मम मण्डपे । पूजां गृह्णन्तु सततं प्रसीदन्तु ममोपरि ॥

ततो भूमिस्पर्शः—ॐ भूरसि भूमिरस्यदितिरसि विश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री । पृथिवीं यच्छ पृथिवीं दृ ह पृथिवीं महि सीः ॥ भूमिभूमिजगन्माता यथा मातरमप्यगात् । भूयाः स्म पुत्रैः पशुभिर्यो नो द्वेष्टि स भिद्यताम् ॥ ततः पुष्पांजलिं-गृहीत्वा—नमस्ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन । नमस्तेऽस्तु हृषीकेश महापुरुषपूर्वज । ॐ नृसिंह उग्ररूप ज्वल

ज्वल प्रज्वल-प्रज्वल स्वाहा । ॐ नमः शिवाय—इति पुष्पांजलिं मण्डपभूमौ विकिरेत् ॥

ततः पश्चिमद्वारेण निर्गत्य पूर्वादि द्वारतोरण पूजां कुर्यात् । तत्रादौ पूर्वस्यां दिशि मण्डपाद् बहिः हस्तमात्रे आश्वत्थं सुदृढ़ नामकं सिन्दूरसदृशं महेन्द्र पर्वतयुतं शंखांकितं तोरणं न्यस्य—

द्वार तोरण पूजा

१. एह्येहि ऋग्वेदाधिष्ठित इन्द्रदेवत्य शान्त अश्वत्थ सुदृढतोरण एनं यज्ञं रक्ष सर्वविघ्नान् निवारय ।

ॐ अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् । होतारं रत्नधातमम् ।

ॐ ऋग्वेदाधिष्ठिताय सुदृढतोरणाय नमः—सुदृढ तोरणमावाहयामि । सुदृढ तोरणाय नमः पुष्पं धूपं दीपं नैवेद्यं ताम्बूलं दक्षिणां च समर्पयामि इति सम्पूज्य—ॐ कृतयुगाय नमः इति कृतयुगं सम्पूज्य तत्रैव इन्द्राय नमः धात्रे नमः, भगाय नमः इत्यादिना आवाह्य तोरण शाखयोः सम्पूज्य प्रार्थयेत्—यथा मेरुगिरेः शृंगे देवानामालयं सदा । तथा त्वं मम-यज्ञेऽस्मिन् देवाधिष्ठानको भव ॥ तत्रैव राहवे नमः, राहुमावाहयामि, बृहस्पतये नमः वृहस्पतिमावाहयामि इत्यावाह्य राहुवृहस्पतिभ्यां नमः इति गन्धादिभिः पूजयेत् ।

विष्णुप्रतिष्ठायाम् इमानि शंखचक्र गदापद्मांकितानि तोरणानि, शिव प्रतिष्ठायां तु तान्येव विधिविहित काष्ठैः यथोक्त प्रमाणकानि त्रिशूलांकितानि कार्याणि । तत्र पूर्वस्यां आश्वत्थे सुदृढ़तोरणे मंगलाख्यं वैष्णवं त्रिशूलं, दक्षिणस्यां औदुम्बरे विकटतोरणे शत्रुघ्न नामकं रौद्रं त्रिशूलं पश्चिमायां प्लाक्षे भीमाख्यं तोरणे पुत्र-पदाह्वयं ब्राह्मं त्रिशूलं, उत्तरस्यां न्यग्रोधे सुप्रभतोरणे उत्तमाभिध सौम्यं त्रिशूलम् ॥

कलश स्थापनम्

तत्रैकः कलशः स्थाप्यः—

भूमिस्पर्श—ॐ महीद्यौः पृथिवी च न इमं यज्ञम् मिमिक्षताम् । पिपृतान्नो भरीमभिः ।

यवप्रक्षेपः—ॐ औषधयः समवदन्त सोमेन सह राज्ञा । यस्मै कृणोति ब्राह्मणस्तं राजन्पारयामसि ॥

कलश स्थापनम्—ॐ आजिघ्रकलशं मह्यात्वा विशन्त्विन्दवः । पुनरुर्जा नि वर्त्तस्व सा नः सहस्त्रं धुक्ष्वोरुधारापयस्वती पुनर्माविशताद्रयिः ।

जल प्रक्षेपः—ॐ वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्य स्कम्भसर्जनीस्थो वरुणस्य ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऋतसदनमसि वरुणस्य ऋतसदनमासीद ।

गन्धम्—ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् । ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥

सर्वौषधिः—ॐ या ओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगम्पुरा । मनैनु बभ्रूणा महꣳशतं धामानि सप्त च ।

दूर्वा—ॐ काण्डात् काण्डात प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि । एवानो दूर्वे प्रतनु सहस्त्रेण शतेन च ।

पंचपल्लव—ॐ अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता । गोभाज इत्किलासथ यत्सनवथ पूरुषम् ।

सप्तमृदः—ॐ स्योना पृथिविनो भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छानः शर्मसप्रथाः ।

पूगीफलम्—ॐ या फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्चपुष्पिणी । वृहस्पतिः प्रसूतास्तानो मुञ्चन्त्वꣳह सः ।

पंचरत्न—ॐ परिवाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत् । दधद्रत्नानि दाशुषे ।

दक्षिणा—ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमाङ्कस्मै देवाय हविषा विधेम् ।

वस्त्रम्—ॐ युवासुवासाः परिवीत आगात्स उ श्रेयान् भवति जायमानः । तन्धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयन्तः ।

पूर्णपात्रम्—ॐ पूर्णादर्वि परापत सुपूर्णा पुनरापत । वस्नेव विक्रीणावहा इषमूर्जꣳ शतक्रतो । इति पूर्णपात्रं निधाय—

नारिकेलम्—ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्या वहो रात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषाण मुम्म इषाण सर्वलोकम्म इषाण । इति

नारिकेलं संस्थाप्य तस्मिन् कलशे—ॐ ध्रुवमावाहयामि अध्वरमावाहयामि इति वसुद्वयम् आवाह्य ॐ—ध्रुवाय नमः, अध्वराय नमः इति गन्धादीन् समर्पयेत्।

अथ तोरण पूजनम्

२. तत आचम्य दक्षिणे गत्वा औदुम्बरं विकट—नामकं चक्रांकितम् विन्ध्यनामगिरियुतं धूम्रवर्णाभं तोरणं न्यस्य—

एह्येहि विकट तोरण एनं यज्ञं रक्ष सर्वविघ्नान् निवारय।

ॐ इषे त्वोर्ज्जेत्वा वायवस्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्वमघ्न्या इन्द्राय भागं प्रजावती रनमी वा अयक्ष्मा मावस्तेन ईशत माघश ७ सोध्रुवा अस्मिन् गोपतौ स्यात वह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि॥

ॐ यजुर्वेदाधिष्ठताय विकट-तोरणाय नमः। विकट तोरणमावाहयामि। विकटतोरणाय नमः। त्रेतायुगाय नमः गन्धादीन् समर्पयेत्। तत्र सूर्याय नमः सूर्यमावाहयामि, ॐ अंगारकाय नमः अङ्गारकं आवाहयामि। सूर्यांगारकाभ्यां नमः गन्धादीन् समर्पयेत्। तत्रैकः कलशः पूर्वोक्तविधिना संस्थाप्यः। तस्मिन् कलशे धरायै नमः धरामावाहयामि। ॐ धरायै नमः इति गन्धादिना सम्पूजयेत।

३. ततः आचम्य पश्चिमे गत्वा प्लाक्षं सुभीमाख्यं स्वर्ण—सदृशभं गन्धमादन पर्वतसहितं गदांकितं तोरणं न्यस्य—एह्येहि सुभीम तोरण एनं यज्ञं रक्ष सर्वविघ्नान् निवारय—

ॐ अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये। निहोता सत्सि वर्हिषि॥

सामवेदाधिष्ठिताय सुभीम तोरणाय नमः, सुभीमतोरणमावाहयामि सुभीमतोरणाय नमः। द्वापर युगाय नमः, इति गन्धादिभिः सम्पूज्य तत्र शुक्राय नमः शुक्रमावाहयामि, बुधाय नमः बुधमावाहयामि शुक्रवुधाभ्यां नमः इति गन्धाद्यर्पणं कृत्वा तत्रैकः कलशः स्थाप्य तस्मिन् कलशे वाक्पतिमावाह्य वाक्पतये नमः इति पूजयेत।

४. आचम्य उत्तरे गत्वा वाटं सुप्रभाख्यं शुद्धस्फटिकप्रभं हिमवत् पर्वत

सहितं पद्मांकितं तोरणं न्यस्य—एह्येहि सुप्रभतोरण एनं यज्ञं रक्ष सर्वविघ्नान् निवारय—

ॐ शन्नोदेवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंय्योरभि स्रवन्तु नः ।

अथर्ववेदाधिष्ठिताय सुप्रभ तोरणाय नमः । सुप्रभ तोरणमावाहयामि इत्यावाह्य ॐ सुप्रभ तोरणाय नमः कलियुगाय नमः इति गन्धादिना पूजयेत् । तत्र सोमाय नमः सोममावाहयामि, केतवे नमः केतुमावाहयामि, शनैश्चराय नमः शनैश्चरमावाहयामि । सोम केतुशनैश्चरेभ्यो नमः इति गन्धादिना पूजयेत् । तत्रैकः कलशः पूर्ववत् स्थाप्यः । तस्मिन् कलशे विघ्नेशमावाहयामि । ॐ विघ्नेशाय नमः गन्धादिना पूजयेत् । ततः पूर्वे गत्वा पूर्ववत्—महीद्यौरित्यादि विधिना प्रतिद्वार—शाखं कलश द्वयं संस्थाप्य मन्त्रावृत्तिः । अस्मिन् कलशद्वये ऐरावतदिग्गजमावाहयामि । ऐरावत दिग्गजाय नमः इति गन्धादिना पूजयेत् । कलशोपरि घृतेन दीपो देयः ।

तत्र ऋग्विधिना ऋत्विजौ वरणम्—

ऋग्वेद पद्मपत्राक्षो गायत्रः सोमदैवतः । अत्रि गोत्र विप्रेन्द्र ऋत्विक् त्वं मे मखे भव । इति प्रार्थ्य—

ॐ अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् । होतारं रत्नधातमम् । इति मन्त्रेण प्रत्येकं गन्धादिना पूजयेत् । श्रीसूक्तं पावमानं पौरुषं रुद्रसूक्तं च पठेत् ।

कलशेषु दशदिग्पालपूजनम्

१. ततः सहस्राक्षमैरावत् संस्थितं पीतकिरीटिनं कुण्डलधरं दक्षिण वामकरस्थं वज्रोत्पलमिन्द्रं ध्यात्वा—ॐ एह्येहि सर्वैरमर—सिद्धसाध्यैरभिष्टुतो वज्रधरोऽमरेशः । संवीज्यमानोऽप्सरसां गणेन रक्षाध्वरं नो भगवन्नमस्ते । ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्र इहागच्छ इहतिष्ठ—इति सांगं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकं इन्द्रं द्वारकलशे आवाह्य—

ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्र ৩ हवे हवे सुहव ৩ शूरमिन्द्रम् । ह्वयामि शुक्रम्पुरुहूतमिन्द्रं स्वस्तिनोमघवा धात्विन्द्रः इन्द्राय नमः ॥ इत्यावाह्य प्रपूज्य—

ॐ आशु शिशानो वृषभो नभीमो घनाघनः क्षोभणश्चर्षणीनाम् ।

सङ्क्रन्दनो निमिष एकवीरः शत ७ सेना अजयत् साकमिन्द्रम् । इति मन्त्रेण पीतौ पताकाध्वजौ उच्छ्रयेत् । ततो द्वारशाखयोः दक्षिणोत्तरयोः धात्रे नमः, विधात्रे नमः ऊर्ध्वद्वारे—श्रियै नमः, गणपतये नमः । तदुपरि वास्तुपुरुषाय नमः । अधो—देहल्यै नमः । वाम दक्षिण स्तम्भयोः गणेशाय० । स्कन्दाय नमः । कलशद्वये गंगायै नमः । यमुनायै नमः । इन्द्राय नमः । इति संपूज्य—

इन्द्रः सुरपतिः श्रेष्ठी वज्रहस्तो महावलः ।

शत यज्ञाधिपो देवस्तस्मै नित्यं नमो नमः ॥ इति नत्वा ततो माषभक्तवलिं गृहीत्वा—ॐ इन्द्राय साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय एतं माषभक्तबलिं समर्पयामि । इति बलिं दत्त्वा आचामेत ।

२. ततः आग्नेय्यां गत्वा तत्र च पूर्ववत् कलशं संस्थाप्य तत्र पुण्डरीकाय नमः, पुण्डरीकमावाहयामि, अमृताय नमः अमृतमावाहयामि, पुण्डरीकामृताभ्यां नमः इति गन्धादिना संपूज्य तत्र दीपो देयः ततः छागस्थं रक्तवर्णं दक्षिणवामकरद्वयधृत—शक्तिकमण्डुलं यज्ञोपवीतिनं अग्निं ध्यात्वा—

ॐ एह्येहि सर्वामर हव्यवाह मुनिप्रवर्यैरभितोऽभिजुष्ट । तेजोवतालोकगणेन सार्द्धं ममाध्वरं पाहि कवे नमस्ते ।

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्ने इहागच्छ इह तिष्ठ इति साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकं कलशे आवाह्य—

ॐ त्वन्नो अग्ने तव देवपायुभिर्मघोनो रक्षतन्वश्चवन्द्य । त्राता तोकस्य तनये गवामस्य निमेष रक्षमाणस्तव व्रते । ॐ अग्नये नमः इति गन्धादिना प्रपूज्य—

ॐ अग्नि दूतं पुरोदधे हव्यवाहमुपब्रुवे । देवां -२ आसादया दिह ।

इति मन्त्रेण रक्तौ ध्वजपताकौ उच्छ्रयेत् ।

प्रार्थना—आग्नेयः पुरुषो रक्तः सर्व देवमयोऽव्ययः ।

धूम्रकेतु रजोऽध्यक्षस्तस्मै नित्यं नमो नमः ॥

ततो बलिदानम्—अग्नये सांगाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय एतं माषभक्त-वलिं समर्पयामि इति बलिं दत्त्वा आचामेत ।

३. ततो दक्षिणे गत्वा प्रतिद्वार शाखं कलश द्वयं संस्थाप्य तत्र कलशद्वये वामनाख्य दिग्गजं आवाहयामि ।

ॐ वामनाख्यं दिगगजाय नमः इति संपूज्य दीपं दद्यात् । तत्र यजुर्वेदिनौ द्वारपालौ, कातराक्षौ यजुवेदस्त्रैष्टुभो विष्णुदैवतः । काश्यपेयस्तु विप्रेन्द्र ऋत्विक् त्वं मे मखे भव "इति प्रत्येकं वृत्वा—इषे त्वोर्ज्जेत्वा" इति मन्त्रेण गन्धादिभिः प्रत्येकं सम्पूज्य—"आनो भद्रा", आशुशिशानः "यद्देवा० त्रीणि च पठेत्ततोऽष्टौ च पुनन्तु माम्" ।

ततो महिषारूढं धृतदण्डपाशदक्षिण वामकरं कृष्णाञ्जन नगोपममग्निसमलोचनं यमं ध्यात्वा—ॐ एह्येहि वैवस्वत धर्मराज सर्वामरैरर्चित धर्ममूर्ते शुभे शुभानन्द शुचामधीश शिवाय नः पाहि मखं नमस्ते ।

ॐ भूर्भुवः स्वः यम इहागच्छ इह तिष्ठ यमं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकं द्वार कलशे आवाह्य—

ॐ यमाय त्वाङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहा । स्वाहा धर्माय स्वाहा धर्म पित्रे । ॐ यमाय नमः इति गन्धादिना प्रपूज्य ।

ॐ आयङ्गौ पृश्निरक्रमीद सदन्मातरम्पुरः । पितरं च प्रयन्त्स्वः ॥

इति कृष्णौ पताकाध्वजौ उच्छ्रयेत् । प्रार्थना—वैवस्वत महादेव नमस्ते धर्मसाक्षिन् । शिवाज्ञा पिहितो देव दिशं रक्ष भवानिह ॥ ततो द्वार शाखयोः—बलाय नमः सबलाय नमः । ऊर्ध्वं श्रियै नमः, गणपतये नमः । अधः देहल्यै नमः । वास्तुपुरुषाय नमः ।

स्तम्भयोः—पुष्पदन्ताय नमः, कपर्दिने नमः । कलशद्वये गोदावर्यै नमः, कृष्णायै नमः इति सम्पूज्य—ॐ यमाय सांगाय० एतं माष भक्तबलिं समर्पयामि इति बलिं दत्त्वा आचामेत् ।

४. ततो नैर्ऋत्यां गत्वा तत्र पूर्ववत् कलशं स्थाप्य तस्मिन् कुमुदं आवाहयामि, दुर्जयमावाहयामि । कुमुद—दुर्जयाभ्यां नमः इति प्रपूज्य दीपो देयः । तत्र निर्ऋतिं नरारूढं महाकायखड्गहस्तं महाबलं नीलं राक्षसवेष्टितं

पीताभरणभूषितं ध्यात्वा—एह्येहि रक्षोगण नायक त्वं विशाल वेताल पिशाचसङ्घैः ममाध्वरं पाहि पिशाच नाथ लोकेश्वरस्त्वं भगवन्नमस्ते । ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋते इहागच्छ इहतिष्ठ इति सांगं० निर्ऋति कुम्भे आवाह्य—

ॐ असुन्वन्तमयजमान मिच्छ स्तेनस्येत्यामन्विहि तस्करस्य। अन्यमस्मदिच्छ सात इत्या नमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु ।

ॐ निर्ऋतये नमः इति संपूज्य—

ॐ मो षूण इन्द्रात्र पृत्सुदेवैरस्ति हि ष्मा ते शुष्मिन्नवयाः । महश्चिद्यस्य मीढुषो यव्या हविष्मतो मरुतो वन्दते गीः ।३/४६ । इति नीलपताकाध्वजौ उच्छ्रयेत ।

प्रार्थना—राक्षसेभ्यो हि रक्षार्थं भवानत्र प्रतिष्ठितः । निर्विघ्नां यज्ञभूमिं मे कुरुष्व शववाहन ॥ निर्ऋतये सांगाय० एतं भाषभक्तबलिं० ।

५. ततः पश्चिमे गत्वा कलशद्वयं प्रतिशाखं पूर्ववत् संस्थाप्य कलशद्वये अञ्जनाख्यदिग्गजमावाहयामि इत्यावाह्य गन्धादिना प्रपूज्य तत्र सामवेदिनौ द्वौ द्वारपालौ—सामवेदस्तु पिंगाक्षो जागतः शक्रदैवतः । भारद्वाजस्तु विप्रेन्द्र ऋत्विक् त्वं मे मखे भव । इति वृत्वा—ॐ अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये । निहोता सत्सि वर्हिषि ॥

इति मन्त्रेण प्रत्येकं गन्धादिना सम्पूज्य—वामदेवं वृहत्साम ज्येष्ठसाम रथन्तरम् । तथा पुरुषसूक्तं च रुद्रसूक्तमतः परम् ।

ततो मकरस्थं पाशहस्तं शुक्लवर्णं किरीटधारिणं वरुणं ध्यात्वा—

ॐ एह्येहि यादोगणवारिधीनां गणेन पर्जन्य सहाप्सरोभिः । विद्याधरेन्द्रामरगीयमानपाहि त्वमस्मान् भगवन्नमस्ते ।

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुण इहागच्छ इहतिष्ठ सांगं वरुणं कलशयोरावाह्य—

ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुश॰ समान आयुः प्रमोषीः । ॐ वरुणाय नमः इति मन्त्रेण गन्धादिभिः सम्पूज्य—

ॐ इमम्मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय । त्वामवस्युराचके ।

इति मन्त्रेण श्वेतौ पताकाध्वजौ उच्छ्रयेत ।

पाशहस्तात्मको देवो जलराश्यधिपो महान् ।

निम्नगामीति विख्यातस्तस्मै वरुण ते नमः ॥ इति नत्वा द्वारशाखयोः—जयाय नमः । विजयाय नमः । ऊर्ध्वं—श्रियै नमः, गणपतये नमः । अधः देहल्यै नमः, वास्तुपुरुषाय नमः । स्तम्भयोः—नन्दिने नमः, चन्द्राय नमः । कलशद्वये-रेवायै नमः, नर्मदायै नमः इति संपूज्य—वरुणाय सांगाय० एतं माषभक्त बलिं० ।

६. ततो वायव्यां गत्वा पूर्ववत् कलशं निधाय तत्र पुष्पदन्तं आवाहयामि—ॐ पुष्पदन्ताय नमः, सिद्धार्थमावाहयामि, ॐ सिद्धार्थाय नमः । इति गन्धादिना संपूज्य दीपो देयः ।

ततो मृगाधिरूढं धूम्रवर्णं चित्राम्वरधरं युवानं दक्षिणवामहस्तद्वये वरध्वजधरं वायुं ध्यात्वा—ॐ एह्येहि यज्ञे मम रक्षणार्थं मृगाधिरूढं सह सिद्धसंघैः प्राणाधिपः कालकवेः सहायः गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ।

ॐ भूर्भुवः स्वः वायो इहागच्छ इह तिष्ठ इति सांगं० वायुं कलशे आवाह्य—

ॐ आनो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरꣳ सहस्रिणीभिरुपयाहि यज्ञम् । वायो अस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयम्पातस्वस्तिभिः सदा नः ।२७/२८

ॐ वायवे नमः इति संपूज्य—ॐ वायो ये तो सहस्रिणोरथासस्तेभिरागहि । नियुत्वान् सोमपीतये । २७/३२ ।

इति धूम्रौ पताकाध्वजौ उच्छ्रयेत ।

प्रार्थना—अनाकारो महौजाश्च पश्चाद् दृष्टिः गतिर्दिवि । तस्मै पूज्याय महते वायवेऽहं नमामि ते । इति नत्वा वायवे सांगाय० एतं माष भक्त बलिं० ।

७. ततः उत्तरे गत्वा प्रतिद्वार-शाखं कलशद्वयं निधाय तत्र कलशद्वये सार्वभौम दिग्गजमावाहयामि—इत्यावाह्य—ॐ सार्वभौम दिग्गजाय नमः इति संपूज्य दीपं दद्यात् । तत्र अथर्ववेदिनौ द्वारपालौ—

वृहन्नेत्रो ऽथर्ववेदो ह्यनुष्टुप् रुद्रदैवताः । वैशम्पायन विप्रेन्द्र ऋत्विक् त्वं मे मखे भव । इति वृत्वा—

ॐ शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंय्योरभिस्रवन्तु नः ।

इति मन्त्रेण गन्धादिना संपूज्य अथर्वांगिरसं नीलरुद्रं चैवं पराजिता । देवी च मधु सूक्तं च रोधसं शान्तिकाव्ययम् ॥

ततो नरयुतविमानस्थं कुण्डहार केयूर रुचिरं दक्षिणवाम भुजद्वये वरगदाधरं मुकुटिनं महोदरं महाकायं हरित वर्णं कुवेरं ध्यात्वा—

एह्येहि यज्ञेश्वर यज्ञरक्षां विधत्स्व नक्षत्रगणेन सार्द्धम् । सर्वौषधीभिः पितृभिः सहैव गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः सोम इहा० इह तिष्ठ इति सांगं० सोमं कलशयोरावाह्य—

ॐ वय ँ सोम व्रते तव मनस्तनूषुविभ्रतः । प्रजावन्तः सचेमहि ।

ॐ सोमाय नमः इति गन्धादिना संपूज्य—ॐ आप्यायस्व समेतु विश्वतः सोमवृषष्ण्यम् । भवावाजस्य संगथे ।

इति श्वेतौ पताकाध्वजौ हरितौ वा उच्छ्रयेत ।

सर्वनक्षत्रमध्ये तु सोमो राजा प्रकीर्तितः ।

तस्मै सोमाय देवाय नक्षत्रपतये नमः । इति नत्वा—

उत्तरद्वार शाखयोः चण्डाय नमः, प्रचण्डाय नमः । ऊर्ध्वं—द्वारश्रियै नमः, गणपतये नमः । अधः देहल्यै नमः, वास्तुपुरुषाय नमः । स्तम्भयोः—महाकालाय नमः, भृंगिणे नमः । कलशद्वये—वारुण्यै नमः, वेण्यै नमः । इति संपूज्य—सोमाय सांगाय एतं माष-भक्तबलिं० ।

८. ततः ऐशान्यां गत्वा तत्र पूर्ववत् कलशं निधाय तत्र सुप्रतीकाय नमः मंगलाय नमः इति संपूज्य दीपं दत्त्वा—ततो वृषारूढं दक्षिणवामहस्तयोर्वरं त्रिशूलधरं त्रिनेत्रं शुक्लवर्णमीशानं ध्यात्वा—ॐ एह्येहि विश्वेश्वर विश्वनाथ कपालखट्वाङ्गधरेण सार्द्धम् । लोकेश यज्ञेश्वर यज्ञसिद्धये गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते । ॐ भूर्भुवः स्वः ईशान इहागच्छ इह तिष्ठ इति सांगं ईशानं आवाह्य—

ॐ तमीशानं जगत स्तस्थुषस्पतिं धियं जिन्वमवसे हूमहे वयम् । पूषानो यथा वेदसामसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ।

ॐ ईशानाय नमः इति गन्धादिभिः पूजयेत् ।

सर्वाधिपो महादेवः ईशानः शुक्ल ईश्वरः ।

शूलपाणिर्विरूपाक्षः तस्मै नित्यं नमो नमः । इति नत्वा—ॐ तमीशानम् इति पूर्वोक्त मन्त्रेण श्वेतौ पंचवर्णौ पताकाध्वजौ उच्छ्रयेत । ततः ईशानाय साङ्गाय० एतं माषभक्त बलिं समर्पयामि इति बलिं दत्त्वा आचामेत ।

९. ततः ईशान पूर्वयोर्मध्ये ऊर्ध्वमुद्दिश्य पूर्ववत्कलशं निधाय तत्र ब्राह्माणं पूजयेत् । अक्षसूत्रं कुशमुष्टिधरं दक्षिणकरे स्रुवकमण्डलुधरं वामकरे चतुर्मुखं श्मश्रुलं जटिलं लम्बोदरं रक्तवर्णं ब्रह्माणं ध्यात्वा—

एह्येहि सर्वाधिपते सुरेन्द्रलोकेन सार्द्धं पितृदेवताभिः । सर्वस्य धातास्यममित प्रभावो विशाध्वरन्नः सततं शिवाय । ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मन् इहागच्छ इह तिष्ठ इति सांगं ब्रह्माणमावाह्य—

ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्तात् विसीमतः सुरुचो वेन आवः । सवुध्न्या उपमा अस्य विष्ठा सतश्च योनिमसतश्च विवः ॥ इति मन्त्रेण गन्धादिना प्रपूज्य तेनैव मन्त्रेण रक्तौ पताकाध्वजौ उच्छ्रयेत ।

ॐ पद्मयोनिश्चतुर्मूर्ति र्वेदव्यास पितामहः ।

यज्ञाध्यक्षश्चतुर्वक्त्रस्तस्मै नित्यं नमो नमः ॥ इति नत्वा

सांगाय० ब्रह्मणे एतं माषभक्त बलिं समर्पयामि । इति बलिं दत्त्वा आचामेत ।

१०. ततो निर्ऋतिवरुणयोर्मध्ये पूर्ववत् कलशं निधाय तत्राधः— अनन्तशयनासीनं फणासप्तक मण्डितम् । पद्मशंखधरमूर्ध्वाऽधोदक्षिणकरद्वये नीलवर्णमनन्तम् । इति ध्यात्वा—

ॐ एह्येहि पातालधरामरेन्द्र नागाङ्गना किन्नर गीयमानः । रक्षोरगेन्द्रामरलोकसंघैरनन्त रक्षाध्वरमस्मदीयम् । ॐ भूर्भुवः स्वः अनन्त इहागच्छ इह तिष्ठइति सांगं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकं अनन्तं आवाह्य—ॐ आयङ्गौ पृश्निरक्रमीदसदन्मातरम्पुरः । पितरञ्च प्रयन्त्स्वः । ॐ अनन्ताय नमः इति गन्धादिभिः संपूज्य—

योऽसावनन्त रूपेण ब्रह्माण्ड सचराचरम् ।

पुष्पवद् धारयेन्मूर्ध्नि तस्मै नित्यं नमो नमः । इति नत्वा "ॐ आयङ्गौ" इति पूर्वमन्त्रेण धूम्रौ श्वेतौ वा पताकाध्वजौ उच्छ्रयेत । ततः सांगाय सपरिवाराय सशक्तिकाय सायुधाय अनन्ताय एतं माषभक्त बलिं समर्पयामि इति बलिं दत्त्वा आचामेत ।

अथ महाध्वजस्थापनम्

ततो मण्डपमध्ये चामरकिंकिणीयुतः षोडशहस्तदण्डो वा दशहस्त दण्डावलम्वितो दश सप्त पञ्च वा हस्तदीर्घस्त्रिहस्त विस्तारैकहस्त विस्तारो वा पञ्च—वर्ण विचित्रो महाध्वजः—

ॐ इन्द्रस्य वृष्णो वरुणस्य राज्ञ आदित्यानां मरुतां शर्द्ध उग्रम् । महामनसाम्भुवन च्यवानां घोषो देवानां जयतामुदस्थात् ॥१७/४१ तत्र ब्रह्माणं पूजयेत्—

ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्तात् विसीमतः सुरुचो वेन आवः । स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठा सतश्च योनि मसतश्च विवः ।

ततो मण्डपषोडशस्तम्भेषु सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः । वंशेषु किन्नरेभ्यो नमः । पृष्ठे पन्नगेभ्यो नमः । इति पूजयेत् । ततः पूर्वस्यां दिशि मण्डपाद् बहिः किञ्चिद्-भूमिमुपलिप्य तत्रोपविश्य—त्रैलोक्यस्थ स्थावर-जंगमभूताना-मावाहनम् ॥

त्रैलोक्ये यानि भूतानि स्थावराणि चराणि च ।
ब्रह्मविष्णु, शिवैः सार्द्धं रक्षां कुर्वन्तु ते सदा ॥
देवदानवगन्धर्वाः यक्षराक्षस पन्नगाः ।
ऋषयो मुनयो गावो देवमातर एव च ॥
सर्वे ममाध्वरं रक्षां प्रकुर्वन्तु मुदान्विताः ।
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च क्षेत्रपालो गणैः सह ।
रक्षन्तु मण्डपं सर्वे घ्नन्तु रक्षांसि सर्वतः ॥

त्रैलोक्यस्थानि स्थावराणि भूतान्यावाहयामि ॐ त्रैलोक्यस्थावर भूतेभ्यो नमः । त्रैलोक्यस्थानि चराणि भूतानि आवाहयामि । त्रैलोक्यस्थेभ्यश्चरेभ्यो भूतेभ्यो नमः । गोभ्यो नमः । ऋषिभ्यो नमः । मनुष्येभ्यो नमः । देवमातृभ्यो

नमः। इत्यावाहनाद्यादिभिः प्रत्येकं संपूज्य प्रत्येकं सामूहिक रूपेण वा माषभक्तवलीन् दद्यात्।

ॐ नमोऽस्तु रुद्रेभ्यो ये दिवि येषां वर्षमिषवः। तेभ्यो दश प्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीचिर्दशोर्ध्वाः। तेभ्यो नमो अस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः॥ १६/६४

इति मन्त्रेण दिक्षु विदिक्षु अक्षतपुञ्जेषु रुद्रमावाह्य सम्पूज्य बलिं दत्त्वा सर्वान् विसृज्य ईशाने सर्वभूत बलिं दद्यात्—तत्र मन्त्राः—

अधश्चैव च ये लोका असुराश्चैव पन्नगाः। सपत्नीपरिवाराश्च प्रतिगृह्णन्त्विमं बलिम्॥

नक्षत्राधिपतिश्चैव नक्षत्रैः परिवारितः। स्थानं चैव पितृणां तु सर्वे गृह्णन्त्विमं बलिम्॥ ईशानोत्तरयोर्मध्ये क्षेत्रपालो महाबलः। मीननामा महादंष्ट्रः प्रतिगृह्णन्त्विमां वलिम्॥ ये केचित्त्विह लोकेषु आगताः बलिकाङ्क्षिणः। तेभ्यो बलिं प्रयच्छामि नमस्कृत्य पुनः पुनः॥ बलिं गृह्णन्त्विमे देवा आदित्याः वसवस्तथा। मरुतश्चाश्विनौ रुद्राः सुपर्णः पन्नगाः ग्रहाः॥ सुराः यातुधानाश्च पिशाचाः मातरोगणाः। शाकिन्यो यक्षवेतालाः योगिन्यः पूतनाः शिवाः॥ जृम्भकाः सिद्ध-गन्धर्वाः नागाः विद्याधराः नगाः। दिक्पालाः लोकपालाश्च ये च विघ्नविनायकाः। जगतां शान्तिकर्तारो ब्रह्माद्याश्च महर्षयः॥ मा विघ्नं मा च ये पापं मा सन्तु परिपन्थिनः॥ सौम्यं भवन्तु तृप्ताश्च देवाः भूतगणास्तथा। ते गृह्णन्तु मयादत्तं बलिं वै सार्वभौतिकम्॥

अनेन बलिदानेन अधोलोकादयः प्रीयन्ताम्॥

ततः प्रक्षालित पादपाणिः प्राग्द्वारेण मण्डपं प्रविश्य यजमानो दक्षिणतः उपविश्य यथाविहितं कर्म कुरुध्वम् इति॥

ततः आचान्तः प्राग्द्वारेण मण्डपं प्राविशेत्।

इति मण्डप पूजा

१. अथ श्रीसूक्तम्

ॐ हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम् । चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जात वेदो म आवह ॥१ ॥

ॐ ताम्म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपागामिनीम् । यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥२ ॥

ॐ अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनाद प्रमोदिनीम् । श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम् ॥३ ॥

ॐ कांसोस्मितां हिरण्यप्राकारमार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम् । पद्मे स्थितां पद्म वर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥४ ॥

ॐ चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम् । तां पद्मनेमीं शरणमहं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणोमिः ॥५ ॥

ॐ आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ विल्वः । तस्य फलानि तपसानुदन्तु मायान्तरायाश्च वाह्या अलक्ष्मीः ॥६ ॥

ॐ उपैतु मां देवसखः कीर्त्तिश्च मणिना सह । प्रादुर्भूतोऽस्मि राष्ट्रेऽस्मिन् कीर्त्तिमृद्धिं ददातु मे ॥७ ॥

ॐ क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम् । अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निर्णुद मे गृहात् ॥८ ॥

ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् । ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥९ ॥

ॐ मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि । पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्री श्रयतां यशः ॥१० ॥

ॐ कर्दमेन प्रजाभूताः मयि सम्भव कर्दम । श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम् ॥११ ॥

ॐ आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे । निच देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले ॥१२ ॥

ॐ आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिंगलां पद्‌ममालिनीम्। चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥१३॥

ॐ आर्द्रां यस्करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेम मालिनीम्। सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥१४॥

ॐ ताम्म आवह जातवेदो लक्ष्मी मनपगामिनीम्।

यस्यां हिरण्यं प्रभूतं गावो दास्योऽश्वान् विन्देयं पुरुषानहम् ॥१५॥

यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम्।

सूक्तं पंचदशर्चं च श्रीकामः सततं जपेत् ॥१६॥

२. रात्रिसूक्तम्

(ऋग्० मं० १० अ० १० सूक्त २७ मन्त्र १ से ८)

ॐ रात्री व्यख्यदायती पुरुत्रा देव्यक्षभिः। विश्वा अधिश्रियोधित ॥१॥

ॐ ओर्वप्रा अमर्त्या निवतो देव्युद्वतः। ज्योतिषा वाधते तमः ॥२॥

ॐ निरुस्वसार मस्कृतोषसं देव्यायती। अपेदु हासते तमः ॥३॥

ॐ सा नो अद्य यस्या वयं नि ते यामन्नविक्ष्महि। वृक्षे न वसतिं वयः ॥४॥

ॐ निग्रामासो अविक्षत निपद्वन्तो निपक्षिणः। निश्येनासश्चिदर्थिनः ॥५॥

ॐ यावया वृक्यं वृकं यवयस्तेनमूर्म्ये। अथानः सुतरांभव ॥६॥

ॐ उपमा पेपिशत्तमः कृणुष्व व्यक्तमस्थित। उप ऋणेव यातयः ॥७॥

ॐ उप ते गा इवाकरं वृणीष्व दुहितर्दिवः। रात्रि-स्तोमं न जिग्युषे ॥८॥

इति रात्रिसूक्तम्

३. अथ पुरुषसूक्तम्

(यजुर्वेदीयम्)

ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्। स भूमिꣳ सर्वतस्पृत्वा त्यतिष्ठद् दशाङ्गुलम् ॥१॥

ॐ पुरुष एवेद७ सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्। उतामृतत्त्वस्येशानो यदन्नेनाति रोहति ॥२ ॥

ॐ एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पूरुषः। पादोऽस्य विश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि ॥३ ॥

ॐ त्रिपादूर्ध्व उदैत पुरुषः पादोस्येहा भवत्पुनः। ततो विश्वङ्व्यक्रामत् साशना नशने अभि ॥४ ॥

ॐ ततो विराडजायत विराजो अधिपूरुषः। स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद् भूमि मथोपुरः ॥५ ॥

ॐ तस्माद्यज्ञात् सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम्। पशूंस्तांश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये ॥६ ॥

ॐ तस्माद् यज्ञात्सर्व हुतः ऋचः सामानि जज्ञिरे। छन्दा७सि जज्ञिरे तस्माद् यजुस्तस्मादजायत ॥७ ॥

ॐ तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः। गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः ॥८ ॥

ॐ तं यज्ञं वर्हिषि प्रौक्षन्पुरुषं जातमग्रतः। तेन देवा अयजन्त साध्याः ऋषयश्च ये ॥९ ॥

ॐ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्। मुखं किमस्यासीत् किम्वाहू किमूरू पादा उच्येते ॥१० ॥

ॐ ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहूराजन्य कृतः। ऊरु तदस्य यद् वैश्यः पद्भ्या७ शूद्रो अजायत ॥११ ॥

ॐ चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत। श्रोत्राद् वायुश्च प्राणश्च मुखादग्नि रजायत ॥१२ ॥

ॐ नाभ्या आसीदन्तरिक्ष७ शीर्ष्णो द्यौः समवर्त्तत। पद्भ्याम्भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकां -२ अकल्पयन् ॥१३ ॥

ॐ यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत। वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्म शरद्धविः ॥१४ ॥

ॐ सप्तास्यासन्नपरिधयस्त्रिसप्तसमिधः कृताः। देवा यद्यज्ञं तन्वानाः अवध्नन् पुरुषं पशुम् ॥१५॥

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्। तेह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥१६॥

इति पुरुषसूक्तम्।

४. यजुर्वेदीय रुद्रसूक्तम्

नमस्तेरुद्र मन्यवऽउतोतऽइषवे नमः ॥ बाहुभ्यामुतते नमः ॥१॥

या ते रुद्रशिवा तनूरघोरापापकाशिनी। तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभि चाकशीहि ॥२॥

यामिषुङ्गिरिशन्तहस्ते विभर्ष्यस्तवे ॥ शिवाङ्गिरित्रताङ्कुरुमाहिꣳ सी पुरुषञ्जगत् ॥३॥

शिवेनवचसात्त्वागिरि शाच्छावदामसि ॥ यथा नः सर्वमिज्जगदयक्ष्मꣳसुमनाऽअसत् ॥४॥

अध्यवोचदधिवक्ताप्रथमोदैव्योभिषक् ॥
अहींश्चसर्वाञ्जम्भयन्त्सर्वांश्च यातुधान्यो धराचीः परासुव ॥५॥

असौ यस्ताम्रोऽरुणऽउतबभ्रुः सुमङ्गलः ॥ ये चैनꣳ रुद्राऽअभितोदिक्षुश्रिता सहस्रशोवैषाꣳ हेड ईमहे ॥६॥

असौयोऽवसर्पति नीलग्रीवो विलोहित ॥ उतैनं गोपा ऽअदृशन्नदृशन्नुदहार्य्यः स दृष्टो मृडयाति नः ॥७॥

नमोऽस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे ॥ अथो ये अस्य सत्त्वानो हन्तेभ्योऽकरन्नमः ॥८॥

प्रमुञ्चधन्वनस्त्वमुभयोरालर्योर्ज्याम् ॥ याश्चते हस्तऽइषव पराता भगवो वप ॥९॥

विज्यन्धनुः कपर्दिनोविशल्योबाणवां -२ उत ॥ अनेशन्नस्य याऽइषव आभुरस्य निषङ्गधि ॥१०॥

या ते हेतिर्मीढुष्टम हस्ते बभूव ते धनुः ॥ तयाऽस्मान्विश्वस्त्वमयक्ष्मया परिभुज ॥११ ॥

परिते धन्वनोहेतिरस्मान्वृणक्तु विश्वतः ॥ अथो यऽइषुधिस्तवारे अस्मन्निधेहि तम् ॥१२ ॥

अवतत्यधनुष्ट्वं सहस्राक्षशतेषुधे ॥ निशीर्य्य शल्यानाम्मुखाशिवो नः सुमना भव ॥१३ ॥

नमस्तऽआयुधायानातताय धृष्णवे । उभाभ्या मुतते नमो बाहुभ्यान्तव धन्वने ॥१४ ॥

मानो महान्तमुतमानोऽअर्भकम्मानः उक्षन्तमुत मानः उक्षितम् ॥ मानोवधीः पितरम्मोतमातरम्मानः प्रियस्तन्वोरुद्ररीरिषः ॥१५ ॥

मा नस्तोके तनये मान आयुषि मानो गोषु मानो अश्वेषुरीरिषः ॥ मानो वीरान् रुद्रभामिनोवधी र्हविष्मन्तः सदमित्त्वा हवामहे ॥१६ ॥

५. स्वस्त्ययनम्

ॐ स्वस्तिनो मिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्यदितिरनर्वणः । स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः । स्वस्ति द्यावा पृथिवी सुचेतना ॥१ ॥

ॐ स्वस्तये वायुमुपव्रबामहे सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः । वृहस्पतिं सर्वगुणं स्वस्तये आदित्यासो भवन्तु नः ॥२ ॥

ॐ विश्वे देवानो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये । देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये स्वस्तिनो रुद्र पात्वहंसः ॥३ ॥

ॐ स्वस्ति मित्रावरुणाः स्वस्ति पथ्ये रेवति । स्वस्तिनः इन्द्रश्चाग्निश्च स्वस्तिनो अदिते कृधि ॥४ ॥

ॐ स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्यां चन्द्रमसाविव । पुनर्ददता घ्नता जानता सङ्गमेमहि ॥

इति ऋग्वेदीयं स्वस्त्ययनम् ॥

ॐ स्वस्तिनः इन्द्रो वृद्ध श्रवाः स्वस्तिनः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्तिनस्ताक्ष्यो अरिष्ट नेमिः स्वस्तिनो वृहस्पतिर्दधातु ॥ इति त्रिः पठेत् ॥

अथ शान्तिपाठ—सूक्तम्

ॐ स्वस्तिनोमिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्यदितिरनर्वणः। स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः स्वस्ति द्यावा पृथिवी सुचेतुना ॥१ ॥

ॐ स्वस्तये वायुमुप ब्रवामहे सोम स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः। वृहस्पतिः सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः ॥२ ॥

ॐ विश्वेदेवा नो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये। देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये स्वस्तिनो रुद्रः पात्वंहसः ॥३ ॥

ॐ स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति। स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च स्वस्तिनो अदिते कृधि ॥४ ॥

ॐ स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्या चन्द्रमसाविव। पुनर्ददताऽघ्नता जानता संगमेमहि ॥५ ॥

ॐ स्वस्त्ययनं तार्क्ष्यमरिष्टनेमिं महद्भूतं वायसं देवतानाम्। असुरघ्नमिन्द्रं सुखं समत्सु वृहद्यशो नावमिवारुहेम ॥६ ॥

ॐ अहो मुचमांगिरसं गमञ्च त्रेयम्मनसा च तार्क्ष्यम्। प्रयतपाणिः शरणं प्रपद्ये स्वस्ति सम्वाधेष्वभयन्नो अस्तु ॥७ ॥

श्री गणेशाय नमः । श्री महालक्ष्म्यै नमः

अथ सर्वदेव प्रतिष्ठा प्रकाशः

विशेष—सर्वदेव प्रतिष्ठा में यहां से आरम्भ होने वाला विधान मण्डप से बाहर होगा।

शुभ कार्य करने से पूर्व दिन, वार, नक्षत्र, मुहूर्त आदि का भली-भांति विचार कर लेना चाहिए। अच्छे समय में शुभ मुहूर्त में किया गया कार्य ही फलदायक होता है।

प्रातः नित्य कृत्य करके स्नानादि से निवृत्त होकर (अहत) धुले हुए या नये वस्त्र पहन कर यज्ञोपवीत धारण कर शिखा बान्ध कर पूर्वाभिमुख सपत्नीक शुद्ध आसन पर बैठ कर—

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वाऽवस्थां गतोऽपि वा। यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥ ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु।

इससे अपने शरीर का सिंचन करके, समस्त सामग्री वस्तुओं का सिंचन कर हाथ जोड़ कर प्रभु स्मरण करे। गुरुजनों को नमस्कार करें।

ॐ गुरवे नमः। ॐ श्री इष्टदेवताभ्यो नमः। ॐ वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः। ॐ लक्ष्मी-नारायणाभ्यां नमः। ॐ उमामहेश्वराभ्यां नमः। ॐ शची-पुरन्दराभ्यां नमः। ॐ कुलदेवतायै नमः। श्रीग्राम-देवताभ्यो नमः। श्री स्थान-देवताभ्यो नमः। श्री वास्तुदेवताभ्यो नमः। ॐ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। ॐ प्रधान देवताभ्यो नमः। ॐ सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः। ॐ माता-पितृ-चरण-कमलेभ्यो नमः।

तदनन्तर तीन बार आचमन करे—ॐ केशवायनमः। ॐ नारायणाय नमः। ॐ माधवाय नमः॥ आचमन करके हाथ धो लें।

पवित्र धारण—इसके पश्चात् कुशा से निर्मित पवित्र धारण करें—

ॐ पवित्रेस्थो वैष्णव्यौ सवितुर्वः प्रसव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य-रश्मिभिः। तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयम्॥

इस मन्त्र से पवित्र धारण करके प्राणायाम करे। इसके बाद पृथ्वी का पूजन करे—

विनियोग—ॐ पृथ्वीति मन्त्रस्य मेरुपृष्ठः सुतलं छन्दः कूर्मो देवता आसने विनियोगः।

ॐ पृथ्वी त्वया धृता लोकाः देवि त्वं च विष्णुना धृता ।
त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम् ॥

ॐ पृथिव्यै नमः, आधार शक्त्यै नमः । गन्धाक्षत आदि से पृथ्वी का पूजन करे ।

अथ कर्म पात्र स्थापनम्—चन्दन से भूमि पर त्रिकोण वृत्त, चतुरस्र मण्डप लिखकर गन्ध-अक्षत-पुष्पादि से मण्डल का पूजन करे, अर्घ स्थापित करे । अर्घपात्र में—

ॐ मही द्यौः पृथिवी च न इमं यज्ञं मिमिक्षताम् । पिपृतान्नो भरीमभिः ॥ इति पृथ्वीस्पर्शः ।

ॐ आजिघ्र कलशं मह्यंत्वा विशन्त्विन्द वः । पुनरुर्ज्जा निर्वतस्वसानः सहस्त्रं धुक्ष्वोरु धारा पयःस्वती । पुनर्मा विशताद्रयिः । इति कलशस्पर्शनम् ॥

ॐ वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्य स्कम्भ सर्ज्जनीस्थो वरुणस्य ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऋणसदनमसि वरुणस्य ऋतसदन मासीद् ॥ इति जलम् ॥

ॐ त्वां गन्धर्वा ऽअखनंस्त्वामिन्द्रस्त्वं वृहस्पतिः । त्वामोषधे सोमोराजा विद्वान् यक्ष्माद मुच्यत । गन्धम् ॥

ॐ अक्षन्नमी मदन्त ह्यवप्रिया ऽअधूषत । अस्तोषत स्वभानवो विप्रा न विष्ठया मती योजा न्विन्द्रते हरी ॥ ॥ **इति अक्षताः** ॥

ॐ ओषधीः प्रतिमोदध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः । अश्वाऽइव सजित्वरी र्वीरुधः पारयिष्ण्वः ॥ इति सर्वौषधिः ॥

ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि । एवा नो दूर्वे प्रतनु सहस्त्रेण शतेन च । इति दूर्वाम् ।

ॐ पवित्रेस्थो वैष्णव्यौ सवितुर्वः प्रसवऽउत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्य्यस्य-रश्मिमिः । तस्य ते पवित्रपते पवित्र पूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयम् ॥ इति पवित्रम् ।

ॐ वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्र मसि सहस्र धारम् । देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शत धारेण सुप्वा काम धुक्षः ॥ वस्त्रम् ॥

इति कर्म पात्रस्थापनम् ।

कर्म पात्रावलोडनम्—

ॐ यद्देवा देवहेडनं देवासश्चकृमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व ँ हसः। (यजु० २०/१४)

ॐ यदि दिवा यदि नक्त मेना ँ सि चकृमा वयम्। वायुर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व ँ हसः॥ (यजु० २०/१५)

ॐ यदि जाग्रद्यदि स्वप्न एना ँ सि चकृमा वयम्। सूर्यो मा तस्मादेनसो विश्वान्मुखञ्चत्व ँ हसः॥ (यजु० २०/१६)

कर्म पात्र सुसम्पन्नम्—

अंकुश मुद्रा से कर्मपात्र में तीर्थों का आवाहन करे।

सूर्यार्घ्यम्

(i) ॐ चित्रंदेवानामुद्गादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आप्रा द्यावा पृथिवी अन्तरिक्षं सूर्य आत्मा जगत स्तस्थुषश्च।

सूर्य नमस्कार—

ध्येयः सदा सिवतृ मण्डल मध्यवर्ती,
नारायणः सरसिजासन सन्निविष्टः।
केयूरवान् मरकत कुण्डलवान् किरीटी,
हारी हिरण्यमय वपुः धृतशंख चक्रः॥
नमः सवित्रे जगदेक चक्षुषे
जगत्प्रसूति स्थिति नाश हेतवे।
त्रयीमयाय त्रिगुणात्मधारिणे
विरंचि नारायण शंकरात्मने॥

(ii) अरुणोऽरुण पंकजे निषण्णः कमलेऽभीतिवरौ करैर्दधानः।
स्वरुचार्हित मण्डलस्त्रिनेत्रो रविराकल्प शताकुलोऽवतान्नः॥

भगवते सूर्य नारायणाय नमः। कर्मकाक्षिणे नमः॥

इस प्रकार ध्यान करके सूर्य को अर्घ दे—

ॐ एहि सूर्य सहस्रांशो तेजोराशे जगत्पते।
अनुकम्पय मां भक्त्या गृहाणार्घं दिवाकर॥

इससे अर्घ देकर सब भूतों का निराकरण करे—

भूतोत्सादनम्—

ॐ अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतोदिशम् ।
सर्वेषामविरोधेन ब्रह्मकर्मसमारभे ॥
पाखण्डकारिणो भूताः भूमौ ये चान्तरिक्षगणाः ।
दिवि लोके स्थिताः ये च ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥
निर्गच्छतां च भूतानां वर्त्म दद्यात् स्ववामतः ।

वामपार्ष्णिघातत्रयेन छोटिकाभिस्तालत्रयेन च सर्व-विघ्नान् उत्सार्य आधारशक्त्यै पृथिव्यै नमः । कमलासनाय नमः इत्यासनं संपूज्य पुनरर्घं संस्थाप्य जलेनापूर्य गन्धाक्षत—पुष्पादि निक्षिप्य तेन जलेन आत्मानं सम्प्रोक्षयेत् ॥

अर्घ स्थापन के अनन्तर बनाये गये नव ग्रह आदि मण्डल में स्वस्तिक चिह्न पर सुपारी रख कर गणपति गौरी की स्थापना कर पति-पत्नी का ग्रन्थी बन्धन कर शान्ति पाठ आदि का वाचन करे ।

अथ आनोभद्रा—सूक्तम्

(यजुर्वेद अ० २५ मं० १४—२४)

ॐ आनो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासो अपरीतास उद्भिदः। देवा नो यथा सदमिद्वृधे असन्न प्रायवो रक्षितारो दिवे दिवे ॥१ ॥

ॐ देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानाᳪरातिरभिनो निवर्तताम्। देवानाᳪसख्यमुपसेदिमा वयं देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे ॥२ ॥

ॐ तान् पूर्वया निविदा हूमहे वयं भगं मित्रमदितिं दक्षमस्त्रिधम् । अर्यमणं वरुणᳪसोममश्विना सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ॥३ ॥

ॐ तन्नो वातो मयोभुवातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौः। तद्ग्रावाणः सोमसुतो मयोभुवस्तदश्विनाशृणुतं धिष्ण्या युवम् ॥४ ॥

ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम् । पूषा नो यथा वेदसा मसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥५ ॥

ॐ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्र्यो अरिष्ट नेमिः स्वस्ति नो वृहस्पति र्दधातु ॥६ ॥

ॐ पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभं यावानो विदथेषु जग्मयः। अग्निजिह्वा मनवः सूरचक्षसो विश्वे नो देवा अवसागमन्निह ॥७ ॥

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाᳪसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥८ ॥

ॐ शतमिन्नु शरदो अन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसं तनूनाम्। पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मध्या रीरिषतायुर्गन्तोः ॥९ ॥

ॐ अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वे देवा अदितिः पञ्चजना अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम् ॥१० ॥

ॐ मा नो मित्रा वरुणो अर्यमायुरिन्द्र ऋभुक्षा मरुतः परिख्यन्। यद्वाजिनो देव जातस्य सप्तेः प्रवक्ष्यामो विदथे वीर्याणि ॥११ ॥

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षᳪशान्तिः पृथिवीः शान्तिरापः शान्तिरौषधयः। शान्तिर्वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वᳪशान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामा शान्तिरेधिः ॥१२ ॥

ॐ यतो यतः समीहसे ततो नो अभयं कुरु। शं न कुरु प्रजाभ्योऽभयं न पशुभ्यः ॥१३ ॥

अथ स्वस्ति–वाचनम्

ॐ स्वस्तिनः इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्तिनस्ताक्ष्र्यो अरिष्टनेमिः स्वस्तिनो वृहस्पतिर्दधातु ॥१ ॥

ॐ पयः पृथिव्यां पयः ओषधीषु पयोदिव्यन्तरिक्षे पयोधाः। पयस्वती प्रदिशः सन्तु मह्यम् ॥२ ॥

ॐ विष्णोरराटमसि विष्णोश्नप्त्रेस्थो विष्णो स्यूरसि विष्णो ध्रुवोसि वैष्णवमसि विष्णवे त्वा ॥३ ॥

ॐ अग्निर्देवता वातो देवता सूर्योदेवता चन्द्रमा देवता वसवो देवता रुद्रा देवतादित्या देवता मरुतो देवता विश्वेदेवा देवता वृहस्पति र्देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवता ॥४ ॥

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्ति-रौषधयः शान्तिर्वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामा शान्तिरेधि ॥५ ॥

ॐ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव । यद् भद्रं तन्न आसुव । इमा रुद्राय तवसे कपर्दिने क्षयद्वीराय प्रभारमहेमतीः ॥६ ॥

ॐ यथा शमसद्विपदे चतुष्पदे विश्वं पुष्टं ग्रामे अस्मिन्ननातुरम् ॥७ ॥

ॐ एतन्ते देव सवितर्यज्ञं प्राहुर्वृहस्पतये ब्रह्मणे । तेन यज्ञमव तेन यज्ञपतिं तेन मामव ॥८ ॥

ॐ मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य वृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञꣳ समिमं दधातु ॥९ ॥

ॐ विश्वे देवा स इह मादयन्ता मो -२ म्प्रतिष्ठ एष वै प्रतिष्ठ नाम यज्ञो यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते सर्वमेव प्रतिष्ठितं भवति ॥१० ॥

ॐ गणानां त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियाणांत्वा प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनां त्वा निधिपतिꣳहवामहे वसो मम । आहमजानि गर्भध मा त्वमजासि गर्भधम् ॥११ ॥

ॐ नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्चवो नमो नमो व्रातेभ्यो व्रातपतिभ्यश्चवो नमो नमो गृत्सेभ्यो गृत्स पतिभ्यश्चवो नमो नमो विरूपेभ्यो विश्वरूपेभ्यश्चवो नमो नमः ॥१२ ॥

ॐ अम्बे अम्बिके अम्बालिके न मानयति कश्चन । ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम् ॥१३ ॥

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः । सर्वारिष्ट शान्तिर्भवतु ।

प्रारब्धेकर्मणि निर्विघ्नताऽस्तु । ॐ श्री मन्महागणाधिपतये नमः । ॐ वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः । ॐ लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः । ॐ उमामहेश्वराभ्यां नमः । ॐ शचीपुरन्दराभ्यां नमः । ॐ मातापितृ चरण कमलेभ्यो नमः । ॐ कुलदेवताभ्यो नमः । ॐ इष्टदेवताभ्यो नमः । ॐ ग्रामदेवताभ्यो नमः । ॐ स्थानदेवताभ्यो नमः । ॐ वास्तुदेवताभ्यो नमः । ॐ सूर्यादिनवग्रहेभ्यो नमः ।

ॐ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः । ॐ सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः । ॐ एतत् कर्मप्रधान देवताभ्यो नमः । इति प्रणम्य ।

ॐ सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः ।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः ॥१ ॥
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः ।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि ॥२ ॥
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा ।
संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ॥३ ॥
वक्रतुण्ड महाकाय सूर्यकोटि समप्रभ ।
अविघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा ॥४ ॥
अभीप्सितार्थ सिध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः ।
सर्वविघ्नच्छिदे तस्मै गणाधिपतये नमः ॥५ ॥
शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये ॥६ ॥
सर्व मंगल मांगल्ये शिवे सर्वार्थ साधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते ॥७ ॥
तदेव लग्नं सुदिनं तदेव तारावलं चन्द्रवलं तदेव ।
विद्यावलं दैववलं तदेव लक्ष्मीपते तेंऽघ्रियुगं स्मरामि ॥८ ॥
लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः ।
येषामिन्दीवर श्यामो हृदयस्थो जनार्दनः ॥९ ॥
यत्रयोगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ।
तत्र श्रीः विजयो भूति र्ध्रुवा नीति र्मतिर्मम ॥१० ॥

अथ प्रधान संकल्पः

यजमान अर्घपात्र में जल, अक्षत, पुष्प, गन्ध लेकर कार्य के निमित्त प्रतिज्ञा संकल्प करें।

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्री मद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य अद्य श्री ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीयप्रहरार्द्धे श्री श्वेत वाराहकल्पे

वैवस्वत मन्वन्तरे अष्टाविंशति तमे कलियुगे कलि प्रथमचरणे भूर्लोके जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भारतखण्डे आर्यावर्तैकदेशे विक्रमशके बौद्धावतारे अमुकनाम सम्वत्सरे अमुकायने अमुक ऋतौ महामांगल्यप्रदे मासोत्तमे मासे अमुक मासे अमुक पक्षे अमुक तिथौ अमुकवासरे अमुक नक्षत्रे अमुकयोगे अमुककरणे अमुकराशि स्थिते सूर्ये अमुकराशि स्थिते चन्द्रे शेषेषु ग्रहेषु यथा-यथा राशि स्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगण विशेषविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अमुकगोत्रः अमुक शर्मा (वर्मा-गुप्तः) अहं मम इह जन्मनि जन्मान्तरे वा सर्व-पापक्षय पूर्वक दीर्घायुर्विपुल धन-धान्य पुत्र-पौत्रादि अवच्छिन्न सन्तति-वृद्धि, स्थिर-लक्ष्मी कीर्तिलाभ—शत्रुपराजय—सदभीष्ट सिद्ध्यर्थं (धर्मार्थ-काम मोक्ष चतुर्विधपुरुषार्थ सिद्धिद्वारा)। श्रुति-स्मृति पुराणोक्त फलावाप्ति कामश्च श्री परमेश्वर प्रीत्यर्थं एकरात्रि अधिवासन पक्षेण विष्ण्वादि मूर्तीणां अचल प्रतिष्ठां करिष्ये। तदंगत्वेन स्वस्तिपुण्याहवाचनं आचार्या दिवरणं सर्वतोभद्रपूजनं मण्डप पूजनादिं च करिष्ये प्रथमं गणेशाम्विका पूजनं च करिष्ये ॥

अथ षोडशोपचार गणेशाम्विका पूजनम्

इस प्रकार प्रधान संकल्प करके षोडशोपचार विधि से गणेशाम्विका का पूजन करें।

ध्यानम्— गजाननं भूतगणादि सेवितं, कपित्थ जम्वू फलचारुभक्षणम्।
उमासुतं शोक विनाश कारकं, नमामि विघ्नेश्वर पाद पंकजम्।
ॐ अम्बे अम्बिके अम्बालिके न मानयति कश्चन।
ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पील वासिनीम्।

चावल पुष्प लेकर आवाहन करें—

आवाहन— आगच्छ भगवत् देव स्थाने चात्र स्थिरोभव।
यावत्पूजां करिष्यामि तावत्त्वं सन्निधो भव।
हेमाद्रि तनयां देवीं वरदां शंकर प्रियाम्।
लम्वोदरस्य जननीं गौरीमावाहयाम्यहम्॥
ॐ अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तुः च।
अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन।
गणेशाम्विकाभ्यां नमः आवाहनं सम० ॥

ॐ मनोजूतिर्जुषता माज्यस्य वृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञ॰ समिमं दधातु । विश्वेदेवा स इह मादयन्त मो ३ म्प्रतिष्ठ इति स्थाप्य—

इस प्रकार स्थापना करके पुष्प आसन दें—

आसनम्— ॐ पुरुष एवेद॰ सर्व यद्भूतं यच्च भाव्यम् ।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनाति रोहति ॥
विचित्र रत्न खचितं दिव्यास्तरण संयुतम् ।
स्वर्ण सिंहासनं चारु गृह्णीष्व सुरपूजित ॥
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः—आसनं समर्पयामि ।

पाद्यम्— ॐ एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पूरुषः ।
पादोऽस्य विश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥
सर्वतीर्थ समुद्भूतं पाद्यं गन्धादिभिर्युतम् ।
विघ्नराज गृहाणेदं भगवन् भक्तवत्सल ॥
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः पादयोः पाद्यं समर्पयामि ॥

अर्घपात्र में जल-अक्षत-पुष्प लेकर अर्घ्य दें—

अर्घ्यम्— ॐ त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोस्येहा भवत्पुनः ।
ततो विश्वं व्यक्रामत्साशनानशने अभि ॥
गणाध्यक्ष नमस्तेऽस्तु गृहाण करुणाकर ।
अर्घ्यं च फलसंयुक्तं गन्धमाल्याक्षतैर्युतम् ॥
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः हस्तयोरर्घ्यं प्रदास्यामि ॥

अर्घ के पश्चात् आचमन दें—

आचमनम्— ॐ ततो विराडजायत विराजो अधिपूरुषः ।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चात् भूमिमथोपुरः ॥
विनायक नमस्तुभ्यं त्रिदशैरभिवन्दित ।
गंगोदकेन देवेश कुरुष्वाचमनं प्रभो ॥
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः आचमनीयं समर्पयामि ॥

स्नानम्— ॐ तस्माद् यज्ञात् सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम् ।
पशूंस्तांश्चक्रे वायव्या नारण्या ग्राम्याश्च ये ॥
मन्दाकिन्यास्तु यद्वारि सर्वपापहरं शुभम् ।

तदिदं कल्पितं देव स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः स्नानं समर्पयामि ।

स्नान के पश्चात् फिर आचमन दें ।

पञ्चामृतस्नानम्—ॐ पञ्चनद्यः सरस्वती मपियन्ति सस्रोतसः। सरस्वती तु पञ्चधा सोद्देशेऽभवत्सरित् ॥

पञ्चामृतं मयानीतं पयोदधि घृतं मधु ।
शर्करा च समायुक्तं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि ।
पञ्चाममृतस्नानान्ते शुद्धोदक स्नानम् ॥

इसके पश्चात् अलग-अलग पचामृतस्नान करवाये—

पयः स्नानम्—ॐ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयोदिव्यन्तरिक्षे पयोधाः । पयःस्वती प्रदिशः सन्तु मह्यम् ।

कामधेनु समुद्भूतं सर्वेषां जीवनं परम् ।
पावनं यज्ञहेतुश्च पयः स्नानार्थमर्पितम् ॥
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः पयः स्नानं समर्पयामि ।
पयः स्नानान्ते शुद्धोदक स्नानम् ।

दधिस्नानम्—ॐ दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः। सुरभिनो मुखाकरत प्रण आयू॑षि तारिषत् ॥

पयसस्तु समुद्भूतं मधुराम्लं शशिप्रभम् ।
दध्यानीतं मया देव स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः दधिस्नानं समर्पयामि ।
दधिस्नानान्ते शुद्धोदक स्नानम् ।

घृतस्नानम्—ॐ घृतं मिमिक्षे घृतमस्य योनिर्घृतेश्रितो घृतमस्यधाम। अनुष्वधमावह मादयस्व स्वाहा कृतं वृषभ वक्षि हव्यम् ।

नवनीत समुत्पन्नं सर्व सन्तोषकारकम् ।
घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः घृतस्नानं समर्पयामि ।
घृत स्नानान्ते शुद्धोदक स्नानम् ।

मधुस्नानम्—मधुवाता ऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्धवः। माध्वीर्न सन्त्वोषधिः। मधुनक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिव॒ रजः। मधुद्यौरस्तु नः पिता। माधुमान्नो वनस्पतिर्मुधमां -२ अस्तु सूर्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु नः।

पुष्परेणु समुद्भूतं सुस्वादु मधुरं मधु।
तेजः पुष्टिकरं दिव्यं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः मधु स्नानं समर्पयामि।
मधुस्नानान्ते शुद्धस्नानम्।

शर्करास्नानम्—ॐ अपा॒ रसमुद्वयस॒ सूर्ये सन्तु समाहितम्। अपा॒ रसस्य यो रसस्तं वो गृह्णाम्युत्तममुपयाम गृहीतोसीन्द्राय त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम्।

इक्षुरस समुद्भूतां शर्करां पुष्टिदां शुभाम्।
मलापहारिकां दिव्यां स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः शर्करास्नानं समर्पयामि।
शर्करास्नानान्ते शुद्धोदकस्नानम्।

शुद्धोदक स्नानम्—ॐ आपोहिष्ठामयोभुवस्तान ऊर्जे दधातन। महेरणाय चक्षसे यो वः शिवतमो रसः। तस्य भाजयते ह नः तस्मा अरङ्गमामव यस्य क्षयाय जिन्वथ।

गंगे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वती।
नर्मदे सिन्धु-कावेरी जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि।
स्नानान्ते आचमनीयम् जलं समर्पयामि।

यज्ञोपवीतम्—यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुंच शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः॥
नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम्।
उपवीतं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर॥
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि॥

वस्त्रम्—ॐ युवा सुवासः परिवीत आगात् स उ श्रेयान् भवति जायमानः। तं धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयन्तः।

शीतोष्णसंत्राणं लज्जायाः रक्षणं परम् ।
देहालङ्करणं वस्त्रमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, वस्त्रं समर्पयामि ।

उपवस्त्रम्—ॐ सुजातो ज्योतिषा सह शर्मवरूथ मासदत्स्वः वासो अग्ने विश्वरूप७ संव्ययस्व विभावसोः ।

श्री रक्तवस्त्रयुग्मं देव देवाङ्गसदृशप्रभम् ।
भक्त्या दत्तं गृहाणेदं लम्वोदर हरप्रिय ॥
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः वस्त्रोपवस्त्रं समर्पयामि ।

गन्धम्—ॐ त्वां गन्धर्वा अखनंस्त्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः । त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान् यक्ष्मादमुच्यत ।

श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम् ।
बिलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ॥
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः गन्धं समर्पयामि ॥

अक्षतान्— ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्रिया अधूषत ।
अस्तोषत स्वभावनवो विप्रा नविष्ठया मती योजान् विन्द्रते हरी ॥
अक्षताश्च सुरश्रेष्ठ कुङ्कुमाक्ताः सुशोभिताः ।
मया निवेदिताः भक्त्या गृहाण परमेश्वर ॥
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः अक्षतान् समर्पयामि ।

पुष्पाणि—ॐ ओषधी प्रतिमोदध्वं पुष्पवती प्रसूवरी ।
अश्वा इव सुजित्त्वरी वीरुधः पारयिष्णवः ॥
माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो ।
मयाऽऽहृतानि पुष्पाणि पूजार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः पुष्पाणि समर्पयामि ।

दूर्वांकुर—ॐ काण्डात् काण्डात् प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि|एवा नो दूर्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च ।

दूर्वांकुरान् सुहरितान् अमृतान् मंगलप्रदान् ।
आनीतांस्तव पूजार्थं गृहाण गणनायक ॥

गन्धादि युतान् एकविंशति दूर्वांकुरान् गृहीत्वा प्रतिनाम दूर्वांकुरयुग्मं समर्प्य अन्ते सर्वनामभिः एकैकां समर्पयेत् ।

ॐ गणाधिप नमस्तेऽस्तु, ॐ उमापुत्र नमस्तेऽस्तु, ॐ अघनाशन नमस्तेऽस्तु, ॐ विनायक नमस्तेऽस्तु, ॐ ईशपुत्र नमस्तेऽस्तु, ॐ सर्वसिद्धि प्रदायक नमस्तेऽस्तु, ॐ एकदन्त नमस्तेऽस्तु, ॐ इभवक्त्र नमस्तेऽस्तु, ॐ मूषक वाहन नमस्तेऽस्तु, ॐ कुमार गुरवे तुभ्यं नमोऽस्तु, ॐ चतुर्थीश नमोऽस्तु ते ।

श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः दूर्वांकुरान् समर्पयामि ॥

सिन्दूरम्—ॐ सिन्धोरिव प्राद्ध्वने शूघनासो वात प्रमियः पतयन्ति यह्वाः । घृतस्य धारा अरुषो न वाजी काष्ठा भिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः ॥

सिन्दूरं शोभनं रक्तं सौभाग्यं सुखवर्धनम् ।
शुभदं कामदं चैव सिन्दूरं प्रतिगृह्यताम् ॥
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः सिन्दूरं समर्पयामि ।

परिमल द्रव्याणि—ॐ अहिरिव भोगैः पर्य्येति वाहुं ज्यायां हेतिं परिवाधमानः । हस्तघ्नो विश्वावयुनानि विद्वान् पुमान् पुमांसः परिपातु विश्वतः ॥

नाना परिमलैः द्रव्यैः निर्मितं चूर्णमुत्तमम् ।
अंवीर नामकं चूर्णं गन्धं चारु प्रतिगृह्यताम् ॥
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः परिमल द्रव्याणि समर्पयामि ।

धूपम्—ॐ धूरसि धूर्व धूर्वन्त धूर्व तं योऽस्मान् धूर्वति तं धूर्वंयं वयं धूर्वामः । देवानामसि वह्नितमं सस्नितमं पप्रितमं जुष्टतमं देव हूतमम् ॥

वनस्पतिरसोद् भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः ।
आघ्रेयः सर्व देवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः धूपं समर्पयामि ।

दीपम्—ॐ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा, सूर्योज्योतिः ज्योतिः सूर्यः स्वाहा, अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा सूर्योवर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा, ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ।

साज्यंवर्ति संयुक्तं वह्निना योजितं मया ।
दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्य तिमिरापहम् ॥
श्री गणेशाम्विकाभ्यां नमः दीपं प्रदर्शयामि ।

नैवेद्यम्—ॐ नाभ्या आसीदन्तरिक्ष७शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत । पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकां -२ अकल्पयन् ॥

नैवेद्यं गृह्यतां देव भक्तिं मे ह्यचलां कुरु ।
ईप्सितं मे वरं देहि परत्र च परांगतिम् ।
श्री गणेशाम्विकाभ्यां नमः नैवेद्यं समर्पयामि ।

एकं मोदकं विनायकाय दद्यात्, दश ब्राह्मणाय दद्यात्, दश स्वार्थं स्थापयेत् ।

नैवेद्यान्ते पुनराचमनीयम् ।

ऋतुफलं—ॐ यत्पुरुषेण हविषा देवाः यज्ञमतन्वत । वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्म शरद्धविः ॥

इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव ।
तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि ॥
श्री गणेशाम्विकाभ्यां नमः ऋतुफलानि समर्पयामि ॥

ताम्बूलफलम्—या फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः । वृहस्पतिः प्रसूतास्तानो मुञ्चन्त्व७हसः ॥

पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्ली दलैर्युतम् ।
एलादि चूर्णयुक्तं च ताम्वूलं प्रतिगृह्यताम् ॥

श्री गणेशाम्विकाभ्यां नमः मुखवासार्थे एलादिसंयुक्तं ताम्वूलं समर्पयामि ।

दक्षिणा—ॐ हिरण्य गर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । स दाधार पृथिवीं द्यामुते मां कस्मै देवाय हविषा विधेम ।

हिरण्य-गर्भ गर्भस्थं हेमवीजं विभावसोः ।
अनन्त-पुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥
श्री गणेशाम्विकाभ्यां नमः सादूगुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि ।

कर्पूर जलाकर आरती करे—

आर्तिक्यम्—आरात्रिवपार्थिवꣳरजः पितुरप्रायिधामभिः। दिवः सदाꣳसि वृहती वितिष्ठस आत्त्वेषं वर्त्तते तमः॥

ॐ यज्ञेन यज्ञ मयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन। देह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।

ॐ राजाधिराजाय प्रसह्यसाहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे। स मे कामान् कामकामाय मह्यं कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु। कुवेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः। ॐ स्वस्ति साम्राज्यं भौज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं महाराज्यमधिपत्यमयं समुद्रपर्यन्ताया, एकराडिति। आर्त्तिकं समर्पयामि॥

प्रदक्षिणा—ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृका हस्ता निषङ्गिणः। तेषाꣳसहस्त्रयोजनेऽवधन्वानि तन्मसि।

पदे पदे या परिपूजकेभ्यो सद्योऽश्वमेधादि फलं ददाति। तां सर्वपापक्षयहेतुभूतां प्रदक्षिणा ते परितः करोमि॥ यानि कानि च पापानि ज्ञाताज्ञातकृतानि च। तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे॥

एक पात्र में चन्दन-अक्षत-पुष्प-दूर्वा आदि लेकर दोनों हाथों में पकड़ कर—

विशेषार्घ्यम्— ॐ रक्षरक्ष गणाध्यक्ष रक्ष त्रैलोक्य रक्षक।
भक्तानामभयं कर्ता त्राता भव भवार्णवात्॥
द्वैमातुर कृपासिन्धो षाण्मातुरग्रज प्रभो।
वरद त्वं वरं देहि वांछितार्थ फलप्रद॥
अनेन सफलार्घ्येण सफलो मेऽस्तु सदा मम॥
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः सफलार्घ्यं समर्पयामि॥

प्रार्थना— विघ्नेश्वराय वरदाय सुर-प्रियाय,
लम्वोदराय सकलाय जगद्धिताय।
नागाननाय श्रुतियज्ञ विभूषिताय,
गौरी सुताय गणनाथ नमो नमस्ते॥

मन्त्र पुष्पाञ्जलि—
विघ्नेश्वरायवरदाय सुरप्रियाय,
लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय।

नागननाय श्रुतियज्ञ विभूषिताय,
गौरी सुताय गणनाथ नमोनमस्ते ॥१ ॥
भक्तार्ति नाशन पराय गणेश्वराय,
सर्वेश्वराय शुभदाय सुरेश्वराय ।
विद्याधराय विकटाय च वामनाय ।
भक्त प्रसन्नवरदाय नमो नमस्ते ॥२ ॥
नमस्ते ब्रह्मरूपाय विष्णुरूपाय ते नमः ।
नमस्ते रुद्ररूपाय करिरूपाय ते नमः ॥३ ॥
विश्वरूप स्वरूपाय नमस्ते ब्रह्मचारिणे ।
भक्तप्रियाय देवाय नमस्तुभ्यं विनायक ॥४ ॥
लम्वोदर नमस्तुभ्यं सततं मोदकप्रिय ।
निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्व कार्येषु सर्वदा ॥५ ॥
त्वां विघ्न शत्रुदलनेति च सुन्दरेति
भक्त प्रियेति सुखदेति फलप्रदेति ।
विद्या प्रदेत्यघ हरेति च ये स्तुवन्ति,
तेभ्यो गणेश वरदो भव नित्यमेव ॥६ ॥
अविरलमदजलनिवहं भ्रमरकुलानीकसेवित कपोलम् ।
अभिमतफल दातारं कामेशं गणपतिं वन्दे ॥
अनया पूजया गणेशाम्बिका प्रीयेताम् । न मम ॥

अथ कलश—स्थापनम्

हस्तमात्र चतुष्कोण ऊंचे स्थण्डिल पर ईशान कोण में कुंकुम से भूमि पर अष्ट दल कमल बनाकर सप्तधान्य बिछा कर जल पूरित ताम्र या मृण्मय (मिट्टी) कलश की स्थापना करे ।

१. भूमि स्पर्श—ॐ महीद्यौः पृथिवी च न इमं यज्ञमिमिक्षताम् । पिपृतान्नो भरीमभिः । इससे भूमि का दोनों हाथों से स्पर्श करे ।

२. धान्य—ॐ औषधयः समवदन्त सोमेन सह राज्ञा । यस्मै कृणोति ब्राह्मणस्त७ राजन्पारयामसि ॥ इससे सप्तधान्य फैला दे ।

३. सप्तधान्य पर कलश स्थापनम्—ॐ आजिघ्रकलशं मह्यात्वा

विशन्त्विन्दवः । पुनरूर्जा निवर्तस्व सा नः सहस्त्रं धुक्ष्वो रुधारा पयस्वती पुनर्मा विशताद्रयिः ॥

इससे सप्तधान्य पर कलश स्थापन करे ।

४. जलम्—ॐ वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्य स्कम्भसर्जनीस्थो वरुणस्य ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऋतसदनमसि वरुणस्य ऋतसदनमासीद ॥

इससे कलश में जल डाल कर भर दें ।

५. गन्धम्—गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् । ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥

इससे कलश के चारों ओर गन्ध का लेपन करें । कलश में गन्ध डालें ।

६. सर्वौषधि—ॐ या ओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा । मनैनु बभ्रूणामह॒ शतं धामानि सप्त च ॥

इससे कलश में सर्वौषधि डालें ।

७. दूर्वा—ॐ काण्डात् काण्डात प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि । एवानो दूर्वे प्र तनु सहस्त्रेण शतेन च । इससे दूर्वा डालें ॥

८. पंचपल्लव—ॐ अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता । गोभाज इत्किलासथ यत्सनवथ पूरुषम् ॥ इससे पांच वृक्षों के पत्ते डालें ।

९. पवित्रम्—ॐ पवित्रेस्थो वैष्णव्यौ सवितुर्वः प्रसव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः । तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयम् ॥

इससे कुशनिर्मित पवित्र को डालें ।

१०. सप्तमृत्तिका—ॐ स्योना पृथिवी नो भवानृक्षरा निवेशिनी । यच्छानः शर्म सप्रथा ॥ इससे सप्तमृत्तिका डालें ।

११. पूगीफलम्—ॐ या फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः । वृहस्पति प्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्व॒ ह सः । इससे सुपारी डालें ।

१२. पंच रत्नानि—ॐ परिवाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत् । दधद्रत्नानि दाशुषे ॥

इससे पांच रत्नों को डालें ।

१३. सुवर्ण या द्रव्य—ॐ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । स दाधार पृथिवीं द्यामुते मां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

इससे दक्षिणा स्वरूप सुवर्ण या द्रव्य डालें ।

१४. वस्त्रम्—ॐ सुजातो ज्योतिषा सह शर्म वरूथमासदत्स्व । वासो अग्ने विश्वरूप संव्ययस्व विभावसोः ।

युग्म वस्त्र कलश के चारों ओर लपेट दे ।

१५. पूर्णपात्रम्—ॐ पूर्णादर्वि परापत सुपूर्णा पुनरापत । वस्नेव विक्रीणावहा इषमूर्ज॑ शतक्रतो ॥

इससे कलश पर चावल से भरा पूर्णपात्र रखें ।

१६. नारीकेल—ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्या वहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषाण मुम्म इषाण सर्वलोकम्म इषाण ॥

इससे लाल वस्त्र से लपेटे हुए नारियल को रखें ?

वरुणस्यावाहनम्—ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेडमानो वरुणेह वोध्युरुश॑ समानः आयुः प्रमोषीः ॥

कलशे वरुणं सांगं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकम् आवाहयामि स्थापयामि । ॐ अपाम्पतये वरुणाय नमः ।

ऐसा करके कलश पर देवताओं का आवाहन करे ।

अथ कलशाभिमन्त्रणम्

ॐ कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः ।
मूले तस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः ॥१ ॥
कुक्षौ तु सागराः सप्त सप्तद्वीपाः वसुंधरा ।
अर्जुनीगोमती चैव चन्द्रभागा सरस्वती ॥
कावेरी कृष्णवेणा च गंगा चैव महानदी ॥२ ॥
तापीगोदावरी चैव माहेन्द्री नर्मदा तथा ।
पृथिव्यां यानि तीर्थानि कलशस्थानि तानि वै ॥३ ॥
सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदाः नदाः ।
आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः ॥४ ॥

ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः ।
अंगैश्च सहिताः सर्वे कलशं तु समाश्रिताः ॥५ ॥
अत्र गायत्री सावित्री शान्तिः पुष्टिकरी तथा ।
आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः ॥६ ॥

सभी देवताओं व नदियों आदि का आवाहन कर कलश की प्रतिष्ठा करे—

ॐ मनोजूतिर्जुषता माज्यस्य वृहस्पति र्यज्ञमिमं त्वनो त्वरिष्टं यज्ञ॰ समिमं दधातु। विश्वेदेवा स इह मादयन्ता मो ३ म्प्रतिष्ठ। कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः। पंचोपचार से पूजन करे।

इसके बाद प्रार्थना करे।

अर्थ प्रार्थना—

देव-दानव संवादे मथ्यमाने महौदधौ ।
उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम् ॥१ ॥
त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः ।
त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः ॥२ ॥
शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः ।
आदित्याः वसवो रुद्राः विश्वेदेवा मरुद्गणाः ॥३ ॥
त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः काम फलप्रदाः ।
त्वत्प्रसादादिमं कर्म कर्तुमीहे जलोद्भव ।
सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा ॥४ ॥
नागपाशधरः स्वर्णभूषणः पद्मिनी प्रियः ।
वरुणोऽम्वुपतिः श्रीमान् श्वेतो मकरवाहनः ।.५ ॥
नमो नमस्ते स्फटिक प्रभाय सुश्वेतहाराय सुमङ्गलाय ।
सुपाशहस्ताय झषासनाय जलाधिनाथाय नमो नमस्ते ॥६ ॥
पाशपाणे नमस्तुभ्यं पद्मिनिजीवनायक ।
पुण्याहवाचनं यावत् तावत्त्वं सन्निधोभव ॥७ ॥

इति कलश स्थापनम्।

अथ पुण्याह-वाचनम्

कलशस्थापन के पश्चात् पुण्याहवाचन करे—

पुण्याहवाचने शस्ताः ब्राह्मणाः—

पुण्याहवाचने विप्राः युग्माः वेदविदो मताः ।
यज्ञोपवीतिनः शस्ताः प्राङ्मुखाः स्युः पवित्रिणः ॥
गन्धपुष्पार्चिताः शुद्धाः सोत्तरीयाः कुशायुधाः ॥

पुण्याहवाचने वर्ज्याः ब्राह्मणाः—

न तत्र कुनखी काणो हीनाङ्गोऽविकलस्तथा ।
वन्धाश्च विधुरो वापि क्रूरस्तु खलसेवकः ।
वक्रवृत्तिश्च दम्भी च हेतुको ज्ञानदुर्वलः ।
एते चान्ये च विप्राः स्युर्न वाच्या स्वस्ति वाचने ॥

तत्रादौ स्वाग्रे दूर्वाक्षतैः भूमिं सम्पूज्य तदुपरि कलशे वरुणमावाह्य चाम्रपल्लवादिना संयोजयेत् ।

पुण्याहवाचन में दो या चार ब्राह्मणों का विधान है । सर्वप्रथम अर्घ की स्थापना करके संकल्प करे—

संकल्प—ॐ अद्येहेत्यादि देशकालौ संकीर्त्य अमुकगोत्रोऽमुकशर्माहं अमुककर्मणि सर्वाभ्युदयप्राप्तये ब्राह्मणद्वारा पुण्याहं वाचयिष्ये । तदङ्गतया चतुर्णां ब्राह्मणानां पूजनं वरणञ्च करिष्ये ।

ऐसा संकल्प करके ब्राह्मणों के प्रति अर्घ प्रदान कर पूजन करे ।

ॐ भूमिदेवाग्र जन्मासि त्वं विप्र पुरुषोत्तम ।
प्रत्यक्षो यज्ञ पुरुषो ह्यर्घोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥

हाथ में अर्घ देकर गन्धाक्षत पुष्प से पूजन करे—

ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां किरीषिणीम् ।
ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ।

नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्तये सहस्रपादाक्षि शिरोरुवाहवे । सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्रकोटि युगधारिणे नमः ॥

पूजन के पश्चात् वरण करे—

एभिर्गन्धाक्षत पुष्प पूगीफल द्रव्यैः अमुककर्मणि सर्वाभ्युदय प्राप्तये पुण्याहवाचनार्थं ब्राह्मणं त्वामहं वृणे ।

वृतोऽस्मि इति प्रत्युक्तिः । एवं क्रमेण अन्येषां ब्राह्मणानां वरणं कृत्वा सर्वेभ्योऽञ्जलिं वध्वा मन्त्रं पठेत् ॥

ततो यजमानः—अवनिकृतजानुमण्डलः कमलमुकुलसदृशमञ्जलिं शिरस्याधाय दक्षिणेन पाणिना (उभाभ्यां कराभ्यां) सुवर्णपूर्णकलशं स्वाञ्जलौ धारयित्वा स्वमूर्ध्ना संयोज्य च आशिषः प्रार्थयेत्। दीर्घा नागा नद्यो गिरयस्त्रीणि विष्णुपदानि च । तेनायुः प्रमाणेन पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु । 'अस्तु दीर्घमायुः' इति विप्राः प्रतिवचनं ब्रूयुः ।

ॐ त्रीणि पदा विचक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः । अतोधर्माणि धारयन् ॥ 'तेनायुः प्रमाणेन पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु' इति यजमानो ब्रूयात्। 'अस्तु दीर्घमायुः' इति विप्राः प्रतिवचनं ब्रूयुः । एवमेव यजमानः 'ॐ त्रीणि पदा०' इति मन्त्रेण कलशं स्वशिरसा संयोज्य कलशस्थाने कलशं स्थापयित्वा पुनर्गृहीत्वा तथैव त्रिवारं कुर्यात् ।

ततो यजमानः—अपां मध्ये स्थिता देवाः सर्वमप्सु प्रतिष्ठितम्। ब्राह्मणानां करे न्यस्ताः शिवा आपो भवन्तु (मे) ते ॥ इत्युक्त्वा 'शिवा आपः सन्तु' इति विप्रहस्तेषु जलं दद्यात् । 'सन्तु शिवा आपः' इति ब्राह्मणाः प्रतिवचनं ब्रूयुः । लक्ष्मीर्वसति पुष्पेषु लक्ष्मीर्वसति पुष्करे । सा मे वसतु वै नित्यं सौमनस्यं तथाऽस्तु नः ॥ 'सौमनस्यमस्तु' इति विप्रहस्तेषु पुष्पं दद्यात् । 'अस्तु सौमनस्यम्' इति विप्राः ।

अक्षतं चास्तु मे पुण्यं दीर्घमायुर्यशोबलम् । यद्यच्छ्रेयस्करं लोके तत्तदस्तु सदा मम ॥ 'अक्षतञ्चारिष्टं चास्तु' इति विप्रहस्तेष्वक्षतान् दद्यात्। 'अस्त्वक्षतमरिष्टञ्च' इति द्विजाः । 'गन्धाः पान्तु' इति विप्रहस्तेषु गन्धं दद्यात् । 'सुमङ्गल्यञ्चास्तु' इति विप्राः प्रतिब्रूयुः। 'पुनरक्षताः पान्तु' इति विप्रहस्तेष्वक्षतान् दद्यात् । 'आयुष्यमस्तु' इति विप्राः । 'पुष्पाणि पान्तु' इति विप्रहस्तेषु पुष्पाणि दद्यात् । 'सौश्रियमस्तु' इति विप्राः 'सफलताम्बूलानि पान्तु' इति विप्रहस्तेषु ताम्बूलानि दद्यात् । 'ऐश्वर्यमस्तु' इति द्विजाः । 'दक्षिणाः पान्तु'

इति विप्रहस्तेषु दक्षिणा दद्यात्। 'बहुदेयञ्चास्तु' इति विप्राः। 'स्वर्चितमस्तु' इति विप्रहस्तेषु जलं दद्यात्। 'अस्त्वर्चितम्' इति ब्राह्मणाः। यजमानः—दीर्घमायुः शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिः श्रीर्यशो विद्या विनयो वित्तं बहुपुत्रं बहुधनं चायुष्यं चास्तु' इति वाक्येन विप्रान् प्रार्थयेत्। 'अस्तु' इति द्विजाः प्रतिब्रूयुः।

ततो यजमानः—'यं कृत्वा सर्ववेदयज्ञक्रियाकरणकर्मारम्भाः शुभाः शोभनाः प्रवर्तन्ते तमहमोङ्कारमादिं कृत्वा ऋग्यजुः सामाथर्वाशीर्वचनं बहुऋषिमतं समनुज्ञातं भवद्भिरनुज्ञातः पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये' इति वदेत्। 'वाच्यताम्' इति विप्राः प्रतिब्रूयुः।

यजमानः—ॐ द्रविणोदाः पिपीषति जुहोत प्र च तिष्ठत। नेष्ट्रादृतुभिरिष्यत ॥१॥ सविता त्त्वा सवाना॑ᳬ सुवतामग्निर्गृहपतीना॑ᳬसोमो वनस्पतीनाम्। बृहस्पतिर्वाच इन्द्रो ज्येष्ठाय रुद्रः पशुभ्यो मित्रः सत्त्यो वरुणो धर्मपतीनाम् ॥२॥ न तद्रक्षा॑ᳬसि न पिशाचास्तरन्ति देवानामोजः प्रथमज॑ᳬह्येतत्। यो बिभर्त्ति दाक्षायणठ॑ हिरण्यठ॑ स देवेषु कृणुते दीर्घमायुः स मनुष्येषु कृणुते दीर्घमायुः ॥३॥ उच्चा ते जातमन्धसो दिवि सद्भूम्या ददे। उग्रठ॑ शर्म महि श्रवः ॥४॥ उपास्मै गायता नरः पवमानायेन्दवे। अभि देवां -२ इ यक्षते ॥५॥ इति मन्त्रानुक्त्वा 'व्रत-जप-नियम-तपः-स्वाध्याय-क्रतु-शम-दम-दया- दानविशिष्टानां सर्वेषां ब्राह्मणानां मनः समाधीयताम्' इति विप्रान् प्रार्थयेत्। 'समाहित मनसः स्म' इति द्विजाः।

यजमानः—'प्रसीदन्तु भवन्तः' इति वदेत्। 'प्रसन्नाः स्मः' इति विप्राः। यजमानः—ॐ शान्तिरस्तु ॥१॥ ॐ पुष्टिरस्तु ॥२॥ ॐ तुष्टिरस्तु ॥३॥ ॐ वृद्धिरस्तु ॥४॥ ॐ अविघ्नमस्तु ॥५॥ ॐ आयुष्यमस्तु ॥६॥ ॐ आरोग्यमस्तु ॥७॥ ॐ शिवमस्तु ॥८॥ ॐ शिवकर्मास्तु ॥९॥ ॐ कर्मसमृद्धिरस्तु ॥१०॥ ॐ धर्मसमृद्धिरस्तु ॥११॥ ॐ वेदसमृद्धिरस्तु ॥१२॥ ॐ शास्त्रसमृद्धिरस्तु ॥१३॥ ॐ धनधान्यसमृद्धिरस्तु ॥१४॥ ॐ पुत्रपौत्रसमृद्धिरस्तु ॥१५॥ ॐ इष्टसम्पदस्तु ॥१६॥ बहिः (पात्राद्बहिरुत्तरतः पात्रान्तरे भूमौ वा जलं पातयेत् अक्षतान्वा क्षिपेत्) ॐ

अरिष्टनिरसनमस्तु ॥१७॥ ॐ यत्पापं रोगोऽशुभमकल्याणं तद्दूरे प्रतिहतमस्तु ॥१८॥ अन्तः (पात्रे) ॐ यच्छ्रेयस्तदस्तु ॥१९॥ ॐ उत्तरे कर्मणि निर्विघ्नमस्तु ॥२०॥ ॐ उत्तरोत्तरमहरहरभिवृद्धिरस्तु ॥२१॥ ॐ उत्तरोत्तराः क्रियाः शुभाः शोभनाः सम्पद्यन्ताम् ॥२२॥ ॐ तिथिकरणमुहूर्त्त-नक्षत्रग्रहलग्नसम्पदस्तु ॥२३॥ तिथिकरणमुहूर्त्तनक्षत्रग्रहलग्नाधिदेवताः प्रीयन्ताम् ॥२४॥ ॐ तिथिकरणे समुहूर्त्ते सनक्षत्रे सग्रहे सलग्ने साधिदेवते प्रीयेताम् ॥२५॥

दुर्गापाञ्चाल्यौ प्रीयेताम् ॥२६॥ ॐ अग्निपुरोगा विश्वेदेवाः प्रीयन्ताम् ॥२७॥ ॐ इन्द्रपुरोगा मरुद्गणाः प्रीयन्ताम् ॥२८॥ ॐ ब्रह्मपुरोगाः सर्वे वेदाः प्रीयन्ताम् ॥२९॥ ॐ विष्णुपुरोगाः सर्वे देवाः प्रीयन्ताम् ॥३०॥ ॐ माहेश्वरीपुरोगा उमामातरः प्रीयन्ताम् ॥३१॥ ॐ वसिष्ठपुरोगा ऋषिगणाः प्रीयन्ताम् ॥३२॥ ॐ अरुन्धतीपुरोगा एकपत्न्यः प्रीयन्ताम् ॥३३॥ ॐ ब्रह्म च ब्राह्मणाश्च प्रीयन्ताम् ॥३४॥ श्री सरस्वत्यौ प्रीयेताम् ॥३५॥ ॐ श्रद्धामेधे प्रीयेताम् ॥३६॥

ॐ भगवती कात्यायनी प्रीयताम् ॥३७॥ ॐ भगवती माहेश्वरी प्रीयताम् ॥३८॥ ॐ भगवती पुष्टिकरी प्रीयताम् ॥३९॥ ॐ भगवती तुष्टिकरी प्रीयताम् ॥४०॥ ॐ भगवती ऋद्धिकरी प्रीयताम् ॥४१॥ ॐ भगवती वृद्धिकरी प्रीयताम् ॥४२॥ ॐ भगवन्तौ विघ्नविनायकौ प्रीयेताम् ॥४३॥ ॐ सर्वाः कुलदेवताः प्रीयतन्ताम् ॥४४॥ ॐ सर्वाः ग्रामदेवताः प्रीयन्ताम् ॥४५॥ ॐ सर्वा इष्टदेवताः प्रीयन्ताम् ॥४६॥ बहिः (पात्रान्तरे उत्तरतो निहिते जलपातनमक्षतप्रक्षेपणं वा) ॐ हताश्च ब्रह्मद्विषः ॥४७॥ ॐ हताश्च परिपन्थिनः ॥४८॥ ॐ हताश्च विघ्नकर्त्तारः ॥४९॥ ॐ शत्रवः पराभवं यान्तु ॥५०॥ ॐ शाम्यन्तु घोराणि ॥५१॥ ॐ शाम्यन्तु पापानि ॥५२॥ ॐ शाम्यन्त्वीतयः ॥५३॥ ॐ शाम्यन्तूपद्रवाः ॥५४॥

अन्तः(पात्रे) ॐ शुभानि वर्द्धन्ताम् ॥५५॥ ॐ शिवा आपः सन्तु ॥५६॥ ॐ शिवा ऋतवः सन्तु ॥५७॥ ॐ शिवा अग्नयः सन्तु ॥५८॥ ॐ शिवा आहुतयः सन्तु ॥५९॥ ॐ शिवा वनस्पतयः सन्तु ॥६०॥ ॐ शिवा ओषधयः

सन्तु ॥६१ ॥ ॐ शिवा अतिथयः सन्तु ॥६२ ॥ ॐ अहोरात्रे शिवे स्याताम् ॥६३ ॥ निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो नः ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् ॥६४ ॥ ॐ शुक्राङ्गारक-बुधबृहस्पतिशनैश्चरराहुकेतुसोमसहितादित्यपुरोगाः सर्वे ग्रहाः प्रीयन्ताम् ॥६५ ॥

ॐ भगवान्नारायणः प्रीयताम् ॥६६ ॥ ॐ भगवान्पर्जन्यः प्रीयताम् ॥६७ ॥ ॐ भगवान्स्वामी महासेनः प्रीयताम् ॥६८ ॥ ॐ पुरोऽनुवाक्यया यत्पुण्यं तदस्तु ॥६९ ॥ ॐ याज्यया यत्पुण्यं तदस्तु ॥७० ॥ ॐ वषट्कारेण यत्पुण्यं तदस्तु ॥७१ ॥ ॐ प्रातः सूर्योदये यत्पुण्यं तदस्तु ॥७२ ॥ इति द्विसप्तति वाक्यानि पठन् जलमक्षतं वा पातयेत् ।

ततो यजमानः—'एतत्कल्याणयुक्तं पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये' इति प्रार्थयेत् । 'वाच्यताम्' इति विप्राः ब्रूयुः । यजमानः—ब्राह्म पुण्यमहर्यच्च सृष्ट्युत्पादनकारकम् । वेदवृक्षोद्भवं नित्यं तत्पुण्याहं ब्रुवन्तु नः ॥ "भो ! ब्राह्मणाः मम सकुटम्बस्य सपरिवारस्य गृहेऽमुककर्मणः पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु" इति क्रमेण मन्द्रमध्यमोच्चस्वरेण त्रिर्ब्रूयात् । 'ॐ पुण्याहम्' ३ इति तथैव त्रिर्विप्राः ब्रूयुः । ॐ पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः । पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि माम् ॥ इति पठेयुः ।

यजमानः—पृथिव्यामुद्धृतायान्तु यत्कल्याणं पुरा कृतम् । ऋषिभिः सिद्धगन्धर्वैस्तत्कल्याणं ब्रुवन्तु नः ॥ "भो ! ब्राह्मणाः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहेऽमुककर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु" इति क्रमेण मन्द्रमध्यमोच्चस्वरेण त्रिर्ब्रूयात् । 'ॐ कल्याणम्' ३ इति तथैव त्रिर्विप्राः ब्रूयुः । ॐ यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः । ब्रह्मराजन्याभ्याᳫ शूद्राय चार्य्याय च स्वाय चारणाय च । प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह भूयासमयं मे कामः समृद्ध्यतामुप मादो नमतु ॥ इति पठेयुः ।

यजमानः—सागरस्य तु या ऋद्धिर्महालक्ष्म्यादिभिः कृता । सम्पूर्णा सुप्रभावा च तां च ऋद्धिं ब्रुवन्तु नः ॥ "भो ! ब्राह्मणाः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहेऽमुककर्मणः ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु" इति क्रमेण

मन्द्रमध्यमोच्चस्वरेण त्रिर्ब्रूयात् । 'ॐ कर्म ऋध्यताम्' इति त्रिर्विप्राः ब्रूयुः । ॐ सत्रस्य ऋद्धिरस्यगन्म ज्योतिरमृता अभूम । दिवं पृथिव्या अध्यारुहामाविदाम देवान्स्वर्ज्योतिः ॥ इति पठेयुः । यजमानः—स्वस्तिस्तु याऽविनाशाख्या पुण्यकल्याणवृद्धिदा । विनायकप्रिया नित्यं तां च स्वस्तिं ब्रुवन्तु नः ॥ "भो ! ब्राह्मणाः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहेऽमुककर्मणि स्वस्ति भवन्तः ब्रुवन्तु" इति क्रमेण मन्द्रमध्यमोच्चस्वरेण त्रिर्ब्रूयात् । 'ॐ आयुष्मते स्वस्ति' इति तथैव त्रिर्विप्राः ब्रूयुः । ॐ स्वस्ति न ऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो ऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥ इति पठेयुः ।

यजमानः—मृकण्डसूनोरायुर्यद् ध्रुवलोमशयोस्तथा । आयुषा तेन संयुक्ता जीवेम शरदः शतम् ॥ 'ॐ शतञ्जीवन्तु भवन्तः' इति तथैव ब्राह्मणाः ब्रूयुः । ॐ शतमिन्नु शरदो अन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसं तनूनाम् । पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मद्ध्या रीरिषतायुर्गन्तोः ॥ इति पठेयुः । शिवगौरीविवाहे या या श्री रामे नृपात्मजे । धनदस्य गृहे या श्रीरस्माकं साऽस्तु सद्मनि ॥ 'ॐ अस्तु श्रीः' इति तथैव विप्राः ब्रूयुः । ॐ मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीय । पशूनां रूपमन्नस्य रसो यशः श्रीः श्रयतां मयि स्वाहा ॥ इति पठेयुः ।

यजमानः—प्रजापतिर्लोकपालो धाता ब्रह्मा च देवराट् । भगवाञ्छाश्वतो नित्यं स नो रक्षतु सर्वतः ॥ 'ॐ भगवान् प्रजापतिः प्रीयताम्' इति ब्राह्मणाः ब्रूयुः । इति कलशे जलं क्षिपेत् । ॐ प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परि ता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयꣳ स्याम पतयो रयीणाम् ॥ इति पठेयुः ।

यजमानः—आयुष्मते स्वस्तिमते यजमानाय दाशुषे । श्रिये रत्नाशिषः सन्तु ऋत्विग्भिर्वेदपारगैः ॥ 'ॐ आयुष्मते स्वस्ति' इति विप्राः ब्रूयुः । ॐ प्रति पन्थामपद्महि स्वस्तिगामनेहसम् । येन विश्वाः परि द्विषो वृणक्ति विन्दते वसु ॥ 'ॐ स्वस्तिवाचनसमृद्धिरस्तु' इति विप्राः ब्रूयुः । यजमानः— 'कृतैतत्पुण्याहवाचनकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं तत्सम्पूर्ण फलप्राप्त्यर्थं च पुण्याहवाचकेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो विभज्य मनसोद्दिष्टां दक्षिणां दातुमहमुत्सृज्ये'

इति दक्षिणां दद्यात्। 'अस्तु' इति ब्राह्मणाः ब्रूयुः। ततो यजमानः—'अस्मिन् पुण्याहवाचने न्यूनातिरिक्तो यो विधिः स उपविष्टब्राह्मणानां वचनाच्छ्रीमहागणपतिप्रसादाच्च परिपूर्णोऽस्तु' इति वदेत्। 'अस्तु परिपूर्णः' इति ब्राह्मणाः ब्रूयुः। अनेन पुण्याहवाचनेन प्रजापतिः प्रीयताम्। इति॥

षोडशमातृका स्थापनं पूजनं च

॥ षोडश मातृणां यन्त्रमिदम् ॥

ॐ गौर्य्यैनमः १	ॐ पद्मायै नमः २	ॐ शाच्यै नमः ३	ॐ मेधायै नमः ४
ॐ सावित्र्यै नमः ५	ॐ विजयायै नमः ६	ॐ जयायै नमः ७	ॐ देवसेनायै नमः ८
ॐ स्वधायै नमः ९	ॐ स्वाहायै नमः १०	ॐ मातृभ्यो नमः ११	ॐ लोकामातृभ्यो नमः १२
ॐ त्वृदृष्यै नमः १३	ॐ पुष्ट्यै नमः १४	ॐ तुष्ट्यै नमः १५	ॐ आत्मकुल देवतायै नमः १६

आग्नेय्यां प्रतिमासु अक्षतपुञ्जेषु प्राक्संस्थं उदक्संस्थं वा मातृ स्थापनम्॥

सर्व प्रथम मातृगण के समक्ष गणपति की स्थापना कर गणानां त्वा से पूजन करे।

१. ॐ आयङ्गौ पृश्निरक्रमीद सदन्मातरं पुरः। पितरञ्च प्रयन्त्स्वः।३/६

हेमाद्रि तनयां देवीं वरदां शंकर प्रियाम्।
लम्बोदरस्य जननीं गौरीमावाहयाम्यहम्॥ गौर्य्यैनमः।
गौरीं आवाहयामि स्थापयामि०।

२. ॐ हिरण्यरूपा उषसो विरोक उभाविन्द्रा उदिथः सूर्यश्च। आरोहतं वरुण मित्र गर्तं ततश्चक्षाथामदितिं दितिं च मित्रोऽसि वरुणोऽसि॥१०/१६

पद्माभां पद्मवदनां पद्मनाभोरु संस्थिताम् ।
जगत्प्रियां पद्मवासां पद्मामावाहयाम्यहम् ॥ पद्मायैनमः ।

३. ॐ निवेशनः सङ्गमनोवसूनां विश्वा रूपाऽभिचष्टे शचीभिः । देव इव सविता सत्यधर्मेन्द्रो न तस्थौ समरे पथीनाम् ॥१२/६६

दिव्यरूपां विशालाक्षीं शुचिकुण्डलधारिणीम् ।
रक्तमुक्ताद्यलंकारां शचीमावाहयाम्यहम् ॥ शच्यैनमः ।

४. ॐ मेधां मे वरुणो ददातु मेधामग्निः प्रजापतिः ।
मेधामिन्द्रश्च वायुश्च मेधां धाता ददातु मे स्वाहा ॥३२/१५
विश्वेऽस्मिन् भूरिवरदां जरां निर्जरसेविताम् ॥
बुद्धिप्रवोधिनीं सौम्यां मेधामावाहयाम्यहम् ॥ मेधायैनमः ।

५. ॐ सविता त्त्वा सवाना७सुवतामग्निर्गृ हपतीना७ सोमो वनस्पतीनाम् । वृहस्पतिर्वाच इन्द्रो ज्येष्ठ्याय रुद्रः पशुभ्यो मित्रः सत्यो वरुणो धर्मपतीनाम् ॥९/३९

जगत्सृष्टिकरीं धात्रीं देवीं प्रणवमातृकाम् ।
वेदगर्भां यज्ञमयीं सावित्रीमावाहयाम्यहम् ॥ सावित्र्यै नमः ।

६. ॐ विज्यं धनुः कपर्द्दिनो विशल्यो वाण वां -२ ऽउत ॥
अनेशन्नस्य या इषवः आभुरस्य निषङ्गधिः ॥१६/१०
सर्वास्त्रधारिणीं देवीं देवानामभय प्रदाम् ।
सर्वदेवस्तुतां वन्द्यां विजयामावाहयाम्यहम् । विजयायै नमः ।

७. ॐ बह्वीनां पिता बहुरस्य पुत्रश्चिश्चा कृणोति समनावगत्य । इषुधिः सङ्का पृतनाश्च सर्वाः पृष्ठे निनद्धो जयति प्रसूतः ।२९/४२

सुरारिमथिनीं देवीं देवानामभयप्रदाम् ।
त्रैलोक्यवन्दितां शुभ्रां जयामावाहयाम्यहम् ॥ जयायै नमः ।

८. ॐ इन्द्र आसां नेता वृहस्पतिर्दक्षिणा यज्ञः पुर एतु सोमः ।
देवसेनानामभिभञ्जतीनां जयन्तीनां मरुतो यन्त्वग्रम् ।१७/४०
मयूरवाहनां देवीं खड्गशक्तिः धनुर्धराम् ।
आवाहयामि देवसेनां तारकासुरमर्द्दिनीम् ॥ देवसेनायै नमः ।

९. ॐ पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः पितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः। स्वधानमः प्रपितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः ॥१९/३६

अग्रजः सर्वदेवानां कव्यार्थं या प्रतिष्ठिता।
पितृणां तृप्तिदां देवीं स्वधामावाहयाम्यहम् ॥ स्वधायै नमः।

१०. ॐ स्वाहा प्राणेभ्यः साधिपतिकेभ्यः। पृथिव्यै स्वाहाग्नये स्वाहान्तरिक्षाय स्वाहा, वायवेस्वाहा, दिवे स्वाहा, सूर्याय स्वाहा ॥३९/१

हविर्गृहीत्वा सततं देवेभ्यो या प्रयच्छति।
तां दिव्यरूपां वरदां स्वाहामावाहयाम्यहम् ॥ स्वाहायै नमः।

११. ॐ आपो अस्मान् मातरः शुन्धयन्तु घृतेन नो घृतप्वः पुनन्तु। विश्वं हि रिप्रं प्रवहन्ति देवीरुदिदाभ्यः शुचिरापूत एमि। दीक्षा तपसोस्तनूरसि तां त्वा शिवा ꣳशग्मां परिदधे भद्रं वर्णं पुष्यन् ॥४/२

आवाहयाम्यहं मातृः सकला लोकपूजिताः।
सर्व कल्याणरूपिण्यो वरदा दिव्यभूषणा ॥ मातृभ्यो नमः।

१२. ॐ रयिश्च मे रायश्च मे पुष्टञ्च मे पुष्टिश्च मे विभु च मे प्रभु च मे पूर्णश्च मे कुयवञ्च मे ऽक्षितञ्च मे ऽन्नञ्च मे अक्षुच्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥१८/१०

आवहयामि लोकमातृः जयन्ती प्रमुखाः शुभाः।
नानाऽभीष्ट प्रदाःशान्ताः सर्वलोक हितावहाः। लोकमातृभ्यो नमः।

१३. ॐ यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु। यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥३९/३

सर्वहर्षकरीं देवीं भक्तानामभय प्रदाम्।
हर्षोत्फुल्लास्यकमलां धृतिमावाहयाम्यहम् ॥ धृत्यै नमः।

१४. ॐ अंगान्यात्मन् भिषजा तदश्विनात्मानमङ्गैः समाधात् सरस्वती। इन्द्रस्य रूपं शतमानमायुश्चन्द्रेण ज्योतिरमृतं दधानाः ॥१९/९३

पोषयन्ती जगत्सर्वं स्वदेह प्रभवैर्नवैः।
शाकैः फलैः जलैः रत्नैः पुष्टिमावाहयाम्यहम् ॥ पुष्ट्यै नमः।

१५. ॐ जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहाति वेदः । स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः ॥

देवैराराधितां देवीं सदा सन्तोषकारिणीम् ।
प्रसाद सुमुखीं देवीं तुष्टिमावाहयाम्यहम् ॥ तुष्ट्यै नमः ।

१६. ॐ प्राणाय स्वाहापानाय स्वाहा व्यानाय स्वाहा । चक्षुषे स्वाहा श्रोत्राय स्वाहा वाचे स्वाहा मनसे स्वाहा ।२२/२३

पत्तने नगरे ग्रामे विपिने पर्वते गृहे ।
नाना जाति कुलेशानीं दुर्गामावाहयाम्यहम् ॥ आत्मनः कुलदेवतायै नमः ।

ॐ मनोजूतिर्जुषता माज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनो त्वरिष्टं यज्ञꣳ समिमं दधातु । विश्वेदेवा स इह मादयन्ता मो -३ म्प्रतिष्ठ ॥ ॐ अस्यै प्राणा प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च । अस्यै देवत्व मर्चायै मामहेति च कश्चन ॥

श्री गणेशपूर्वक गौर्यादिषोडश मातृकाः सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवन्तु ॥ इति सम्पूज्य प्रार्थयेत् ॥

ॐ गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया ।
देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोक मातरः ।
हृष्टिः पुष्टिस्तथा तुष्टि रात्मनः कुलदेवता ।
गणेशेनाधिका वृद्धौ पूज्यास्तु षोडश ॥

आयुरारोग्यमैश्वर्यं ददध्वं मातरो मम । निर्विघ्नं सर्वकार्येषु कुरुध्वं सगणाधिपाः ॥

अनया पूजया गणेशपूर्वक गौर्यादि षोडशमातरः प्रीयन्ताम् ।

अथ वसोर्द्धारापूजनम्

तत्र प्रमाण्—

तत्पुरः सन्निधाने वा कुड्ये रेखा घृतेन च ।
धारालिंगेन मन्त्रेण पञ्च वा सप्त वा लिखेत् ।
गृहनिर्गमवामे च वसोर्द्धारा वितर्दिका ।
कार्या विवाहे विद्वद्भिः गृहे वै पूर्व-दक्षिणे ।

स्थलप्रमाणम्—

गृहे वै पश्चिम द्वारे तथा उत्तर एव च ।
वसोर्धारा वेदिका च गृह निर्गम दक्षिणे ॥

धारा प्रक्षेपणम्—

नातिनीचोच्छ्रिते कुड्ये वसोर्धारास्तु सर्पिषा ।
पञ्च वा सप्त वा धारा वसोर्मन्त्रेण कारयेत् ।
श्रीश्च लक्ष्मीर्धृतिर्मेधा स्वाहा प्रज्ञा सरस्वती ।
मांगल्येषु प्रपूज्यन्ते सप्तैताः घृतमातरः ॥

नागवल्लीदले सकुंकुमं ससिन्दूरं वा तप्तं घृतं गृहीत्वा तेन प्राक्संस्था उदक्संस्था वा प्रादेशमात्रीः धाराः कुर्यात्। तासां शिरांसि च मिथो मेलनीयानि । एकीकृत्योद्ध्र्वभागे तु कुंकुमेन गुडादिना इति ॥

अग्निकोण में दीवाल या पट्टे पर कुंकुम (रोली) से क्रमशः ऊपर से नीचे तक एक, दो, तीन, चार, पांच, छः बिन्दुओं को मिलाकर ।
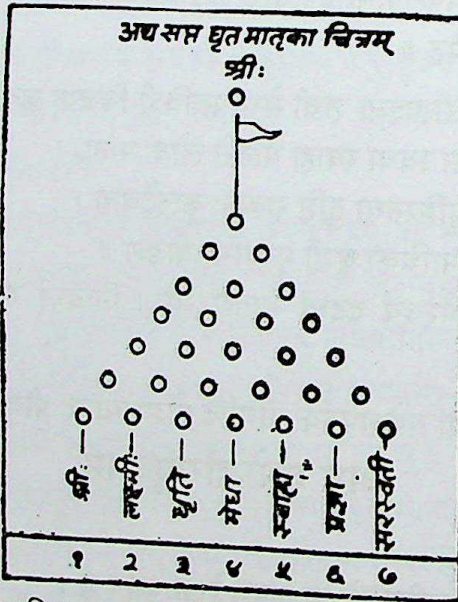
कुड्ये आवाहित मातृणामुपरि सिन्दूराक्तेन घृतेन भित्तौ धारां दद्यात् ।

ॐ वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्रधारम् । देवस्त्वा सविता वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः ॥ इति सकृन्मन्त्रपाठः ।

इस मन्त्र के सुप्वा तक का पाठ पढ़ कर घृतधारा करके "कामधुक्षः" ऐसा पढ़ कर गुड़ से उनको मिला देवे। वहां देवताओं का आवाहन करे।

१. ॐ मनसः काम माकूतिं वाचः सत्यमशीय।
पशूनां रूपमन्नस्य रसो यशः श्रीः श्रयतां मयि स्वाहा ॥३९/४
श्रियै नमः श्रियमावाहयामि स्थापयामि।

२. ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्या वहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूप मश्विनौ व्यात्तम्। इष्णन्निषाण मुम्म इषाण सर्वलोकम्म इषाण ॥

ॐ लक्ष्म्यै नमः लक्ष्मीमावाहयामि स्थापयामि ॥

३. ॐ भद्रङ्कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्रा। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवा॒ सस्तनूभिर्व्यशे महिदेवहितं यदायुः।

ॐ धृत्यै नमः धृतिमावाहयामि स्थापयामि ॥

४. ॐ मेधां मे वरुणो ददातु मेधामग्निः प्रजापतिः।
मेधामिन्द्रश्च वायुश्च मेधां धाता ददातु मे स्वाहा ॥
ॐ मेधायै नमः मेधामावाहयामि स्थापयामि ॥

५. ॐ प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, चक्षुषे स्वाहा। श्रोत्राय स्वाहा वाचे स्वाहा मनसे स्वाहा।

ॐ स्वाहायै नमः, स्वाहामावाहयामि स्थापयामि।

६. ॐ आयङ्गौ पृश्निरक्क्रमीदसन्मातरं पुरः। पितरञ्च प्रयन्त्स्वः ॥

ॐ प्रज्ञायै नमः। प्रज्ञामावाहयामि स्थापयामि।

७. ॐ पावकाः न सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती। यज्ञं वष्टुधियावसुः ॥

ॐ सरस्वत्यै नमः। सरस्वतीमावाहयामि स्थापयामि।
ॐ श्री लक्ष्मीः धृतिर्मेधा स्वाहा प्रज्ञा सरस्वती।
माङ्गल्येषु प्रपूज्यन्ते सप्तैताः घृतमातरः ॥

वसुधारादि देवताभ्यो नमः। इत्यावाह्य—प्रतिष्ठापयेत्।

ॐ मनोजूतिर्जुषता माज्यस्य वृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनो त्वरिष्टं यज्ञ॒ समिमं दधातु। विश्वेदेवा स इह मादयन्ता मो ३ म्प्रतिष्ठ।

वसोर्धरा देवता सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवन्तु।

सम्पूज्य प्रार्थयेत्—

यदङ्गत्वेन भो देव्यः पूजिता विधिमार्गतः ।
कुर्वन्तु कार्यमखिलं निर्विघ्नेन क्रतूद्भवम् ॥
अनया पूजया वसोर्धारा देवता प्रीयन्ताम् ।

तत्रैव स्थल मातृका पूजनम्

तण्डल पुञ्जेषु—ॐ ब्राह्म्यैनमः, ब्राह्मीमावाहयामि । ॐ माहेश्वर्य्यै नमः माहे० । ॐ कौमार्य्यै नमः कौमारी० । ॐ वैष्णव्यै नमः वैष्णवी० । ॐ वाराह्यै नमः वाराही० । ॐ इन्द्राण्यै नमः इन्द्राणी० । ॐ चामुण्डायै नमः चामुण्डामा० ।

इत्यावाह्य ब्राह्म्यादि मातृकाभ्यो नमः षोडशोपचारैः पूजयेत् ।

अथायुष्य मन्त्रः—

ॐ आयुष्यं वर्च्चस्यं राजस्पोषमौद्भिदम् । इद॰ हिरण्यं वर्चस्वज्जैत्राया विशतादु माम् ॥१ ॥ ३४/५०

ॐ न तद्रक्षां सि न पिशाचास्तरन्ति देवानामोजः प्रथमज॰ ह्येतत् । यो बिभर्ति दाक्षायणं हिरण्यं स देवेषु कृणुते दीर्घमायुः । स मनुष्येषु कृणुते दीर्घमायुः ॥२ ॥ ३४/५१

ॐ यदावध्नन् दाक्षायणा हिरण्य॰ शतानीकाय सुमनस्यमानाः । तन्म आबध्नामि शतशारदायायुष्माञ्जरदष्टिर्यथासम् ॥३ ॥ ३४/५२

इति स्थलमातृका पूजनविधानम् ॥

इति वसोर्धारा पूजनम् ।

अथ साङ्कल्पिक-नान्दीश्राद्धविधिः

यजमानः कुशाद्यासने प्राङ्मुख उपविश्य देशकालौ सङ्कीर्त्य 'करिष्यमाणामुककर्मणि साङ्कल्पिकनान्दीश्राद्धं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः। मातृपितामही-प्रतिपतामह्यः नान्दीमुख्यः भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः। पितृ-प्रपितामहाः नान्दीमुखाः भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः। मातामह-प्रमातामह-वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः। इत्युक्त्वा सर्वत्र पात्रे सकुशयवाक्षतजलं प्रक्षिपेत्।

आसनदानम्—सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः भूर्भुवः स्वः इमे आसने वो नमो नमः नान्दीश्राद्धेक्षणौ क्रियेतां यथा प्राप्नुवन्तो भवन्तः तथा प्राप्नुवामः। मातृ-पितामही-प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः भूर्भुवः स्वः इमे आसने वो नमो नमः नान्दीश्राद्धेक्षणौ क्रियेतां यथा प्राप्नुवन्त्यो भवन्त्यः तथा प्राप्नुवामः। पितृ-पितामह-प्रपितामहाः नान्दीमुखाः भूर्भुवः स्वः इमे आसने वो नमो नमः नान्दीश्राद्धेक्षणौ क्रियेतां यथा प्राप्नुवन्तो भवन्तः तथा प्राप्नुवामः। मातामह-प्रमातामह-वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः भूर्भुवः स्वः इमे आसने वो नमो नमः नान्दीश्राद्धेक्षणौ क्रियेतां यथा प्राप्नुवन्तो भवन्तः तथा प्राप्नुवामः।

गन्धादिदानम्—अत्रापः पान्तु। इमे वाससी सुवाससी। इमानि यज्ञोपवीतानि सुयज्ञोपवीतानि। अयं वो गन्धः सुगन्धः। इमे अक्षताः स्वक्षताः। इमानि पुष्पाणि सुपुष्पाणि। अयं वो धूपः सुधूपः। अयं वो दीपः सुदीपः। इदं नैवेद्यं सुनैवेद्यम्। इमानि ऋतुफलानि सुऋतुफलानि। इदं ताम्बूलं सुताम्बूलम्। इदं पूगीफलं सुपूगीफलम्।

सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः भूर्भुवः स्वः इदं गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः। मातृ-पितामही-प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः भूर्भुवः स्वः इदं गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः। पिता-पितामह-प्रपितामहाः

नान्दीमुखाः भूर्भुवः स्वः इदं गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः। मातामह-प्रमातामह-वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः भूर्भुवः स्वः इदं गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः।

भोजननिष्क्रयदानम्—सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवा नान्दीमुखाः भूर्भुवः स्वः इदं युग्मब्राह्मण भोजनपर्याप्ता मान्ननिष्क्रयभूतं द्रव्यममृतरूपेण स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः। मातृ-पितामही-प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः भूर्भुवः स्वः इदं युग्मब्राह्मणभोजनपर्याप्तामान्ननिष्क्रयभूतं द्रव्यममृतरूपेण स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः। पितृ-पितामह-प्रपितामहाः नान्दीमुखाः भूर्भुवः स्वः इदं युग्मब्राह्मणभोजनपर्याप्तामान्ननिष्क्रयभूतं द्रव्यममृतरूपेण स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः। मातामह-प्रमातामह-वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः भूर्भुवः स्वः इदं युग्मब्राह्मणभोजनपर्याप्तामान्ननिष्क्रयभूतं द्रव्यममृतरूपेण स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः।

स-क्षीरयवकुशजलदानम्—सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः प्रीयन्ताम्। मातृ-पितामही-प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः प्रीयन्ताम्। पितृ-पितामह-प्रपितामहाः नान्दीमुखाः प्रीयन्ताम्। मातामह-प्रमातामह-वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः प्रीयन्ताम्। ततः 'अघोराः पितरः सन्तु' इति पूर्वाग्रां जलधारां दद्यात्।

आशीर्ग्रहणम्—यजमानः कृताञ्जलिः प्रार्थयेत्—गोत्रन्नो वर्धतां दातारो नोऽभिवर्धन्तां वेदाः सन्ततिरेव च। श्रद्धा च नो मा व्यगमद् बहु देयं चो नोऽस्तु अन्नं च नो बहु भवेदतिथींश्च लभेमहि। याचितारश्च नः सन्तु मा च याचिष्म कञ्चन॥ एताः सत्या आशिषः सन्तु। द्विजाः—'सन्त्वेताः सत्या आशिषः'।

दक्षिणादानम्—सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः भूर्भुवः स्वः कृतस्याभ्युदयिकस्य नान्दीश्राद्धस्य फलप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं द्राक्षाऽऽमलक-यव-मूलनिष्क्रयिणीं दक्षिणां दातुमहमुत्सृज्ये। मातृ-पितामही-प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः भूर्भुवः स्वः कृतस्याभ्युदयिकस्य नान्दीश्राद्धस्य फलप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं द्राक्षाऽऽमलक-यव-मूलनिष्क्रयिणीं दक्षिणां

दातुमहमुत्सृज्ये । पितृ-पितामह-प्रपितामहाः नान्दीमुखाः भूर्भुवः स्वः कृतस्याभ्युदयिकस्य नान्दीश्राद्धस्य फलप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं द्राक्षाऽऽमलक-यव-मूलनिष्क्रयिणीं दक्षिणां दातुमहमुत्सृज्ये । मातामह-प्रमातामह-वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः भूर्भुवः स्वः कृतस्याभ्युदयिकस्य नान्दी श्राद्धस्य फलप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं द्राक्षाऽऽमलक-यव-मूलनिष्क्रयिणीं दक्षिणां दातुमहमुत्सृज्ये ।

माता-पितामही चैव तथैव प्रपितामही ।
पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः ॥
मातामहस्तत्पिता च प्रमातामहकस्तथा ।
एते भवन्तु मे प्रीताः प्रयच्छन्तु च मङ्गलम् ॥

ॐ इडामग्ने पुरुद७ स७ सनिं गोः शश्वत्तम७ हवामानाय साध । स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावाग्ने सा ते सुमतिर्भूत्त्वस्मे ॥१ ॥(१२/५१) उपास्मै गायता नरः पवमानायेन्दवे । अभि देवां -२ इ यक्षते ॥२ ॥ यजमानः—'अनेन नान्दीश्राद्धं सम्पन्नम्' । 'सुसम्पन्नम्' इति ब्राह्मणाः ।

विसर्जनम्—ॐ वाजेवाजेऽवत वाजिनो नो धनेषु विप्रा अमृता ऋतज्ञाः । अस्य मध्वः पिवत मादयध्वं तृप्ता यात पथिभिर्देवयानैः ॥

अनुव्रजनम्—ॐ आ मा वाजस्य प्रसवो जगम्यादेमे द्यावा पृथिवी विश्वरूपे । आ मा गन्तां पितरा मातरा चा मा सोमो अमृतत्त्वेन गम्यात् । विश्वेदेवाः प्रीयन्तामिति । यजमानः—म'याऽऽचरितेऽस्मिन् साङ्कल्पिक-नान्दीश्राद्धे न्यूनातिरिक्तो यो विधिः स उपविष्टब्राह्मणानां वचनाच्छ्रीगणपतिप्रसादाच्च परिपूर्णोऽस्तु' । 'अस्तु परिपूर्णः' इतिं ब्राह्मणाः । अनेन साङ्कल्पिकनान्दीश्राद्धेन नान्दीमुखाः पितरः प्रीयन्ताम् । इति साङ्कल्पिकनान्दीश्राद्धविधिः ।

अथ आचार्यादि वरणम्

नोट—सहायक रूप में आवश्यकतानुसार यजमान की स्थिति को देखते हुए ही ब्राह्मणों की संख्या का निर्धारण करें । उतनों का ही वरण करें ॥

ततः प्राङ्मुखो यजमानः उदङ्मुखमाचार्यमुपवेश्य गन्धादिभिः सम्पूज्य—वरणद्रव्यं चादाय—ॐ अद्येत्यादि०—अमुक गोत्रः अमुक प्रवरान्वितः अमुक शर्माऽहं अमुक गोत्रममुकप्रवरान्वितं शुक्लयजुर्वेदान्तर्गत वाजसनेयमाध्यन्दिनीय शाखाध्यायिनं अमुक शर्माणं ब्राह्मणं सनवग्रहमख-सप्रसाद-सनन्दीश्वरशिवादिमूर्त्तीनां अथवा विष्ण्वादि मूर्तीनां स्थिरप्रतिष्ठा कर्मणि एभिर्वरणद्रव्यैः आचार्यत्वेन त्वामहं वृणे।

१. वृतोऽस्मीत्याचार्यः। प्रार्थना—आचार्यस्तु यथा स्वर्गे शक्रादीनां वृहस्पतिः। तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन्नाचार्यो भव सुव्रत।

२. अद्य पूर्वोच्चारित० अस्मिन् कर्मणि एभिर्वरणद्रव्यैरमुक गोत्रममुक शर्माणं ब्रह्मत्वेन त्वामहं वृणे। वृतोऽस्मीति ब्रह्मा वदेत्। प्रार्थना—यथा चतुर्मुखो ब्रह्मा सर्वलोक पितामहः। तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन् ब्रह्मा भव द्विजोत्तम॥

३. अस्मिन् कर्मणि एभिर्वरण द्रव्यैः अमुक गोत्रं अमुक शर्माणं ब्राह्मणं सदस्य रूपेण त्वामहं वृणे। वृतोऽस्मि०। प्रार्थना—भगवन् सर्वधर्मज्ञ सर्वधर्म भृतांवर। वितते मम यज्ञेऽस्मिन् सदस्यो भव सुव्रत॥

४. अस्मिन् कर्मणि एभिः वरणद्रव्यैः अमुक गोत्रं अमुक शर्माणं ब्राह्मणं गणपत्यत्वेन त्वामहं वृणे वृतोऽस्मि०। प्रार्थना—वाञ्छितार्थफलावाप्त्यै पूजितोऽसि सुराऽसुरैः। निर्विघ्नं क्रतु संसिद्धये त्वामहं गणपं वृणे॥

५. अस्मिन् कर्मणि एभिः वरणद्रव्यैः अमुकगोत्रं असुक शर्माणं ब्राह्मणं उपद्रष्टृत्वेन त्वामहं वृणे। वृतोऽस्मि०। प्रार्थना—भगवन् सर्वधर्मज्ञ सर्वधर्मपरायण। वितते मम यज्ञेऽस्मिन् उपद्रष्टा भव द्विज॥

६. अस्मिन् कर्मणि एभिः वरणद्रव्यैः अमुकगोत्रौ अमुक शर्माणौ युग्म ऋग्वेदिनौ पूर्वद्वारि सूक्तपाठार्थं जपार्थं च युवां वृणे॥ वृतौ स्वः। प्रार्थना—ऋग्वेदः पद्मपत्रांशो गायत्रः सोमदैवतः। अत्रिगोत्रस्तु विप्रेन्द्र ऋत्विक् त्वं मे मखे भव।

७. अस्मिन् कर्मणि एभिः वरण द्रव्यैः अमुक गोत्रौ अमुक शर्माणौ युग्म यजुर्वेदिनौ दक्षिणद्वारि सूक्तपाठार्थं जपार्थं वा युवां वृणे । कातराक्षो यजुर्वेदः त्रैष्टुभो विष्णु देवतः । काश्यपेयस्तु विप्रेन्द्र ऋत्विक् त्वं मे मखे भव ।

८. अस्मिन् कर्मणि एभिः वरणद्रव्यैः अमुक गोत्रौ अमुक शर्माणौ युग्मसामवेदिनौ पश्चिमद्वारि सूक्त पाठार्थं जपार्थं च युवां वृणे । वृतौ स्वः । प्रार्थना—सामवेदस्तु पिंगाक्षो जाग्रतः शुक्रदैवतः । भारद्वाजस्तु विप्रेन्द्र ऋत्विक् त्वं मे मखे भव ॥

९. अस्मिन् कर्मणि एभिः वरणद्रव्यैः अमुक गोत्रौ अमुक शर्माणौ युग्मौ अथर्ववेदिनौ उत्तरद्वारि सूक्तपाठार्थं जपार्थं च युवां वृणे। वृतौ स्वः। प्रार्थना—वृहन्नेत्रो अथर्ववेदो ह्यनुष्टुप् रुद्रदैवतः । वैशम्पायन विप्रेन्द्र ऋत्विक् त्वं मे मखे भव ।

१०. अस्मिन् कर्मणि एभिः वरण द्रव्यैः अमुक गोत्रं अमुक शर्माणं ब्राह्मणं ऋत्विक्त्वेन त्वामहं वृणे । वृतोऽस्मि० ।

एवं यशाशक्तिः ऋत्विजो वृणुयात् ।

यदि इतने ब्राह्मणों का वरण न करना हो तो शक्ति के अनुसार ब्राह्मणों का एक साथ वरण द्रव्यों से वरण भी किया जा सकता है ।

ॐ अद्येत्यादि अस्मिन् कर्मणि एभिः वरणद्रव्यैः अमुकामुक गोत्रान् अमुकामुकशर्मणो ब्राह्मणान् आचार्यादीन् युष्मानहं वृणे, वृताः स्मः ।

ॐ व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम् । दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते । इति सर्वे ब्राह्मणाः पठेयुः । अथ यजमानः करसम्पुटं कृत्वा सर्वान् ब्राह्मणान् प्रार्थयेत्—अस्मिन् कर्मणि ये ये तु वृताः गुरु मुखादयः । सावधानाः प्रकुर्वन्तु स्वं स्वं कर्म यथोदितम्॥ अस्य यागस्य निष्पत्तौ भवन्तोऽभ्यर्थिताः मया । सुप्रसन्नैः प्रकर्तव्यं कर्मेदं विधि पूर्वकम् । यथाविहितं कर्म कुरुध्वम् । इति यजमानः । यथा ज्ञानं करवामः इति ब्राह्मणाः वदेयुः ॥

इति आचार्यादि वरणम्

अथ मधुपर्कादि पूजनम्

तत आचार्यादीन् एकतन्त्रेण आसनेषु प्राङ्मुखान् उपवेश्य, यजमानः स्वयं उदङ्मुखः उपविश्य प्राणान् आयम्य कृतांजलिपुटः—ॐ साधु भवन्तः आसतां अर्चयिष्यामो भवावः। ब्राह्मणाः—ॐ अर्चय। ऋत्विक् संख्यया विष्टरान् गृहीत्वा—आचार्यः—ॐ विष्टराः विष्टराः विष्टराः—यजमानः—विष्टराः प्रतिगृह्यन्ताम्। ब्राह्मणाः—विष्टराः प्रतिगृह्णीमः। ततो यजमानहस्ताद् विष्टरं गृहीत्वा—ॐ वर्ष्मोऽस्मि समानानामुद्यतामिव सूर्यः। इमं तमभितिष्ठामि यो मां कश्चाभिदासति। इतिमन्त्रेण ब्राह्मणाः प्रत्येकं विष्टरं उदगग्रं स्वासन तूले स्थापयेयुः। ततो यजमानः पाद्यपात्र-मादाय, आचार्यः—ॐ पाद्यानि पाद्यानि पाद्यानि, यजमानः—पाद्यानि प्रतिगृह्यतामः। ब्राह्मणाः—पाद्यानि प्रतिगृह्णीम्। ॐ विराजोदोहोऽसि विराजो दोहमशीय मयि पाद्यायै विराजो दोहः। इति मन्त्रेण प्रथमं दक्षिणचरणं ततो वामचरणं च क्रमेण प्रक्षालयेत। ततः पूर्ववद् विष्टरान् गृहीत्वा पूर्ववत् मन्त्रं पठित्वा स्वस्व चरणयो रधस्तात् उत्तराग्रं दद्युः।

आचार्यः—अर्घाः अर्घाः अर्घाः—यजमानः—अर्घाः प्रतिगृह्यन्ताम्। ब्राह्मणाः—अर्घान् प्रतिगृह्णीमः। ॐ आपस्थ युष्माभिः सर्वान् कामान् आप्नुवानि इति मन्त्रेण अर्घपात्रं गृहीत्वा शिरसा अभिवन्द्य—ॐ समुद्रं वः प्रहिणोमि स्वां योनिमभिगच्छत। अरिष्टास्माकं वीरा मा परासेचिमत्पयः।। इति पठन् ऐशान्यां त्यजेत्।

ततो यजमानः—आचमनीय पात्रं आदाय, आचार्यः—आचमनीयानि आचमनीयानि आचमनीयानि—ततो यजमानः आचमनीयानि प्रतिगृह्यन्ताम्, ब्राह्मणाः—आचमनीयानि प्रतिगृह्णीमः। ततो यजमान हस्ताद् आचमनीय पात्रं गृहीत्वा—ॐ आमागन् यशसा सꣳ सृज वर्चसा तं मा कुरु प्रियं प्रजानामधिपतिं पशूनामरिष्टिं तनूनाम् इति मन्त्रेण सकृद् आचामेत्—द्विः तूष्णीम्।

ततो यजमानः कांस्यपात्रे दधि-मधु-घृतानि कांस्यपात्र पिहितानि आदाय, आचार्यः मधुपर्काः मधुपर्काः, मधुपर्काः। यजमानः—ॐ मधुपर्काः

प्रतिगृह्यन्ताम्, ब्राह्मणाः मधुपर्कान् प्रतिगृह्णीमः । यजमानहस्तस्थमेव तत्पात्रम् उद्घाट्य—ॐ मित्रस्य त्वा चक्षुषा प्रतीक्षे-इति मन्त्रेण अवीक्ष्य, ॐ देवस्य त्वा प्रसवेऽश्विनो र्वाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् । इति मन्त्रेण गृहीत्वा सव्ये पाणौ निधाय, दक्षिणानामिकया—ॐ नमः श्यावास्यायान्नशने यत्त आविद्धं तत्ते निष्कृन्तामि । इति मन्त्रेण प्रादक्षिण्येन मधुपर्कं सकृदालोड्य किञ्चिद् भूमौ क्षिप्त्वा पुनरेव द्विवारम् अनेन मन्त्रेण आलोड्य भूमौ निक्षिपेत। ॐ यन्मधुनोमधव्यं परम७ रूपमन्नाद्यं तेनाहं मधुनो मधव्येन परमेण रूपेणान्नाद्येन परमो मधव्योऽन्नादोऽसानि, इति मन्त्रेण अनामिकांगुष्ठाभ्यां त्रिःप्राश्य प्रतिप्राशने चैतन्मन्त्र पाठः ॥ शेषमसञ्चरदेशे धारयेत् । ततः आचम्य अंगानि स्पृशेत्—वाङ्मे आस्ये अस्तु, ॐ नसोर्मे—प्राणोऽस्तु । ॐ अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु । ॐ कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु । ॐ बाह्वोर्मे वलमस्तु । ॐ ऊर्वोर्मे ओजोऽस्तु । ॐ अरिष्टानि मेऽंगानि तनुस्तन्वा मे सह-सन्तु ॥

अथ मधुपर्कांग गोदानम्

कृतस्य मधुपर्कादि पूजन कर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं गोनिष्क्रय भूतं द्रव्यं, रजतं चन्द्रदैवतं अमुकगोत्राय अमुकशर्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यमहं सम्प्रददे ।

प्रार्थना—ब्राह्मणाः सन्तु मे शस्ताः पापात् पान्तु समाहिताः । देवानां चैव दातारस्त्रातारः सर्वदेहिनाम् ॥१ ॥ जपयज्ञैस्तथा होमैः दानैश्च विविधैः पुनः । देवानां च पितृणां च तृप्त्यर्थं याजकाः स्मृताः ॥२ ॥ येषां देहे स्थिताः वेदाः पावयन्ति जगत्रयम् । रक्षन्तु सततं ते मां जपयज्ञे व्यवस्थिताः ॥३ ॥ ब्राह्मणाः जंगमं तीर्थं त्रिषु लोकेषु विश्रुतम् । येषां वाक्योदयेनैव शुद्ध्यन्ति मलिनो जनाः । पावनाः सर्ववर्णानां ब्राह्मणाः ब्रह्मरूपिणः । सर्वकर्मरताः नित्यं वेदशास्त्रार्थकोविदाः ॥५ ॥ श्रोत्रियाः सत्यवाचश्च देवध्यानरताः सदा । यद्वाक्यामृत संसिक्ताः ऋद्धिं यान्ति नरद्रुमाः ॥६ ॥ अंगीकुर्वन्तु कर्मैतत् कल्पद्रुमसमाश्रिताः । यथोक्त—नियमै र्युक्ताः मन्त्रार्थे स्थिर वुद्धयः ॥७ ॥ यत्कृपालोचनात् सर्वा ऋद्धयो वृद्धिमाप्नुयुः । अक्रोधनाः शौचपराः सततं ब्रह्मचारिणः ॥८ ॥ देवध्यानरताः नित्यं प्रसन्नमनसः सदा । अदुष्टभाषणाः नित्यं मा सन्तु परनिन्दकाः ॥९ ॥ ममापि नियमाः ध्येता भवन्तु भवतामपि ॥१० ॥

आचार्यं पृथक्त्वेन प्रार्थयेत्—मन्त्रमूर्तिभवान्नाथ संसारोच्छेदक कारक। सांगं कर्म यथा मे स्यात्तथा कुरु हि भूसुर ॥११ ॥ संसारभयभीतेन अयं यज्ञः सुभक्तितः। प्रारब्धः त्वत्प्रसादेन निर्विघ्नं मे भवतु इति ॥ ततो यजमानहस्ते आचार्यो रक्षाबन्धनं तथा शिरसि कुंकुमेन तिलकं कुर्यात्। ॐ यदाबध्नन दाक्षायणा हिरण्य॰ शतानीकाय सुमनस्यमानाः। तन्मे आबध्नामि शतशारदायायुष्मान् जरदष्टिर्यथासम्। इति रक्षाबन्धनम् ॥ ॐ स्वस्तिनः इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्तिनस्ताक्ष्र्यो अरिष्टनेमिः स्वस्तिनो वृहस्पतिर्दधातु ॥ इति तिलकम् ॥

अथ मण्डप प्रवेशः

इतना कार्य करने के पश्चात् यजमान मण्डप में प्रवेश करे।

ततः सम्भारान् गृहीत्वा सुवासिनी ब्राह्मणान् अग्रतः कृत्वा सतूर्यघोषः सपरिकरः पञ्चपूर्णकुम्भो गणपति वरुण मातृकापीठं वसोर्द्धारापीठं च ब्राह्मणानां हस्ते, यजमानः स्वहस्ते गणपतिं गृहीत्वा भद्रंकर्णेभिः शृणुयाम देवाः भद्रं पश्येमाक्षिभिर्यजत्राः। स्थिरैरंगैस्तुष्टुवा॰ सस्तनूभिर्व्यशे महिदेव हितं यदायुः ॥ इति मन्त्रेण महामण्डपं प्रदक्षिणीकृत्य मण्डपस्य पश्चिमद्वारमागत्य पाणिभ्यां चार्घपात्रमादाय शान्ति पाठं पठेत्। ॐ ऋचं वाचं प्रपद्ये० ॥ ततः पृथिवीं ध्यात्वा—पृथिवीं चतुर्भुजां शुक्लां कूर्म पृष्ठोपरि स्थिताम्। पद्मशंखचक्र शूलकरां विहसितां सुप्रसन्नां गोरूपधरां सवत्सां वसुन्धरां ध्यात्वा—आगच्छ देवि कल्याणि वसुधेलोकधारिणि। पृथ्वी त्वं ब्रह्मदत्तासि काश्यपेनाऽभिवन्दिता। इति ध्यानम्।

ॐ स्योना पृथिविनो भवानृक्षरा निवेशनी। यच्छानः शर्मसप्रथा। इति पुष्पादिना संपूज्य—अष्टार्घ्यं दद्यात्। ॐ शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंय्योरभिस्रवन्तु नः ॥ इति अर्घ्यं दत्वा प्रार्थयेत्—उद्धृतासि वराहेण विष्णुना शत बाहुना। दंष्ट्रागे लीलया देवी यज्ञार्थे त्वां वृणोम्यहम् ॥ ब्रह्मणा निर्मिते देवि विष्णुना शंकरेण च। पार्वत्या चैव गायत्र्या स्कन्देन श्रवणेन च। यमेन पूजिता देवि धर्म वृद्धिजिगीषया। सौभाग्यं देहि पुत्रांश्च धनं रूपं च पूजिता ॥ इति प्रार्थना।

ततो मण्डपपश्चिमद्वारेण प्रथमं दक्षिणपादं दत्त्वा प्रविशेत ॥ गणपत्यादि पीठान् मण्डपस्य आग्नेय कोणे योगिनी समीपे स्थापयेत् ।

रक्षोहणं सूक्त का पाठ करें—

इसके बाद दिग्रक्षण करें—सेती सरसों को चारों दिशाओं में प्रक्षेपण करें ।

इसके पश्चात् पंचगव्य को मिलाएं—इस पंचगव्य को मण्डप के चारों ओर गिरायें ।

अथ पंचगव्यादि करणम्

१. **गोमूत्रम्**—ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् । इति मन्त्रेण गोमूत्रम् ।

२. **गोमयम्**—गन्ध द्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् । ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥ इति मन्त्रेण गोमयम् ।

३. **क्षीरम्**—आप्यायस्व समेतु विश्वतः सोम वृष्ण्यम् । भवा वाजस्य संगथे ॥ इति मन्त्रेण क्षीरम् ।

४. **दधि**—दधिक्राब्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः । सुरभिनो मुखाकरत्प्रण आयु७ षि तारिषत् ॥

५. **आज्यम्**—तेजोसि शुक्रमस्यमृतमसि धामनामसि । प्रियन्देवानामनाधृष्टं देवयजनमसि ॥

६. **कुशोदकम्**—देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनो र्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ॥ इति प्रणवेनालोड्य—वारुणैः मन्त्रैः कर्म भूमिं प्रोक्षयेत् ॥

ॐ आपोहिष्ठा मयोभुवस्तान ऊर्जे दधातन । महरेणाय चक्षसे । यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयते ह नः । उशतीरिव मातरः । तस्मा अरङ्गमामवो यस्य क्षयाय जिन्वथ । आपो जनयथा च नः । इति त्रिभिः मन्त्रैः कर्मभूमिं प्रोक्षेत् ।

ॐ हिरण्यवर्णाः शुचयः पावकायासुजातः कश्यपो यास्विन्द्रः । अग्निं या गर्भं दधिवे विरूपास्तान आपः शं स्योना भवन्तु ॥१ ॥

ॐ यासां राजा वरुणो याति मध्ये सत्यानृत अवपश्यं जनानाम् । मधुश्चुतः शुचयो याः पावकास्तान आपः श७स्योना भवन्तु ॥२ ॥

ॐ यासां देवा दिवि कृण्वन्ति भक्षं या अन्तरिक्षे बहुधा भवन्ति। याः पृथिवीं पयसो दंति शुक्रास्तान आपः श८स्योना भवन्तु ॥३ ॥

ॐ शिवेन मा चक्षुषा पश्यतापः शिवया तनु वोपस्पृशत त्वचं मे। सर्वा ८ अग्नी ८ रप्सुषदो हुवे वो मयि वर्चो बलमोजो निधत्त ॥४ ॥ इति

अथ रक्षोघ्न सूक्तम्

ततः आचार्यो वामहस्ते गौरसर्षपांल्लाजामिश्रितान् गृहीत्वा दिग् रक्षणं कुर्यात्—तत्र मन्त्राः—

१. ॐ रक्षोहणं वलगहनं वैष्णवीमिदमहन्तं वलग मुत्किरामि यम्मे निष्ट्यो यममात्यो निचखानेद महन्तं वलग मुत्किरामि यम्मे समानो यमसमानो निचखानेद महन्तं वलग मुत्किरामि यम्मे सबन्धुर्यमसबन्धुर्निचखानेद महन्तं वलग मुत्किरामि यम्मे सजातो यमसजातो निचखानोत्कृत्याङ्किरामि ॥१ ॥ य० ५ ।२३ ॥

२. ॐ रक्षोहणो वो वलगहनः प्रोक्षामि वैष्णवान् रक्षोहणो वो वलगहनो वनयामि वैष्णवान् रक्षोहणो वो वलगहनोऽवस्तृणामि वैष्णवान् रक्षोहणो वां वलगहना उपदधामि वैष्णवी रक्षोहणौ वां बलगहणौ पर्य्यूहामि वैष्णवीं वैष्णवमसि वैष्णवास्थ ॥२ ॥ य० ५ ।२५

३. ॐ रक्षसाम्भागोसि निरस्त८ रक्ष इदमह८ रक्षोऽभि तिष्ठा मीदमह८ रक्षोऽववाध इदमह८ रक्षोऽधमन्तमो नयामि। घृतेन द्यावापृथिवी प्रोर्णु वाथां वायो वे स्तोकानामग्निराज्यस्य वेतु स्वाहा स्वाहा कृते ऊर्ध्वं नभसं मारुतङ्गच्छतम् ॥३ ॥ य० ६ ।१६

४. ॐ रक्षोहा विश्व चर्षणिरभियोनि मयोहते। द्रोणे सधस्थ मासदत् ॥४ ॥ य० २६ ।२६

ॐ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः।
ये भूताः विघ्न कर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥१ ॥
अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम्।
सर्वेषामविरोधेन ब्रह्मकर्म समारभे ॥२ ॥

यदत्र संस्थितं भूतं स्थानमाश्रित्य सर्वतः ।
स्थानं त्यक्त्वा तु तत्सर्वं यत्रस्थं तत्र गच्छतु ॥३ ॥
भूतप्रेत पिशाचाद्याः अपक्रामन्तु राक्षसाः ॥
स्थानादस्माद्व्रजन्त्वन्यत्स्वीकरोमि भुवं त्विमाम् ॥४ ॥
भूतानि राक्षसाः वापि अत्र तिष्ठन्ति केचन ।
ते सर्वेऽप्यपगच्छन्तु शान्तिकं तु करोम्यहम् ॥५ ॥

एतैः मन्त्रैः ईशानादि सर्वदिक्षु विदिक्षु ऊर्ध्वाधः सर्षपान् विकीर्य देवाः आयान्तु, यातुधानाः अपयान्तु; विष्णो देवयजनं रक्षस्व इति रक्षां कृत्वा पञ्चगव्येन कुशैः मण्डपभूमिं यज्ञसम्भारांश्च प्रोक्षयेत् ।

अथ शिख्यादिवास्तुमण्डलस्थदेवानामावाहनं पूजनं च।

इसके पश्चात् वास्तु पूजन आरम्भ करें। सर्वप्रथम संकल्प ले—देशकालौ संकीर्त्य—अमुकगोत्रः अमुक शर्माहं सनवग्रह मखप्रासाद विष्णवादि अथवा शिवादिपरिवारस्य मूर्त्तीणां स्थिर प्रतिष्ठा मण्डपांग वास्तुपूजनं करिष्ये।

चतुःषष्टिपदं वास्तुमण्डलचक्रम्

१. नमः शम्भवाय च मयोभुवाय च नमः शंकराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः शिखिने नमः, शिखिनं आवाहयामि पूजयामि ॥

२. ॐ शन्नो वातः पवतां शं नस्तपतु सूर्यः । शन्नः कनिक्रद देवः पर्जन्यो अभिवर्षतु ॥ ॐ भू० पर्जन्याय नमः ।

३. ॐ मर्माणि ते वर्मणा छादयामि सोमस्त्वा राजामृतेनानुवस्ताम् । उरोर्वरीयो वरुणस्ते कृणोतु जयन्तं त्वानु देवा मदन्तु ॥ ॐ भू० जयन्ताय नमः ।

४. ॐ सजोषा इन्द्रसगणो मरुद्भिः सोम पिव वृत्रहा शूरविद्वान् । जहि शत्रूं-२ रपमृधोनुदस्वाधाभयं कृणुहि विश्वतो नः । ॐ कुलिशायुधाय नमः ।

५. ॐ आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यञ्च । हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् ॥ ॐ सूर्याय नमः ।

६. ॐ व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम् । दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते ॥ ॐ सत्याय नमः ।

७. ॐ आत्वाहार्षमन्तरभूर्ध्रुवस्तिष्ठाविचाचलिः । विशस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु मा त्वद्राष्ट्रमधिभ्रशत् ॥ ॐ भृशाय नमः ।

८. ॐ यां वां कशा मधुमत्यश्विना सूनृतावती । तया यज्ञं मिमिक्षतम् ॥ ॐ आकाशाय नमः ।

९. ॐ वायो ये ते सहस्त्रिणो रथासस्तेभिरागहि । नियुत्वान् सोमपीतये । ॐ वायवे नमः ।

१०. ॐ पूषन् तव व्रते वयं न रिष्येम कदाचन । स्तोतारस्त इह स्मसि ॥ ॐ पूष्णे नमः ।

११. ॐ तत्सूर्यस्य देवत्वं तन्महित्वं मध्याकर्त्तो वितत ँ सञ्जभार । यदेद युक्त हरितः सधस्थादाद्रात्री वासस्तनुते सिमस्मै ॥ ॐ वितथाय नमः ।

१२. ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्रिया अधूषत । अस्तोषत स्वभानवो विप्रा न विष्ठया मती योजान् विन्द्रते हरी ॥ ॐ गृहक्षताय नमः ।

१३. ॐ यमायत्वाङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहा । स्वाहा धर्माय स्वाहा धर्मपित्रे ॥ ॐ यमाय नमः ।

१४. ॐ गन्धर्वस्त्वा विश्वावसुः परिदधातु विश्वस्यारिष्ट्यै यजमानस्य परिधिरस्यग्निरिड ईडितः । मित्रावरुणौ त्वोत्तरतः परिधत्तां ध्रुवेण धर्मणा

विश्वस्यारिष्ट्यै यजमानस्य परिधिरस्यग्निरिड ईडितः ॥ ॐ गन्धर्वाय नमः ।

१५. ॐ सौरी वलाका शार्गः सृजय शयाण्डकस्ते मैत्राः सरस्वत्यै शारिः पुरुषवाक् । श्वाविद्भौत्री शार्दूलो वृकः पृदाकुस्ते मन्यवे सरस्वते शुकः पुरुषवाक् ॥ ॐ भृंगराजाय नमः ।

१६. ॐ मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः परावत आजगन्था परस्याः । सृकꣳसंशाय पविमिन्द्र तिग्मं वि शत्रून् ताड्ढि वि मृधो नुदस्व ॥ ॐ मृगाय नमः ।

१७. ॐ उशन्तस्त्वा निधी मह्युशन्तः समिधी महि । उशन्नुशत आवह पितृन् हविषे अत्तवे ॥ ॐ पितृभ्यो नमः ।

१८. ॐ द्वे विरूपे चरतः स्वर्थे अन्यान्या वत्समुपधापयेते । हरिरन्यस्यां भवति स्वधावाञ्छुक्रो अन्यस्यां ददृशे सुवर्चाः ॥ ॐ दौवारिकाय नमः ।

१९. ॐ नील ग्रीवाः शितिकण्ठाः दिवꣳ रुद्राः उपश्रिताः । तेषाꣳ सहस्रयोजने ऽवधन्वानि तन्मसि ॥ ॐ सुग्रीवाय नमः ।

२०. ॐ नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्चवो नमो नमो व्रातेभ्यो व्रातपतिभ्यश्चवो नमो नमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो नमो नमो विरूपेभ्यो विश्वरूपेभ्यश्चवो नमः । ॐ पुष्पदन्ताय नमः ।

२१. ॐ इमम्मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय त्वामवस्युराचके ॥ ॐ वरुणाय नमः ।

२२. यमश्विना नमुचेरासुरादधि सरस्वत्य सुनोदिन्द्रियाय । इमंꣳ तꣳ शुक्रं मधुमन्त मिन्दुꣳसोमं राजानमिह भक्षयामि ॥ ॐ असुराय नमः ।

२३. ॐ शन्नो देवी रभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंय्योरभि स्रवन्तु नः ॥ ॐ शोषाय नमः ।

२४. ॐ एतत्ते रुद्रावसं तेन परो मूजवतोऽतोहि ॥ अवततधन्वा पिनकावसः कृत्तिवासा अहि ꣳसन्तः शिरोऽतीहि । ॐ पापाय नमः ।

२५. ॐ द्रापे अन्धसस्पते दरिद्रं नीललोहित । आसां प्रजानामेषां पशूनां मा भेर्म्मारोङ्मो च नः किञ्चनाममत् । ॐ रोगाय नमः ॥

२६. ॐ अहिरिव भोगैः पर्य्येति बाहुं ज्याया हेतिं परिवाधमानः। हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान् पुमान् पुमाꣳसं परिपातु विश्वतः॥ ॐ अहिर्बुध्न्याय नमः॥

२७. ॐ अवतत्य धनुष्ट्वꣳ सहस्राक्ष शतेषुधे। निशीर्य शल्यानां मुखा शिवो नः सुमना भव। ॐ मुख्याय नमः।

२८. ॐ इमारुद्राय तवसे कपर्दिने क्षयद्वीराय प्रभरामहे मतीः। यथा शमसद् द्विपदे चतुष्पदे विश्वं पुष्टं ग्रामे अस्मिन्ननातुरम्॥ ॐ भल्लाटाय नमः॥

२९. ॐ वयꣳ सोमव्रते तव मनस्तनूषु विभ्रतः। प्रजावन्तः सचेमहि॥ ॐ सोमाय नमः।

३०. ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु। ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः। ॐ सर्पेभ्यो नमः।

३१. ॐ इड एह्यदित एहि काम्या एत। मयि वः कामधारणं भूयात्। ॐ अदित्यै नमः।

३२. ॐ अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वेदेवा अदितिः पञ्चजनाः अदितिर्जात मदितिर्जनित्वम्। ॐ दित्यै नमः।

३३. ॐ अप्स्वग्ने सधिष्ठ्व सौषधिरनु रुध्यसे। गर्भे सञ्जायसे पुनः। ॐ अद्भ्यो नमः।

३४. अभ्रिरसि नार्यसि त्वया वयमग्निꣳ शकेम खनितुं सधस्थ आ। जागतेन छन्दसाऽङ्गिरस्वत। ॐ सावित्राय नमः।

३५. ॐ अषाढं युत्सु पृतनासु पप्रिꣳ स्वर्षामप्सां वृजनस्य गोपाम। भरेषु जाꣳ सुक्षितिꣳ सुश्रवसं जयन्तं त्वामनु मदेम सोम॥ ॐ जयाय नमः।

३६. ॐ नमस्ते रुद्रमन्यव उतोत इषवे नमः। बाहुभ्यामुतते नमः। ॐ रुद्राय नमः।

३७. ॐ यदद्य सूर उदिते नागा मित्रो अर्यमा सुवाति सविता भग। ॐ अर्यम्ने नमः।

३८. ॐ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव । यद्भद्रं तन्न आसुव। ॐ सवित्रे नमः ।

३९. ॐ विवस्वन्नादित्यैष ते सोमपीथस्तस्मिन्मत्स्व । श्रदस्मै नरो वचसे दधातन यदाशीर्दादम्पती वाममश्नुतः। पुमान् पुत्रो जायते विन्दते वस्वधा विश्वाहारप एधते गृहे । ॐ विवस्वते नमः ॥

४०. ॐ स बोधि सूरिर्मघवा वसुपते वसुदावन् । युयोध्यस्मद् द्वेषा७ सि विश्व कर्मणे स्वाहा । ॐ विवुधाधिपाय नमः ।

४१. ॐ मित्रो न एहि सुमित्रध इन्द्रस्योरुमा विश दक्षिणमुशन्नुशन्तं स्योनः स्योनम् । स्वान भ्राजाङ्घारे बम्भारे हस्त सुहस्त कृशानवेते वः सोमक्रयणास्तान् रक्षध्वं मा वो दभन् ॥ ॐ मित्राय नमः ।

४२. ॐ नाशयित्री बलासस्यार्शस उपचितामसि । अथो शतस्य यक्ष्माणां पाकारोरसि नाशनी । ॐ राजयक्ष्मणे नमः ।

४३. ॐ स्योना पृथिवीनो भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छानः शर्म सप्रथाः। ॐ पृथ्वीधराय नमः ।

४४. आते वत्सो मनो यमत्परमाच्चित्सधस्थात् । अग्ने त्वाङ्कामया गिरा ॥ ॐ आपवत्साय नमः ।

४५. ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद् विसीमतः सुरुचो वेन आवः । स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः । ॐ ब्रह्मणे नमः ॥

४६. ॐ वास्तोष्पते प्रति जानीह्यस्मान स्वावेशो अनमीवो भवानः । यत् त्वेमहि प्रति तन्नो जुषस्व शन्नो भव द्विपदे शंचतुष्पदे ॥ ॐ वास्तोषपतये नमः।

४७. ॐ यन्ते देवी निर्ऋतिराव बन्धपाशं ग्रीवास्व विचृत्यम् । तं ते विष्याम्यायुषो न मध्यादथैतं पितुमद्धि प्रसूतः । नमो भूत्यै येदं चकार । ॐ चरक्यै नमः ।

४८. ॐ अक्षराजाय कितवं कृतायादि नवदर्शं त्रेतायै कल्पिनं द्वापरायाधिकल्पिनमास्कन्दाय सभास्थाणुं मृत्यवे गोव्यच्छमन्तकाय गोघातं

क्षुधे यो गां विकृन्तन्तं भिक्षमाणः उपतिष्ठति दुष्कृताय चरकाचार्यं पाप्मने सैलगम् ॥ ॐ विदार्यै नमः ॥

४९. ॐ इन्द्रस्य क्रोडोदित्यै पाजस्यं दिशां जत्रवोऽदित्यै भसज्जीभूतान् हृदयौपशेनान्तरिक्षं पुरीतता नभ उदर्येण चक्रवाकौ मतस्नाभ्यां दिवं वृक्काभ्यां गिरीन प्लाशिभिरुपलान् प्लीह्ना बल्मीकान् क्लोमभिर्ग्लौर्गुल्मान् हिराभिः स्रवन्तीर्ह्रदान् कुक्षिभ्यां समुद्रमुदरेण वैश्वानरं भस्मना ॥ ॐ पूतनायै नमः ॥

५०. ॐ यस्यास्ते घोर आसन् जुहोम्येषां बन्धानामवसर्जनाय । यां त्वां जनो भूमिरिति प्रमन्दते निर्ऋतिं त्वाहं परिवेद विश्वतः । ॐ पापराक्षस्यै नमः ॥

५१. ॐ यदक्रन्द प्रथमं जायमानः उद्यन्त्समुद्रा दुत वा पुरीषात् । श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहू उपस्तुत्यं महि जातं ते अर्वन् ॥ अर्यम्णे नमः ॥

५२. ॐ यदद्यसूर उदिते नागा मित्रो अर्यमा सुवाति सवितार भग । ॐ स्कन्दाय नमः ।

५३. ॐ हिंकाराय स्वाहा हिंकृताय स्वाहा, क्रन्दते स्वाहावक्रन्दाय स्वाहा प्रोथते स्वाहा प्र प्रोथाय स्वाहा गन्धाय स्वाहा घ्राताय स्वाहा निविष्टाय स्वाहोपविष्टाय स्वाहा सन्दिताय स्वाहा वल्गते स्वाहासीनाय स्वाहा शयानाय स्वाहा स्वपते स्वाहा जाग्रते स्वाहा कूजते स्वाहा प्रबुद्धाय स्वाहा विजृम्भमाणाय स्वाहा विचृत्ताय स्वाहा सं हानाय स्वाहोपस्थिताय स्वाहायनाय स्वाहा प्रायणाय स्वाहा ॥ ॐ जृम्भकाय स्वाहा ।

५४. ॐ का स्विदासीत् पूर्वचिति किं स्विदासीद वृहद्वयः । का स्विदासीत् पिलिप्पिला का स्विदासीत् पिंशंगिला ॥ ॐ पिलि पिच्छाय नमः । पूर्वादिदिक्षु इन्द्रादीन् आवाहयेत्—

५५. ॐ त्रातारमिन्द्र मवितार मिन्द्रꣳ हवे हवे सुहवꣳ शूरमिन्द्रम् । ह्वयामि शक्रं पुरुहूत मिन्द्रं स्वस्तिनो मघवा धात्विन्द्रः । ॐ इन्द्राय नमः ।

५६. ॐ त्वन्नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो अवयासि सीष्ठाः । यजिष्ठो बह्नितमः शोशु चानो विश्वा द्वेषाꣳसि प्रमुमुग्ध्यस्मत् । ॐ अग्नये नमः ।

५७. ॐ यमायत्वाङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहा। स्वाहा धर्माय स्वाहा धर्मपित्रे। ॐ यमाय नमः।

५८. ॐ असुन्वन्तमयजमानमिच्छ स्तेन स्येत्यामन्विहि तस्करस्य। अन्यमस्मदिच्छ सा त इत्या नमो देवि निर्ऋतये तुभ्यमस्तु॥ ॐ निर्ऋतये नमः।

५९. ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः। अहेडमानो वरुणेह वोध्युरुश॰ समानः आयुः प्रमोषीः। वरुणाय नमः।

६०. ॐ आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरः सहस्त्रिणीभिरुपयाहि यज्ञम्। वायो अस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः। वायवे नमः।

६१. ॐ वय॰सोम व्रते तव मनस्तनूषु बिभ्रतः। प्रजावन्तः सचेमहि॥ सोमाय नमः॥

६२. ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्व मवसे हूमहे वयम्। पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये। ईशानाय नमः॥

६३. ॐ अस्मे रुद्रा मेहना पर्वतासो वृत्रहत्ये भरहूतौ सजोषाः। यः शंसते स्तुबते धायि वज्र इन्द्र ज्येष्ठा अस्मां -२ अवन्तु देवाः। ब्रह्मणे नमः।

६४. ॐ स्योना पृथिविनो भवानृक्षरा निवेशनी। यच्छानः शर्म सप्रथाः। अनन्ताय नमः।

वास्तु देव नामावलिः

१. ॐ शिखिने नमः। २. पर्जन्याय०। ३. जयन्ताय०। ४. कुलिशायुधाय०। ५. सूर्याय०। ६. सत्याय०। ७. भृशाय०। ८. आकाशाय०। ९. वायवे०। १०. पूष्णे०। ११. वितथाय०। १२. गृहक्षताय०। १३. यमाय०। १४. गन्धर्वाय०। १५. भृंगराजाय०। १६. मृगाय०। १७. पितृभ्य०। १८. दैवारिकाय०। १९. सुग्रीवाय०। २०. पुष्पदन्ताय०। २१. वरुणाय०। २२. असुराय०। २३. शेषाय०। २४. पापाय०। २५. रोगाय०। २६. अहिर्बुध्न्याय०। २७. मुख्याय०। २८. भल्लाटाय०। २९. सोमाय०। ३०. सर्पेभ्यो०। ३१. अदित्यै०। ३२. दित्यै०। ३३. अद्भ्यः०। ३४. सावित्राय०। ३५. जयाय०। ३६. रुद्राय०। ३७ अर्यम्णे०। ३८. सवित्रे०।

३९. विवस्वते० । ४०. विबुधाधिपाय० । ४१. मित्राय । ४२. राजयक्ष्मणे । ४३. पृथ्वीधराय० । ४४. आपवत्साय० । ४५. ब्रह्मणे० । ४६. वास्तोषपतये० । ४७. चरक्यै० । ४८. विदार्य्यै० । ४९. पूतनायै० । ५०. पापराक्षस्यै० । ५१. अर्यम्णे० । ५२. स्कन्दाय० । ५३. जृम्भकाय० । ५४. पिलिपिच्छाय० । ५५. इन्द्राय० । ५६. अग्नये०. ५७. यमाय० । ५८. निर्ऋतये० । ५९. वरुणाय० । ६०. वायवे० । ६१. सोमाय नमः । ६२. ईशानाय० । ६३. ब्रह्मणे० । ६४. अनन्ताय० ।

इत्यावाह्य—मनोजूतिर्जुषता० इति प्रतिष्ठाप्य पंचोपचारैः सम्पूज्य तदुत्तरे कलशं संस्थाप्य स्वर्णमयीं वास्तुप्रतिमां पूजयेत् ॥

अथ अग्न्युत्तारण विधिः ।

देशकालौ संकीर्त्य० अमुकगोत्रोऽमुकशर्माहं अस्यां वास्तुमूर्त्तौ अवघातादि दोष परिहारार्थं अग्न्युत्तारणं देवता सान्निध्यार्थं च प्राणप्रतिष्ठां करिष्ये ।

मूर्तिं पात्रे निधाय घृतेनाभ्यज्य तदुपरि जलधारां पातयेत् ।

तत्र मन्त्राः—ॐ समुद्रस्य त्वावकयाग्ने परिव्ययामसि । पावको अस्मभ्यं शिवोभव ॥१ ॥ ॐ हिमस्य त्वा जरायुणाग्ने परिव्ययामसि पावको अस्मभ्यं शिवोभव ॥२ ॥ ॐ उप ज्मन्नुप वेतसेऽवतर नदीष्वा । अग्ने पित्तमपामसि मण्डूकि ताभिरागहि सेमं नो यज्ञं पावक वर्णं शिवं कृधि ॥३ ॥ ॐ अपामिदं न्ययन७समुद्रस्य निवेशनम् । अन्यांस्ते अस्मत्तपन्तु हेतयः पावको अस्मभ्यं शिवो भव ॥४ ॥ ॐ अग्ने पावक रोचिषा मन्द्रया देवजिह्वया यश्चितयन्त्या कृपा क्षामन् रुरुच उषसो न भानुना । तूर्वन्न यामन्नेतशस्य नू रण आ यो घृणे न ततृषाणो अजरः ॥७ ॥ ॐ नमस्ते हरसे शोचिषे नमस्ते अस्त्वर्चिषे । अन्यांस्ते अस्मत्तपन्तु हेतयः । पावको अस्मभ्यं शिवो भव ॥८ ॥ ॐ नृषदे वेडप्सुषदे वेड्वर्हिषदे वेड्वनसदे वेट् स्वर्विदे वेट् ॥९ ॥ ॐ ये देवा देवानां यज्ञिय-यज्ञियानां संवत्सरीणमुप भागमासते । अहुतादो हविषा यज्ञे अस्मिन् स्वयं पिबन्तु मधुनो घृतस्य ॥१० ॥ ये देवा देवेष्वधि देवत्त्वमायन् ये ब्रह्मणः पुर एतारो अस्य । येभ्यो न ऋते पवते धाम किञ्चन न ते दिवो न पृथिव्या

अधिस्नुषु ॥११ ॥ ॐ प्राणदा अपानदा व्यानदा वर्चोदा वरिवोदाः । अन्यांस्ते अस्मत्तपन्तु हेतयः पावको अस्मभ्यं शिवो भव ॥१२ ॥ एवमग्न्युत्तारणं कृत्वा—ततो मूर्तिं हस्तेन संस्पृश्य प्राण प्रतिष्ठां कुर्यात् । प्राणप्रतिष्ठा—

अथ प्राण प्रतिष्ठा विधिः

अस्य श्री प्राण प्रतिष्ठा मन्त्रस्य ब्रह्म विष्णुरुद्राः ऋषयः ऋग्यजुः सामानि छन्दांसि क्रियामय वपुः प्राणाख्या देवता आं बीज क्रौं शक्तिः प्राण प्रतिष्ठायां विनियोगः ॥

ततः यजमानो दैशिको देवं पिण्डिकायां स्थापयेत—सुलग्ने ईश्वरं भावयन् श्वभ्रन्या सद्रव्य सहितं सौवर्णं श्वभ्रे निधाय प्रधान पुरुषो यावच्चन्द्रदिवाकरौ । तावत्त्वमनया शक्त्या युक्तोऽत्रैव स्थिरो भव ।

ब्रह्म-विष्णु-रुद्र ऋषिभ्यो नमः शिरसि । ऋग्युजः सामछन्दोभ्यां नमः मुखे । प्राणाख्यदेवतायै नमः हृदि । ॐ बीजाय नमः गुह्ये । क्रौं शक्त्यै नमः पादयोः । ॐ कं खं गं घं ङं अं पृथिव्यप्तेजो वाय्वाकाशात्मने आं हृदयाय नमः । ॐ चं छं जं झं ञं इं शब्दस्पर्शरूपरसगन्धात्मने ईं शिरसे स्वाहा । ॐ टं ठं डं ढं णं उं श्रोत्रत्वक् चक्षुः जिह्वा घ्राणात्मने उं शिखायै वषट् । ॐ तं थं दं धं नं एं वाक्पाणिपाद् पायूपस्थात्मने ऐं कवचाय हुम् । ॐ पं फं बं भं मं ॐ वचनादान गतिविसर्गानन्दात्मने औं नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अं मनोबुद्ध्यहङ्कार चित्तात्मने अः अस्त्राय फट् । एवमात्मनि देवे च कृत्वा देवं स्पृष्ट्वा जपेत् । ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं सः देवस्य प्राणाः इह प्राणाः ॥

ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं हं सः देवस्य जीव इह स्थितः ।

ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं सः देवस्य सर्वेन्द्रियाणि ।

ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं सः देवस्य वाङ्मनश्चक्षुः श्रोत्रघ्राणप्राणा इहागत्य स्वस्तये सुखेन सुचिरं तिष्ठतु स्वाहा ।

प्रतिमायाः लिंगस्य वा हृद्यङ्गुष्ठं दत्त्वा जपेत् ।

अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाश्चरन्तु च । अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन ।

प्रणवेन सन्निरुध्य सजीवं ध्यात्वा—

ॐ ध्रुवा द्यौ र्ध्रुवा पृथिवी ध्रुवं विश्वमिदं जगत्। ध्रुवाश्चेमे नमाः सर्वे ध्रुवा पतिकुले स्त्रियः। इत्यृचं जप्त्वा देवकर्णे गायत्रीं देवमन्त्रं च जप्त्वा पुरुषसूक्तेन स्तुत्वा पादनाभिः शिरः स्पृष्ट्वा—

ॐ इहैवैधिमापच्य्ययोष्ठाः पर्वत इवा विचाचलिः। इन्द्र इहैव ध्रुवस्तिष्ठेहराष्ट्रमुपधारय ॥ प्राकृतं त्वमदृष्ट्वा मां बालबत् परिपालय। इति मन्त्रं त्रिः पठित्वा—स्वागतं देव देवेश मद्भाग्यात्त्वमिहागतः। धर्मार्थं कामसिध्यर्थं स्थिरो भव शिवाय नमः। सान्निध्यं तु महादेव स्वार्चायां परिकल्पय ॥२ ॥ यावच्चन्द्रावनी सूर्यास्तिष्ठन्त्यप्रतिघातिनः। तावत् त्वयात्र देवेश स्थेयं भक्तानुकम्पया ॥३ ॥

भगवन् देवदेवेश त्वं पिता सर्व देहिनाम्। येन रूपेण भगवन् त्वया व्याप्तं चराचरम्। तेन रूपेण देवेश अर्चायां सन्निधौ भव ॥ इति नमेत।

ततः पुरुषसूक्तेन षोडशोपचारैः संपूज्य—ॐ सच्चिदानन्द ब्रह्मैव भक्तानुग्रहाय ग्रहीतविग्रहं स्वायुधाद्यं निज वाहनाद्युपेतं निज हृत्कमले स्थितं सर्वलोक साक्षिणं ईयासं परमेष्ठ्यसि परमां श्रियं गमय। इति मन्त्रेण पुष्पाञ्जलौ आगतं देवं विभाव्य मूर्त्तौ न्यसेत।

वास्तु पुरुष प्रतिष्ठितो वरदो भव—पंचामृतेन संस्नाप्य कलशोपरि स्थापयेत्। ॐ वास्तुपुरुषमावाहयामि—वास्तोष्पतये नमः। पंचोपचारैः पूजयेत। अर्घ्यम्—पूज्योऽसि त्रिषु लोकेषु यज्ञरक्षार्थ हेतवे। तद्विनार्चनं न सिध्यन्ति यज्ञदानान्यनेकशः। अयोने भगवन् भर्ग ललाटस्वेद सम्भव। गृहाणार्घ्यं मया दत्तं वास्तोः स्वामिन् नमोऽस्तु ते। इत्यर्घं दत्त्वा पायस बलिदानं कुर्यात्। ॐ शिखिने एष पायस बलिर्न मम एवं भूतैः पूर्वोक्त नाम मन्त्रैः शिख्यादि वास्तु मण्डलस्थ देवताभ्यः पायस बलिदानम्। वास्तु पुरुषाय बलिं दद्यात्। प्रार्थना—मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्ति-श्रद्धा विवर्जिताम्। यत्पूजितं मया देव परिपूर्णं तदस्तु मे। नमस्ते वास्तु देवेश सर्व दोषहरोभव। शान्ति कुरु सुखं देहि सर्वान् कामान् प्रयच्छ मे। इत्युक्त्वा वास्तुपुरुषाय नारिकेलं ससुवर्णं समर्प्य प्रणमेत।

अथ सर्वतोभद्र मण्डल देवतानां पूजनम्

सर्वतोभद्रचक्रम्

(१९ रेखात्मकम्)
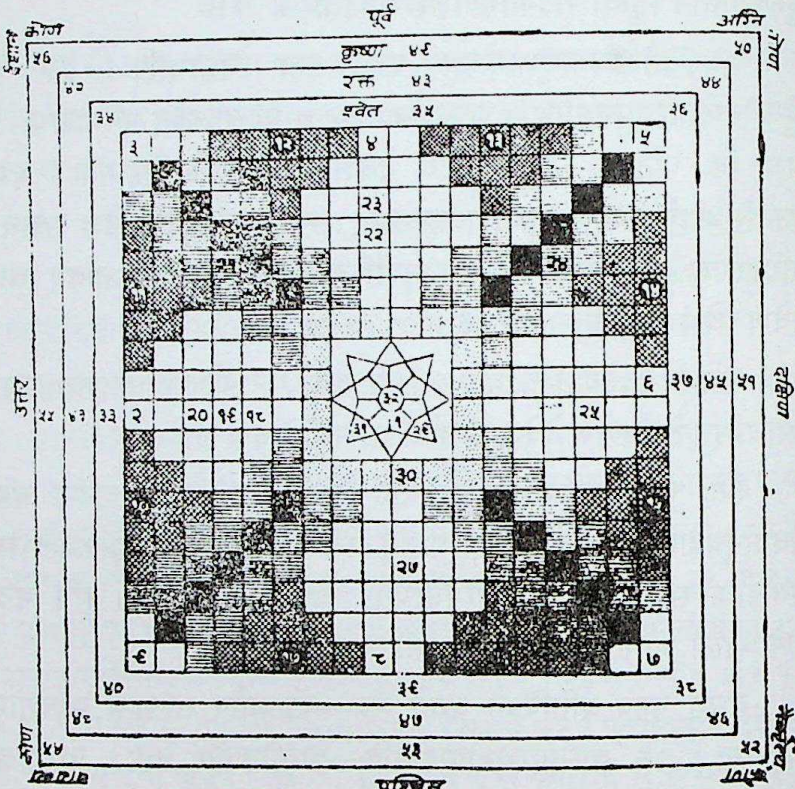
अथ सर्वदेव प्रतिष्ठासु प्रधानतया मूलभूतं सर्वतोभद्र मण्डलं सदैवं सपूजनमाह। हेमाद्रौ-स्कान्दे—

प्रागुदीच्यां गताः रेखाः कुर्यादिकोनविंशतिः।
खण्डेन्दुस्त्रिपदः कोणे शृंखला पञ्चभिः पदैः ॥१ ॥

एकादशपदावल्ली भद्रं तु नवभिः पदैः ।
प्रागुदीच्यां गताः रेखाः कुर्यादिकोनविंशति ॥२ ॥
मध्ये षोडशभिः कोष्ठैः पद्ममष्टदलं स्मृतम् ।
श्वेतेन्दुश्रृंखला कृष्णा वल्लीनीलेन पूरयेत् ॥३ ॥
भद्रं रक्तं सिता वापी परिधिः पीतवर्णकः ।
वाह्यान्तर दलैः श्वेता कर्णिकापीतवर्णिका ॥४ ॥
परिध्यावेष्टितं पद्मं वाह्ये सत्त्वं रजस्तमः ।
तन्मध्ये स्थापयेत् देवान् ब्रह्माद्यांश्च सुरेश्वरान् ॥५ ॥

अथ सर्वतोभद्र मण्डल देवता पूजनम्

कृतमङ्गलस्नानः सपत्नीको यजमानः परिहिताहत शुक्लद्विवासो वद्धशिखी यज्ञोपवीती यथायोग्यमलङ्कृतो धृत कुङ्कुम केशरतिलको रुद्राक्षमालाधरः अवनि कृतजानुः मध्यकरः करद्वये धृतपवित्रः स्वासने आसीनः (प्राङ्मुखः) स्मार्तविधिना आचम्य प्राणानायम्य कर्मकलशं संस्थाप्य तज्जलेन आत्मानं स्वदक्षिणोपस्थापित पूजा सम्भारांश्च सम्प्रोक्ष्य अक्षतपुंजे रक्षादीपं निधाय शान्तिपाठ पुरस्सरं संकल्पं कुर्यात् ।

संकल्पः—देशकालौ संकीर्त्य अद्यामुकगोत्रोऽमुकनामाहं ममेह जन्मनि जन्मान्तरे वा कृतकायिक-वाचिकमानसिक सांसर्गिकदोष परिहारार्थं इहामुत्र सुखसौभाग्य-सन्तति-आदिफल-प्राप्त्यर्थं श्रीनारायण प्रीतये करिष्यमाण सनवग्रहमखसप्रासाद-शिवादि मूर्त्तीनां स्थिर प्रतिष्ठा कर्मणि एतत् सर्वतोभद्रमण्डले वेदमन्त्रैः ब्रह्मादि षट् पञ्चाशत्-देवता आवाहनं स्थापनं पूजनं च करिष्ये । तन्निर्विघ्नार्थं संक्षेपतो गणपति-पूजनं पुण्याहवाचनं च करिष्ये । इति संकल्प्य अक्षतान् गृहीत्वा—

१. मध्ये कर्णिकायाम्—ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्तात् विसीमतः सुरुचो वेन आवः । सवुध्न्या उपमा अस्यविष्ठा सतश्च योनिमसतश्च विवः ।

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मन् इहागच्छ इह तिष्ठ—ॐ ब्रह्मणे नमः ॥

२. उत्तरे वाप्यां सोमम्—ॐ वयꣳ सोमव्रते तव मनस्तनूषु विभ्रतः । प्रजावन्तः सचेमहि ।

३. ईशान्यां खण्डेन्दौ ईशानम्—ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिंधियं जिन्वमवसे हूमहे वयम् । पूषानो यथा वेधसा मसद् वृधे रक्षितापायुरदब्धः स्वस्तये ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः ईशान इहा० । ईशानाय नमः ॥

४. पूर्वस्यां दिशि वाप्यां इन्द्रम्—ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रं हवे-हवे सुहव७ शूरमिन्द्रम् । ह्वयामिशक्रं पुरुहूतमिन्द्र७ स्वस्तिनो मघवा धात्विन्द्रः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्र इहा० इन्द्राय नमः ।

५. आग्नेय्यां खण्डेन्दौ अग्निम्—ॐ त्वन्नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो अवयासि सीष्ठाः । यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषा७ सि प्रमुमुग्ध्यस्मत् ।

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्ने इहा० । अग्नये नमः ॥

६. दक्षिणे वाप्यां यमम्—ॐ यमाय त्वाङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहा । स्वाहा धर्माय धर्मपित्रे ।

ॐ भूर्भुवः स्वः यम इहागच्छ० । यमाय नमः ।

७. नैर्ऋत्यां खण्डैन्दौ निर्ऋतिम्—ॐ असुन्वन्त मयजमान-मिच्छस्तेनस्येत्यामन्विहि तस्करस्य । अन्यमस्मदिच्छ सात इत्या नमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु ।

ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋति इहा० निर्ऋते नमः ।

८. पश्चिमे वाप्याम् वरुणम्—ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणा-वन्दनानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेडमानो वरुणेह वोद्ध्युरुश७ समान आयुः प्रमोषीः ।

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुण इहा० । वरुणाय नमः ।

९. वायव्यां खण्डेन्दौ वायुम्—ॐ आनो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वा सहस्त्रिणीभिरुपयाहि यज्ञम् । वायोऽस्मिन् सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः वायो इहा० । वायवे नमः ।

१०. वायुसोमयोः मध्ये भद्रे अष्टवसून्—ॐ वसोः पवित्रमसि शतधारं वसो पवित्रमसि सहस्रधारम् । देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः वसव इहागच्छः० । वसुभ्यो नमः ।

११. सोमेशानयोर्मध्ये भद्रे एकादशरुद्रान्—ॐ नमस्ते रुद्रमन्यव उतोत इषवे नमः । बाहुभ्यामुतते नमः ।

ॐ भूर्भुवः स्वः एकादशरुद्रा इहा० रुद्रेभ्यो नमः ।

१२. ईशानपूर्वयोर्मध्ये भद्रे द्वादशादित्यान्—ॐ अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः । विश्वेदेवा अदितिः पञ्चजना अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः द्वादशादित्या इहागच्छत० । द्वादशादित्येभ्यो नमः ।

१३. इन्द्राग्न्योर्मध्ये भद्रेऽश्विनौ—ॐ अश्विना तेजसा चक्षुः प्राणेन सरस्वतीवीर्यम् । वाचेन्द्रो वलेनेन्द्रायदधुरिन्द्रियम् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अश्विनौ इहागच्छतम् इहतिष्ठतम् । अश्विभ्यां नमः ॥

१४. अग्नियमयोर्मध्ये भद्रे विश्वेदेवान् सपितृन्—ॐ विश्वेदेवा स आगत शृणुताम इमꣳ हवम् । इदं वर्हिर्निषीदत ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः विश्वेदेवा इहागच्छत । विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः ।

तत्रैव—ॐ आयन्तु नः पितरः सोम्यासोऽग्निष्वात्ताः पथिभिः देवयानैः । अस्मिन् यज्ञे स्वधया मदन्तोऽधिव्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान् ।

ॐ भूर्भुवः स्वः पितर इहा० । पितृभ्यो नमः ।

१५. यम निर्ऋत्योर्मध्ये भद्रे सप्तयक्षान्—ॐ अभित्यं देवꣳ सवितारमोण्यो कविक्रतुमर्चामि सत्यसवसꣳ रत्नधामभिः प्रियम्मतिकविम् । ऊर्ध्वा यस्यामतिर्भाऽदिद्युः तत्सवीमनि हिरण्यपाणिरमिमीत सुक्रतुः कृपा स्वः । प्रजाभ्यस्त्वा प्रजास्त्वाऽनु प्राणन्तु प्रजास्त्व मनुप्राणिहि ।

ॐ भूर्भुवः स्वः सप्तयक्षा इहागच्छत० । सप्तयक्षेभ्यो नमः ।

१६. निर्ऋति वरुणयोर्मध्ये भद्रे भूतनागान्—ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथ्वीमनु । ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः सर्पा इहागच्छत० । सर्पेभ्यो नमः ।

१७. वरुणवाय्वोर्मध्ये भद्रे गन्धर्वाप्सरसः—ॐ ऋताषाड् ऋतधामाग्निर्गन्धर्वस्तस्यौषधयोऽप्सरसो मुदोनाम । स न इदं ब्रह्मक्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् ताभ्यः स्वाहा ।

ॐ भूर्भुवः स्वः गन्धर्वाप्सरसः इहागच्छत० । ॐ गन्धर्वाप्सरेभ्यो नमः ।

१८. ब्रह्मसोमयोर्मध्ये वाप्यां स्कन्दनन्दीश्वरम्—ॐ यदक्रन्द प्रथमञ्जायमान उद्यन्त्समुद्रादुतवा पुरीषात् । श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहू उपस्तुत्यम्महि जातन्ते अर्वन् ।

ॐ भूर्भुवः स्वः स्कन्द इहा० स्कन्दाय नमः ।

१९. तदुत्तरे—ॐ आशुः शिशानो वृषभो न भीमो घनाघनः क्षोभणश्चर्षणीनाम् । संक्रन्दनो निमिष एकवीरः शतꣳ सेना अजयत्साकमिन्द्रः ।

ॐ भूर्भुवः स्वः नन्दिन् इहा० । नन्दीश्वराय नमः ।

२०. तत्रैव—ॐ कार्षिरसि समुद्रस्य त्वाक्षित्या उन्नयामि समापो अद्भिरग्मत समोषधीभिरोषधीः ।

ॐ भूर्भुवः स्वः शूल इहा० । शूलाय नमः ।

२१. तदुत्तरे—ॐ कार्षिरसि समुद्रस्य त्वा क्षित्या उन्नयामि समापो अद्भिरग्मत समोषधीभिरोषधीः ।

ॐ भूर्भुवः स्वः महाकाल इहा० । महाकालायनमः ।

२२. ब्रह्मेशानयोर्मध्येवल्लीषुदक्षादीन् सप्तप्रजापतीन्—ॐ प्रजापते नत्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परिता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्त्वयममुष्य पिता सावस्य पिता वयꣳ स्यामपतयो रयीणाम् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः प्रजापते इहा० । प्रजापतिभ्यो नमः ।

२३. ब्रह्मेन्द्रयोर्मध्ये दुर्गाम्—ॐ अम्बे अम्बिके अम्बालिके न मानयति कश्चन । ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः दुर्गे इहा० । दुर्गायै नमः ॥

२४. दुर्गा पूर्वे विष्णुम्—ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पाꣳ सुरे स्वाहा ।

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णो इहा० । विष्णवे नमः ।

२५. ब्रह्माग्न्योर्मध्ये बल्लीषु स्वधासहित पितृन्—ॐ उदीरतामवर उत्परास उन्मध्यमा पितरः सोम्यासः । असुंय ईयरवृका ऋतज्ञास्तेनोऽवन्तु पितरो हवेषु ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः स्वधा सहिताः पितर इहागच्छत इह तिष्ठत-पितृभ्यो नमः ।

२६. ब्रह्म-यमयोर्मध्ये वाप्यां मृत्युरोगान्—ॐ परं मृत्योः अनुपरेहि पन्थां यस्ते अन्य इतरो देवयानात् । चक्षुष्मते शृण्वते ते व्रवीमि मानः प्रजाꣳ रीरिषो मोत वीरान् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः मृत्यो रोगाः इहा० । मृत्युरोगेभ्यो नमः ।

२७. ब्रह्म निर्ऋत्योर्मध्ये वल्लीषु गणपतिम्—ॐ गणानां त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनां त्वा निधिपतिꣳ हवामहे वसोमम । आहमजानि गर्भधमात्वम जासि ग़र्मधम् ।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणपते इहा० । गणपतये नमः ।

२८. ब्रह्मवरुणयोर्मध्ये वाप्यामपः—ॐ अप्स्वग्ने सधिष्टव सौषधी रनुरुध्यसे । गर्भे सञ्जायसे पुनः ।

ॐ भूर्भुवः स्वः आप इहागच्छत० । ॐ अद्भ्यो नमः ॥

२९. ब्रह्मवायोः मध्ये वल्लीषु मरुतः—ॐ बृहदिन्द्राय गायत मरुतो वृत्र हन्तमम् । येन ज्योतिरजनयन् नृता वृधौ देवं देवाय जागृवि ।

ॐ भूर्भुवः स्वः मरुत इहा० । ॐ मरुद्भ्यो नमः ॥

३०. ब्रह्मन्पादमूलेकर्णिकाधः पृथिवीम्—ॐ महीद्यौः पृथिवी च न इमं यज्ञम्मिमिक्षताम् । पिपृतान्नो भरीमभिः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः पृथिवी इहा० । पृथिव्यै नमः ।

३१. तत्रैव गंगादिसप्त सरितः—ॐ इम्मे गंगे यमुने सरस्वती शतुद्रिस्तोमं सचता परुष्णिया । असिक्निया मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्या सुषोमया ।

ॐ भूर्भुव स्वः गंगादि सप्तसरितः इहागच्छत० । गंगादिसप्तसरिद्भ्यो नमः ।

३२. तत्रैव सप्तसागरान्—ॐ समुद्रोऽसि नभस्वानार्ददानुः शम्भूर्मयो भूरभि मा वाहि स्वाहा । मारुतोऽसि मरुतां गणः शम्भूर्मयो भूरभि मा वाहि स्वाहा । अवस्यू रसि दुवस्वाञ्छम्भूर्मयो भूरभि मा वाहि स्वाहा ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः सप्तसागरा इहा० । सप्तसागरेभ्योः नमः ।

३३. कर्णिकापरिधौ मेरुम्—ॐ प्र पर्वतस्य वृषभस्य पृष्ठान्नावश्चरन्ति स्वसिच इदानाः । ता आवृवृत्रन्नधरागुदक्त अहिम्बुध्यनुमनु रीयमाणाः । विष्णो र्विक्क्रमणमसि विष्णोर्विक्क्रान्तमसि विष्णो क्रान्तमसि ।

ॐ भूर्भुवः स्वः मेरो इहा० । मेरवे नमः ।

३४. नतः सोमादिक्रमेण-सत्त्व वाह्यपरिधौ-गदाम्—ॐ गणानां त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनां त्वा निधिपतिꣳ हवामहे वसोमम । आहम जानि गर्भध मा त्वमजासि गर्भधम् ।

ॐ भूर्भुवः स्वः गदे इहा० । गदायै नमः ।

३५. ईशान्यां त्रिशूलम्—ॐ त्रिꣳ शुद्धाय विराजति वाक् पतङ्गाय धीयते । प्रतिवस्तोरह द्युभिः ।

ॐ भूर्भुवः स्वः त्रिशूल इहागच्छ० । त्रिशूलाय नमः ।

३६. तत्रैव वज्रम्—ॐ महां -२ इन्द्रो वज्रहस्त षोडशी शर्म यच्छतु । हन्तुपाप्मानं योऽस्मान् द्वेष्टि । उपयामगृहीतोऽसि महेन्द्रा त्वैष ते योनिर्महेन्द्राय त्वा ।

ॐ भूर्भुवः स्वः वज्र इहा० । वज्राय नमः ।

३७. आग्नेय्याम् शक्तिम्—ॐ वसु च मे वसतिश्च मे कर्म च मे शक्तिश्च मे अर्थश्च मे एमश्चमे इत्या च मे गतिश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्।

ॐ भूर्भुवः स्वः शक्ते इहा० । शक्तये नमः ।

३८. दक्षिणे दण्डम्—ॐ इड एह्यदित एहि काम्या एत। मयि वः कामधारणं भूयात्।

ॐ भूर्भुवः स्वः० दण्डाय नमः ।

३९. नैर्ऋत्ये खड्गम्—ॐ खड्गो वैश्व देवः श्वा कृष्णः कर्णो गर्दभरक्षुस्ते रक्षसामिन्द्राय सूकरः सिंहो मारुतः कृकलासः पिप्पिका शकुनिस्ते शरव्यायै विश्वेषां देवानां पृषतः ।

ॐ भूर्भुवः स्वः खड्ग इहा० । खड्गाय नमः ।

४०. पश्चिमे पाशम्—ॐ उदुत्तमं वरुणपाशमस्मदवाधमं विमध्यम ᳪ श्रथाय । अथावयमादित्यव्रते तवानागसो अदितये स्याम ।

ॐ भूर्भुवः स्वः पाश इहा० । पाशाय नमः ।

४१. वायव्याम्-अंकुशम्—ॐ अंशुश्च मे रश्मि च मे ऽदाभ्यश्च मे अधिपतिश्च मे उपांशुश्च मे ऽन्तर्यामश्च मे ऐन्द्रवायवश्च मे मैत्रावरुणश्च मे आश्विनश्च मे प्रति प्रस्थानश्च मे शुक्रश्च मे मन्थी च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अंकुश इहा० अंकुशाय नमः ।

४२. तद् वाह्ये उत्तरे रक्त—परिधौ सोमादि क्रमेण गौतमाय नमः ।

ॐ आयङ्गौ पृश्निरक्रमीदसदन्मातरं पुरः । पितरञ्च प्रयन्त्स्वः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गौतम इहा० । श्री गौतमाय नमः ।

४३. ऐशान्यां भारद्वाजम्—ॐ अयं दक्षिणा विश्वकर्मा तस्य मनो वैश्वकर्मणं ग्रीष्मो मानसस्त्रिष्टुभ ग्रैष्मी त्रिष्टुभ स्वार ᳪ स्वारादन्तर्यामोऽन्तर्यामात् । पंचदशः पञ्चदशाद् वृहद् भरद्वाज ऋषिः प्रजापति गृहीतया त्वा मनो गृह्णामि प्रजाभ्यः ।

ॐ भूर्भुवः स्वः भरद्वाज इहा० । भरद्वाजाय नमः ।

४४. पूर्वे विश्वामित्रम्—ॐ इदमुत्तरात् स्वस्तस्य श्रोत्रं सौवं शरच्छ्रोत्र्यनुष्टुप् शारद्यनुष्टुभ ऐडमैडान्मन्थी मन्थिन एकविंशं एकविंशाद् वैराजं विश्वामित्र ऋषिः प्रजापतिगृहीतया त्वया श्रोत्रं गृह्णामि प्रजाभ्यः।

ॐ भूर्भुवः स्वः विश्वामित्र इहा० । विश्वामित्राय नमः ।

४५. आग्नेय्यां कश्यपम्—ॐ त्र्यायुषं जमदग्ने कश्यपस्य त्र्यायुषम्। यद्देवेषु त्र्यायुषम् तन्नोऽस्तु त्र्यायुषम्।

ॐ भूर्भुवः स्वः कश्यप इहा० । कश्यपाय नमः ।

४६. दक्षिणे जमदग्निम्—ॐ अयं पश्चाद् विश्व व्यचास्तस्य चक्षुः वैश्वं व्यचसं वर्षाश्चाचाक्षुष्यो जगती वार्षी जगत्या ऋक् समृक्सामाच्छुक्रः शुक्रात्सप्तदशः सप्त दशाद् वैरूपं जमदग्निः ऋषिः प्रजापति गृहीता त्वया चक्षुर्गृह्णामि प्रजाभ्यः।

ॐ भूर्भुवः स्वः जमदग्निः इहा० । जमदग्नये नमः ।

४७. नैर्ऋत्याम् वसिष्ठम्—ॐ अयं पुरोभुवस्तस्य प्राणो भौवायनो वसन्तः प्राणायनो गायत्री वासन्ती गायत्रै गायत्रं गायत्र्यादुपा ऽ शुरूपा ऽ शोस्त्रिवृत्रिवृतो रथन्तरं वसिष्ठ ऋषिः प्रजापतिः गृहीतया त्वया प्राणं गृह्णामि प्रजाभ्यः।

ॐ भूर्भुवः स्वः वसिष्ठ इहा० । वसिष्ठाय नमः ।

४८. पश्चिमे अत्रिम्—ॐ अत्र पितरो मादयध्वं यथाभागं मा वृषायध्वम्। अमीमदन्त पितरो यथाभाग मा वृषायित॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अत्रि इहा० । अत्रये नमः ।

४९. वायव्यां अरुन्धितिम्—ॐ तं पत्नीभिरनुगच्छेम देवाः पुत्रैः भ्रातृभिरुतवा हिरण्यैः। नाकं गृभ्णाना सुकृतस्य लोके तृतीये पृष्ठे ऽधिरोचने दिवः।

ॐ भूर्भुवः स्वः अरुन्धती इहा० । अरुन्धत्यै नमः ।

५०. पूर्वे ऐन्द्रीम्—ॐ आदित्यै रास्नासीन्द्राण्या उष्णीषः। पूषासि धर्माय दीष्व।

ॐ भूर्भुवः स्वः ऐन्द्री इहा० ऐन्द्र्यै नमः ।

५१. आग्नेय्याम् कौमारीम्—ॐ अम्बे अम्बिके अम्बालिके न मानयति कश्चन। ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम्।

ॐ भूर्भुवः स्वः कौमारी इहा०। कौमार्य्यै नमः।

५२. दक्षिणे ब्राह्मीम्—ॐ इन्द्रायाहि धियेषितो विप्रजूत सुतावतः। उप ब्रह्माणि वाग्धतः।

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्राह्मी इहा०। ब्राह्म्यै नमः.

५३. नैर्ऋत्याम् वाराहीम्—ॐ इन्द्रस्य क्रोडो अदित्यै पाजस्यं दिशां जत्रवोऽदित्यैभसज्जीभूतान् हृदयौपशेना ऽन्तरिक्षं पुरीतता नभ उदर्येण चक्रवाकौ मतस्नाभ्यां दिवं वृक्काभ्यां गिरीन प्लाशिभि रुपलान प्लीन्हा वल्मीकान् क्लोमभिर्ग्लौ गुल्मान् हिराभिः स्रवन्तीर्ह्रदान् कुक्षिभ्यां समुद्रमुदरेण वैश्वानरं भस्मना।

ॐ भूर्भुवः स्वः वाराही इहा०। वाराह्यै नमः।

५४. पश्चिमे चामुण्डाम्—ॐ अम्बे अम्बिके अम्बालिके न मानयति कश्चन। ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम्।

ॐ भूर्भुवः स्वः चामुण्डे इहा०। चामुण्डायै नमः।

५५. वायव्ये वैष्णवीम्—ॐ आप्यायस्व समेतु विश्वतः सोम वृषण्यम्। भवा वाजस्य सङ्गथे।

ॐ भूर्भुवः स्वः वैष्णवी इहा०। वैष्णव्यै नमः।

५६. उत्तरे-माहेश्वरीम्—ॐ या ते रुद्र शिवा तनूरघोरा पापकाशिनी। तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि।

ॐ भूर्भुवः स्वः माहेश्वरी इहा०। माहेश्वर्यै नमः।

५७. ऐशान्यै वैनायकीम्—ॐ समक्ख्यै देव्याधिया सदक्षिण्यौ रुचक्षसा मा म आ प्रमोषीर्भो अहं तव वीरं विदेय तव देवि सन्दृशि।

ॐ भूर्भुवः स्वः वैनायकी इहा०। वैनायक्यै नमः।

सर्वतोभद्र पूजन नामावलिः

१. ॐ ब्रह्मणे नमः । २. सोमाय० । ३. ईशानाय० । ४. इन्द्राय० । ५. अग्नये० । ६. यमाय० । ७. निर्ऋतये० । ८. वरुणाय० । ९. वायवे० । १०. अष्ट वसुभ्यो० । ११. एकादश रुद्रेभ्यो० । १२. द्वादशादित्येभ्यः । १३. अश्विभ्याम्० । १४. विश्वेभ्यो देवेभ्यो० । पितृभ्यो० । १५. सप्तयक्षेभ्यो० । १६. सर्पेभ्यो० । १७. गन्धर्वाप्सरोभ्यो० । १८. स्कन्दाय० । १९. नन्दीश्वराय० । २०. शूलाय० । २१. महाकालाय० । २२. प्रजापतये० । २३. दुर्गायै० । २४. विष्णवे० । २५. पितृभ्यो० । २६. रोगेभ्यो० । २७. गणपतये० । २८. अद्भ्यो० । २९. मरुद्भ्यो० । ३०. पृथिव्यै० । ३१. सप्तसरिद्भ्यो० । ३२. सप्तसागरेभ्यो० । ३३. मेरवे० । ३४. गदायै० । ३५. त्रिशूलाय० । ३६. वज्राय० । ३७. शक्तये० । ३८. दण्डाय० । ३९. खड्गाय० । ४०. पाशाय० । ४१. अंकुशाय० । ४२. गौतमाय० । ४३. भरद्वाजाय० । ४४. विश्वामित्राय० । ४५. कश्यपाय० । ४६. जमदग्नये० । ४७. वसिष्ठाय० । ४८. अत्रये० । ४९. अरुन्धत्यै० । ५०. ऐन्द्रयै० । ५१. कौमार्यै० । ५२. ब्रह्म्यै० । ५३. बाराह्यै० । ५४. चामुण्डायै० । ५५. वैष्णव्यै० । ५६. माहेश्वर्यै० । ५७. वैनायक्यै० ॥

एवं षट् पञ्चाशद् देवान् आवाह्य—

ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य वृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनो त्वरिष्टं यज्ञ ए समिमं दधातु । विश्वे देवा स इह मा दयन्ता मो ३ म्प्रतिष्ठ ।

इति प्रतिष्ठाप्य यथालब्धोपचारैः एकतन्त्रेण ब्रह्मादीन् संपूज्य वेदि-मध्यस्थे पद्मे ताम्रकलशं स्थापयेत ।

सर्वतोभद्र मण्डल पर देवताओं का तत्तत् मन्त्रों से आवाहन कर गन्धादि से मण्डलस्थ देवताओं का पूजन कर उसी मण्डल पर मध्य में कलश स्थापन करे ।

सर्वतोभद्र पूजन के पश्चात् अष्टदल कमल पर कलश स्थापन कर पूजन करे ।

अथ कलशस्थापनम्

भूमिस्पर्शन—ॐ भूरसिभूमिरस्यदितिरसि विश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री । पृथ्वीं यच्छ पृथ्वीं दृ ए ह पृथिवीं माहि ए सी ॥ इससे भूमि का स्पर्श करे ।

तण्डुल या यव को बिखेरे—ॐ औषधयः समवदन्त सोमेन सह राज्ञा। यस्य कृणोति ब्राह्मणस्त ꣳ राजन्पारयामसीः।

कलश का स्पर्श करे—ॐ आजिघ्र कलशं मह्यं त्वा विशन्त्विन्दवः। पुन रूर्ज्जा निवर्त्तस्वसानः सहस्रं धुक्ष्वोरुधारापयस्वती पुनर्मा विशताद्रयिः। इससे कलश स्थापन करे।

कलश में जल डालें—ॐ वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्य स्कम्भ सर्जनीस्थो वरुणस्य ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऋतसदनमसि वरुणस्य ऋतसदनमासीद। कलश में जल भरे।

वस्त्र—ॐ सुजातो ज्योतिषा सह शर्म वरूथमासदत्स्वः। वासो अग्ने विश्व रूप ꣳ संव्ययस्व विभावसोः। इससे वस्त्र लपेटे।

पूगीफल—ॐ या फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणी। वृहस्पतिः प्रसूतास्तानो मुञ्चन्त्व ꣳ ह सः। सुपारी डाले।

पंचरत्न—ॐ परिवाजपति कविरग्नि र्हव्यान्यक्रमीत। दधद्रत्नानि दाशुषे। इससे पांच रत्नों को डाले।

दक्षिणा—ॐ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्। स दाधार पृथिवीं द्यामुते मां कस्मै देवाय हविषा विधेम। इससे दक्षिणा द्रव्य या सुवर्ण डाले।

गन्धम्—ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्। ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्। इससे गन्ध निक्षेप करे।

सर्वौषधि—ॐ या औषधि पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगम्पुरा मनैनु बभ्रूणा मह ꣳ शतं धामानि सप्त च। इससे सर्वौषधि डाले।

सप्तमृत्तिका—ॐ स्योना पृथिवी नो भवानृक्षरा निवेशनी। यच्छानः शर्म्मसप्रथाः। कलश में सप्तमृत्तिका डाले।

दूर्वा—ॐ काण्डात् काण्डात् प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि। एवानो दूर्वे प्रतनुसहस्रेण शतेन च। इससे दूर्वा डाले।

पंचपल्लव—ॐ अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता। गोभाज इत्किलासथ यत्सनवथ पूरुषम्। इससे पांच वृक्षों के पत्ते डाले।

पवित्र—ॐ पवित्रेस्थो वैष्णव्यौ सवितुर्वःप्रसव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः। तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्काम पुनेतच्छकेयम्। इससे पवित्र डाले। तण्डुलपरिपूरितं पूर्णपात्रं कलशोपरि स्थापयेत्—

ॐ पूर्णादर्वि परापत सुपूर्णा पुनरापत। वस्नेव विक्रीणावहा इषमूर्ज्ज॑ शतक्रतो॥

श्रीफलम्—ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहो रात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्। इष्णन्निषाण मुम्म इषाण सर्वलोकम्म इषाण।

प्रतिष्ठा—ॐ मनोजूतिर्जुषता माज्यस्य वृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञ॑ समिमं दधातु। विश्वेदेवा स इह मादयन्ता मो ३ म्प्रतिष्ठ॥

वरुणस्यावाहनम्—ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः। अहेडमानो वरुणेह वोध्युरुश॑ समान आयुः प्रमोषीः॥

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुण इहागच्छ इहतिष्ठ। ॐ वरुणाय नमः इति षोडशोपचारैः वरुणं संपूज्य—अधिष्ठित देवस्य षोडशोपचार पूजनं कुर्यात्।

अथ षोडशोपचार-पूजनमंत्राः

(कलश पर देव प्रतिमा का पूजन करे)

आवाहनम्—ॐ सहस्त्रशीर्षा पुरुषः सहस्त्राक्षः सहस्त्रपात्। स भूमि॑ सर्वतस्पृत्वा त्यतिष्ठद्दशांगुलम्। इससे आवाहन करे।

आसनम्—ॐ पुरुष एवेद॑ सर्वं यद्भूतं यच्चभाव्यम्। उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनाति रोहति॥ इससे पुष्पासन दे।

पाद्यम्—ॐ एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पुरुषः। पादोऽस्य विश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि॥ इससे जल दे।

अर्घम्—ॐ त्रिपादूर्ध्व उदैत् पुरुषः पादोऽस्येहा भवत्पुनः। ततो विश्वङ् व्यक्रामत् साशनानशने अभि। इस से अर्घ दे।

आचमनम्—ॐ ततो विराडजायत विराजो अधि पूरुषः। स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः। इससे आचमन के लिए जल दे।

स्नानम्—ॐ तस्माद् यज्ञाद् सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम्। पशूंस्तांश्चक्रे वायव्या नारण्या ग्राम्याश्च ये। इससे स्नान के लिए जल डाल दे।

पञ्चामृत स्नानम्—ॐ पयः पृथिव्यां पयः ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः। पयस्वती प्रदिशः सन्तु मह्यम्। इससे पञ्चामृत स्नान करवा कर पुनः शुद्ध स्नान करवाए।

वस्त्रम्—ॐ तस्माद् यज्ञात् सर्वहुतः ऋचः सामानि जज्ञिरे। छन्दा॥सि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत। इससे वस्त्रयुग्म प्रदान करे।

यज्ञोपवीतम्—ॐ तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः। गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः। इससे यज्ञोपवीत चढ़ाकर आचमन कराए।

गन्धम्—ॐ तं यज्ञं वर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषञ्जातमग्रतः। तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये। इससे गन्ध चढ़ाए।

पुष्पम्—ॐ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधाव्यकल्पयन्। मुखं किमस्यासीत् किम्बाहू किमुरू पादा उच्येते। इससे फूल चढ़ाए।

धूपम्—ॐ ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् वाहू राजन्यः कृतः। उरु तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्या॥ शूद्रो अजायत॥ इससे धूप दिखाएं।

दीपम्—ॐ चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत। श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत॥ इससे दीप दिखाए।

नैवेद्यम्—ॐ नाभ्या आसीदन्तरिक्ष॥ शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत। पद्भ्याम्भूमिर्दिशः श्रोत्रात् तथा लोकां-२ अकल्पयन्। इससे नैवेद्य चढ़ाए। पश्चात् आचमन कराए। ताम्बूलं पूगीफलं च।

नमस्कारः—ॐ यत्पुरुषेण हविषा देवाः यज्ञमतन्वत। वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः॥ इससे नमस्कार करे।

प्रदक्षिणा—ॐ सप्तास्यासन् परिधय स्त्रिसप्तसमिधः कृताः। देवा यद्यज्ञन्तन्वानः अबध्नन्पुरुषं पशुम् ॥ इससे प्रदक्षिणा करे।

पुष्पांजलि—ॐ यज्ञेन यज्ञ मयजन्तदेवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्। तेह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः। इससे पुष्पांजलि समर्पित करे।

ततो गंगाद्यावाहनम्—सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदाः नदाः। आयान्तु यजमानस्य दुरितक्षयकारकाः ॥

कलशाभिमन्त्रणम्—

कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः।
मूले तस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः।
कुक्षौ तु सागराः सप्त सप्तद्वीपाः वसुन्धरा।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः।
अंगैश्च सहिताः सर्वे कलशं तु समाश्रिताः ॥

प्रार्थना—

देवदानव संवादे मथ्यमाने महोदधौ।
उत्पन्नोऽसि यदाकुम्भ विधृतो विष्णुनास्वयम्।
त्वत्तः सर्वाणि तीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः।
त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः।
शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः।
आदित्या वसवो रुद्राः विश्वेदेवाः सपैतृकाः ॥
त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदाः।
त्वत्प्रसादादिमं यज्ञं कर्तुमीहे जलोद्भव ॥
सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नोभव सर्वदा।

अथ लिङ्गतोभद्रदेवतानां पूजनम्

मण्डप वेदी में द्वादशलिंगतोभद्र मण्डल की स्थापना कर वहां नाम मंत्रों से पृथक्-पृथक् देवता का तत्-तत् नाम से आवाहन कर पूजा करे। तत्पश्चात्

उस मण्डल के मध्य में कलश की स्थापना कर, कलश पूजन करके प्रधान देवता रुद्र का षोडशोपचार से पूजन करे। लिंगतोभद्र के पूजन का विधान शिव परिवार की प्रतिष्ठा में प्रयोग होता है।

उक्तं च रुद्रयामले—

उद्धारं कथयिष्येऽहं मदर्चार्थं तत्र तव प्रिये।
चतुस्त्रिंशत् समाः रेखाः कुर्यात् पूर्वोत्तराः शुभाः ॥१ ॥
मध्ये वृत्तं समालेख्यं तन्मध्ये च दशाष्टकम्।
बहिरष्ट दलं पद्मं ततः षोडश पत्रकम् ॥२ ॥

श्वेत
पीत
रक्त
हरित
कृष्ण
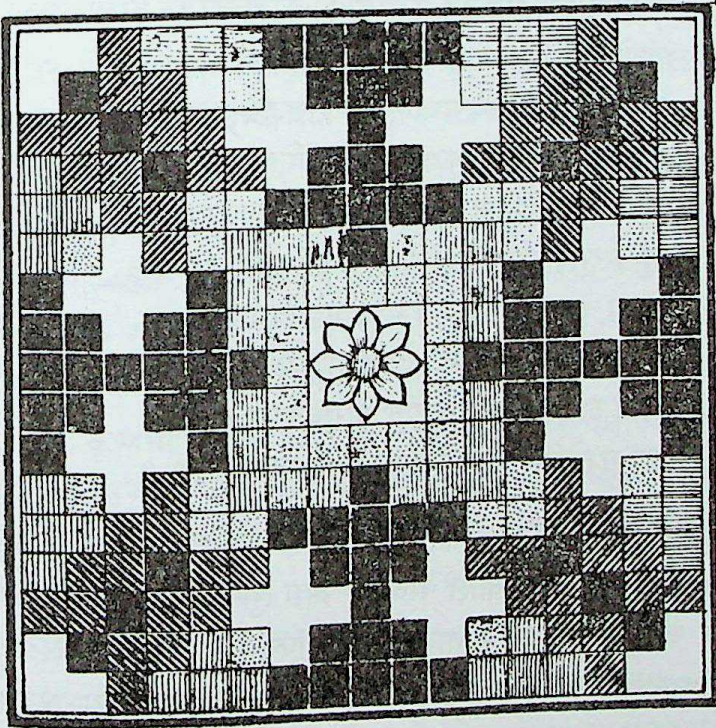
चतुर्विंशतिपत्राद्यं द्वात्रिशत्पत्रकं तथा ।
चत्वारिंशत्पत्रकं तु वृत्तं सूर्यसम-प्रभम् ॥३ ॥
खण्डेन्दुस्त्रिपदैः कोणे शृंखलादश कोष्ठिका ।
एकविंशत्पदा वल्ली भद्रं तु षट्पदैस्तथा ॥४ ॥
अष्टादशपदं लिंग भद्रं चाष्ट पदं तथा ।
त्रयोदशपदा वापी कुर्यात् लिंगस्य सन्निधौ ॥५ ॥
पूज्योपर्यपि भद्राणि भवन्ति नवभिः पदैः ।
एवं द्वादशलिंगाख्यं वापी षोडशकान्वितम् ॥६ ॥
षट् पदाष्टकं भद्राद्यं पूज्यं द्वादशकात्मकम् ।
मध्ये विंशति भद्रं तु कथितं पूर्व सूरिभिः ॥७ ॥
वर्णक्रममथो वक्ष्ये मण्डलस्य च सिद्धये ।
घृत तण्डुल पिष्टेन कृष्णवर्णेन निर्मितम् ॥८ ॥
लिंग जातं सितेन्दु स्याद् वल्ली विल्वदलप्रभा ।
शृंखला कृष्णवर्णा च पीतं भद्रद्वयं भवेत् ॥९ ॥
सिता वाप्यस्तथा पूज्या मध्ये भद्रे त्वयं क्रमः ।
पूज्योपर्यरुणे भद्रे सिते द्वे मध्यमं सितम् ॥१० ॥
सत्त्वं रजस्तमश्चैव वाह्यतः परिधित्रयम् ।
एवं सुशोभितं कार्यं मण्डलं शिवपूजनम् ॥११ ॥

अथ देवतास्थापनम्—तत्रादौ सपत्नीको यजमानः मध्यवेद्यां समागत्य आचम्य प्राणानायम्य देशकालं संकीर्त्य अद्य पुण्यतिथौ मम इह जन्मनि जन्मान्तरे च सुखसौभाग्य सन्तानादि फलप्राप्त्यर्थं श्रीमदुमामहेश्वर प्रीतये शिवप्रतिष्ठाङ्गभूतलिंगतोभद्र मण्डल देवता-आवाहन प्रतिष्ठा पूजनानि करिष्ये । इति संकल्प्य अक्षतान् गृहीत्वा देवानावाहयेत ।

मण्डल वाह्ये ईशान कोणे गुरवे नमः—गुरुमावाहयामि स्थापयामि ॥१ ॥ आग्नेय्यां—ॐ गणपतये नमः ॥२ ॥ नैर्ऋत्यां—ॐ दुर्गायै नमः ॥३ ॥ वायव्यां—क्षेत्रपालाय नमः ॥४ ॥

ततो मण्डलमध्ये—पूर्वस्यां दिशि—ॐ कालाग्नि रुद्राय नमः ॥१ ॥ ॐ कूर्माय नमः ॥२ ॥ ॐ मण्डूकाय नमः ॥३ ॥ आग्नेय्याम्—ॐ वाराहाय नमः ॥४ ॥ ॐ अनन्ताय नमः ॥५ ॥ दक्षिणे पृथिव्यै नमः ॥६ ॥ ॐ स्कन्दाय नमः ॥७ ॥ ॐ अंकुशाय नमः ॥८ ॥ नैर्ऋत्याम्—ॐ नलाय नमः ॥९ ॥ ॐ पद्माय नमः ॥१० ॥ पश्चिमे पत्रेभ्यो नमः ॥११ ॥ ॐ केशरेभ्यो नमः ॥१२ ॥ ॐ कर्णिकायै नमः ॥१३ ॥ वायव्याम्—सिंहासनाय नमः ॥१४ ॥ ॐ पद्मासनाय नमः ॥१५ ॥ उत्तरे—ॐ धर्माय नमः ॥१६ ॥ ॐ ज्ञानाय नमः ॥१७ ॥ ॐ वैराग्याय नमः ॥१८ । ऐशान्याम्—ॐ ऐश्वर्याय नमः ॥१९ ॥ ॐ चिदाकाशाय नमः ॥२० ॥ पद्ममध्ये—ॐ योगपीठात्मने नमः ॥२१ ॥

ततः कर्णिकोपरि—पूर्वे—ॐ पृथिव्यै नमः । दक्षिणे ॐ कपालाय नमः । पश्चिमे—ॐ सप्तसरिद्भ्यो नमः । उत्तरे—ॐ वामदेवाय नमः ।

अथ तत्समीपे कृष्णानि अष्टौ भद्राणि तद्देवता स्थापनम्—ईशानादि क्रमेण—ऐशान्याम्—ॐ भगवत्यै नमः। पूर्वे—ॐ उमायै नमः। आग्नेय्याम्—ॐ शंकरप्रियायै नमः। दक्षिणे—ॐ पार्वत्यै नमः। नैर्ऋत्ये—ॐ गौर्य्यै नमः। पश्चिमे—ॐ काम्यै नमः। वायव्याम्—ॐ कौमार्यै नमः । उत्तरे—ॐ विश्वम्भर्यै नमः ।

ततः कृष्णभद्राणामधः अष्टौ रक्तभद्राणि तद्देवता स्थापनम्, ईशानादि क्रमेण—ऐशान्याम्—ॐ नन्दिन्यै नमः। पूर्वे—ॐ महाकालाय नमः। आग्नेय्याम्—ॐ वृषभाय नमः। दक्षिणे—ॐ भृंगकिरीटिने नमः। नैर्ऋत्याम्—ॐ स्कन्दाय नमः। पश्चिमे—ॐ उमापतये नमः। वायव्याम्—ॐ चण्डेश्वराय नमः । उत्तरे—ॐ सोमसूत्राय नमः ।

अथ लिंगोपरि चत्वारि श्वेतभद्राणि तद् देवता स्थापनम्—पूर्वे—ॐ धात्रे नमः । दक्षिणे—ॐ मित्राय नमः । पश्चिमे—ॐ यमाय नमः । उत्तरे—ॐ रुद्राय नमः ।

ततः तत्समीपलिंगोपरि अष्टौ पीतभद्राणि—तद् देवता स्थापनम्—ऐशान्यां—ॐ वरुणाय नमः। पूर्वे—ॐ सूर्याय नमः। आग्नेय्याम्—ॐ भगाय नमः । दक्षिणे—ॐ विवस्वते नमः । नैर्ऋते—ॐ

पुरुषोत्तमाय नमः । पश्चिमे—ॐ सवित्रे नमः । वायव्ये—ॐ त्वष्ट्रे नमः । उत्तरे—ॐ विष्णवे नमः ।

ततः द्वादशलिंगदेवता स्थापनं पूर्वादि क्रमेण—

पूर्वे—ॐ शिवाय नमः । ॐ एकनेत्राय नमः । ॐ एकरुद्राय नमः ।

दक्षिणे—ॐ त्रिमूर्त्तये नमः । ॐ श्री कण्ठाय नमः । श्रीवामदेवाय नमः ।

पश्चिमे—ॐ ज्येष्ठाय नमः । ॐ श्रेष्ठाय नमः । ॐ रुद्राय नमः ।

उत्तरे—ॐ कालाय नमः ॐ कलविकरणाय नमः । ॐ वलविकरणाय नमः ।

ततः श्वेतषोडशवापी देवता स्थापनं ऐशान्यादि क्रमेण—ॐ अणिमायै नमः । ॐ महिमायै नमः । ॐ लघिमायै नमः । ॐ गरिमायै नमः । ॐ प्राप्त्यैनमः । ॐ प्राकाम्यै नमः । ॐ ईशितायै नमः । ॐ वशितायै नमः । ॐ ब्राह्म्यै नमः । ॐ माहेश्वर्यै नमः । ॐ कौमार्यै नमः । ॐ वैष्णव्यै नमः । ॐ वाराह्यै नमः । ॐ इन्द्राण्यै नमः । ॐ चामुण्डायै नमः । ॐ चण्डिकायै नमः ।

ततः वापी समीपे—अष्टौ रक्तभद्राणि तद्देवता स्थापनं ईशानादि क्रमेण—ॐ असितांगभैरवाय नमः । ॐ रुरुभैरवाय नमः । ॐ चण्डभैरवाय नमः । ॐ क्रोधभैरवाय नमः । ॐ उन्मत्तभैरवाय नमः । ॐ कालभैरवाय नमः । ॐ भीषणभैरवाय नमः । ॐ संहारभैरवाय नमः ।

अष्ट वल्लभीदेवता स्थापनम्—ईशानादि क्रमेण—ॐ घृताच्यै नमः । ॐ मेनकायै नमः । ॐ रम्भायै नमः । ॐ उर्वश्यै नमः । ॐ तिलोत्तमायै नमः । ॐ सुकेशायै नमः । मंजुघोषायै नमः । ॐ अप्सरसे नमः ।

ततो मण्डपसमीपे परिधि-समीपे शृखला देवता स्थापनम्—

आग्नेय्यादि क्रमेण—ॐ भवाय नमः । ॐ शिवाय नमः । ॐ रुद्राय नमः । ॐ पशुपतये नमः । ॐ उग्राय नमः । ॐ महादेवाय नमः । ॐ भीमाय नमः । ॐ ईशानाय नमः । ॐ अनन्ताय नमः । ॐ वासुक्ये नमः ।

ततो नैर्ऋत्यां परिधि समीपे—शृंखला देवताः—ॐ तक्षकाय नमः । ॐ कुलीरकाय नमः । ॐ कर्कोटकाय नमः । ॐ शेखपालाय नमः । ॐ

कम्वलाय नमः । ॐ अश्वतराय नमः । ॐ वैन्याय नमः । ॐ अंगाय नमः । ॐ हैहयाय नमः । ॐ अर्जुनाय नमः ।

ततो वायव्ये दश शृंखला देवताः—ॐ शाकुंतलाय नमः । ॐ भरताय नमः । ॐ नलाय नमः । ॐ रामाय नमः । ॐ सार्वभौमाय नमः । ॐ निषधाय नमः । ॐ विन्ध्याचलाय नमः । ॐ माल्यवते नमः । ॐ पारियात्राय नमः । ॐ सह्याय नमः ।

ततः ऐशान्ये परिधिसमीपे दश शृंखला देवताः—ॐ हेमकूटाय नमः । ॐ गन्धमादनाय नमः । ॐ कुलाचलाय नमः । ॐ खेताय नमः । ॐ देवगिरये नमः । ॐ मलयाचलाय नमः । ॐ कनकाचलाय नमः । ॐ पृथिव्यै नमः । ॐ अनन्ताय नमः । इति शृंखला देवताः ।

अथ चतुर्दिक्षु खण्डेन्दुदेवता स्थापनमीशानादि क्रमेण—

ऐशान्यां—ॐ विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः । नैर्ऋत्ये—ॐ पितृभ्यो नमः । वायव्याम्—ॐ नागेभ्यो नमः ।

ततो मण्डलाद् वहिः प्रथमं सत्त्वपरिधौ पूर्वादिक्रमेण देवता—

पूर्वे—ॐ इन्द्राय नमः । ॐ यमाय नमः । ॐ नैर्ऋतये नमः । ॐ वरुणाय नमः । ॐ वायवे नमः । ॐ कुवेराय नमः । ॐ ईश्वराय नमः । ॐ ब्रह्मणे नमः । ॐ अनन्ताय नमः ।

तद्बहिः—रजः परिधौ पूर्वादि क्रमेण—पूर्वे ॐ वज्राय नमः । ॐ शक्तये नमः । ॐ दण्डाय नमः । ॐ खड्गाय नमः । ॐ पाशाय नमः । ॐ अंकुशाय नमः । ॐ गदायै नमः । ॐ त्रिशूलाय नमः ।

तद् बहिः तमोमये कृष्ण परिधौ पूर्वादिक्रमेण—ॐ भरद्वाजाय नमः। ॐ अत्र्यै नमः। ॐ विश्वामित्राय नमः। ॐ गौतमाय नमः। ॐ जमदग्नये नमः । ॐ वसिष्ठाय नमः । ॐ अरुन्धत्यै नमः ।

ततः पूर्वे—ॐ ऋग्वेदाय नमः । दक्षिणे यजुर्वेदाय नमः । पश्चिमे—ॐ सामवेदाय नमः। उत्तरे—ॐ अथर्ववेदाय नमः। एवं अष्टोत्तरशत देवताः संस्थाप्य षोडशोपचारैः संपूज्य वेदिमध्ये ताम्रकलशं संस्थाप्य—तदुपरि रुद्रमूर्तिस्वर्णमयीं अग्न्युत्तारणपूर्वकं सन्निधाय षोडशोपचारैः पूजयेत् ।

अथ लिंगतो भद्रदेवता पूजने विशेषः

(प्रकारान्तर से)

तद् वाह्ये पूर्वादिक्रमेण—पूर्वे—१. ॐ नमः कृत्स्नायतया धावते सत्त्वना पतये नमो नमः सहमानाय निव्याधिन आव्याधिनीनां पतये नमो नमो निषङ्गिणे ककुभाय स्तेनानां पतये नमो नमो निचेरवे परिचायारण्यानां पतये नमः ।। **ॐ असितांग भैरवाय नमः ॥**

२. **आग्नेय्याम्**—ॐ शिवत्र आदित्यानामुष्ट्रो घृणीवान्वार्ध्रीन सस्ते मत्या अरण्याय सृमरो रुरू रौद्रः क्वयि कुटरुर्दात्यौहस्ते वाजिनां कामायपिकः । **ॐ रुरुभैरवाय नमः ॥**

३. **दक्षिणस्याम्**—ॐ उग्रं लोहितेन मित्रं सौव्रत्येन रुद्रं दौर्व्रत्येनेन्द्रं प्रक्रीडेन मरुतो बलेन साध्यान्प्रमुदा । भवस्य कण्ठ्यं रुद्रस्यान्तः पाश्वर्यं महादेवस्य यकृच्छर्वस्य वनिष्ठुः पशुपते पुरीतत् ॥ **ॐ चण्डभैरवाय नमः ॥**

४. **नैर्ऋत्याम्**—ॐ इन्द्रस्य क्रोडोऽदित्यै पाजस्यं दिशाञ्जत्रवेऽदित्यै भसञ्जीमूतान् हृदयौपशेनान्तरिक्षं पुरीतता नभः उदर्येण चक्रवाकौ मतस्नाभ्यां दिवं वृक्काभ्यां गिरीन् प्लाशिभिरुपलान्प्लीह्ना बल्मीकान् क्लोमभिर्ग्लौभिर्गुल्मान् हिराभिः स्रवन्तीर्ह्रदान् कुक्षिभ्यां समुद्रमुदरेण वैश्वानरं भस्मना ॥ **ॐ क्रोध भैरवाय नमः ॥**

५. **पश्चिमे**—ॐ उन्नत ऋषभो वामनस्त ऐन्द्रा वैष्णवा उन्नतः शिति वाहुः शितिपृष्ठस्त ऐन्द्रा वार्हस्पत्या शुकरूपा वाजिनाः कल्माषा आग्निमारुताः श्यामाः पौष्णाः । **ॐ उन्मत्तभैरवाय नमः ।**

६. **वाव्यम्**—ॐ कार्षिरसि समुद्रस्य त्वाक्षित्या उन्नयामि । समापो अद्भिरगमत समोषधीभिरोषधीः ॥ **ॐ कपाल भैरवाय नमः ।**

७. **उत्तरे**—ॐ उग्रश्च भीमश्च ध्वान्तश्च धुनिश्च । सासह्वांचाभियुग्वा च विक्षिपः स्वाहा । **ॐ भीषण भैरवाय नमः ।**

८. **ईशान्याम्**—ॐ नमः शंभवाय च मयोभवाय च नमः शंकराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च । **ॐ संहार भैरवाय नमः ।**

९. तद्वाह्ये—पूर्वे—ॐ नमः श्वभ्यः श्वपतिभ्यश्च वो नमो नमो भवाय च रुद्राय च नमः शर्वाय च पशुपतये च नमो नीलग्रीवाय च शितिकण्ठाय च ॥ **ॐ भवाय नमः ।**

१०. आग्नेय्याम्—ॐ अग्नि हृदयेनाशनिं हृदयाग्रेण पशुपतिं कृत्स्नहृदयेन भवं यक्ना। शर्वं मतस्नाभ्या मीशानं मन्युना महादेव मन्तः पर्शव्येनोग्रं देवं वनिष्ठुना वसिष्ठहनुः शिंगीनि कोश्याभ्याम् । **शर्वाय नमः ॥**

११. दक्षिणे—ॐ उग्रं लोहितेन मित्रं सौव्रत्येन रुद्रं दौर्व्रत्येनेन्द्रं प्रक्रीडेन मरुतोबलेन साध्याय प्रमदा। भवस्य कण्ठ्य रुद्रस्यान्तः पार्श्वं महादेवस्य यकृच्छर्वस्य वनिष्ठुः पशुपतेः पुरीततः ॥ **पशुपतये नमः ।**

१२. नैर्ऋत्याम्—ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम्। पूषा नो यथावेदसा मसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥ **ईशानाय नमः ।**

१३. ॐ नमस्ते रुद्रमन्यव उतोत इषवे नमः । बाहुभ्यां मुतते नमः ॥ **रुद्राय नमः ।**

१४. वायव्याम्—ॐ उग्रश्च भीमश्च ध्वान्तश्च धुनिश्च। सासह्वांश्चाभियुग्वा च विक्षिपः स्वाहा ॥ **उग्राय नमः ॥**

१५. ॐ वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्य वर्णं तमसः परस्तात्। तमेव विदित्वाऽतिमृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ॥ **भीमाय नमः ।**

१६. ईशान्यां—ॐ मानो महान्तमुत मानो अर्भकं मा नःउक्षन्तमुत मा नः उक्षितम् । मानो बधीः पितरं मोत मातरं मा नःप्रियास्तन्वो रुद्ररीरिषः ॥ **महते नमः ।**

१७. पुनः पूर्वादिक्रमेण—ॐ स्योना पृथिविनो भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छानः शर्मसप्रथाः ॥ **अनन्ताय नमः ।**

१८. आग्नेय्याम्—ॐ देहि मे ददामि ते नि मे धेहि नि ते दधे । निहारञ्च हरासि मे निहारं निहराणि ते स्वाहा ॥ **वासुक्ये नमः ।**

१९. दक्षिणे—ॐ नमस्तक्षभ्यो रथकारेभ्यश्च वो नमो नमः कुलालेभ्यः कर्मारेभ्यश्च वो नमो नमो निषादेभ्यः पुञ्जिष्ठेभ्यश्च वो नमो नमः श्वनिभ्यो मृगयुभ्यश्च वो नमः। **तक्षकाय नमः।**

२०. नैर्ऋत्याम्—पुरुषमृगश्चन्द्रमसो गोधा कालका दार्वाघाटस्ते वनस्पतीनां कृकवाकुः सावित्रो हंसो वातस्य नाक्रो मकरः कुलीपयस्ते ऽकूपारस्य ह्रियै शल्यकः॥ **कुलिशाय नमः।**

२१. पश्चिमे—ॐ सोमाय कुलुंग आरण्योऽजो नकुलः शका ते पौष्णाः क्रोष्टा मायोरिन्द्रस्य गौर मृगः पिद्वो न्यङ्कुः कक्कटस्तेऽनुमत्यै प्रतिश्रुतकायै चक्रवाकः। **कर्कोटकाय नमः॥**

२२. वायव्याम्—ॐ अग्नि ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः तमीमहे महानयम्। उपयाम गृहीतोस्यग्नये त्वा वर्चस एष ते योनिरग्नये त्वा वर्चसे। **शंखपालाय नमः॥**

२३. उत्तरे—ॐ सीसेन तन्त्रं मनसा मनीषिणः ऊर्णा सूत्रेण कवयो वयन्ति। अश्विना यज्ञ ँ सविता सरस्वतीन्द्रस्य रूपं वरुणो भिषज्यन्॥ **कम्वलाय नमः।**

२४. ॐ अश्वस्तूपरो गोमृगस्ते प्राजापत्याः कृष्णग्रीव आग्नेयो रराटे पुरस्तात्सारस्वती मेष्यधस्ताद् धन्वोरश्विना वधोरामौ बाह्वोः सौमापौष्णः श्यामो नाभ्यां सौर्ययामौ श्वेतश्च कृष्णश्च पार्श्वयोस्त्वाष्ट्रौ लोमश सक्थौ सक्थ्योर्वायव्यः श्वेतः पुच्छ इन्द्राय स्वपस्याय वेहद् वैष्णवो वामनः॥ **अश्वतराय नमः॥**

२५. ॐ नमः श्वभ्यः श्वपतिभ्यश्च वो नमो नमो भवाय च रुद्राय च नमः शर्वाय च पशुपतये च नमो नीलग्रीवाय च शितिकण्ठाय च॥ **शूलाय नमः।**

२६. इन्द्राग्निमध्ये—ॐ चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत। श्रोत्राद् वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत॥ **चन्द्रमौलिने नमः।**

२७. अग्नियमयोर्मध्ये—ॐ चन्द्रमा अप्स्वन्तरा सुपर्णो धावते दिवि। रयिं पिशगं बहुलं पुरु स्पृहः हरि रेति कनिक्रदत॥ **चन्द्रमसे नमः।**

२८. यमनिर्ऋतिमध्ये—ॐ आशुशिशानो वृषभो न भीमो घनाघनः क्षोभणश्चर्षणीनाम्। संक्रन्दनोऽनिमिषः एकवीरः शतॅं सेना अजयत् साकमिन्द्रः ॥ **वृषभध्वजाय नमः।**

२९. निर्ऋतिवरुणयोर्मध्ये—ॐ सुगा वो देवाः सदना अकर्म य आजग्मेदॅं सवनं जुषाणाः। भरमाणा वहमाना हवीॅंष्यस्मे धत्त वसवो वसूनि स्वाहा। **त्रिलोचनाय नमः।**

३०. वरुण वायु मध्ये—रुद्राः सॅंसृज्य पृथिवीं वृहज्ज्योतिः समीधिरे। तेषां भानुरजस्र इच्छुको देवेषु रोचते। शक्तिधराय नमः।

३१. वायुसोमयोः मध्ये—ॐ त्र्यम्वकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥ **महेश्वराय नमः।**

३२. सोमेशानयोर्मध्ये—या वां कशा मधुमत्यश्विना सूनृतावती। तया यज्ञं मिमिक्षितम् ॥ **शूलपाणये नमः॥**

लिंगतोभद्र देवता नामावलिः

१. ॐ असितांगभैरवाय नमः। २. रुरुभैरवाय०। ३. चण्डभैरवाय०। ४. क्रोध भैरवाय। ५. उन्मत्त भैरवाय०। ६. कपाल भैरवाय०। ७. भीषण भैरवाय०। ८. संहार भैरवाय०। ९. भवाय नमः०। १०. शर्वाय०। ११. पशुपतये० ॥ १२. ईशानाय०। १३. रुद्राय०। १४. उग्राय०। १५. भीमाय०। १६. महते०। १७. अनन्ताय०। १८. वासुक्ये०। १९. तक्षकाय०। २०. कुलिशाय०। २१. कर्कोटकाय०। २२. शंखपालाय०। २३. कम्बलाय०। २४. अश्वतराय०। २५. शूलाय०। २६. चन्द्रमौलिने०। २७. चन्द्रमसे०। २८. वृषवध्वजाय०। २९. त्रिलोचनाय०। ३०. शक्तिधराय०। ३१. महेश्वराय०। ३२. शूलपाणये नमः।

इति लिंगतोभद्र देवता स्थापनं पूज़नं षोडशोपचारैः पञ्चोपचारैर्वा कुर्यात्। ततः लिंग भद्रोपरि कलशं स्थाप्य प्रतिष्ठाप्य कलशोपरि स्वर्णमयीं प्रतिमां स्थापयेत् ॥ सम्पूज्य प्रार्थयेत्—पूजितोऽसि मया देव कुर्वन्तु मम मंगलम्। अस्य यज्ञस्य संसिद्ध्यै क्षमध्वमनयाऽर्चया।

इति लिंगतोभद्र पूजनम्।

अथ पंचभूसंस्काराः

देशकालौ संकीर्त्य अमुक गोत्रः अमुकशर्मा सपत्नीकोऽहं अस्मिन् सनवग्रहमख प्रासाद—शिवादि मूर्त्तीनां स्थिरप्रतिष्ठाकर्मणि पंचभूसंस्कारपूर्वकं अग्निस्थापनं करिष्ये ॥

त्रिभिर्दर्भैः परिसमूह्य तान् कुशान् ऐशान्यां परित्यज्य गोमयोदकेन उपलिप्य स्फ्येन खादिरस्रुव मूलेन वा उल्लिख्य उल्लेखन क्रमेण अनामिका अंगुष्ठाभ्यां मृदमुद्धृत्य उदकेन अभ्युक्ष्य ॐ अग्नि दूतं पुरोदधे हव्यवाह मुपब्रुवे । देवां-२ आसादयादिह ॥ ॐ चत्वारि शृंगास्त्रयो अस्य पादाः द्वे शीर्षे सप्तहस्तासो अस्य । त्रिधा वद्धो वृषभो रौरवीति महो देवो मर्त्यां आविवेश ॥ इत्यग्निं संस्थापयेत् ।

ततोऽग्निस्थापनम्

ततोऽहतवस्त्राच्छादिते ब्रह्मणोऽरणि प्रदानं कुर्यात्। नित्यनैमित्तिक-काम्य कर्मानुष्ठार्थं स्मार्ताग्निसाधनभूते योनिरूपे इमे अरणी युवाभ्यां प्रतिगृह्येताम्। इयमधरा। इयमुत्तरा। ततो यजमानः तौ स्मार्ताग्निसाधनभूते इमे अरणी आवाभ्यां परिगृहाण इदं चात्रं इदमोवलीं इदं नेत्रं इमानि स्रुवादीनि पात्राणि प्रतिगृहाण । ततो यजमानः इमानि स्रुवादीनि पात्राणि प्रतिगृह्णामि । पत्नी तु यजमान हस्तादधरामरणिमंके निदधाति । यजमानोऽप्येके उत्तरारणिं निदधाति । उभावप्यरण्यो पूजां कुरुतः । तद्यथा प्राग्ग्रीवामुत्तरलोभ कृष्णाजिनं कम्वलोपरि आस्तीर्य तत्रोदग्रामधरारणिं निधाय तत्पूर्वं उत्तरारणिं च । अधराण्यामुक्त प्रदेशे प्रमन्थ मूलं निधाय चात्राग्रे चोवलीमुदगग्रां च नेत्रेण चात्रं त्रिवेष्टयित्वा दृढं धृत्वा पश्चिमाभिमुखोपविष्टया पत्न्या मन्थयेत । यावदग्नेरुत्पत्तिः । पत्न्या मन्थनासामर्थ्ये अन्ये ब्राह्मणाः शुचयो मथ्नन्ति । एवं यजमानासामर्थ्ये अन्यो यन्त्रं धारयति । ततो जातमग्निं मृण्मयेपात्रे शुष्क गोमय चूर्णं नारिकेलजटां च स्थापयित्वा तस्मिन्पात्रे अग्निमाहृत्य वेणुनलिकया प्रज्वालयेत । ततः कुण्डोपरि मेखलायां श्वेतवर्णं विष्णुं पूजयेत् । ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे इत्यादि । ततो मध्यमेखलायां रक्तवर्णं ब्रह्माणं पूजयेत् । ॐ ब्रह्म जज्ञानं० । ततो अधोमेखलायां कृष्णवर्णं नमस्तेरुद्र०

रुद्रम् । अम्बे अम्बिके० योन्यां रक्त वर्णां इति गौरीम् । ॐ नीलगीवा० इति कण्ठं पूजयेत् । विश्व कर्मकन् इति विश्वकर्माणम् पूजयेत् ॥

अरणि का प्रबन्ध न हो तब सूखे गोवर तथा नारियल के छिलके को जलाकर अग्नि स्थापन करनी चाहिए । अग्नि स्थापन करने के पश्चात् अग्नि की रक्षार्थ समिधा लगाएं ॥

कुण्ड के अठारह संस्कार—ओंकार पूर्वक अवेक्षण, कुश के जल से प्रोक्षण सूत्र से आवेष्टित करना, कीलित करना, अग्नि जिह्वा की भावना करना, अग्न्याहरण आदि अठारह संस्कार होते हैं ।

अग्नि की सात जिह्वायें—विश्वमूर्ति, स्फुलिंगिनी, धूम्रवर्णा, मनोजवा, लोहितास्या, करालास्या तथा काली ये सात अग्नि जिह्वाएं हैं ।

अग्निवीज रं, शिव वीज शं से प्रोक्षण करके शिव शक्ति का ध्यान करना । इससे अभीष्ट सिद्धि प्राप्त होती है ।

अग्नि पूजन—हाथ में लाल फूल लेकर अग्निं का ध्यान करना ।

इष्टं शक्तिः स्वस्तिकाभीतिर्मुच्चै दोर्भिः धारयन्तं वरान्तम् । हेमा कल्पं पद्मसंस्थं त्रिनेत्रं ध्यायेद्बह्निं बद्धमौलिं जटाभिः ॥

अग्नि पूजन में—इस मंत्र का प्रयोग करें—पितृ पिंगल दह दह पच पच सर्वज्ञाज्ञापय स्वाहा ।

तीन पुष्पों द्वारा अग्नि को आसन दे—

१. आसनम्— त्वमादि सर्व भूतानां संसारार्णव तारकः ।
परम ज्योति रूपस्त्वमासनं सफली कुरु ॥

२. प्रार्थना— वैश्वानर नमस्तेऽस्तु नमस्ते हव्यवाहन ।
स्वागतं ते सुर श्रेष्ठ शान्तिं कुरु नमोऽस्तु ते ॥

३. पाद्यम्— नमस्ते भगवन्देव आपोनारायणात्मक ।
सर्वलोकहितार्थाय पाद्यं च प्रतिगृह्यताम् ॥

४. अर्घ्य— नारायण परं धाम ज्योतिरूप सनातन ।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं विश्वरूप नमोऽस्तु ते ॥

५. आचमनीयम्— जगदादित्यरूपेण प्रकाशयति यः सदा ।
तस्मै प्रकाशरूपाय नमस्ते जातवेदसे ॥

६. स्नानम्— धनंजय नमस्तेऽस्तु सर्वपाप प्रणाशन ।
स्नानीयं ते मया दत्तं सर्वकामार्थसिद्धये ॥

७. वस्त्रम्— हुताशन महावाहो देव देव सनातन ।
शरणं ते प्रयच्छामि देहि मे परमं पदम् ॥

८. अलंकारम्—ज्योतिषां ज्योति रूपस्त्वमनादि निधनाच्युत ।
मया दत्तमलंकारमलंकुरु नमोऽस्तु ते ॥

९. गन्ध— देवी देवाः मुदं यान्ति यस्य सम्यक् समागमात् ।
सर्व दोषोपशान्त्यर्थं गन्धोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥

१०. पुष्प— विष्णुस्त्वं हि ब्रह्मा च ज्योतिषां गतिरीश्वरम् ।
गृहाण पुष्पं देवेश सानुलेपं जगद् भवेत् ॥

११. धूप— देवतानां पितृणां च सुखमेकं सनातनम् ।
धूपोऽयं देव देवेश गृह्यतां मे धनंजय ॥

१२. दीप— त्वमेकः सर्व भूतेषु स्थावरेषु चरेषु च ।
परमात्मा पराकारः प्रदीपं प्रति गृह्यताम् ॥

१३. नैवेद्य—नमस्तेऽस्तु यज्ञपतये प्रभवे जात वेदसे ।
सर्व लोकहितार्थाय नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् ॥

१४. नमस्कार—हुताशन नमस्तुभ्यं नमस्ते रुक्मवाहन ।
लोकनाथ नमस्तेऽस्तु नमस्ते जातवेदसे ॥

---

१. अथ नवग्रहपूजनम्
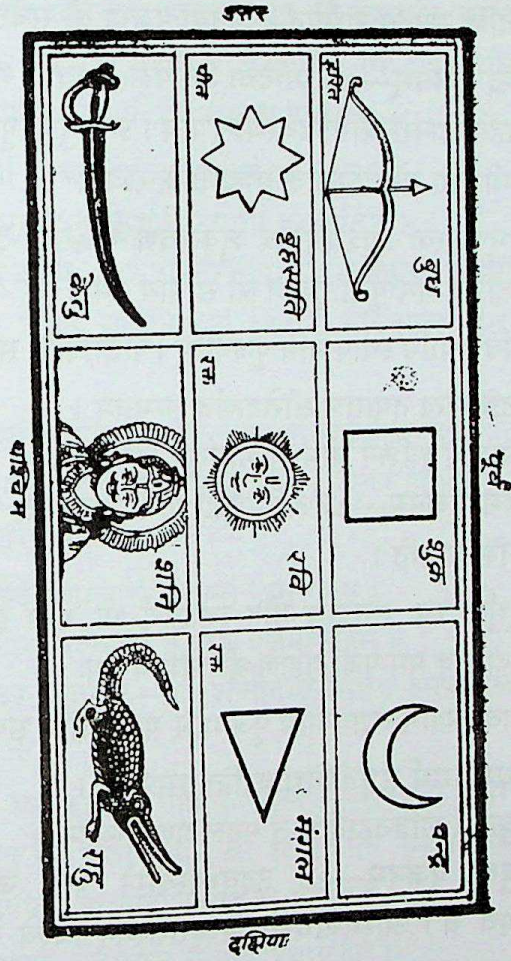
नवग्रह मण्डल पर सूर्यादि नवग्रहों का यथाविधिः आवाहन पूजन आदि करे ।

१. सूर्य पूजनम्—ॐ आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यञ्च । हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन ।

ॐ भूर्भुवः स्वः कलिंगदेशोद्भव काश्यपगोत्र रक्तवर्ण भो सूर्य इहागच्छ, इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदोभव, मम पूजां गृहाण श्री सूर्याय नमः ।

ॐ जपाकुसुम संकाशं काश्यपेय महाद्युतिम् ।
तमोऽरिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम् ॥

पाद्यादिभिः संपूज्य प्रार्थयेत्—अनया पूजया श्री सूर्यदेवता प्रीयताम् ॥

२. चन्द्र पूजनम्—ॐ इमम्देवा असपत्नꣳ सुवध्वं महते क्षत्राय महते ज्येष्ठयाय महते जानराज्यायेन्द्रियस्येन्द्रियाय । इमममुष्य पुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै विश एष वोमीराजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानाꣳराजा ।

ॐ भूर्भुवः स्वः आत्रेयसगोत्र शुक्लवर्ण भो सोम इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदोभव मम पूजां गृहाण श्री सोमाय नमः ।

सोममावाहयामि स्थापयामि पूजयामि । पाद्यादिभिः संपूज्य प्रार्थयेत्—

दधिशंख तुषाराभं क्षीरोदार्णव सम्भवम् ।
नमामि शशिनं सोमं शम्भोर्मुकुट भूषणम् ॥

३. भौम पूजनम्—ॐ अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम् । अपाꣳ रेताꣳसिजिन्वति ।

ॐ भूर्भुवः स्वः भारद्वाज गोत्र रक्तवर्ण भो भौम इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदो भव मम पूजां गृहाण श्री भौमाय नमः ।

भौममावाहयामि स्थापयामि पूजयामि, पाद्यादिभिः संपूज्य प्रार्थयेत्—

धरणीगर्भ संभूतं विद्युत्कान्ति समप्रभम् ।
कुमारं शक्तिहस्तं च तं मङ्गलं प्रणमाम्यहम् ॥

४. बुध पूजनम्—ॐ उद्वुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहित्वमिष्टापूर्ते सꣳसृजेथा मयं च । अस्मिन्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत ।

ॐ भूर्भुवः स्वः आत्रेयसगोत्र हरितवर्ण भो वुध इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदोभव मम पूजां गृहाण श्री बुधाय नमः । बुधमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि—पाद्यादिभिः संपूज्य प्रार्थयेत्—

प्रियङ्गु कलिका श्यामं रूपेणाप्रतिमं बुधम् ।
सौम्यं सौम्यगुणोपेतं तं वुधं प्रणमाम्यहम् ।

५. गुरू पूजनम्—ॐ वृहस्ते अतियदर्य्यो अर्हाद्द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु । यद्दीयच्छ्वस ऋत प्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम् ।

ॐ भूर्भुवः स्वः आंगिरस गोत्र पीतवर्ण भो वृहस्पतिः इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदोभव मम पूजां गृहाण श्री वृहस्पतये नमः । वृहस्पतिमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि—पाद्यादिभिः संपूज्य प्रार्थयेत्—

देवानां च ऋषीणां च गुरुं कांचन सन्निभम् ।
बुद्धिभूतं त्रिलोकेशं तं नमामि वृहस्पतिम् ॥

६. शुक्र पूजनम्—ॐ अन्नात्परिस्नुतो रसं ब्रह्मणा व्यपिवत क्षत्रं पयः सोमं प्रजापतिः । ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳशुक्रमन्धस इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भार्गवगोत्र शुक्लवर्ण भो शुक्र इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदोभव मम पूजां गृहाण श्रीशुक्राय नमः । शुक्रमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि पाद्यादिभिः संपूज्य प्रार्थयेत्—

हेमकुन्द मृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम् ।
सर्वशास्त्र प्रवक्तारं तं शुक्रं प्रणमाम्यहम् ॥

७. शैनश्चर पूजनम्—ॐ शन्नोदेवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंय्योरभिस्त्रवन्तु नः ।

ॐ भूर्भुवः स्वः काश्यप गोत्र कृष्णवर्ण भो शनैश्चर इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदोभव मम पूजां गृहाण श्री शनैश्चराय नमः । शनिमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि—पाद्यादिभिः संपूज्य प्रार्थयेत्—

नीलाम्वुज समाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम् ।
छाया मार्तण्डसंभूतं तं नमामि शनैश्चरम् ।

८. राहु पूजनम्—ॐ कयानश्चित्र आभुवदूती सदावृधा सखा । कयाश्चिचष्ठयावृता ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः पैठीनसगोत्र कृष्णवर्ण भो राहो इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदोभव मम पूजां गृहाण श्री राहवे नमः । राहुं आवाहयामि स्थापयामि पूजयामि, पाद्यादिभिः संपूज्य प्रार्थयेत्—

अर्द्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्य विमर्दनम् ।
सिंहिकागर्भ संभूतं तं राहुं प्रणमाम्यहम् ॥

केतु पूजनम्—ॐ केतुं कृण्वन्न केतवे पेशोर्मर्या अपेशसे समुषद्भिरजायथाः ।

ॐ भूर्भुवः स्वः जैमिनिगोत्र धूम्रवर्ण भो केतो इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदोभव मम पूजां गृहाण श्री केतवे नमः। केतुमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि पाद्यादिभिः संपूज्य प्रार्थयेत्—

पलाशपुष्प संकाशं तारकाग्रहमस्तकम् ।
रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं तं केतुं प्राणमाम्यहम् ॥

प्रार्थना—

पद्मासनः-पद्मकरो द्विबाहुः पद्मद्युतिसप्ततुरंगवाहनः ।
दिवाकरो लोकगुरुः किरीटी मयि प्रसादं विदधातु देवः ॥१ ॥
श्वेताम्बरः श्वेतविभूषणश्च श्वेतद्युति र्दण्डधरो द्विबाहुः ।
चन्द्रोऽमृतात्मा वरदः किरीटी श्रेयांसि मह्यं विदधातु देवः ॥२ ॥
रक्ताम्बरो रक्त वपुः किरीटी चतुर्भुजो मेषगमो गदाभृत् ।
धरासुतः शक्तिधरश्च शूली सदा मम स्याद् वरदः प्रशान्तः ॥३ ॥
पीताम्बरः पीतवपुः किरीटी चतुर्भुजो दण्डधरश्च हारी ।
चर्मासिधृत्सोमसुतः सदा मे सिंहाधिरूढो वरदो वुधोऽस्तु ॥४ ॥
पीताम्बरः पीतवपुः किरीटी चतुर्भुजो दैवगुरु प्रशान्तः ।
दधाति दण्डं च कमण्डुलञ्च तथाऽक्षसूत्रं वरदोऽस्तु मह्यम् ॥५ ॥
श्वेताम्बरः श्वेतवपुः किरीटी चतुर्भुजो दैत्यगुरु प्रशान्तः ।
तथाऽक्षसूत्रं च कमण्डुलञ्च दण्डं च बिभ्रद्वरदोऽस्तु मह्यम् ॥६ ॥
नीलद्युतिःशूलधरः किरीटी गृध्र स्थितस्त्रासकरो धनुष्मान् ।
चतुर्भुजः सूर्यसुतः प्रशान्तः सदाऽस्तु मह्यम् वरदोमन्दगामी ॥७ ॥
नीलाम्बरो नीलवपुः किरीटी करालवक्त्रः करवालशूली ।
चतुर्भुजश्चर्मधरश्च राहूः सिंहाधिरूढो वरदोऽस्तु मह्यम् ॥८ ॥
धूम्रो द्विवाहुर्वरदो गदाभृत गृध्रासनस्थो विकृताननश्च ।
किरीटकेयूर विभूषिताङ्गः सदाऽस्तु मे केतुगणः प्रशान्तः ॥९ ॥

ब्रह्मा मुरारिः त्रिपुरान्तकारी, भानुः शशि भूमिसुतो वुधश्च ।
गुरुश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः, सर्वे ग्रहाः शान्तिकराः भवन्तु ॥

२. अथ अधिदेवतापूजनम्

ग्रहदक्षिण पार्श्वे अधिदेवतास्थापनम्—

१. सूर्य-दक्षिण-पार्श्वे ईश्वरम्—ॐ त्र्यम्वकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः ईश्वर इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदो भव मम पूजां गृहाण श्री ईश्वराय नमः । ईश्वरं आवाहयामि स्थापयामि पूजयामि ।

२. सोम दक्षिण पार्श्वे उमाम्—ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्या वहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषाण मुम्म इषाण सर्बलोकम्म इषाण ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः उमे इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदो भव मम पूजां गृहाण श्री उमायै नमः । उमामावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ।

३. भौम दक्षिण पार्श्वे स्कन्दम्—ॐ यद्क्रन्द प्रथमञ्जायमान उद्यन्त्समुद्रा दुतवा पुरीषात् । श्येनस्य पक्षा हरिणस्य वाहू उपस्तुत्यम्महि जातन्ते अर्वन् ।

ॐ भूर्भुवः स्वः भो स्कन्द इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदो भव मम पूजां गृहाण श्री स्कन्दाय नमः । स्कन्दमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ।

४. वुध दक्षिण पार्श्वे—विष्णुं—ॐ विष्णो रराटमसि विष्णोश्नप्त्रेस्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोऽसि वैष्णवमसि विष्णवे त्वा ।

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णो इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदोभव मम पूजां गृहाण श्री विष्णवे नमः । विष्णुमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ।

५. गुरु-दक्षिण-पार्श्वे—ब्रह्माणम्—ॐ ब्रह्मजज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद् विसीमतः सुरुचो वेन आवः । स वुध्न्या उपमा अस्यविष्ठा सतश्च योनि मसतश्च विवः ।

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मन् इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदो भव मम पूजां गृहाण श्री ब्रह्मणे नमः । ब्रह्माणं आवाहयामि स्थापयामि पूजयामि ।

६. शुक्र दक्षिण पार्श्वे इन्द्रम्—ॐ सजोषा इन्द्रसगणो मरुद्भिः सोमम्पिव वृत्रहा शूरविद्वान् । जहि शत्रूं -२ रपमृधो नुदस्वाथाभयङ्कृणुहि विश्वतो नः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भो इन्द्र इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदोभव मम पूजां गृहाण श्री इन्द्राय नमः । इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ।

७. शनि दक्षिण पार्श्वे यमम्—ॐ यमाय त्वांगिरस्वते पितृमते स्वाहा । स्वाहा धर्माय स्वाहा धर्मपित्रे ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः यम इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदो भव मम पूजां गृहाण श्री यमाय नमः । यममावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ॥

८. राहु-दक्षिण-पार्श्वे कालम्—ॐ कार्षिरसि समुद्रस्य त्वाक्षित्या उन्नयामि । समापो अद्भिरग्मत समोषधीभिरौषधीः ।

ॐ भूर्भुवः स्वः भो काल इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदोभव मम पूजां गृहाण श्री कालाय नमः । कालमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ।

९. केतुदक्षिण-पार्श्वे चित्रगुप्तम्—ॐ चित्रावसो स्वस्ति ते पारमशीय ।

ॐ भूर्भुवः स्वः भो चित्रगुप्त इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदो भव मम पूजां गृहाण श्री चित्रगुप्ताय नमः । चित्रगुप्तमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ।

इति अधिदेवता पूजनम्

---

३. प्रत्यधिदेवता स्थापनम्

(ग्रहवाम पार्श्वे)

१. ॐ अग्नि दूतं पुरोदधे हव्यवाहमुपब्रुवे । देवां -२ आसादयादिह ॥ अग्नये नमः अग्निं० ।

२. ॐ आपोहिष्ठा मयोभुवस्तान ऊर्ज्जे दधातन । महेरणाय चक्षसे । अद्भ्यो नमः अप० ।

३. ॐ स्योना पृथिवीनो भवानृक्षरा निवेशनी। यच्छानः शर्मसप्रथाः। पृथिव्यै नमः पृथिवीं०।

४. ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधेपदम्। समूढमस्य पा॰सुरे॥ विष्णवे नमः विष्णुं०।

५. ॐ इन्द्र आसान्नेता वृहस्पतिर्दक्षिणा यज्ञं पुर एतु सोमः। देवसेना मभिभञ्जतीनां जयन्तीनां मरुतो यन्त्वग्रम्॥ इन्द्राय नमः इन्द्रं०।

६. ॐ अदित्यै रास्ना सीन्द्राण्या उष्णीषः। पूषासि धर्माय दीष्व॥ इन्द्राण्यै नमः इन्द्राणीम्०।

७. ॐ प्रजापते नत्वदेतान्यन्यो विश्वारूपणि परिता वभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वय॰स्यामपतयो रयीणाम्॥ प्रजापतये नमः प्रजापतिं०।

८. ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवी मनु। ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः। सर्पेभ्यो नमः सर्पान्०।

९. ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद् विसीमतः सुरुचो वेन आवः। सवुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिः-मसतश्च विवः॥ ब्रह्मणे नमः। ब्रह्माणम्०।

४. पंच लोकपाल पूजनम्

१. राहोरुत्तरतः गणपतिम्—ॐ गणानांत्वा गणपति॰ हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपति॰ हवामहे निधीनां त्वा निधिपति॰ हवामहे। वसोमम आहम जानि गर्मधमात्वम जासि गर्भधम्।

ॐ भूर्भुवः स्वः भो गणपते इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदो भव मम पूजां गृहाण श्री गणपतये नमः। गणपतिमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि।

२. शनेरुत्तरतः दुर्गाम्—ॐ अम्बे अम्बिके अम्बालिके न मानयति कश्चन। ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पील वासिनीम्।

ॐ भूर्भुवः स्वः भो दुर्गे इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदो भव मम पूजां गृहाण श्री दुर्गायै नमः। दुर्गामावाहयामि स्थापयामि पूजयामि।

३. रवेरुत्तरतः वायुम्—ॐ आनो नियुद्भिः शतिनिभिरध्वर॰

सहस्त्रिणीभि रुपयाहि यज्ञम्। वायो अस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पातः स्वस्तिभिः सदा नः।

ॐ भूर्भुवः स्वः वायो इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदो भव मम पूजां गृहाण श्री वायवे नमः। वायुमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि।

४. राहोर्दक्षिण पार्श्वे आकाशम्—ॐ घृतं घृतपावानः पिवतवसाम्बसा पावानः पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा दिशः प्रदिशः आदिशो विदिशः उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भो आकाश इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदो भव मम पूजां गृहाण श्री आकाशाय नमः। आकाशमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि।

५. केतोर्दक्षिणे पार्श्वे अश्विनौ—ॐ यावाङ् कशामधुमत्यश्विना सुनृतावती। तया यज्ञम्मिमिक्षतम्।

ॐ भूर्भुवः स्वः भो अश्विनौ इहागच्छताम् इह तिष्ठताम् मम पूजां गृहण्ताम् श्री अविश्वभ्यां नमः। अश्विनौ आवाहयामि स्थापयामि पूजयामि॥

इति पंचलोकपाल पूजनम्

५. अथ दशदिग्पाल पूजनम्

अथ प्रागादितः पीठसमन्तात् दशदिग्पालान् आवाहयेत्।

पूर्वादि दिशा से लेकर दश दिशाओं में उन-उन देवताओं का पूजन करें।

१. पूर्वे इन्द्रम्—ॐ त्रातारमिन्द्रमवितार मिन्द्र॑ँ हवे-हवे सुहव॑ँ शूरमिन्द्रम्। ह्वयामि शक्रम्पुरुहूतमिन्द्र॑ँ स्वस्तिनो मघवा धात्विन्द्रः।

भो इन्द्र इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदो भव मम पूजां गृहाण श्री इन्द्राय नमः।

२. आग्नेय्याम् अग्निम्—ॐ त्वन्नो अग्ने तव देव पायुभिर्मघोनो रक्षतन्वश्च वन्द्य। त्राता तोकस्य तनये गवामस्य निमेष॑ँ रक्षमानस्तव व्रते।

भो अग्ने इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदो भव मम पूजां गृहाण श्री अग्नये नमः।

३. दक्षिणे यमम्—ॐ यमाय त्वांगिरस्वते पितृमते स्वाहा। धर्माय स्वाहा धर्म पित्रे ॥

भो यम इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदो भव मम पूजां गृहाण श्री यमाय नमः।

४. नैर्ऋत्याम् नैर्ऋतिम्—ॐ असुन्वन्तमयजमानमिच्छस्तेनस्येत्या मन्विहितस्करस्य। अन्यमस्मदिच्छसात इत्या नमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु ॥

ॐ निर्ऋति इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदो भव मम पूजां गृहाण श्री निर्ऋतये नमः।

५. पश्चिमे वरुणम्—ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशस्ते यजमानो हविर्भिः। अहेडमानो वरुणेह वोध्युरुश ॱ समान आयुः प्रमोषीः।

ॐ वरुण इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदो भव मम पूजां गृहाण श्री वरुणाय नमः।

६. वायव्याम् वायुम्—ॐ आनो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरम् सहस्रिणीभि रुपयाहि यज्ञम्। वायो अस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।

भो वायो इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदो भव मम पूजां गृहाण श्री वायवे नमः।

७. उत्तरे सोमम्—ॐ वयॱसोमव्रते तव मनस्तनूषु विभ्रतः। प्रजावन्तः सचेमहि।

भो सोम इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदोभव मम पूजां गृहाण श्री सोमाय नमः।

८. ऐशान्याम् ईश्वरम्—ॐ तमीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पः तिन्धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम्। पूषा नो यथा वेदसा मसद् वृधे रक्षिता पायु रदब्धः स्वस्तये।

भो ईश्वर इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदो भव मम पूजां गृहाण श्री ईश्वराय नमः।

९. पूर्वेशानयोर्मध्ये ब्रह्माणम्—ॐ अस्मे रुद्रा मेहना पर्वतासो वृत्रहत्ये भरहूतौ सजोषाः । यः श ७ सते स्तुवते धायिपज्र इन्द्रज्येष्ठा अस्मां -२ अवन्तु देवाः ।

भो ब्रह्मन् इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदो भव मम पूजां गृहाण श्री ब्रह्मणे नमः ।

१०. निर्ऋति—पश्चिमयोर्मध्ये अनन्तम्—ॐ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी यच्छानः शर्मसप्रथाः ।

भो अनन्त इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदो भव मम पूजां गृहाण श्री अनन्ताय नमः ॥

इस प्रकार दशदिग्पालों का स्थापन करके—

ॐ मनो जूतिर्जुषता माज्यस्य वृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनो त्वरिष्टं यज्ञ७ समिमं दधातु । विश्वे देवा स इह मा दयन्ता मो ३ म्प्रतिष्ठ ।

ॐ भूर्भुवः स्वः आदित्यादि नवग्रहाः साङ्गाः सपरिवाराः सवाहनाः अधिदेवताः प्रत्यधिदेवताः विनायकादि पञ्च लोकपालाः इन्द्रादि दश लोकपालाः सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवन्तु । इत गन्धाक्षतान् क्षिपेत् ।

प्रार्थना— ॐ मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वर ।
यत्पूजितं मया देव परिपूर्णं तदस्तु मे ॥

पुष्पांजलि—ॐ ब्रह्ममुरारिस्त्रिपुरान्तकारी भानुः शशीभूमिसुतो वुधश्च । गुरुश्च शुक्रः शनिः राहुकेतवः सर्वे ग्रहाः शान्तिकराः भवन्तु ॥

सूर्यः सौर्यमथेन्दुरुच्चपदवीं सन्मङ्गलं मङ्गलः ।

सद् बुद्धिं च वुधो गुरुश्च गुरुतां शुक्रं सुखं शं शनिः ।

राहुःबाहुवलं करोतु सततं केतुः कुलस्योन्नतिम्,
नित्यं प्रीतिकराः भवन्तु मम ते सर्वेऽनुकूलाः ग्रहाः ॥
अनया पूजया आवाहिताः देवाः प्रीयन्ताम् ॥

ग्रहस्येशानदिग्विभागे कलशस्थापन विधिना रुद्रकलशं स्थापयेत् ॥

अथ योगिनी—पूजनम्

पूर्व

॥ इदं योगिनीयन्त्रं कात्यायनीयानां प्राचीन पद्धत्यनुसारेण लिख्यते ॥

ई. — अ

ॐ दिव्ययोगिन्यै नमः १	ॐ महायोगिन्यै नमः २	ॐ सिद्धियोगिन्यै नमः ३	ॐ गणेश्वर्यै नमः ४	ॐ प्रेताक्ष्यै नमः ५	ॐ डाकिन्यै नमः ६	ॐ काल्यै नमः ७	ॐ कालरात्र्यै नमः ८
ॐ निशाचर्यै नमः ९	ॐ हुंकार्यै नमः १०	ॐ सिद्धिवेताल्यै नमः ११	ॐ ह्रींकार्यै नमः १२	ॐ भूतडामर्यै नमः १३	ॐ ऊर्ध्वकेश्यै नमः १४	ॐ विरूपाक्ष्यै नमः १५	ॐ शुष्काङ्ग्यै नमः १६
ॐ नरभोजिन्यै नमः १७	ॐ फट्कार्यै नमः १८	ॐ वीरभद्रायै नमः १९	ॐ धूम्राक्ष्यै नमः २०	ॐ कालप्रियायै नमः २१	ॐ राक्षस्यै नमः २२	ॐ घोररक्ताक्ष्यै नमः २३	ॐ विश्वरूपिण्यै नमः २४
ॐ भयंकर्यै नमः २५	ॐ विशालाक्ष्यै नमः २६	ॐ कौमार्यै नमः २७	ॐ चण्ड्यै नमः २८	ॐ वाराह्यै नमः २९	ॐ मुण्डधारिण्यै नमः ३०	ॐ भैरव्यै नमः ३१	ॐ चक्रिण्यै नमः ३२
ॐ क्रोधायै नमः ३३	ॐ दुर्मुख्यै नमः ३४	ॐ प्रेतवाहिन्यै नमः ३५	ॐ कुरंग्यै नमः ३६	ॐ प्रलम्बोष्ठ्यै नमः ३७	ॐ मालिन्यै नमः ३८	ॐ मन्त्रयोगिन्यै नमः ३९	ॐ कालाग्न्यै नमः ४०
ॐ मोहिन्यै नमः ४१	ॐ चक्रायै नमः ४२	ॐ कुण्डलिन्यै नमः ४३	ॐ वालस्यै नमः ४४	ॐ कौमार्यै नमः ४५	ॐ यमदूत्यै नमः ४६	ॐ करालिन्यै नमः ४७	ॐ कौशिक्यै नमः ४८
ॐ यक्षिण्यै नमः ४९	ॐ भक्षिण्यै नमः ५०	ॐ कुमारिकायै नमः ५१	ॐ यन्त्रवाहिन्यै नमः ५२	ॐ विशालाक्ष्यै नमः ५३	ॐ कामुक्यै नमः ५४	ॐ व्याघ्र्यै नमः ५५	ॐ राक्षस्यै नमः ५६
ॐ प्रेतभक्षिण्यै नमः ५७	ॐ धूर्जट्यै नमः ५८	ॐ विकटायै नमः ५९	ॐ घोरायै नमः ६०	ॐ कपालिन्यै नमः ६१	ॐ विमलायै नमः ६२	ॐ मालायै नमः ६३	ॐ सर्वसिद्धायै नमः ६४

उ. — द

वा. — प. — नै.

(आग्नेय कोणे)

मण्डपस्याग्नेये हस्तमात्रे हस्तोन्नते प्रादेशोन्नते वा वप्रत्रययुते रक्तवस्त्राच्छादिते पीठे चतुर्धा विभाजिते पश्चिमतो भागत्रये पूर्वापरं उदग्दक्षिणं च नव-नव रेखा करणेन चतुः षष्ठिकोष्ठानि सम्पाद्य तेषु प्रतिकोष्ठं एकैकं त्र्यस्रं सम्पाद्य-इत्येवं चतुःषष्टित्र्यस्राणि संपादयेत। तेषु च चतुःषष्टि योगिनीः वक्ष्यमाण प्रकारेण आवाहयेत्। अवशिष्टे पूर्वभागे त्रेधा विभक्ते त्रीणि त्र्यस्राणि प्राङ्मुखानि विलिख्य तेषु स्वस्तिवाचन विधिना मन्त्रावृत्त्या

कलशत्रयं संस्थाप्य तासु महाकाली—महालक्ष्मी महासरस्वतीः उदक्संस्था आवाह्य पूजयेत् ।

योगिनी वेद्यां पश्चादुपविश्य देशकालौ स्मृत्वा कर्मणः समृद्धये महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती सहितानां चतुःषष्टि योगिनीनां पूजनं करिष्ये—इति संकल्प्य महाकाल्यादि प्रतिमासु योगिनी प्रतिमासु च आवाहनादिकं कुर्यात् । प्रतिमाऽभावे तण्डुलपुञ्च-पूगीफलादौ आवाहनम्—

१. महाकाली—ॐ अम्बे अम्बिके अम्बालिके न मानयति कश्चन । ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकाम्काम्पीलवासिनीम् ॥ महाकाल्यै नमः ।

२. महालक्ष्मी—ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषाणा मुम्म इषाण सर्वलोकम्म इषाण ॥ महालक्ष्म्यै नमः ।

३. महा सरस्वती—ॐ पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती । यज्ञं वष्टुधियावसुः ॥ महासरस्वत्यै नमः ॥

(इमाः मन्त्राः सर्वेषूपचारेषु महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-पूजने आवर्तनीयाः ॥)

प्रथमपंक्तौ

१. ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियं जिन्वमवसे हूमहे वयम् । पूषाणो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥ दिव्ययोगिनीमावाहयामि स्थापयामि, दिव्ययोगिन्यै नमः ।

२. ॐ आब्रह्मन् ब्रह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामाराष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोडानड्वानाशुःसप्ति पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठा सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे निकामे न पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो न कल्पताम् ॥

महायोगिनीमावाहयामि० ।

३. ॐ महां -२ इन्द्रो वज्रहस्तः षोडशी शर्मयच्छतु । हन्तु पाप्मानं योऽस्मान् द्वेष्टि । उपयाम गृहीतोऽसि महेन्द्राय त्वेष ते योनि महेन्द्राय त्वा ।

सिद्ध योगिनीमावाहयामि० ।

४. ॐ सद्यो जातो व्यमिमीत यज्ञमग्नि र्देवानामभवत् पुरोगाः । अस्य होतुः प्रदिश्यृतस्य वाचि स्वाहा कृतं हविरदन्तु देवाः ॥१ ।१० ।११

गणैश्वर्यीमावाहयामि० ।

५. ॐ आदित्यं गर्भं पयसा समङ्धिसहस्त्रस्य प्रतिमां विश्वरूपम् । परिवृङ्धि हरसामाभिम ० स्था शतायुषं कृणुहि चीयमानः ।

प्रेताक्षीमावाहयामि० ।

६. ॐ स्वर्णघर्मः स्वाहा स्वर्णार्कः स्वाहा स्वर्णशुक्रः स्वाहा स्वर्ण ज्योतिः स्वाहा स्वर्ण सूर्य्य स्वाहा ॥

डाकिनीमावाहयामि० ।

७. ॐ सत्यञ्चमे श्रद्धा च मे जगच्च मे धनच्च मे विश्वच्च मे महश्च मे क्रीडा च मे मोदश्च मे जातश्च मे जनिष्यमाणश्च मे सूक्तश्च मे सुकृतञ्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥

कालीमावाहयामि० ।

८. ॐ भायैदार्वाहारम्प्रभाया अग्न्येधं ब्रघ्नस्य विष्टपायाभिषेक्तारं वर्षिष्ठाय नाकाय परिवेष्टारं देव लोकाय पेशितारं मनुष्यलोकाय प्रकरितारं सर्वेभ्योः लोकेभ्यः उपसेक्तारमव ऋत्यै वधायोपमन्थितारं मेधाय वासः पल्पूलीं प्रकामाय रजयित्रीम् ॥

कालरात्रीमावाहयामि० ।

अथ द्वितीय पंक्तौ

९. जिह्वा मे भद्रं वाङ्माहो मनो मन्यु स्वराड्भामः । मोदाः प्रमोदाः अंगुलीरङ्गानि मित्रम्मे सहः ॥

निशाचरीमावाहयामि० ।

१०. ॐ हिंकाराय स्वाहा हिङ्कृताय स्वाहा क्रन्दते स्वाहाऽवक्रन्दाय स्वाहा प्रोथते स्वाहा प्र प्रोथाय स्वाहा गन्धाय स्वाहा घ्राताय स्वाहा निविष्टाय स्वाहोपविष्टाय स्वाहा सन्दिताय स्वाहा वल्गते स्वाहासीनाय स्वाहा शयनाय स्वाहा स्वपते स्वाहा जाग्रते स्वाहा कूजते स्वाहा प्रबुद्धाय स्वाहा विजृम्भमाणाय स्वाहा विचृताय स्वाहा सं हानाय स्वाहोपस्थिताय स्वाहायनाय स्वाहा प्रायणाय स्वाहा ॥

हुंकारीमावाहयामि० ।

११. ॐ अग्निश्च मे घर्म्मश्च मे ऽर्कश्च मे सूर्य्यश्चमे प्राणश्च मेऽश्वमेधश्च मे पृथिवी च मे दितिश्च मेऽदितिश्च मे द्यौश्च मेऽङ्गुलयः शक्वरयो दिशश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥

रुद्रवैतालीमावाहयामि० ।

१२. ॐ पूषन् तव व्रते वयन्नरिष्येम कदाचन । स्तोतारस्त इह स्मसि ॥

खर्परीमावाहयामि० ।

१३. ॐ वेद्या वेदि समाप्यते बर्हिषा बर्हिरिन्द्रियम् । यूपेन यूप आप्यते प्रणीतो अग्निरग्निना ।

भूतयामिनीमावाहयामि० ।

१४. ॐ अयमग्नि सहस्रिणो वाजस्य शतिनस्पतिः । मूर्द्धा कवी रयिणाम् ।

ऊर्ध्वकेशीमावाहयामि० ।

१५. ॐ इमम्मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय । त्वामवस्युराचके ॥

विरूपाक्षीमावाहयामि० ।

१६. ॐ यमायत्वा मखायत्वा सूर्य्यस्यत्वा तपसे । देवस्त्वा सविता मद्ध्वानक्तुपृथिव्या स ꣳ स्पृशस्पाहि । अर्चिरसि शोचीरसि तपोऽसि ॥

शुष्कांगीमावाहयामि० ।

अथ तृतीय पंक्तौ

१७. ॐ यमेन दत्तं त्रित एन मायुनगिन्द्र एनं प्रथमोऽध्यतिष्ठत्। गन्धर्वोऽस्य रशनामगृभ्णात् सूरादश्व वसवो निरतष्ट ॥

नरभोजनीमावाहयामि० ।

१८. मित्रस्य चर्षणी धृतोर्वो देवस्य सानसि । द्युम्नञ्चित्र श्रवस्तमम् ॥

फेत्कारीमावाहयामि० ।

१९. ॐ अग्ने ब्रह्म गृभ्णीष्व धरुणमस्यन्तरिक्षं दृꣳ ह ब्रह्म वनित्वा क्षत्रवनि सजातवन्युपदध्नामि भ्रातृव्यस्य वधाय ॥ धर्त्रमसि दिवं दृꣳ ह ब्रह्मवनि त्वा क्षत्रवनि सजात वन्युपदधामि भ्रातृव्यस्य वधाय । विश्वाभ्यस्त्वाशाभ्य उपदधामि चितस्थोर्ध्वचितो भृगूणामङ्गि रसान्तपसा तप्यध्वम् ॥

वीरभद्राक्षीमावाहयामि० ।

२०. ॐ भगप्रणेतर्भगसत्यराधो भगेमान्धियमुदवाददन्नः । भगप्र नो जनय गोभिरश्वैर्भग प्र नृभिर्नृवन्त नः स्याम ।

धूम्राक्षीमावाहयामि० ।

२१. ॐ सुपर्णोसि गरुत्मांस्त्रिवृते शिरो गायत्रञ्चक्षुर्वृहद्रथन्तरे पक्षौ । स्तोम आत्मा छन्दाꣳ स्यङ्गानि यजूंषि नाम । साम ते तनूर्वामदेव्यं यज्ञायज्ञियं पुच्छं धिष्ण्या शफाः सुपर्णोऽसि गरुत्मान् दिवङ्गच्छ स्वः पत ॥

कलहप्रियामावाहयामि० ।

२२. पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः पितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः प्रपितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः । अक्षन् पितरो ऽमीमदन्त पितरो ऽती तृपन्त पितरः पितरः शुन्धध्वम् ॥

राक्षसीमावाहयामि० ।

२३. ॐ या ते रुद्र शिवा तनूरघोरा पाप काशिनी । तयानस्तन्वा शन्तमयागिरिशन्ताभिचाकशीहि ॥

घोररक्ताक्षीमावाहयामि० ।

२४. ॐ वरुणः प्रविता भुवन् मित्रो विश्वाभिरूतिभिः। करतान्न सुराधसः।

विश्वरूपाक्षीमावाहयामि० ।

अथ चतुर्थपंक्तौ

२५. ॐ हᳬस शुचिषद् वसुरन्तरिक्ष ᳬ सद्धोता वेदिषदतिथि र्दुरोणसत्। नृषद्वरसदृत सद्व्योम सदब्जागोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतम्बृहत् ॥

भयङ्करीमावाहयामि० ।

२६. ॐ सु सन्दृशन्त्वा वयं मघवन् वन्दिषीमहि। प्र नूनं पूर्ण-बन्धुरं स्तुतो यासि वशां -२ अनुयोजान् विन्द्रते हरी ॥

चण्डिकामावाहयामि० ।

२७. ॐ प्रतिपदसि प्रतिपदे त्वानुपदस्यनुपदे त्वा सम्पदसि सम्पदे त्वा तेजोऽसि तेजसे त्वा ॥

वीरकौमारीमावाहयामि० ।

२८. ॐ देवीरापो अपान्नपाद्यो व ऊर्मिर्हविष्यः इन्द्रियावान्मदिन्तमः। तन्देवेभ्यो देवत्रादत्तशुक्रपेभ्यो येषाम्भागस्थ स्वाहा। ६ ।२७

वाराहीमावाहयामि० ।

२९. ॐ देवीर्द्वारो अश्विना भिषजेन्द्रे सरस्वती। प्राणं न वीर्यं नसि द्वारो दधुरिन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज। २१ ।४९

मुण्डधारिणीमावाहयामि० ।

३०. ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्या वहो रात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्। इष्णन्निषाणामुम्म इषाण सर्व लोकम्म इषाण ॥

भैरवीमावाहयामि० ।

३१. ॐ भुवो यज्ञस्य रजसश्च नेता यत्रा नियुद्भिः सचसे शिवाभिः। दिवि मूर्द्धानं दधिषे स्वर्षां जिह्वामग्ने चकृषे हव्यवाहम् ॥१३ ।१५

चक्रपाणीमावाहयामि० ।

३२. ॐ कदाचनस्तरीरसि नेन्द्र सश्चसिदाशुषे। उपोपेन्नु मघवन् भूय इन्नु ते दानन्देवस्य पृच्यते ॥३ ।३४

त्रिपुरान्तकामावहयामि०।

अथ पंचम पंक्तौ

३३. ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयामदेवा भद्रम्पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशे महिदेवहितं यदायुः॥

भैरवध्वंसिनीमावाहयामि०।

३४. ॐ इषेत्वोर्ज्जेत्वा वायवस्थ देवो वःसविता प्रार्पयतु श्रेष्ठ तमाय कर्मण आप्यायद्ध्वमघ्न्या इन्द्राय भागम्प्रजावतीरनमीवा अयक्ष्मा मावस्तेन ईशतमाघशꣳ सोध्रुवा अस्मिन् गोपतौ स्यात् बह्वीर्यजमानस्य पशून्पाहि॥

दुर्मुखीमावाहयामि०।

३५. ॐ देवीद्यावा पृथिवी मखस्य वामद्य शिरो राद्ध्यासन्देहयजने पृथिव्याः। मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे॥

प्रेतवाहिनीमावाहयामि०।

३६. ॐ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद् भद्रं तन्न आसुव॥

खट्वाङ्गीमावाहयामि०।

३७. ॐ असुन्वन्त मयजमान मिच्छस्तेनस्येत्या मन्विहि तस्करस्य। अन्यमस्मदिच्छसात इत्या नमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु॥

दीर्घलम्वोष्टीमावाहयामि०।

३८. ॐ अग्निश्च म आपश्चमे वीरुधश्चम ओषधयश्चमे कृष्ट पच्याश्चमे कृष्टपच्याश्च मे ग्राम्याश्चमे पशवः आरण्याश्च वित्तञ्च मे वित्तिश्चमे भूतञ्चमे भूमिश्चमे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥

मालिनीमावाहयामि०।

३९. ॐ बह्वीनाम्पिता बहुरस्य पुत्रश्चिश्चाकृणोति समनावगत्य। इषुधिसङ्का पृतनाश्च सर्वाः पृष्ठे निनद्धो जयति प्रसूतः॥

मन्त्रयोगिनीमावाहयामि०।

४०. ॐ नमस्तेरुद्रमन्यव उतोत इषवे नमः । बाहुभ्या मुतते नमः ॥

कालाग्निग्रहणीमावाहयामि० ।

अथ षष्ठ पंक्तौ

४१. ॐ ऋतञ्चमेऽमृतञ्च मे ऽयक्ष्मञ्चमेऽनामयच्च मे जीवातुश्च मे दीर्घायुत्वञ्चमेऽनमित्रञ्चमेऽभयञ्चमे सुखञ्चमे शयनञ्च मे सूषाश्चमे सुदिनञ्चमे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥१८ ।६

चक्रीमावाहयामि० ।

४२. ॐ ते आचरन्ती समनेव योषा मातेव पुत्रम्बिभृतामुपस्थे । अपशत्रून् विध्यता ᳪ सम्विदाने आत्नो इमे विष्फुरन्ती अमित्रान् ॥२९ ।४१

कंकालीमावाहयामि० ।

४३. ॐ वेद्या वेदि समाप्यते बर्हिषा बर्हिरिन्द्रियम् । यूपेन यूप आप्यते प्रणीतो अग्निरग्निना ॥१९ ।१७

भुवनेश्वरीमावाहयामि० ।

४४. ॐ पावकाः नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवति । यज्ञं वष्टुधियावसुः ।

कटकीमावाहयामि० ।

४५. ॐ अस्कन्नमद्य देवेभ्यः आज्यं सम्भ्रिया समङ्घ्रिणा विष्णो मा त्रा वक्रमिषं वसुमतीमग्ने ते छायामुपस्थेषं विष्णोः स्थानमसीत इन्द्रो वीर्यमकृणो दूर्ध्वोऽध्वर आस्थात् ॥२ ।८

कीटिनीमावाहयामि० ।

४६. ॐ तीव्रान् घोषान् कृण्वते वृषपाणयोऽश्वारथेभिः सह वाजयन्तः । अवक्रामन्तः प्रपदैरमित्रान् क्षिणन्ति शत्रूं -२ रनपव्ययन्तः ॥२९ ।४४

रौद्रीमावाहयामि० ।

४७. ॐ महीद्यौः पृथिवी च न इमं यज्ञम्मिमिक्षताम् । पिपृतान्नो भरीमभिः ॥

यमदूतीमावाहयामि० ।

४८. ॐ उपयामगृहीतोऽसि सावित्रोसि च नोधाश्चनोधा असि च नो मयि धेहि। जिन्व यज्ञं जिन्वयज्ञपतिं भगाय देवाय त्वा सवित्रे ॥

करालिनीमावाहयामि०।

अथ सप्तम पंक्तौ

४९. ॐ आप्यायस्व समेतु विश्वतः सोम वृष्ण्यम्। भवावाजस्य सङ्गथे ॥

घोराक्षीमावाहयामि०।

५०. ॐ कार्षिरसि समुद्रस्य त्वा क्षित्या उन्नयामि। समापो अद्भिरग्मत समोषधीभिरोषधिः।

कार्मुकीमावाहयामि०।

५१. ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्॥ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पति वेदनम्। उर्वारुकमिव बन्धनादितो मुक्षीयमामुत ॥

काकदृष्टिमावाहयामि०।

५२. ॐ अम्बे अम्बिके अम्बालिके न मानयति कश्चन। ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम्॥

अधोमुखीमावाहयामि०।

५३. ॐ विष्णोरराटमसि विष्णोः श्नप्त्रेस्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोः ध्रुवोसि। वैष्णवमसि विष्णवे त्वा ॥

मुण्डाग्रधारिणीमावाहयामि०।

५४. ॐ ब्राह्मणमद्य विदेयं पितृमन्तं पैतृमत्यमृषिमार्षेयं सुधातु दक्षिणम्। अस्मद्राता देवत्रा गच्छत प्रदातारमाविशत ॥

व्याघ्रीमावाहयामि०।

५५. ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयामदेवा भद्रम्पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवा॑ᳬसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥

किंकिणीमावाहयामि०।

५६. ॐ एकाचमे तिस्रश्च मे तिस्रश्च मे पञ्च मे पञ्च च मे सप्त च मे सप्त च मे नव च मे नव च मे एकादश च मे एकादश च मे एकविंशतिश्च मे एकविंशतिश्च मे त्रयोविंशतिश्च मे त्रयोविंशतिश्च मे पञ्चविंशतिश्च मे पञ्चविंशतिश्च मे सप्तविंशतिश्च मे सप्तविंशतिश्च मे नवविंशतिश्च मे नवविंशतिश्च मे एकत्रिंशश्च मे एकत्रिंशश्च मे त्रयस्त्रिंशच्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥

प्रेत भक्षिणीमावाहयामि० ।

अथ अष्टम पंक्तौ

५७. ॐ ब्रह्माणि-मे मतय शꣳ सुतासः शुष्म इयर्ति प्रभृतो मे अद्रिः । आशासते प्रतिहर्यन्त्युक्थेमा हरी वहतः तानो अच्छ ॥३३ ।७८

कालरूपामावाहयामि० ।

५८. ॐ असंख्याताः सहस्राणि ये रुद्रा अभिभूम्याम् । तेषाꣳ सहस्र योजने ऽबन्धन्वानि तन्मसि ॥

कामाख्यामावाहयामि० ।

५९. ॐ अहिरिव भौगैः पर्य्येति बाहुञ्जाया हेतिम्परिबाधमानः । हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान् पुमान् पुमांसम्परिपातु विश्वतः ॥

उष्ट्रिणीमावाहयामि० ।

६०. ॐ तिस्रस्त्रेधा सरस्वत्यश्विना भारतीडा । तीव्रं परिस्रुता सोम मिन्द्राय सुषुवुर्मदम् ॥२० ।६३

योगपीठामावाहयामि० ।

६१. ॐ सरस्वतीयोन्यां गर्भमन्तरश्विभ्यां पत्नी सुकृतं विभर्ति । अपाꣳरसेन वरुणो न साम्नेन्द्रं श्रियै जनयन्नप्सु राजा ॥१९ ।९४

महालक्ष्मीमावाहयामि० ।

६२. ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पाꣳ सुरे स्वाहा ॥

एकवीरामावाहयामि० ।

६३. ॐ वृष्ण ऊर्म्मिरसि राष्ट्रदा राष्ट्रम्मे देहि स्वाहा वृष्ण ऊर्म्मिरसि राष्ट्रदा राष्ट्र ममुष्मै देहि वृषसेनोऽसि राष्ट्रदा राष्ट्रम्मे देहि स्वाहा वृषसेनोऽसि राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै देहि ॥१० ।२

कालरात्रीमावाहयामि० ।

६४. ॐ मृगोनभीमः कुचरोगिरिंष्ठा परावत आजगन्थापरस्याः । सृकः स७ शायपविमिन्द्र तिग्मं वि शत्रून् ताढि विमृधोनुदस्व ॥१८ ।७१

पीठकामावाहयामि० ।

योगिनी नामावलिः

१. ॐ दिव्य योगिन्यै नमः । २. महायोगिन्यै० । ३. सिद्धयोगिन्यै० । ४. गणेश्वर्य्यै० । ५. प्रेताक्ष्यै० । ६. हुंकिन्यै० । ७. काल्यै० । ८. कालरात्र्यै० । ९. निशाचर्य्यै० । १०. हुंकार्य्यै० । ११. रुद्रवैताल्यै० । १२ खर्पर्य्यै० । १३. भूतयामिन्यै० । १४. ऊर्ध्वकेश्यै० । १५. विरूपाक्ष्यै० । १६. शुष्कांग्यै० । १७. नरभोजिन्यै० । १८. फेत्कार्य्यै० । १९. वीरभद्राक्ष्यै० । २०. धूम्राक्ष्यै० । २१. कलहप्रियायै० । २२. राक्षस्यै० ॥ २३. घोररक्ताक्ष्यै० । २४. विश्वरूपाक्ष्यै० । २५. भयंकर्य्यै० । २६. चण्डिकायै० । २७. वीर कौमार्य्यै० । २८. वाराह्यै० । २९. मुण्डधारिण्यै० । ३०. भैरव्यै० । ३१. चक्रपाण्यै० । ३२. त्रिपुरान्तकायै० । ३३. भैरवध्वंसिन्यै० । ३४. दुर्मुख्यै० । ३५. प्रेतवाहिन्यै० । ३६. खट्वांग्यै० । ३७. दीर्घलम्बोष्ठ्यै० । ३८. मालिन्यै० । ३९. मन्त्रयोगिन्यै० । ४०. कालाग्न्यै० । ४१. चक्रयै० । ४२. कंकाल्यै० । ४३. भुवनेश्वर्य्यै० । ४४. कटक्यै० । ४५. कीटिन्यै० । ४६. रौद्र्यै० । ४७. यमदूत्यै० । ४८. करालिन्यै० । ४९. घोराक्ष्यै० । ५०. कार्मुक्यै० । ५१. काकदृष्ट्यै० । ५२. अधोमुख्यै० । ५३. मुण्डाग्रधारिण्यै० । ५४. व्याघ्र्यै० । ५५. किंकिण्यै० । ५६. प्रेतभक्षिण्यै० । ५७. कामरूपायै० । ५८. कामाख्यै० । ५९. उष्ट्रिण्यै० । ६०. योगपीठायै० । ६१. महालक्ष्म्यै० । ६२ एकवीरायै० । ६३. कालरात्र्यै० । ६४. पीठकायै नमः ।

ॐ मनोजूतिर्जुषता माज्यस्य वृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनोत्वरिष्टं यज्ञ७ समिमं दधातु विश्वेदेवा स इह मादयन्ता मो ३ म्प्रतिष्ठ। इति स्थापनां कृत्वा पूजां कृत्वा प्रार्थयेत्—

सम्पूजिताः मया देव्यो योगिन्यः सगणाः शुभाः ।

मम यज्ञन्तु निर्विघ्नं कुर्वन्तु गणक्षेत्रपैः ॥ इति प्रार्थ्य ततः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः सशक्तिकाः सवाहनाः दिव्यादि चतुषष्टियोगिन्यः सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवन्तु ॥

इति योगिनी पूजनं समाप्तम् ॥

अथ क्षेत्रपालपूजनम्

वायव्य कोणे क्षेत्रपालपूजनम्

अथ पंचकुंडीपक्षे कुंडादि निर्माण प्रकारः) पू.

ग्रहपीठं	आचार्य कुंडं ५ (चतुरस्रं) / ऋग्वेदिनां कुंडं १	मातृकापीठं
अथर्ववेदिनां कुंडं ४	सर्वतोभद्रमंडलं (मध्यवेदी)	यजुर्वेदिनां कुंडं (अर्धचंद्राभं कुंडं) २
योगिनी क्षेत्रपालपीठं	सामगानां कुंडं ३ (वर्तुलं)	वास्तुपीठं चतुःषष्टि कोष्ठात्मकम्

उ प.

वायव्यां श्वेत वस्त्राच्छादिते पीठे चतुरस्रं विलिख्य तिर्यंन्यां पार्श्वमान्यां च सूत्रद्वन्द्वं समानान्तरं दद्यात् । एवं नवकोष्ठानि भवन्ति । पूर्वादिकोष्ठेषु षट्सु षट्दलानि सम्पाद्य उत्तरेशानयोः कोष्ठयोस्तु सप्तसप्तदलानि कुर्य्यात् ।

ततः सपत्नीको यजमानः स्वासने उपविश्य आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ स्मृत्वा—अस्मिन् विष्ण्वादि प्रतिष्ठा कर्मणि क्षेत्रपाल पूजनं करिष्ये इति संकल्प्य पूर्व कोष्ठे षट्सु दलेषु स्थापनं पूजनं कुर्यात्—तद्यथा—

१. ॐ इमौ ते पक्षावजरौपतत्रिणौ याभ्यां रक्षाꣳ स्यपहंस्यग्ने। ताभ्याम्पतेमसुकृतामुलोकं यत्र ऋषयो जग्मुः प्रथमजाः पुराणाः। अजराय नमः-अजरमावाहयामि स्थापयामि।

२. प्रथमा वाꣳ सरथिना सुवर्णा देवौ पश्यन्तौ भुवनानि विश्वा। अपि प्रयञ्चोदना वाम्मिमाना होतारा ज्योतिः प्रदिशा-दिशन्ता।

आप कुम्भाय नमः।

ॐ इन्द्रस्य वज्रोमरुतामनीकं मित्रस्य गर्भो वरुणस्य नाभिः। सेमान्नो हव्यदातिञ्जुषाणो देवरथ प्रतिहव्या गृभाय॥

इन्द्रस्तुतये नमः।

४. ॐ एवेदिन्द्रं वृषणं वज्रबाहुं वसिष्ठासो अब्भ्यर्चन्त्यर्कैः। स न स्तुतो वीरवद्धातु गोमद्यूयम्पात स्वस्तिभिः सदा नः।

इडाचराय नमः।

५. ॐ उक्षासमुद्रो अरुणः सुपर्णः पूर्वस्य योनिम्पितुरा विवेश। मद्धये दिवो निहितः पृश्निरश्मा विचक्रमे रजस्पात्त्यन्तौ॥

उक्तसंज्ञाय नमः।

६. ॐ यद्देवा देवेहेडनं देवासश्चकृमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनसो विश्वान् मुञ्चत्वꣳ हसः॥

ऊष्मादाय नमः।

७. ॐ स न इन्द्राय यज्यवे वरुणाय मरुद्भ्यः। वरिवोवित् परिस्रव॥

ऋषिसूदनाय नमः।

८. ॐ बाहू मे बलमिन्द्रियꣳ हस्तौ मे कर्मवीर्यम्। आत्मा क्षत्रमुरोमम्।

ऋणमुक्ताय नमः।

९. ॐ मुञ्चन्तुमा शपथ्यादथो वरुण्यादुत । अथो यामस्य षड्वीशात् सर्वस्माद् देव किल्विषात् ॥

क्लृप्तिकेशाय नमः ।

१०. ॐ कुर्वन्नेह कर्म्माणि जिजीविषेच्छतꣳ समाः । एवन्त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ॥

लृपकाय नमः ।

११. ॐ सन्नः सिन्धुरवभृथायोद्यतः समुद्रोऽभ्यवहियमाणः सलिलः प्रप्लुतोययोरोजसे स्कभिता रजाꣳसि वीर्येभिर्वीरतमा शविष्ठा । या पत्त्येते अप्रतीता सहोभिर्विष्णू अगन्वरुणा पूर्वहूतौ ॥

एकदंष्ट्रकाय नमः ।

१२. ॐ नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्चवो नमो नमो व्रातेभ्यो व्रातपतिभ्यश्चवो नमो नमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो नमो नमो विरूपेभ्यो विश्वरूपेभ्यश्चवो नमः ।

ऐरावताय नमः ।

१३. ॐ अर्म्मेभ्यो हस्तिपञ्जवा याश्वपम् पुष्ट्यै गोपालं वीर्य्यायाविपालन्तेजसेऽजपालमिरायै कीनाशङ्कीलालाय सुराकारम्भद्राय गृहपꣳ श्रेयसे वित्तधर्माध्यक्ष्यायानुक्षत्तारम् ॥

ओघवन्धवे नमः ।

१४. ॐ या औषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रि युगम्पुरा । मनैनु वभ्रूणा महꣳ शतं धामानि सप्त च ॥

ओषधीशाय नमः ।

१५. ॐ त्र्यम्वकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥

अञ्जनाय नमः ।

१६. ॐ देव सवितः प्रसुव यज्ञम्प्रसुव यज्ञपतिम्भगायां दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतन्न पुनातु वाचस्पति र्वाजन्नः स्वदतु स्वाहा ॥

अस्त्रवाराय नमः ।

१७. ॐ सीसेन तन्त्रम्मनसा मनीषिण ऊर्णा सूत्रेण कवयो वयन्ति। अश्विना यज्ञꣳ सविता सरस्वतीन्द्रस्य रूप वरुणो भिषज्यन् ।१९/८०

कवलाय नमः ।

१८. ॐ आशुः शिशानो वृषभो न भीमो घनाघनः । क्षोभणश्चर्षणीनाम् । सङ्क्रन्दनो निमिष एक वीरः शतꣳ सेना अजयत् साकमिन्द्रः ॥

खरुखानलाय नमः ।

१९. ॐ इमꣳ साहस्रं शतधारमुत्सं व्यच्यमानꣳ सरिरस्य मध्ये। घृतं दुहानामदितिं जानायाग्ने माहिꣳ सीः परमे व्योमन्। गवयमारण्य मनु ते दिशामि तेन चिन्वानस्तन्वो निषीद। गवयन्ते शु गृच्छतु यं द्विष्मस्तन्ते शु गृच्छतु ॥१३/१४९

गोमुख्याय नमः ।

२०. ॐ कुम्भो वनिष्ठु र्जनिता शचीभि र्यस्मिन्नग्रे योन्याङ्गर्भो अन्तः । प्लाशिर्व्यक्तः शतधार उत्सो दुहेन कुम्भी स्वधाम्पितृभ्यः ॥

घण्टादाय नमः ।

२१. ॐ आक्रन्दय बलमोजो न आधा निष्टनिहि दुरिता वाधमानः । अपप्रोथदुन्दुभे दुच्छुना इत इन्द्रस्य मुष्टिरसि बीडयस्व ।

डम्नसे नमः ।

२२. ॐ इन्द्रा याहि तू तु जान उप ब्रह्माणि हरि वः । सुते दधिष्वनश्च नः ॥

चण्डवारणाय नमः ।

२३. ॐ चन्द्रमा अप्स्वन्तरा सुपर्णो धावते दिवि। रयिम्पिशाङ्गं बहुलम्पुरु स्पृहꣳ हरिरेति कनिक्रदत् ॥

घटाटोपाय नमः ।

२४. ॐ गणानान्त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियानान्त्वा प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनान्त्वा निधिपतिꣳ हवामहे वसो मम आहम जानि गर्भधम् ॥

जटलाय नमः ।

पश्चिमे षटसु दलेषु—

२५. ॐ उग्रं लोहितेन मित्रः सौव्रत्येन रुद्रं दौर्व्रत्येनेन्द्रं प्रक्रीडेन मरुतो बलेन साध्यान प्रमुदा। भवस्य काण्ठ्य रुद्रस्यान्तः पार्श्वर्य्यम्महादेवस्य यकृच्छर्व्वस्य वनिष्ठुः पशुपते पुरीतत् ॥

झंगीवाय नमः ।

२६. ॐ पवित्रेण पुनीहि मा शुक्रेण देव दीद्यत् । अग्ने क्रत्वा क्रतूं रनु ॥

ञं डेश्वराय नमः ।

२७. ॐ आजिघ्र कलशं मह्यात्वा विशन्त्विन्दवः । पुनरुर्जा निवर्तस्व सा नः सहस्रं धुक्ष्वोरुधारा पयस्वती पुनर्मा विशताद्रयिः ।

टंकपाणये नमः ।

२८. ॐ वायो शुक्रौ अयामि ते मद्ध्वो अग्रन्दिविष्टिषु । आयाहि सोमपीतये स्पार्हेदेव नियुत्वता ॥

ठाणवन्धवे नमः ।

२९. ॐ दैव्या होतारा ऊद्र्ध्वमध्वरन्नोऽग्नेर्जिह्वामभिगृणीतम् । कृणुतन्नः स्विष्टिम् ॥

डामराय नमः ।

३०. ॐ त्रीणि त आहुर्दिवि बन्धनानि त्रीण्यप्सु त्रीण्यन्तः समुद्रे । उतेव मे वरुणः छन्त्स्यर्वन् यत्रातः आहुः परमञ्जनित्रम् ॥

ढक्कारवाय नमः ।

वायव्यादिकोष्ठ षट्सु दलेषु क्रमेण—

३१. ॐ प्रतिश्रुत्काया अर्तनङ्घोषाय भषमन्ताय बहुवादिनमनन्तायम्

क॒ शब्दायाडम्बराघातं महसे वीणावादङ्क्रोशाय तूणवध्ममव-रस्यरायशंखध्मं वनाय वनपमन्यतोरण्याय दा वपम् ॥

णं वार्णवाय नमः ।

३२. ॐ शुद्धबालः सर्वशुद्धबालो मणिबालस्त आश्विना । श्येतः श्येताक्षोऽरुणस्ते रुद्राय पशुपतये कर्णायामा अवलिप्ता रौद्रा नभोरूपाः पार्जन्याः ॥

तडिद्देहाय नमः ।

३३. ॐ वनस्वते वीड्वङ्गोहि भूया अस्मत्सखा प्रतरणः सुवीरः । गोभिः सन्नद्धो असि वीडयस्वा स्थाता तेजयतु जेत्वानि ॥

थिराय नमः ।

३४. ॐ सुपर्णं वस्तेमृगो अस्या दन्तो गोभिः सन्नद्धा पतति प्रसूता । यत्रा नरः सञ्च वि च द्रवन्ति तत्रास्मभ्यमिषवः शर्म्म य॒ सन् ।

दन्तुराय नमः ।

३५. ॐ अग्ने अच्छा वदेह नः प्रति नः सुमना भव । प्र नो यच्छ सहस्रजित्वं हि धनदा असि स्वाहा ।

धनदाय नमः ।

३६. ॐ भद्रङ्कर्णेभिः शृणुयाम देवाः भद्रम्पश्येमाक्षभिर्यजत्राः । स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवा॒ सस्तनुभिर्व्यशे महिदेव हितं यदायुः ॥

नत्तिक्तान्ताय नमः ।

३७. ॐ अपां फेनेन नमुचे शिर इन्द्रोद वर्त्तयः । विश्वा यदजयः स्पृधः ॥

प्रचण्डकाय नमः ।

३८. ॐ वातं प्राणेनापानेन नासिके उपयाममधरेणौष्ठेन सदुत्तरेण प्रकाशेनान्तर मनूकाशेन बाह्यन्निवेष्यम्मूर्ध्नास्तनयित्नुं निवाधेनाश-निंमस्तिष्केण विद्युतं कनीनकाभ्यां कर्णाभ्यां श्रोत्रं श्रोत्राभ्यां कर्णौ

तेदनीमधरकण्ठेन चित्तम्मन्याभिः रदितिꣳशीर्ष्णा निर्ऋति निर्जल्येन शीर्ष्णा सङ्क्रोशैः प्राणान् रेष्माणꣳ स्तुपेन ॥

फट्काराय नमः ।

उत्तराधिकोष्ठे सप्तसु दलेषु—

३९. ॐ इदꣳ हवि प्रजननम्मे अस्तुदशवीरः सर्वगणं स्वस्तये । आत्म सनि प्रजासनि पशु सनिलोक सन्यभय सनि । अग्नि प्रजाम्बहुलाम्मे करोत्वन्नम्मयोरेतो अस्मा सुधत्त ॥

वीरसंघाय नमः ।

४०. ॐ खड्गो वैश्व देवः श्वा कृष्णा कर्णो गर्दभस्तरक्षुस्ते रक्षसा मिन्द्राय सूकरः । सिꣳहोमारुत कृकलासः विप्पकाश कुनिस्ते शरव्यायै विश्वेषान्देवानाम्पृषतः ॥

भृंगाय नमः ।

४१. ॐ मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः परावत आजगन्था परस्याः । सृकꣳ संꣳ शायपविमिन्द्रं तिग्मं विशत्रून्ताड्ढि वि मृधो नुदस्व ॥

मेघभासुराय नमः ।

४२. ॐ इन्दुर्दक्षुः श्येन ऋतावाहिरण्य पक्षः शकुनो भुरण्युः । महान्त्सधस्थे ध्रुव आनिषत्तो नमस्ते अस्तु मामाहिꣳ सिः ॥

युगान्ताय नमः ।

४३. ॐ जीमूतस्येव भवति प्रतीकं यद्वर्मी याति समदामुपस्थे । अनाविद्ध्या स्तन्वा जय त्वꣳ सत्वा वर्म्मणो महिमा पिपर्त्तु ॥

रोह्यवाय नमः ।

ईशानादिकोष्ठे सप्तसु दलेषु क्रमेण—

४४. ॐ तीव्रान् घोषान् कृण्वते वृषपाणयोऽश्वारथेभिः सह वाजयन्तः । अवक्रामन्तः प्रपदैरमित्रान् क्षिणन्ति शत्रूं रनप व्ययन्तः ॥

लम्बौष्ठाय नमः ।

४५. ॐ अग्निं दूतं पुरोदधे हव्यवाह मुपब्रुवे। देवां -२ आसादयादिह।

वासवाय नमः।

४६. ॐ आदित्या स्त्वापृष्ठे सादयाम्यन्तरिक्षस्य धर्त्री विष्टम्भनीं दिशामधिपत्नीम्भुवनानाम्। ऊर्म्मिद्रप्सो अपामसि विश्वकर्म्मातः ऋषिभिरश्विनाद्ध्वर्यु सादतामहि त्वा॥

शूकनन्दाय नमः।

४७. ॐ द्यौस्ते पृथिव्यन्तरिक्षं वायुश्छिद्रं पृणातु ते। सूर्य्यस्ते नक्षत्रैः सहलोकं कृणोतु साधुया॥

षडालाय नमः।

४८. ॐ सम्वर्हिरङ्क्ता७ हविषा घृतेन समदित्यैः सम्मरुद्भिः। समिन्द्रो विश्व देवेभिरङ्क्ताम्। दिव्यन्नभो गच्छतु यत्स्वाहा॥

सुनाम्ने नमः।

४९. ॐ पवमानः सो अद्य नः पवित्रेण विचर्षिणि। यः पोता स पुनातु मा॥

हम्बुकाय नमः।

५०. ॐ अभ्यर्षत् सुष्टुतिङ्गव्यमाजिमस्मासु भद्रा द्रविणानि धत्त। इमं यज्ञन्नयत देवता नो घृतस्य धारा मधुमत्पन्वते॥

क्षेत्रपाल नामावलिः

१. अजराय नम०। २. आपकुम्भाय०। ३. इन्द्रस्तुतये०। ४. इडाचराय नमः। ५. उक्तसंज्ञाय०। ६. ऊष्मादाय०। ७. ऋषिसूदनाय०। ८. ऋणमुक्ताय०। ९. क्लृप्ति केशाय०। १०. लृपकाय०। ११. एकदंष्ट्रकाय०। १२. ऐरावताय०। १३. ओघवन्धवे०। १४. औषधीशाय०। १५. अञ्जनाय०। १६. अस्त्रवाराय०। १७. कवलाय०। १८. खरुखानलाय०। १९. गोमुख्याय०। २०. घण्टादाय०। २१. ङमनसे। २२. चण्डवारणाय०। २३. घटाटोपाय०। २४. जटलाय०। २५. झंगीवाय०। २६. ञं डेश्वराय। २७. टंकपाणये। २८. ठाणवन्धवे०। २९. डमराय। ३०. ढक्कारवाय०। ३१. णं

वार्णवाय० । ३२. तडिद्देहाय० । ३३. थिराय० । ३४. दन्तुराय० । ३५. धनदाय । ३६. नत्तिक्तान्ताय० । ३७. प्रचण्डकाय० । ३८. फट्काराय । ३९. वीरसंघाय० । ४०. भृंगाय० । ४१. मेघ भासुराय० । ४२. युगान्ताय० । ४३. रोह्यवाय० । ४४. लम्बौष्ठाय । ४५. वासवाय० । ४६. शूकनन्दाय । ४७. षडालाय० । ४८. सुनाम्ने । ४९. हम्बुकाय ।

एवं एकोनपंचाशत क्षेत्रपालान् संस्थाप्य—

ॐ क्षौं क्षेत्रपालेभ्यो नमः । षोडशोपचारैः सपूज्य प्रार्थयेत्—भ्राजच्चन्द्र जटाधरं त्रिनयनं नीलाञ्जनाद्रिप्रभम्। दोर्दण्डान्त गदा कपाल मरुणस्त्रग्गन्धवस्त्रोज्ज्वलम् । घण्टा मेखल घर्घर ध्वनि लसत् झंकार भीमं विभुं वन्दे संहित सर्प कुण्डलधरं श्री क्षेत्रपालं सदा ॥ इति प्रार्थ्य

माषभक्त बलिं गृहीत्वा—ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं योगिन्यः क्षेत्रपालाश्च सर्वे यत्र समागताः । नगरे वाथ ग्रामे वा ह्यटव्यां सरित स्तथा । ते सर्वे चैव सन्तुष्टा बलिं गृह्णन्तु मे सदा ॥

शरणागतोऽस्मि अहं तेषां सर्वे ते मम सुप्रदाः । बलिदानेन संतुष्टाः प्रयच्छन्तु ममेप्सितम् । सर्व कार्याणि कुर्वन्तु दोषांश्च घ्नन्तु मे सदा ।

इति प्रभूत बलिं समर्प्य प्रणमेत् ॥

ॐ मनोजूति० इति—क्षेत्रपालाः सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवन्तु ।

इति क्षेत्रपाल पूजनम्

कुशकण्डिका में विशेष

पृथ्वीशोधनम्—ॐ भूरसि भूमिरस्यदितिरसि विश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री । पृथिवीं यच्छ पृथिवीं दृ७ह पृथिवीं मा हि७सीः । य० १३ ।१२

परिसमूहन—तीन कुशाओं की तर्जनी अंगूठे से पकड़ कर ईशान कोण से लेकर दक्षिण होते हुए ईशान कोण तक वलयाकृति में घुमाएं, उससे भूमि का मार्जन करें ।

उपलेपन—मानस्तोके तनये मान आयुषि मानो गोषु मा नो अश्वेषु रीषिः । मानो वीरान् रुद्रभामिनो वधी र्हविष्मन्तः सद् मित्त्वा हवामहे ॥ इस मन्त्र से गोमय से उपलेपन करे ।

उद्धरण—स्फ्य से रेखाकरण करे। पूर्व से पश्चिम की ओर तीन रेखाएं खींचे, अंगुष्ठ-अनामिका से तीनों रेखाएं खींचे, अंगुष्ठ-अनामिका सी तीनों रेखाओं से मिट्टी निकाले। वहां इस मन्त्र को पढ़े—

मित्रावरुणाभ्यां त्वा देवाव्यं यज्ञस्यायुषे गृह्णामीन्द्राय त्वा देवाव्यं यज्ञस्यायुषे गृह्णामीन्द्राग्निभ्यां त्वा देवाव्यं यज्ञस्यायुषे गृह्णामीन्द्रावरुणाभ्यां त्वा देवाव्यं यज्ञस्यायुषे गृह्णामीन्द्रवृहस्पतिभ्यां त्वा देवाव्यं यज्ञस्यायुषे गृह्णा मीन्द्राविष्णुभ्यां त्वा देवाव्यं यज्ञस्यायुषे गृह्णामि ॥ यजु० ७ ।२३ ॥

अभ्युक्षण—अनन्तर कुशपुष्पोदक पंचपल्लवों के जल से या पंचगव्य से अभ्युक्षण (अभिसिंचन करे)। लौकिकस्मार्त अथवा श्रौताग्नि का आनयन करे। अपने सामने स्थापित करे।

ॐ क्रव्यादग्निं प्रहिणोमि दूरं यमराज्यं गच्छतु रिप्रवाहः। इहैवायमितरो जातवेदा देवेभ्यो हव्यं वहतु प्रजानन ॥ यजु० ३५ ।१९ ॥

इस मन्त्र का उच्चारण करते हुए लाई गई अग्नि में से कुछ आग दक्षिण की ओर फैंक देना यह क्रव्यादग्नि कही गई है। क्रव्यादग्नि का ग्रहण न करे।

तदनन्तर—

ॐ वैश्वानरस्य सुमतौ स्यामराजा हि कं भुवनानामभिश्रीः इतो जातो विश्वमिदं वि चष्टे वैश्वानरो यतते सूर्येण। उपयाम गृहीतोऽस्मि वैश्वानराय त्वैष ते योनि वैश्वानराय त्वा ॥ य० २६ ।७

इस मंत्र से अग्नि की स्थापना करे।

अग्नि के दक्षिण में वरण किये ब्रह्मा को कुश के आसन पर "ब्रह्मन् इह उपविश्यताम्" कह कर बिठाये। उस समय—ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्तात् विसीमतः सुरुचो वेन आवः। स वुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनि मसतश्च वि वः ॥ य० १३ ।३।

इस मन्त्र का पाठ करे।

अथ कुशकण्डिका विधानम्

(अयं एक कुंडी पक्षे कुंडादि निर्माण प्रकारः)

हवन करने से पूर्व हवन कुण्ड की पवित्रता, सुरक्षा एवं विधान के लिए कुशकण्डिका का विधान है।

यज्ञ वेदी को तीन या अधिक कुशाओं से परिसमूहन करके उसकी सफाई करे, किसी प्रकार अपद्रव्य पड़ा हो उसे दूर करके गोमय से उस स्थान का लेपन करे।

परिसमूहनम्— कृमि कीट पतङ्गाद्याः भ्रमन्ति वसुधा तले।
तेषां संरक्षणार्थाय कुर्यात्परिसमूहनम्।

उपेलपनम्— पुरा इन्द्रेण वज्रेण हतो वृत्रो महासुरः।
मेदना व्यापिता भूमिस्तदर्थमुपलेपनम्॥

इसलिए यज्ञ वेदी का गोबर से लेपन करना चाहिए।

उल्लेखनम्—का भाव है रेखा करना। स्रुव से स्थण्डिल परिमित तीन या पांच रेखाएं उदक्संस्थ करे।

खादिरं स्फ्यं प्रकल्प्याथ तिस्रो रेखाश्च पञ्च वा।
स्थण्डिल्लेखनं कुर्यात्स्रुवेण च कुशेन च॥

उद्धरणम्—उन की गई रेखाओं में से जीव-जन्तुओं को निकालना। अनामिका और अंगूठे से उल्लेखन कार्य करे।

विचरन्ति पिशाचाः ये आकाशस्थाः सुखासनाः।
तेभ्यः संरक्षणार्थाय उद्धृतं चैव कारयेत्॥

अभ्युक्षणम्—जल से यज्ञवेदी का न्युब्ज हस्त से तीन बार सिंचन करे।

गंगादि सर्व तीर्थेषु समुद्रेषु सरित्सु च।
सर्वतश्चाप आदाय अभ्युक्षेच्च पुनः पुनः।

अग्नेरुपस्थापनम्—उस यज्ञवेदी पर अभिमुख अग्नि को लाकर रखे।

पात्रान्तरेण पिहिते ताम्रपात्रादिके शुभे।
अग्नि प्रणयनं कुर्यात् शरावे वाऽथ नूतने॥

अग्नि स्थापित करने के पश्चात् अग्नि या दक्षिण दिशा में कर्मकाण्ड के तत्त्वज्ञ ब्राह्मण का आसन पर, ब्राह्मण के अभाव में पचास कुशाओं से निर्मित ब्रह्मा को अग्नि के उत्तर में पूर्वाभिमुख रखकर गन्ध पुष्पमालादि से पूजन करे।

यजमान पवित्र मन से एवं श्रद्धा भाव से जितेन्द्रिय होकर वस्त्रादि से आचार्य का सम्मान करे। ब्रह्मा ही यज्ञ का मुख्य महत्त्वपूर्ण अधिष्ठाता है।

प्रणयनम्—अग्नि से उत्तर में प्रागग्र कुशाओं से दो आसन की कल्पना कर उन पर प्रणीता-प्रोक्षणी पात्रों को रखकर कुशाओं से आच्छादन कर ब्रह्मा के मुख का अवलोकन करवाकर पश्चिमासन पर रखे। कुशाओं को यज्ञवेदी के चारों ओर तीन-तीन या चार-चार क्रम से पूर्व दिशा के अग्रभाग में रखे। वहीं यज्ञवेदी के समीप तीन कुशाओं को, दो पवित्रों को आज्यस्थाली, चरुस्थाली, तीन समिधा, स्रुव, आज्य, तण्डुलों से भरा पूर्णपात्र रखे।

पवित्र प्रमाणम्—कुश तरुणे अविषमे अविच्छिन्नाग्रे, अनन्तर्गर्भे प्रादेशमात्रं मापयित्वा कुशैः छिनत्ति॥

अनन्तर्गर्भिणं साग्रं कौशं द्विदलमेव च।
प्रादेशमात्रं विज्ञेयं पवित्रं यत्र कुत्रचित्॥

प्रोक्षणी पात्र को प्रणीता पात्र के समीप रखकर दूसरे पात्र से पानी डालकर पवित्रों से उस जल का उत्पवन कर पवित्रों को प्रोक्षणी पात्र में रखकर, दाहिने हाथ से प्रोक्षणी पात्र उठाकर दाएं हाथ से उसके जल को उछालकर प्रणीता के जल से प्रोक्षण करे।

घृत को अग्नि पर रखे, जलते हुए तिनको को घुमाकर अग्नि में डालकर घी उतार लें। उस घी को देखकर प्रोक्षणी जल की तरह पवित्रे से उछालें। उपयमन कुशाओं को

दक्षिण हाथ से लेकर बाएं हाथ में रखें। तीन समिधाओं को लेकर घी में डुबो कर खड़े होकर अग्नि में रखें।

पूर्णपात्र परिमाण—अष्ट मुष्टि भवेत् किंचित् किञ्चदष्टौ तु पुष्कलम्। पुष्कलानि च चत्वारि पूर्णपात्रं प्रचक्षते ॥

षट् पञ्चाशदधिकमुष्टि शतद्वयपरिमितं पराध्यर्म्। बहुभोक्ता यः पुरुषः तदाहार परिमितं अपराध्यर्म्।

आहुति प्रकार— मन्त्रेणोङ्कारपूतेन स्वाहान्तेन विचक्षणः।
स्वाहावसाने जुहुयात् ध्यायन्वै मन्त्र देवताम् ॥
उत्तानेन तु हस्तेन अङ्गुष्ठाग्रेण पीडितम्।
संहताङ्गुलि पाणिस्तु वाग्यतो जुहुयाद् हविः ॥
आहुतिस्तु घृतादीनां स्रुवेणाधोमुखेन च।
हुवेत तिलाद्याहुतीश्च देवेनोत्तानपाणिना ॥

अग्निनामानि— लौकिकः पावकोह्यग्निः प्रथमः परिकीर्तितः।
अग्निस्तु मारुतो नाम गर्भाधाने विधीयते ॥१ ॥
पुंसवने चान्द्रमसः शुङ्गाकर्मणि शोभनः।
सीमन्ते मंगलो नाम प्रगल्भो जातकर्मणि ॥२ ॥
नाम्नि स्यात् पार्थिवो ह्यग्निः प्राशने च शुचिस्तथा।
सभ्यनामाश्च चूडायां व्रतादेशे समुद्भवः ॥३ ॥
गोदाने सूर्यनामा तु केशान्ते ह्यग्निरुच्यते।
वैश्वानरो विसर्गे तु विवाहे योजकः स्मृतः ॥४ ॥
चतुर्थ्यां तु शिखी नाम धृतिरग्निस्तथापरे।
आवसथ्ये भवो ज्ञेयो वैश्वदेवे तु पावकः ॥५ ॥
ब्रह्मा वै गार्हपत्ये स्यादीश्वरो दक्षिणे तथा।
विष्णुराहवनीये तु अग्निहोत्रे त्रयोऽग्नयः ॥६ ॥
लक्ष्यहोमे तु बह्निः स्यात् कोटिहोमे हुताशनः।
प्रायश्चित्ते विधिश्चैव पाकयज्ञे तु साहसः ॥७ ॥
देवानां मृडोनाम शान्तिके वरदस्तथा ॥८ ॥

पौष्टिके बलदश्चैव क्रोधोऽग्निश्चाभिचारके ।
वश्यार्थे कामदो नाम वनदाहे तु दूतकः ॥९ ॥
कोष्ठे तु जठरो नाम क्रव्यादो मृतभक्षणे ।
समुद्रे वाडवो ज्ञेयः क्षये संवर्तको भवेत् ॥१० ॥
एतेऽग्नयः समाख्याताः श्रावयेद् ब्राह्मणः सदा ।
सप्तत्रिंशतिसंख्याकाः ज्ञातव्याश्च द्विजेन वै ॥११ ॥

ब्रह्मा— ऊर्ध्वकेशो भवेद् ब्रह्मा लम्बकेशस्तु विष्टरः ।
दक्षिणावर्तो भवेद् ब्रह्मा वामावर्तस्तु विष्टरः ॥
पञ्चाशद्भिः भवेत् ब्रह्मा तदर्द्धेन तु विष्टरः ।
द्विवृत्त्याश्च मध्ये वै अर्द्धवृत्त्यान्त देशतः ॥
ग्रन्थि प्रदक्षिणावर्तः स ब्रह्मग्रन्थि संज्ञकः ॥

पवित्रम्— अनन्तर्गर्भकं साग्रं द्विदलमेव च ।
प्रादेशमात्रं विज्ञेयं पवित्रं यत्र कुत्रचित् ।
समे द्वे स्थौलदौर्घ्याभ्यां साग्रे प्रादेश सम्मिते ।
पवित्रे ग्रन्थिते ज्ञेये देवकर्मणि चोदिते ॥

तस्मात्— समिद्धे होतव्यं नासमिद्धे कथंचन ।
आरोग्यमिच्छताऽऽयुश्च श्रियमात्यन्तिकी पराम् ।
न वस्त्र वायुना कुर्यात् पाणिशूर्पस्त्रुवादिभिः ।
न कुर्यादग्निधमनं न कुर्यात् व्यजनादिना ॥
मुखेन धमयेदग्निं मुखादग्निरजायत् ।

स्त्रुवं— तर्जनीं च वहिः कृत्वा कनिष्ठां च वहिस्तथा ।
मध्यमानामिकांगुष्ठैः स्त्रुवं धारयते द्विजैः ।
स्त्रुवहोमेन सदा त्यागः प्रोक्षिणी पात्रमध्यतः ॥

कुशकण्डिका

अग्निदेव के दक्षिण दिशा की तरफ ब्रह्मदेव को कुशासन पर बिठा कर, अग्नि के उत्तर दिशा में प्रणीता पात्र के लिए दो आसन रखे । ब्रह्मा के आसन पर ब्रह्मा को बैठाकर कहे—हे राजन् जब तक कर्म की समाप्ति न हो तब तक आप ब्रह्मा पद पर आसीन हों । ब्रह्मा, मैं होता हूं—ऐसा कह कर पूर्व स्थापित आसन पर बैठे, तदनन्तर ब्रह्मा मौन हो जाए ।

फिर प्रणीता पात्र को बाएं हाथ में धारण कर दाहिने हाथ से ग्रहण किए हुए जलपात्र से उस प्रणीता पात्र में जल को भर के पहले से बिछी हुई कुशाओं पर दाहिने हाथ से रखकर कुशाओं से आच्छादन कर उस पात्र को स्पर्श कर ब्रह्मदेव के मुख को देख कर ईक्षणमात्र से ब्रह्मा की आज्ञा लेकर उत्तर दिशा की ओर बिछी कुशाओं पर रख दे। तदनन्तर बारह परिस्तरण कुशाओं के चार भागो को बायें हाथ में रख कर उसमें से एक-एक भाग से परिस्तरण करे—अग्नि कोण से ईशानादि में करे। तदनन्तर पश्चिम दिशा से उत्तर की ओर बिछी कुशाओं पर दो-दो पात्रों को यथासम्भव न्युब्ज उदक् संस्थ या प्राक् संस्थ आसादन करे; दो पवित्रच्छेदन करने के लिए कुशा, प्रोक्षणी पात्र, आज्यस्थाली, चरुस्थाली, संमार्जन के लिए पांच कुशा, उपयमन के लिए सात कुशा, तीन समिधा, स्रुव, घृत, चावल से परिपूर्ण पूर्णपात्र आदि रखे।

तदनन्तर पवित्र बनावे—दो कुशाओं को बराबर नाप कर बायें हाथ में करके कुशा के अग्रभाग से प्रादेश मात्र नाप कर उसके मूल में उन दोनों कुशाओं के ऊपर तीन कुशाओं को उदग्र रखकर, उन कुशाओं को उस दो कुशा के मूल भाग से प्रादक्षिण्य क्रम से वेष्टन कर उन दो कुशाओं को प्रादेश मात्र परिमाण के अग्रभाग को बायें हाथ में कर बचे हुए मूल भाग को और तीन कुशाओं को दाहिने हाथ में धारण कर दाहिने हाथ से तोड़ दे और त्याग दे। शिष्ट पत्र द्वय ही पवित्र हैं। उस पत्रद्वय में जोड़ने के लिए गांठ दे। तदनन्तर प्रागग्र प्रोक्षणी पात्र को प्रणीता के समीप रख, वहां से सपवित्र पात्रान्तर से प्रणीतापात्र के जल को तीन बार आसेचन कर प्रोक्षणी पात्र को बायें हाथ में कर दाहिने से बायें हाथ से धारण किये ही प्रणीता पात्र के जल से पवित्र स्थित हाथ से प्रोक्षणी करे। फिर प्रोक्षणी पात्र से आज्यस्थाली आदि सभी वस्तुओं का सेचन का प्रोक्षण करे। तदनन्तर उन पवित्रों को प्रोक्षणी पात्र से स्थापन कर प्रोक्षणी पात्र को प्रणीता और अग्नि के मध्य रख दे।

फिर अग्नि पर आज्य स्थाली को रख कर आज्य को डाले। घी तपने पर उल्मुक (जलते हुए तिनके को) लेकर अग्नि के चारों ओर घुमा कर उस उल्मुक को अग्नि में डाल दे। फिर स्रुव को हाथ में लेकर अग्नि में तपाकर संमार्जन कुशाओं के अग्रभाग से संमार्जन कर, कुशमूल से पिछले भाग को संमार्जन कर प्रणीता जल से अभ्युक्षण करे तथा स्रुव का प्रतपन कर दक्षिण दिशा की तरफ रख दे।

तदनन्तर घी को नीचे उतार कर पवित्र से उत्पवन करे। फिर घी को देखकर यदि उसमें अपद्रव्य हो उसे बाहर निकाल दे।

तदनन्तर फिर पवित्रे को धारण कर प्रोक्षणी स्थित जल का उत्पवन करे, फिर बायें हाथ में उपयमन कुशा को ग्रहण कर उठ कर तीन समिधाओं को घी से भिगो कर दाहिने

हाथ से चुप-चाप अग्नि में रख दे । स्रुव के मूल को चार अंगुल छोड़ शंख मुद्रा से प्रदीप्त अग्नि में प्रजापति का ध्यान करते हुए अन्वारम्भ करके आहुति दें । घृताहुति का शेष प्रोक्षणीपात्र में डालें ।

कुशकण्डिका

यथापरिमिते तुषकेशादिरहिते हस्तमात्र चतुरङ्गुलोच्छ्रितसन्मृदि्भः निर्मिते शास्त्र शुद्ध कुण्ड स्थण्डिले वा चतुरस्त्रां भूमिं त्रिभिः त्रिभिः कुशैः परिसमूह्य तान् कुशानैशान्यां परित्यज्य गोमयोदकेनोपलिप्य खदिरस्रुवमूलेन प्रागग्रं प्रादेशमात्रमुत्तरोत्तरक्रमेण त्रिरुल्लिख्य उल्लेखन-क्रमेण अनामिका अंगुष्ठाभ्यां मृदमुद्धृत्य पाणिनाऽभ्युक्ष्य सदाचार-पञ्चमहा-यज्ञादिक्रियावतां ब्रह्मक्षत्रियविशां गृहात् कांस्यपात्र सम्पुटे ऽग्निमानीय कुण्डस्थं स्थण्डिलस्थं वाऽऽग्नेय्यां निधाय कुण्डाभावे समेखलं स्थण्डिलं होमानुसारेण एकहस्तात्मकं द्विहस्तात्मकं कुर्यात् ।

अग्निं स्थाप्य तद्रक्षणार्थं किञ्चिन्निधाय पूजनं कुर्यात्—

ॐ अग्नि दूतं पुरोदधे हव्यवाहमुपब्रुवे । देवां-२ आसादयादिह । इत्यनेन संस्थाप्य ध्यायेत्—

ॐ चत्वारि शृंगाःत्रयो अस्य पादाः द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य । त्रिधा वद्धो वृषभो रौरवीति महोदेवो मर्त्यां आविवेश ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्नि वैश्वानर शाण्डिल्यगोत्र त्रिप्रवरान्वित मम सम्मुखो भव, इति प्रतिष्ठाप्य—ॐ भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः—इत्यनेन अग्निं पंचोपचारैः संपूज्य प्रार्थयेत् ।

ब्रह्मवरणी संकल्पः—ततः पुष्पचन्दन ताम्बूल वासांस्यादाय—

ॐ अद्येत्यादि देशकालौ संकीर्त्य अमुकगोत्रोत्पन्नोऽमुक शर्माहं (वर्माहं) अमुक विष्ण्वादि देव प्रतिष्ठा होमकर्मणि कृताकृतवेक्षण रूप ब्रह्मकर्मकर्तुममुक गोत्रममुक शर्माणं ब्राह्मणं एभिः पुष्पचन्दन ताम्बूल वासोभिः ब्रह्मत्वेन त्वामहं वृणे । वृतोऽस्मि इति प्रतिवचनम् ।

आचार्यं प्रार्थयेत्—आचार्य्यस्तु यथास्वर्गेशक्रादीनां वृहस्पतिः । तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन् ब्रह्मा भव द्विजोत्तम ॥

अस्य यज्ञस्य निष्पत्यै भवन्तोऽभ्यर्थिताः मया।

सुप्रन्नेन कर्तव्यं शान्तिकं विधिपूर्वकम् ॥

अस्मिन् होम कर्मणि त्वं मे आचार्यो भव, अहं भवानि इति प्रत्युक्तिः। त्वं मे ब्रह्मा भव, अहं भवानि इति प्रत्युक्तिः।

व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षया आप्नोति दक्षिणाम्।

दक्षिणया श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते ॥

ततोऽग्नेः दक्षिणतः परिस्तरण भूमिं परित्यज्य ब्रह्मोपवेशनार्थं शुद्धमासनं दत्त्वा तस्मिन् होमकर्मणि त्वं मे ब्रह्मा भव इत्युक्ते ब्रह्मलक्षण लक्षितं ब्रह्माणं अग्निप्रदक्षिणं कारयित्वा कल्पितासने उदङ्मुखोपवेश्य गन्धाक्षतादिभिः पूजयेत्।

ततः प्रणीतापात्रं सव्यहस्ते कृत्वा वारिणा परिपूर्य कुशैराच्छाद्य ब्रह्मणो मुखमवलोक्य ईक्षणमात्रेण ब्रह्मणा ऽनुज्ञातः अग्नेरुत्तरतः कुशोपरि निदध्यात्।

ततः परिस्तरणम्—वर्हिषश्चतुर्थभागमादाय चतुर्भिः चतुर्भिः दर्भैः आग्नेयादीशानान्तं, ब्रह्मणोऽग्निपर्यन्तं, प्रागग्रैः नैर्ऋत्याद् वायव्यान्तं, उत्तराग्रैः, अग्नितः प्रणीता पर्यन्तम् प्रागग्रैः कुशैः परिस्तरणं कुर्यात्।

अथासादनम्—अतो अग्नेरुत्तरतः पश्चिम दिशि पवित्रच्छेदनार्थं कुशत्रयं, पवित्र करणार्थं साग्रमन्तर्गर्भितं कुश पत्रद्वयम्। प्रोक्षणी पात्रम्, आज्यस्थाली, चरुस्थाली, सम्मार्जनार्थं कुशत्रयम्, उपयमनार्थं वेणीरूपं कुशत्रयम् समिधस्तिस्रः, पलाश्यः, स्रुवः, आज्यम्, षट्पञ्चशादुत्तरशतद्वयावच्छिन्नमतण्डुलपूर्णपात्रम् एतानि पवित्रच्छेदन कुशानां पूर्व-पूर्व दिशि क्रमेणासादनीयानि।

पवित्रकरणम्—ततः पवित्रच्छेदन कुशैरग्रतः प्रादेशमात्रं विहाय पवित्रे च्छित्वा पवित्र च्छेदन कुशान् मूलञ्चोत्तरतः क्षिपेत्।

ततः सपवित्रकरेण प्रणीतोदकं त्रिप्रोक्षणीपात्रे निक्षिप्य, अनामिकाऽङ्गुष्ठाभ्यां उत्तराग्रे पवित्रे गृहीत्वा त्रिरुत्पवनम्।

ततः प्रागग्रं प्रोक्षणीपात्रं वामहस्ते कृत्वा प्रणीतासन्निधौ निधाय अनामिकाङ्गुष्ठाभ्यां उत्तराग्रे पवित्रे गृहीत्वा त्रिरुत्पवनम्। ततः प्रागग्रं

प्रोक्षणीपात्रं वामहस्ते कृत्वा प्रणीता सन्निधौ निधाय अनामिकाऽङ्गुष्ठाभ्यां गृहीत पवित्राभ्यां तज्जलं किंचित् उत्क्षिप्य प्रणीतोदकेन पवित्रानीतेन उत्तानहस्तेन प्रोक्षणीमभिषिज्य प्रोक्षणी जलेन प्रस्तुत वस्तूनि क्रमेणैकैकशः प्रोक्ष्य असंचरे प्रणीता ऽग्न्योरन्तराले प्रोक्षणी पात्रं निदध्यात्।

आज्य-स्थाल्यां आज्यनिर्वापः। ततोऽधिश्रयणम्। ज्वलत्तृणादिक-मादायाज्यस्योपरि प्रदक्षिण क्रमेण भ्रामयित्वा तत् तृणादिकं वह्नौ क्षिपेत्।

एवमेव चरु स्थाल्यां चरुं क्षिप्य अधिश्रयेत्। ततः पूर्ववत् ज्वलत्तृणेन तं वेष्टयित्वा तृणं वह्नौ क्षिपेत्।

ततो चरुमुत्थाप्य आज्यस्य पश्चिमतो नीत्वा आज्यस्योत्तरतः स्थापयित्वा आज्यमग्नेः पश्चादानीय चरुं चानीय आज्यस्य उत्तरतो निदध्यात्।

अनामिकाऽङ्गुष्ठाभ्यां च धृताभ्यामुदग्राभ्यां पूर्वपवित्राभ्यां आज्यं उत्पूय (उत्क्षिप्य) अवेक्ष्य सत्यपद्रव्ये तन्निरसनं कृत्वा प्रोक्षणीश्च पूर्वपवित्राभ्यां उत्पूय तासु पवित्रे निदध्यात्।

ततः दक्षिण पाणिना स्रुवमादाय अधोमुखं अग्नौ त्रिः तापयित्वा वामहस्ते कृत्वा सम्मार्जन-कुशानामग्रैः अन्तरतो मूलैः बाह्यतः स्रुवमूर्ध्वमुखं सम्मृज्य प्रणीतोदकेन अभ्युक्ष्य पुनः पूर्ववत् प्रतप्य दक्षिणे निदध्यात्। पवित्रे प्रणीतापात्रेनिधाय स्रुवपूजनम्—ॐ आवाहयाम्यहं देवं स्रुवं शेवधिमुत्तमम्।

स्वाहाकार-स्वधाकार-बषट्कार-समन्वितम्।

अथ कुण्ड—पूजनम्

ततो यजमानः साचार्य ऋत्विक् प्रक्षालित पादपाणिराचान्तः प्राग्द्वारेण मण्डपं प्रविश्य दक्षिणद्वारसमीपे पश्चिमगतः उदङ्मुखः उपविश्य—भो गुर्वादयो यथाविहितं कर्म कुरुध्वम् इति सविनयं प्रार्थयेत्—यथायोग्यं करवाम इति प्रतिवचनम्।

तत्रादौ कुण्ड पूजा—

यजमानोऽग्न्यायतनाद् दक्षिणतः उपविश्य, आचार्यश्च कुण्डपश्चिमत उपविश्य, आचम्य प्राणानायम्य—

ॐ अपसर्पन्तु ते भूताः ये भूताः भूमिसंस्थिताः।

ये भूताः विघ्न कर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥ इति गौरसर्षपान् विकीर्य पञ्चगव्येन कुण्डं प्रोक्ष्य—ॐ गुरुभ्यो नमः, गणपतये नमः इति नत्वा हस्ते गन्धाक्षतपुष्प—जलानि आदाय—संकल्पं कुर्यात्। अद्येत्यादि केशकालौ संकीर्त्य० अमुकदेव प्रासादोत्सर्ग कर्मणि अग्नि-प्रतिष्ठां करिष्ये, तदंगतया संमार्जन मेखला योनि देवता स्थापनं कुशोदकेन कुण्डं प्रोक्ष्य अंजलौ पुष्पाणि आदाय कुण्डं स्पृष्ट्वा आवाहयेत्।

ॐ आवाहयामि तत्कुण्डं विश्वकर्म विनिर्मितम्।

शारीरं यच्च ते दिव्यमग्न्यधिष्ठानमद्भुतम्।

इत्यावाह्य— ॐ कुण्डाय नमः इति गन्धादभिः संपूज्य प्रार्थयेत्।

ये च कुण्डे स्थिताः देवाः कुण्डांगे याश्च देवताः।

ऋद्धिं यच्छन्तु ते सर्वे यज्ञसिद्धिं मुदान्विताः।

हे कुण्ड तव निर्माणं रचितं विश्वकर्मणा।

अस्माकं वाञ्छितां सिद्धिं यज्ञ सिद्धिं ददातु भो। इति संप्रार्थ्य कुण्डमध्ये विश्वकर्माणं पूजयेत्। विनियोगः—

ॐ विश्वकर्मन् इति मन्त्रस्य भौवन ऋषिः त्रिष्टुप् छन्दो विश्वकर्मा देवता विश्वकर्मपूजने विनियोगः।

ॐ विश्व कर्मन् हविषा वर्द्धनेन त्रातारमिन्द्रमकृणोरवध्यम्। तस्मै विशः समनमन्त पूर्वी रयमुग्रो विहव्यो यथासत्। उपयाम गृहीतोसींद्राय त्वा विश्वकर्मण एष ते योनिरिन्द्राय त्वा विश्वकर्मणे।

ॐ विश्वकर्मणे नमः, इति चन्दनादिभिः पूजयेत्।

अज्ञानात् ज्ञानतो वापि दोषाः स्युः खननोद्भवाः।

नाशाय त्वं हि तान् सर्वान् विश्वकर्मन्नमोऽस्तुते ॥ इति संप्रार्थ्य उपरिगतमेखलायां श्वेत वर्णालङ्कृतायां विष्णुमावाहयेत्।

विष्णो यज्ञपते देव दुष्ट दैत्य निषूदन।

विभो यज्ञस्य रक्षार्थं कुण्डो सन्निहितो भव। इत्यावाह्य

ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्। समूढमस्य पा॰ सुरे। इति

मन्त्रेण विष्णुं संपूज्य प्रथममेखलायै विष्णु देवत्यै श्वेत—वर्णालङ्कृतायै नमः । इति मेखलां च पूजयेत् ।

ततो मध्यमेखलायां रक्त वर्णालङ्कृतायां ब्रह्माणम्—

ॐ हंस पृष्ठ समारूढ देवदेव गदाभृत ।
रक्षार्थं मम यज्ञस्य कुण्डेऽस्मिन् सन्निधौ भव ॥ इत्यावाह्य

ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद् विसीमतः सुरुचो वेन आवः । स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनि मसतश्च विवः ॥

इति मन्त्रेण ब्रह्माणं संपूज्य—मध्यमेखलायै ब्रह्मदैवत्यै रक्त वर्णालङ्कृतायै नमः इति मेखलां च पूजयेत् ।

ततोऽधोमेखलायां कृष्णवर्णालङ्कृतायां रुद्रम् ।

ॐ गंगाधर महादेव वृषारूढ़ महेश्वर ।

आगच्छ भगवन् रुद्र कुण्डेऽस्मिन् सन्निधोभव ॥ इत्यावाह्य

ॐ नमस्ते रुद्रमन्यव उतोत इषवे नमः । वाहुभ्यामुतते नमः । इति रुद्रं संपूज्य तृतीयायै रुद्र दैवत्यै कृष्ण वर्णालङ्कृतायै मेखलायै नमः इति मेखलां च पूजयेत् ॥

अथ योनिपूजा—जगदुत्पत्ति हेतुकायै मनोभव युतायै नमो नमः । ॐ क्षत्रस्य योनि रसि क्षत्रस्य नाभि रसि । मात्वंहि० सीन्मामाहि० सीः । इति गन्धादिभिः संपूज्य प्रार्थयेत् ।

सेवन्ते महतीं योनिं देवर्षि सिद्ध मानवाः ।
चतुरशीति लक्षाणि पन्नगाद्याः सरीसृपाः ॥
पशवः पक्षिणः सर्वे संसरन्ति यतोभुवि ।
योनिरित्येव विख्याता जगदुत्पत्ति हेतुका ।
मनोभव युतादेवी रतिसौख्यप्रदायिनी ।
मोहयन्ती सुरान् सर्वान् जगद्धात्रि नमोऽस्तुते ।
योने त्वं विश्वरूपासि प्रकृतिविश्वधारिणी ।
कामस्था कामरूपा च विश्वयोन्यै नमोऽस्तुते । इति योनि-पूजा ।

अथ कण्ठपूजा। कण्ठः—खातमेखलयोरन्तराले एक द्वयङ्गुलात्मको देव-विशेषः—

जीवनं सर्वजन्तूनां स्रगादि स्थानमुत्तमम्।

उत्तमाङ्गस्य चाधारं कण्ठमावाहयाम्यहम्। इत्यावाह्य ॐ नील ग्रीवा शिति कण्ठा दिव॒ रुद्रा उपश्रिताः। तेषा॒ सहस्रयोजने ऽवधन्वानि तन्मसि॥ इति मन्त्रेण कण्ठं संपूज्य प्रार्थयेत्—

कण्ठमंगलरूपेण सर्व कण्ठे प्रतिष्ठितः।
परितो मेखलास्त्वत्तो रचिता विश्वकर्मणा।

ततो नाभिपूजा—पद्माकारा अथवा कुण्डसदृशाकृति विभ्रती। आधारः सर्व कुण्डानां नाभिमावाहयाम्यहम्। इत्यावाह्य—

ॐ नाभिर्मे चित्तं विज्ञानं पायुर्मेऽपचितिर्भसत्।

आनन्द नन्दावाण्डौ मे भगः सौभाग्यं पसः। जंघाभ्यां पद्भ्यां धर्मोऽस्मि विशि राजा प्रतिष्ठितः। इति मन्त्रेण संपूज्य प्रार्थयेत्—

नाभे त्वं कुण्डमध्ये तु देवैः सह प्रतिष्ठिता।
अतस्त्वं पूजिता देवि शुभदा ऋद्धिदा भव। इति नत्वा

ततः कुण्डमध्ये नैर्ऋति कोणे वास्तु-पुरुषं पूजयेत्। पुष्पाण्यादाय—आवाहयामि देवेशं पुरुषं च महावलम्। देव-देवं गणाध्यक्षं पातालतल वासिनम्। इत्यावाह्य—

ॐ वास्तोष्पते प्रति जानीह्यस्मान् स्वावेशो अनमीवो भवानः। यत्त्वेमहे प्रतितन्नो जुषस्व शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे॥ ॐ वास्तुपुरुषाय नमः इमं बलिं समर्पयामि—इति बलिं दत्त्वा प्रार्थयेत्—

अस्य देहे स्थिता क्षोणी ब्रह्माण्डं विश्वमण्डलम्। व्यापिनं भीमरूपं च सुरूपं विश्वरूपिणम्॥ पितामहसुतो मुख्यस्तुभ्यं वास्तुपतये नमः। इति संप्रार्थ्य शास्त्रोक्त विधानेन अग्नि स्थापयेत॥

इति कुण्ड पूजनम्

ततः उपयमनकुशान् वामकरे कृत्वा उत्तिष्ठन् तिस्रः घृताक्ताः समिधः प्रजापतिं मनसा ध्यात्वा समिद्धतमे अग्नौ तूष्णीं क्षिपेत्। उपविश्य ब्रह्मणा कुशैरन्वारब्धः उपयमन कुशसहितं प्रसारितांगुलिहस्तं हृदि निधाय स्रुवेणाज्याहुतिः दद्यात्।

प्रायश्चित्त-संज्ञकः होमः

तत्तदाहुत्यनन्तरं स्रुवावस्थित हुतशेष-घृतस्य प्रोक्षणीपात्रे प्रक्षेपः।

ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम।

ॐ इन्द्राय स्वाहा, इदमिन्द्राय न मम।

ॐ अग्नये स्वाहा इदमग्नये न मम।

ॐ सोमाय स्वाहा इदं सोमाय न मम।

ॐ भूः स्वाहा, इदमग्नये न मम।

ॐ भुवः स्वाहा, इदं वायवे न मम।

ॐ स्वः स्वाहा, इदं सूर्याय न मम। एताः महाव्याहृतयः।

अथ सर्वप्रायश्चित्त संज्ञकः वारुण होमः—

१. ॐ त्वन्नोऽग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो अवयासि सीष्ठाः। यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषा॥ सि प्रमुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा। इदमग्निवरुणाभ्याम्।

२. ॐ सत्वन्नो अग्ने वमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसौ व्युष्ठौ। अवयक्ष्वनो वरुण॥ रराणो वीहि मृडीक॥ सुहवो न एधि स्वाहा। इदमग्निवरुणाभ्याम्।

३. ॐ अयाश्चाग्नेऽस्य नभिशस्तिपाश्च सत्त्वमित्त्व मया असि। अयानो यज्ञं वहास्य यानो धेहि भेषज॥ स्वाहा। इदमग्नये।

४. ॐ ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशाः वितताः महान्तः। तेभिर्नो अद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा। इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च।

५. ॐ उदुत्तमं वरुण पाशमस्मद् वाधमं विमध्यमꣳ श्रथाय। अथा वयमादित्यव्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा। इदं वरुणाय न मम। अत्र प्रणीतोदक स्पर्शः। इति प्रायश्चित्त संज्ञकः होमः।

अथ प्रधान होमः—ॐ गणानान्त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनान्त्वा निधिपतिꣳ हवामहे वसो मम। आहम जानिगर्भधमात्वमजासि गर्भधं स्वाहा। इदं गणपतये।

१. नवग्रहादि होममन्त्रः

१. ॐ आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यञ्च। हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् स्वाहा, इदं सवित्रे।

२. ॐ इमं देवा असपत्नꣳ सुवध्वं महते क्षत्राय महते ज्यैष्ठाय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय। इमममुष्य पुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै विश एष वोमी राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानाꣳ राजा—स्वाहा, इदं सोमाय।

३. ॐ अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम्। अपाꣳ रेताꣳ सिजिन्वति—स्वाहा, इदं भौमाय।

४. ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्व मिष्टापूर्त्ते सꣳ सृजेथा मयं च। अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन्विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत—स्वाहा, इदं बुधाय।

५. ॐ बृहस्पते अतियदर्यो अर्हाद् द्युमद् विभाति क्रतुमज्जनेषु। यद्दीदयच्छवस ऋतः प्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम्—स्वाहा, इदं वृहस्पतये।

६. ॐ अन्नात्परिस्रुतो रसं ब्रह्मणा व्यपिवत्क्षत्रं पयः सोमं प्रजापतिः। ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳ शुक्रमन्धस इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु—स्वाहा, इदं शुक्राय।

७. ॐ शन्नो देवी रभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंय्योरभि स्रवन्तु नः—स्वाहा, इदं शनैश्चराय।

८. ॐ कयानश्चित्र आभुव दूती सदावृधः सखा। कयाशचिष्ठयावृत्ता, इदं राहवे।

९. ॐ केतुं कृण्वन्न केतवे पेशोर्मर्या अपेशसे। समुषद्भिरजायथा—स्वाहा, इदं केतवे।

२. अथ अधिदेवता होमः

१. ॐ त्र्यम्वकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्—स्वाहा इदं रुद्राय।

२. ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्। इष्णन्निषाण मुम्म इषाण सर्व लोकम्म इषाण—स्वाहा, इदमुमायै।

३. ॐ यदक्रन्द प्रथणं जायमान उद्यन्त्समुद्रादुतवा पुरीषात्। श्येनस्य पक्षा हरिण्यस्य बाहू उपस्तुत्यं महि जातं ते अर्वन्—स्वाहा, इदं स्कन्दाय।

४. ॐ विष्णोरराटमसि विष्णोः श्नप्त्रेस्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णो ध्रुवोऽसि। वैष्णवमसि विष्णवे त्त्वा स्वाहा, इदं विष्णवे।

५. ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो वेन आवः। स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः स्वाहा, इदं ब्रह्मणे।

६. ॐ सजोषा इन्द्रसगणो मरुद्भिः सोमं पिव वृत्रहा शूर विद्वान्। जहि शत्रूं रपमृधो नुदस्वाथा भयं कृणुहि विश्वतो नः—स्वाहा, इदमिन्द्राय।

७. ॐ असि यमो अस्यादित्यो अर्वन्नसि त्रितो गुह्येन व्रतेन। असि सोमेन समया विपृक्त आहूस्ते त्रीणि दिवि बन्धनानि—स्वाहा, इदं यमाय।

८. ॐ कार्षिरसि समुद्रस्य त्वा क्षित्या उन्नयामि। समापो अद्भिरग्मत समोषधीभिरोषधीः—स्वाहा, इदं कालाय।

९. ॐ चित्रावसो स्वस्ति ते पारमशीय स्वाहा, इदं चित्रगुप्ताय॥

३. प्रत्यधिदेवता होमः

१. ॐ अग्नि दूतम्पुरोदधे हव्यवाह मुपब्रुवे। देवां -२ आसादयादिह—स्वाहा, इदमग्नये।

२. अप्स्वन्तरमृतमप्सु भेषजमपामुत प्रशस्तिष्वश्वा भवत वाजिनः। देवीरापो यो व ऊर्मिः प्रतूर्त्तिः ककुन्मान् वाजसास्तेनायं वाजꣳ सेत—स्वाहा, इदमद्भ्यः।

३. ॐ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी। यच्छानः शर्म सप्रथाः—स्वाहा, इदं पृथिव्यै ॥

४. ॐ इदं विष्णु र्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्। समूढमस्य पा॒सुरे—स्वाहा, इदं विष्णवे।

५. ॐ त्रातार मिन्द्रमवितारमिन्द्र॒ हवे हवे सुहब॒ शूरमिन्द्रम्। ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्रम् स्वस्तिनो मघवा धात्विन्द्रः—स्वाहा, इदमिन्द्राय।

६. ॐ आदित्यै रास्नासीन्द्राण्या उष्णीय पूषासि धर्म्मायदीष्व स्वाहा। इदमिन्द्राय।

७. ॐ प्रजापते नत्वदेतान्यन्यो विश्वारूपाणि परि ता वभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्त्वयममुख्य पितासावस्थ पिता वयं स्याम पतयो रयीणाम् स्वाहा। इदं प्रजापतये।

८. ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु। ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः स्वाहा। इदं सर्पेभ्यः।

९. ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो वेन आवः। सवुध्न्या उपमा अस्य विष्टः सतश्च योनिमसतश्च विवः। इदं ब्रह्मणे।

४. अथ दशदिक्पालदेवता होमः

१. त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्र॒ हवे हवे सुहव॒ शूरमिन्द्रम्। हवयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्र॒ स्वस्तिनो मघवा धात्विन्द्रः—स्वाहा इदमिन्द्राय।

२. ॐ अग्निं दूतं पुरोदधे हव्यवाहमुपब्रुवे। देवां -२ आसादयादिह—स्वाहा, इदमग्नये।

३. ॐ असि यमो अस्यादित्यो अर्वन्नसि त्रितो गुह्येन व्रतेन। असि सोमेन समया विपृक्त आस्ते त्रीणि दिवि बन्धनानि—स्वाहा, इदं यमाय। अत्र प्रणीतोदक स्पर्शः।

४. ॐ एष ते निर्ऋते भागस्त जुषस्व—स्वाहा, इदं निर्ऋतये।

५. ॐ इमम्मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय। त्वामवस्युराचके—स्वाहा, इदं वरुणाय।

६. ॐ वातो वा मनो वा गन्धर्वाः सप्तविंशतिः। ते अग्रेऽश्वमयुञ्जस्ते अस्मिन् जवमा दधुः—स्वाहा, इदं वायवे।

७. ॐ वयं ७सोमव्रते तव मनस्तनूषु विभ्रतः। प्रजावन्तः सचेमहि—स्वाहा, इदं कुवेराय।

८. ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियं जिन्वमवसे हूमहे वयम्। पूषानो यथा वेदसा मसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये—स्वाहा, इदमीशानाय।

९. ॐ ब्रह्म जज्ञानम्प्रथमम्पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो वेन आवः। स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनि मसतश्च विवः। स्वाहा, इदं ब्रह्मणे।

१०. ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु। ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः स्वाहा, इदं सर्पेभ्यः।

५. अथ वास्तुदेवानां होमः

ॐ शिखिने स्वाहा, इदं शिखिने। ॐ पर्जन्याय स्वाहा, इदं०। पर्जन्याय। ॐ जयन्ताय स्वाहा, इदं०। ॐ कुलिशायुधाय स्वाहा इदम्०। ॐ सूर्य्याय स्वाहा इदं०। ॐ सत्याय स्वाहा इदं०। ॐ वायवे स्वाहा इदं०। ॐ पूष्णे स्वाहा इदं०। ॐ वितथाय स्वाहा इदं०। ॐ गृहक्षताय स्वाहा इदं०। ॐ गन्धर्वाय स्वाहा इदं०। ॐ भृंगराजाय स्वाहा इदं०। ॐ मृगाय स्वाहा इदं०। ॐ पितृभ्यः स्वाहा इदं०। ॐ दौवारिकाय स्वाहा इदं०। ॐ सुग्रीवाय स्वाहा इदं०। ॐ पुष्पदन्ताय स्वाहा इदं०। ॐ वरुणाय स्वाहा इदं०। ॐ असुराय स्वाहा इदं०। ॐ शेषाय स्वाहा इदं०। ॐ पापाय स्वाहा इदं०। ॐ रोगाय स्वाहा इदं०। ॐ सर्पाय स्वाहा इदं०। ॐ मुख्याय स्वाहा इदं०। ॐ भल्लाटाय स्वाहा इदं०। ॐ सोमाय स्वाहा इदं०। ॐ अदितये स्वाहा इदं०। ॐ दितये स्वाहा इदं०। ॐ अद्भ्यः स्वाहा इदं०। ॐ सावित्राय स्वाहा इदं०। ॐ जयाय स्वाहा इदं०। ॐ रुद्राय स्वाहा इदं०। ॐ अर्यम्णे स्वाहा इदं०। ॐ सवित्रे स्वाहा इदं०। ॐ विवस्वते स्वाहा इदं०। ॐ विवुधाधिपाय स्वाहा इदं०। ॐ मित्राय स्वाहा इदं०। ॐ राजयक्ष्मणे स्वाहा इदं०। ॐ पृथ्वीधराय स्वाहा इदं०। ॐ आपवत्साय स्वाहा इदं०। ॐ ब्रह्मणे स्वाहा इदं०। ॐ चरक्यै स्वाहा इदं०। ॐ विदार्य्यै स्वाहा इदं०। ॐ पूतनायै स्वाहा इदं०। ॐ

पापराक्षस्यै स्वाहा इदं० । ॐ स्कन्दाय स्वाहा इदं० । ॐ अर्यम्णे स्वाहा इदं० । ॐ जृम्भकाय स्वाहा इदं० । ॐ पिलिपिच्छाय स्वाहा इदं० । ॐ इन्द्राय स्वाहा इदं० । ॐ अग्नये स्वाहा इदं० । ॐ यमाय स्वाहा इदं० । ॐ निर्ऋतये स्वाहा इदं० । ॐ वरुणाय स्वाहा इदं० । ॐ वायवे स्वाहा इदं० । ॐ ईशानाय स्वाहा इदं० । ॐ ब्रह्मणे स्वाहा इदं० । ॐ अनन्ताय स्वाहा इदं० । ॐ उग्रसेनाय स्वाहा इदं० । ॐ डामराय स्वाहा इदं० । ॐ महाकालाय स्वाहा इदं० । ॐ अश्विभ्यां स्वाहा इदं० । ॐ दुर्गायै स्वाहा इदं० ।

६. अथ चतुःषष्टिः योगिनी होमः

१. ॐ दिव्य योगिन्यै स्वाहा० । २. ॐ महायोगिन्यै स्वाहा० । ३. ॐ सिद्धयोगिन्यै स्वाहा० । ४. ॐ गणेश्वर्य्यै स्वाहा० । ५. ॐ प्रेताक्ष्यै स्वाहा० । ६. ॐ डाकिन्यै० । ७. ॐ काल्यै० । ८. ॐ कालरात्र्यै स्वाहा० । ९. निशाचर्य्यै० । १०. ॐ कंकार्य्यै० । ११. ॐ रौद्रवैताल्यै० । १२. ॐ भूतल्यै० । १३. ॐ भूतडामर्य्यै० । १४. ॐ ऊर्ध्वकेश्यै० । १५. ॐ विरूपाक्ष्यै० । १६. ॐ शुष्काङ्ग्यै० । १७. ॐ नरभोजिन्यै० । १८. ॐ भट्टार्य्यै० । १९. ॐ वीरभद्रायै० । २०. ॐ धूम्राक्ष्यै० । २१. ॐ कलिप्रियायै० । २२. ॐ राक्षस्यै० । २३. ॐ घोर रक्ताक्ष्यै० । २४. ॐ विरूपाक्ष्यै० । २५. ॐ भयङ्कर्य्यै० । २६. ॐ चण्डिकायै० । २७. ॐ वीरकौमार्य्यै० । २८. ॐ वाराह्यै० । २९. ॐ मुण्डधारिण्यै० । ३०. ॐ सासुर्य्यै० । ३१. ॐ रौद्र झंकार भाषिण्यै० । ३२. ॐ त्रिपुरान्तकायै० । ३३. ॐ भैरवध्वंसिन्यै० । ३४. ॐ क्रोध दुर्मुख्यै० । ३५. ॐ प्रेतवाहिन्यै० । ३६. ॐ खट्वाङ्ग्यै० । ३७. ॐ दीर्घलम्बोष्ठ्यै० । ३८. ॐ मालिन्यै० । ३९. ॐ मन्त्रयोगिन्यै० । ४०. ॐ कालाग्नि ग्रहण्यै० । ४१. ॐ चक्र्यै० । ४२. ॐ कंकाल्यै० । ४३. ॐ भुवनैश्वर्य्यै० । ४४. ॐ कटक्यै० । ४५. ॐ कटिन्यै० । ४६. ॐ रौद्र्यै स्वाहा । ४७. ॐ यम दूत्यै० । ४८. ॐ करालिन्यै० । ४९. ॐ घोराक्ष्यै० । ५०. ॐ कार्मुक्यै० । ५१. ॐ काकदृष्ट्यै० । ५२. ॐ अधोमुख्यै० । ५३. ॐ मुण्डाग्रधारिण्यै० । ५४. ॐ व्याघ्र्यै० । ५५. ॐ किंकिण्यै० । ५६. ॐ प्रेतभक्षिण्यै० । ५७. ॐ कालरूपायै० । ५८. ॐ कामाख्यायै० । ५९. ॐ उष्ट्रिण्यै० । ६०. ॐ योगपीठायै० । ६१. ॐ

महालक्ष्म्यै० । ६२. ॐ कवीरायै० । ६३. ॐ कालरात्र्यै० । ६४. ॐ पीठकायै स्वाहा ॥

अनेन होमेन चतुःषष्टियोगिन्यः प्रीयन्ताम् ॥

७. अथ क्षेत्रपाल होमः

१. ॐ अजराय स्वाहा । २. ॐ आपकुम्भाय० । ३. इन्द्रस्तुत्ये० । ४. इडाचाराय० । ५. उक्तसंज्ञाय स्वाहा । ६. ॐ कूष्माण्डाय० । ७. ॐ ऋषिसूदनाय स्वाहा । ८. ॐ ऋमुक्ताय० । ९. ॐ क्लृप्त केशाय० । १०. ॐ लृपकाय० । ११. ॐ एकदंष्ट्राय० । १२. ॐ ऐरावताय० । १३. ॐ ओघवन्धवे० । १४. औषधीशाय० । १५. अंजनाय० । १६. अस्त्रावाराय० । १७. ॐ कवलाय० । १८. ॐ खरुखानलाय० । १९. ॐ गोमुख्याय० । २०. ॐ घण्टादाय० । २१. ॐ ङ्मनसे० । २२. ॐ चण्डिवारणाय० । २३. ॐ छटाटोपाय० । २४. ॐ जटालाय० । २५. ॐ झंगीवाय० । २६. जडश्चराय० । २७. ॐ टंकपाणये० । २८. ॐ ठानबन्धवे० । २९. ॐ डामराय० । ३०. ढक्कारवाय० । ३१. ॐ णवार्णवाय० । ३२. ॐ तडिद्देहाय० । ३३. ॐ थिराय० । ३४. ॐ दन्तुराय० । ३५. ॐ धनदाय० । ३६. ॐ नत्तिक्तांताय० । ३७. ॐ प्रचण्डकाय० । ३८. ॐ फट्काराय० । ३९. ॐ वीर संघाय० । ४०. ॐ भृंगाय० । ४१. ॐ मेघभासुराय० । ४२. युगान्ताय० । ४३. ॐ एह्यवाय । ४४. ॐ लम्बोष्ठाय० । ४५. ॐ बासवाय० । ४६. शूकनन्दाय० । ४७. षडालाय० । ४८. ॐ सुनाम्ने० । ४९. ॐ हंबुकाय स्वाहा ॥

इति क्षेत्रपाल होमः

८. सर्वतोभद्र होमः

ॐ ब्रह्मणे स्वाहा । ॐ सोमाय स्वाहा । ॐ ईशानाय स्वाहा । ॐ इन्द्राय स्वाहा । ॐ अग्नये स्वाहा । ॐ यमाय स्वाहा । ॐ निर्ऋतये स्वाहा । ॐ वरुणाय स्वाहा । ॐ वायवे स्वाहा । ॐ अष्ट वसुभ्यः स्वाहा । ॐ एकादशरुद्रेभ्यः स्वाहा । ॐ द्वादशादित्येभ्यः स्वाहा । ॐ अश्विभ्यां स्वाहा । ॐ सपैतृक विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा । ॐ सप्तयक्षेभ्यः स्वाहा । ॐ नागेभ्यः स्वाहा । गन्धर्वाप्सरोभ्यः स्वाहा । ॐ स्कन्दाय स्वाहा । ॐ नन्दीश्वराय

स्वाहा। ॐ शूलाय स्वाहा। ॐ ॐ महाकालाय स्वाहा। ॐ दक्षादिभ्यः स्वाहा। ॐ दुर्गायै स्वाहा। ॐ अद्भ्यः स्वाहा। ॐ मरुद्भ्यः स्वाहा। ॐ पृथिव्यै स्वाहा। ॐ गंगादिभ्यः स्वाहा। ॐ सप्तसागरेभ्यः स्वाहा। ॐ मेरवे स्वाहा। ॐ गदायै स्वाहा। ॐ त्रिशूलाय स्वाहा। ॐ वज्राय स्वाहा। ॐ शक्तये स्वाहा। ॐ दण्डाय स्वाहा। ॐ खड्गाय स्वाहा। ॐ पाशाय स्वाहा। ॐ अंकुशाय स्वाहा। ॐ गौतमाय स्वाहा। ॐ भारद्वाजाय स्वाहा। ॐ विश्वामित्राय स्वाहा। ॐ कश्यपाय स्वाहा। ॐ जमदग्नये स्वाहा। ॐ कौमार्यै स्वाहा। ॐ ब्राह्मण्यै स्वाहा। ॐ वाराह्यै स्वाहा। ॐ चामुण्डायै स्वाहा। ॐ वैष्णव्यै स्वाहा। ॐ माहेश्वर्यै स्वाहा। ॐ वैनायक्यै स्वाहा ॥५७ ॥ इति सर्वतोभद्र होमः।

९. अथ लिंगतोभद्र होमः

ॐ असितांग भैरवाय स्वाहा। रुरु भैरवाय०। क्रोध भैरवाय०। चण्डभैरवाय स्वाहा। ॐ उन्मत्त भैरवाय स्वाहा। ॐ कपाल भैरवाय स्वाहा। ॐ भीषण भैरवाय स्वाहा। ॐ संहार भैरवाय स्वाहा ॥८ ॥

इति लिंगतोभद्र होमः

अथ प्रधान होमः

ॐ नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शंकराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च स्वाहा ॥१०८ आहुतिः !

(विष्णो :) ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्। समूढमस्य पा॑ᳫ सुरे स्वाहा, १०८ आहुतिः ॥

(गणपते :) ॐ गणानान्त्वा गणपतिᳫहवामहे प्रियाणांत्वा प्रियपतिᳫहवामहे निधीनां त्वा निधिपतिᳫहवामहे। वसो मम आहमजासि गर्भधम्। मात्वमजासि गर्भधम् ॥ १०८ आहुतिः ॥

(देव्या :) ॐ अम्बे अम्बिके अम्बालिके न मानयति कश्चन।

ससत्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम् ॥१०८ ॥

यहां जिस भी देवता की प्रतिमा की स्थापना करनी हो उसी देवता के मन्त्र से, उसके गायत्री मन्त्र से या नाम मन्त्र से १०८ आहुति देना होगा ॥ इति प्रधान होमः ॥

यहां प्रथम दिवस का कृत्य समाप्त करना होगा।

इसके आगे कर्मकुटी की स्थापना तथा जलाधिवास एवं धान्याधिवास-सायंकाल को निष्पन्न करना चाहिए। प्रतिमा को धान्य या अन्न में अधिवासन रात्रि को ही हो सकता है।

अधिवासनम्

संस्कारो गन्धमाल्याद्यैः यः स्यात् तदधिवासनम् इति कोषकारः। अधिवास्यन्ते देवाः यस्मिन् इति व्युत्पत्या अधिवासन शब्दः कर्मविशेषो रूढः, तेन च पूजादि होमान्तस्य आवृत्तिरत्र अभिधीयते। यतः आरभ्य अधिवसति शब्दः प्रयुज्यते—स एव कर्मकलापोऽधिवासन शब्देन उच्यते। तत्र यद्यपि अन्नाधिवासः, गन्धाधिवासः, पुष्पाधिवासः, घृताधिवासः फलादि—अधिवासः, जलाधिवासः, शय्याऽधिवासः इत्यादयोऽधिवासाः उक्ताः, तथापि शय्याधिवासस्यैव अत्र प्राधान्येन ग्रहणम्।

देवप्रतिष्ठा कर्म में यदि इतने अधिवासनों का काम चलेगा तो इस विधान में पांच-पांच दिन भी लग जायेंगे। प्रत्येक अधिवासन-परक होम भी होना चाहिये। सभी अधिवासनों के होम की प्रक्रिया भी प्राप्त नहीं है, फिर इन अधिवासनों के हवन करने में ही समय-यापन होगा, प्राधान्य कार्य गौण हो जायेगा। प्रतिमा को शय्याधिवासन करवाने पर ही विधान पूरा होगा, शय्याधिवासन के कारण ही शेष प्रक्रिया आरम्भ होगी। इसलिये शय्याधिवासन ही प्रमुख अधिवासन है, जहां से उठकर प्रतिमा का पूजनादि विधान हो सकेगा। विना शय्याधिवासन के शेष अधिवासन महत्त्वहीन हो जाते हैं, जहां से उठकर प्रतिमा का पूजनादि विधान हो सकेगा। बिना शय्याधिवासन के शेष अधिवासन महत्त्वहीन हो जाते हैं। बार-बार उन की गई प्रक्रियाओं को दोहराने का भी महत्त्व नहीं रह जाता। एक बार वास्तु मण्डल आदि का पूजन करने के पश्चात् पुनः-पुनः उन मण्डलों का पूजन भी युक्ति-संगत प्रतीत नहीं होता।

अथ जलाधिवासनम्

ग्रन्थकारों ने देवमूर्ति का अधिवासन नदी, तालाब आदि में करने का संकेत किया है, ऐसी स्थिति सभी जगह नदी-तालाब का प्राप्त होना कठिन है, इसलिए प्रतिमा को कलश से स्नान करवा कर ही जलाधिवासन की प्रक्रिया पूरी करनी चाहिये।

अधिवासन का कार्य सायंकाल को ही करना चाहिये।

अथ अधिवासनम्

कर्म कुटीकर्म

जिस स्थान पर मूर्ति का निर्माण किया गया हो, वही कर्म-कुटी का स्थान है, मूर्ति निर्माण यदि बाहरी प्रदेश में हुआ हो तो जिस स्थान पर मूर्ति लाकर रखी गई है, उसी को कर्म-कुटी मानना होगा। उसी स्थान को शिल्पिशाला स्वीकार करना होगा। वहीं इस कर्म को करना चाहिए।

अथ सायंकाले विष्णोर्वा शंकरस्य अन्यदेवस्य वा अधिवासनं कुर्य्यात्।

तत्राचार्यो यजमान—ऋत्विक्—सुवासिनी-सहितः तूर्यघोषेण शिल्पिशालां गत्वा देवस्य अग्रे कलशस्थापन-विधिना कलशं संस्थाप्य प्रतिष्ठां च कृत्वा तीर्थानि आवाहयेत्।

ॐ काशी कुशस्थली मायाऽवन्त्ययोध्या मधोः पुरी।
शालिग्रामःसगोकर्णः नर्मदा च सरस्वती ॥१ ॥
तीर्थान्येतानि कुम्भेऽस्मिन् विशन्तु ब्रह्मशासनात्।
गंगाद्याः सरितः सर्वाः समुद्राश्च सरांसि च।
वृषारूढा सरोजाक्षा पद्‌महस्ता शशीप्रभा ॥२ ॥
आगच्छतु सरिज्ज्येष्ठा गंगा पाप-प्रणाशिनी ॥
नीलोत्पलदलश्यामा पद्म हस्ताम्बु-जेक्षणा ॥३ ॥
आयांतु यमुना देवी कूर्मयान स्थिता सदा।
प्राची सरस्वती पुण्या पयोष्णी गौतमी तथा।
उर्मिला चन्द्रभागा च सरयू गण्डकी तथा ॥४ ॥
एताः नद्याश्च तीर्थानि गुह्य क्षेत्राणि सर्वशः।
तानि सर्वाणि कुम्भेऽस्मिन् विशन्तु ब्रह्मशासनात् ॥५ ॥

इत्यादि तीर्थान्यावाहयेत। कुम्भस्य चतुर्दिक्षु विदिक्षु च ॐ इन्द्राय नमः। ॐ अग्नये नमः। ॐ यमाय नमः। ॐ निर्ऋतये नमः। ॐ वरुणाय नमः। ॐ वायवे नमः। ॐ कुवेराय नमः। ॐ ईशानाय नमः इति दिग्पालान् गन्धादिभिः संपूज्य ततः प्रतिमादिषु न्यूनातिरिक्त पाषाण दोष प्राणिवधादि दुर्निमित्तोप शमनार्थं प्रतिमा योग्यं स्थण्डिलं कृत्वा तत्र भू-संस्कारान् कृत्वा तत्राग्नि

प्रतिष्ठाप्य प्राणानायम्य देशकालौ संकीर्त्य प्रतिमानिर्माणे प्राणिवधादि दोष-निरासार्थं दुर्निमित्तोपशमनाय घृतेन तिलैर्वा होमं करिष्ये इति संकल्प्य ब्रह्मोपवेशनादि आघारवाज्यभागौ हुत्वा देवमन्त्रेणाज्याहुति शतद्वयं शमीपल्ल्वाक्षतैः घृतैः तिलैः वा—ॐ परं मृत्योः अनुपरेहि पन्थां यस्ते इतरो देवयानात्। चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मानः प्रजा॰ रीरिषो मोत वीरान् स्वाहा। इति मन्त्रेण मृत्यवे १०८ आहुति दद्यात्॥ ॐ अघोरेभ्यो अथ घोरेभ्यो घोर-घोर तरेभ्यः। सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्र रूपेभ्यः। तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्॥ इति मन्त्रेण अथवा ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धानान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्॥ इति मन्त्रेण—ॐ यद्ग्रामे यदरण्ये यत्सभायां यदिन्द्रिये। यदेनश्च कृमा वयमिदं तदेव यजामहे स्वाहा॥ इत्यनेन च अष्टोत्तरशतं हुत्वा पूर्णाहुतिं हुत्वा देवं प्रार्थयेत्—

ॐ त्वयि संपूजयामीशं नारायणमनामयम्।
रहितः सर्वदोषैस्त्वमृद्धियुक्तः सदा भव॥१॥
सर्वसत्त्वमयं शान्तं परब्रह्म सनातनम्।
त्वामेवालंकरिष्यामि त्वं वन्द्यो भवते नमः॥ इति प्रार्थ्य—

प्रतिमां कुशैः संमार्ज्य तूर्य-सुवासिनीगीत-वेदघोषेण मध्वाज्याभ्यंगेन देवस्य व्रणभंगः कार्यः॥ एवं व्रणभंगं कृत्वा मृदा गोमयेन गोमूत्रेन भस्मना क्षीरेण च पृथक्-पृथक् जलान्तरितेन स्नापयित्वा गन्धादिभिरभ्यर्च्य सितपुष्पैः संपूज्य सुवर्णपात्रे मधुसर्पिषि संस्थाप्य सुवर्णशलाकया मधुसर्पिभ्यां नेत्रे आपूर्य मधूच्छिष्टेन नेत्रावरणं च कृत्वा पश्चात् स्थापित कुम्भोदकेन देवं संस्नाप्य शिल्पिना यजमानाय दापयेत्। ततः यजमानः शिल्पिवर्गं वस्त्रालंकारैः सन्तोष्य प्रतिमां गृहीत्वा आचार्यं प्रार्थयेत्—भो गुरो, प्रतिमां सावयवां निरीक्षस्व। आचार्यो हि प्रतिमां सावयवां निरीक्षेत्, ततो देवस्य दक्षिणहस्ते सितोर्णादि सूत्र निर्मित सर्वौषधिः मनःफल सहित आचार्य वितस्तिमात्रं दोरकं मूलमंत्रेण वध्नीयात्।

इति कर्म कुटी कर्म॥

अथ जलाधिवासः

ततः आचार्यः ऋत्विग्भिः सह शंख-तूर्य-वेद ध्वनि-सुवासिनीभिः मंगलगीतैः शिल्पिस्थानात् सवस्त्रां प्रतिमां रथे आरोपयति। तत्र मन्त्रः—ॐ रथे तिष्ठन्नयति वाजिनः पुरो यत्र-यत्र कामयते सुषारथिः। अभीशूनां महिमानं पनायत मनः पश्चादनु यच्छन्ति रश्मयः।

इति मन्त्रेण रथे आरोप्य शनैः शनैः जलाधिवास स्थाने गच्छेत। ततो जलसमीपे मूर्तिमवस्थाप्य तस्याग्रे पुण्याह वाचनं स्वस्तिवाचनं वा कृत्वा, ततो जले पञ्चगव्यं प्रक्षिप्य देवं मूलमन्त्रेण जले अधिवासयेत्।

संकल्पः—देशकालौ संकीर्त्य सग्रहमख-सप्रासाद-शिवादिमूर्त्तीनां अचल प्रतिष्ठाकर्मणि गणेश पूजन-पूर्वकं जलमातृ-जीवमातृ-योगिनी-क्षेत्रपाल-जल-वरुण पूजनं च करिष्ये। गणानां-त्वा० गणपतये नमः। सिद्धिबुद्धि सहिताय गणाधीशाय इदं सदीप-दधि-माष-भक्तबलिं समर्पयामि।

अथ जलमातृः जले पूजयेत्—ॐ मत्स्यै नमः। कच्छप्यै०। कूर्म्यै०। वाराह्यै०। दुर्दुर्य्यै०। शिशुमार्य्यै०। ईश्वर्य्यै०। इति नाममन्त्रेण सम्पूज्य। अथ जीवमातृ० अक्षत पुञ्जेषु पूजयेत्। ॐ मत्स्यै नमः। हृद्यैः०। गोधायैः०। मकर्य्यै०। डुण्डुभ्यै०। दर्दुर्य्यै०। जल्यै०। इति सम्पूज्य—चतुःषष्टि योगिनीभ्यो नमः इति जले योगिनीं पूजयेत्।

ततो वायव्यां क्षेत्रपालपूजनम्—अक्षत पुञ्जोपरि। ॐ क्षत्रस्य योनिरसि क्षत्रस्य नाभिरसि। मा त्वा हिंसी मा मा हिंसीः। ॐ भू० क्षेत्रपालाय नमः इति सम्पूज्य ततः स-दीप-दधि-माष भक्त-बलिं दद्यात्। क्षेत्रपाल महाबाहो महाबलपराक्रम। क्षेत्राणां रक्षणार्थाय बलिं गृह्ण नमो नमः॥ इति जलमातृः पूजनम्।

ॐ अद्भ्यो नमः, सप्तसागरेभ्यो नमः, मानसादि सप्तसरोभ्यो नमः। पुष्करादि तीर्थेभ्यो नमः। ॐ गंगादि महानदीभ्यो नगः। इति गन्धाक्षतान् जले क्षिपेत। ततो वरुण पूजा।

जलाधिवासके मन्त्र—ॐ अवते हेडो वरुण नमोभिरव यज्ञेभिरीमहे हविर्भिः। क्षयन्न स्मभ्यः सुरप्रचेता राजन्नेनांसि शिश्रिथः कृतानि। उदुत्तमं वरुण पाशमस्मद् वाधमं विमध्यमं श्रथाय। अथावयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम।

ॐ तत्त्वायामि०। ॐ पञ्चनद्येति मन्त्रेण जले क्षिपेत। जलस्थितं देवं प्रार्थयेत्। जलाधिवासिना देव मम भाग्योदयं कुरु। त्वदधिष्ठानसंयोग्यं त्वत्प्रसादात् सुरेश्वर॥ तत आचार्याय गां दक्षिणां वा दद्यात्। मुहूर्त मात्रं जलेऽधिवासयेत्। प्रतिमा को जल में गोदोहन में जितना समय लगता है, उतने समय तक ही रखना अभीष्ट है।

ततो घटिका द्वयानन्तरं जलान्निष्काष्य—ॐ उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवयन्तस्त्वेमहे। उप प्रयन्तु मरुतः सुदानव इन्द्र प्राशूर्भवा स चा॥ उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गोविन्द उत्तिष्ठ गरुडध्वज। उत्तिष्ठ कमलाकान्त त्रैलोक्यमंगलं कुरु॥ इति उत्थाप्य देवं महामण्डप प्रादक्षिण्येन यागमण्डपे आनयेत। ततो यागमण्डपनैर्ऋत्यां देवमन्नाधिवासयेत्।

अथान्नाधिवासनम्

तच्च मण्डपस्य यथोक्तकोणे धान्यराशिषु सप्तसु सर्वेषां देवानां उपवेशनं कृत्वा व्रीहिभिः वा देवमाच्छादयेत, यावद्धान्येषु प्रतिमा प्रतिष्ठिता तावत् पुरुषसूक्तं पठेत्॥ ततो भूमौ प्रशस्तधान्यं विकीर्य तस्योपरि वस्त्रं प्रसार्य—ॐ धान्यमसि धिनुहि देवान् प्राणाय त्वोदानाय त्वा व्यानाय त्वा। दीर्घामनु प्रसितिमायुषे धां देवो वः सविता हिरण्यपाणिः प्रतिगृभ्णात्वच्छिद्रेण चक्षुषे त्वा महीनां पयोसि॥ इति देवं स्वापयेत। देवोपरि वस्त्रमाच्छाद्य तस्योपरि प्रचुरं धान्यं विकिरेत। गन्धाक्षत कुशांश्च क्षिपेत॥ इति धान्याधिवासः।

अन्नाधिवासन करते समय पृथिवी पर वस्त्र फैला दे—तब स्थापित करने वाली सभी देव प्रतिमाओं को रख कर—अन्न आदि को फैला दें—तथा उन प्रतिमाओं को वस्त्र से ढांक दें॥

द्वितीय दिन का कृत्य

दूसरे दिन मण्डप में प्रवेश करके स्वस्ति वाचन करे, नवग्रह-वास्तु-योगिनी क्षेत्रपाल-प्रधान देव का नाममन्त्रों से पूजन कर—नवग्रह एवं देवमन्त्र से हवन करके देवस्नपन आदि कार्य को आरम्भ करे। इसी दिन, प्रासाद-अधिवासन—प्रासाद स्नपन, प्रासाद वास्तुपूजन, प्रासाद न्यास, प्रासाद शिखर प्रतिष्ठा, प्रासादोत्सर्ग, न्यास विधि, शिखर कलश प्रतिष्ठा, ध्वजारोहण, एवं शय्याधिवासन कर्म करें।

देवस्नपन विधिः

आचार्यः स्नानमण्डपे देवं—ॐ नमो नारायणाय, ॐ नमः शिवाय इत्यादिना प्रधानं—स्थाप्य देवमन्त्रेण पञ्चगव्यमभिमन्त्र्य तेन सर्व स्नानमण्डपं सम्प्रोक्ष्य वेदिकात्रये प्रकीर्ण-वालुके अक्षतैः स्वस्तिकं आलिख्य तत्र भद्रपीठ त्रयं निधाय विश्वकर्माणं ध्यायेत—ॐ विश्वकर्मा तु कर्तव्यः श्मश्रुलो मांसलाधरः। सन्दंशपाणिः द्विभुजस्तेजो मूर्तिः प्रतापवान्॥ इति ध्यात्वा ततः सप्तधान्येषु त्रिसूत्रावेष्ठित सपल्लव—वारिपूर्ण षट् कलशानां "आजिघ्रकलशं" इत्यादि मंत्रैः स्थापनम्।

१. तत्र दक्षिण वेद्याः—पश्चात् द्वादश कलशाः उदक्संस्थाः प्राक्संस्थाः वा अत्रान्यो द्वादशः स्थपति—संज्ञकः कलशः। तत्र क्रमेण पञ्चसु कलशेषु मृत्तिका। पञ्चपल्लववृक्षीय कषायः। गोमयम्, भस्म। इति प्रक्षिप्य शेषेषु गन्धोदकं प्रक्षिपेत।

२. एवं मध्य—वेद्ये पश्चात् एकादश कलशाः पूर्वोक्तद्रव्ययुताः स्थाप्याः। नात्र स्थपति कलशो द्वादशः।

३. उत्तरवेद्ये—पश्चात् प्रथमपंक्तौ पञ्चशुद्धोदक—कलशाः।

४. द्वितीय पंक्तौ विंशति कलशाः। तत्र विषमेषु अष्टपल मृत्तिका, सप्तपलगोमयम्, द्वादशपलं गोमूत्रम्, मुष्टिमितं भस्म। त्रिपलं पञ्चगव्यम्, षोडशपलं क्षीरं, विंशति पलं दधि। सप्तपलं घृतम्, त्रिपलं मधु, त्रिपलं शर्करा इति क्षिपेत्। समेषु शुद्धोदकमेव।

५. तृतीय पंक्तौ द्वौ कलशौ शुद्धोदकयुतौ।

६. चतुर्थ पंक्तौ षट्—तत्राद्ये पञ्चामृतम्। अन्येषु शुद्धोदकम्।

७. पञ्चम पंक्तौ चतुर्दश कलशाः तेषु क्रमेण—गन्धः। पञ्चपल्लवकषायः। सर्वौषधयः। सितपुष्पाणि, शान्त्युदकम्, अष्टौ फलानि, सुवर्णम्, गोशृंगोदकम्, सप्तधान्यानि, सहस्त्रच्छिद्रकलशं तत्सहायार्थोऽप्येकः। पुनः दिव्याः सर्वौषधयः पञ्चपल्लवाः, रत्नानि नव, तीर्थोदकम् इति प्रक्षिपेत्।

८. वेदिकेऽष्टौ पूर्वाद्यष्टदिक्षु—समुद्रसंज्ञकाः कलशाः।

९. एतान्कलशान्—

१. हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्। स दाधार पृथिवीं द्यामुते मां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥१ ॥

२. ॐ यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव। य ईशे अस्य द्वि पदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥२ ॥

३. ॐ यस्येमे हिमवन्तो महित्वा यस्य समुद्र॰ रसया सहाहुः। यस्येमाः प्रदिशो यस्य बाहू कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥३ ॥

४. ॐ य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः। यस्य छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥२५ ।१३

५. आपो ह यद् बृहतीर्विश्वमायन गर्भं दधाना जनयन्तीरग्निम्। ततो देवानां समवर्ततासुरेकः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥२७ ।२५

६. ॐ यश्चिदापो महिना पर्यपश्यद् दक्षं दधाना जनयन्तीर्यज्ञम्। यो देवेष्वधि देव एकः आसीत् कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥२७ ।२६

७. ॐ येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्वः स्तभितं येन नाकः। यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥३२ ।६

८. ॐ वेनस्तत्पश्यन्निहितं गुहा सद्यत्र विश्व भवत्येकनीडम्। तस्मिन्निदं सं च वि चैति सर्व॰ स ओतः प्रोतश्च विभूः प्रजासु ॥ य० ३२ ।८

इति मन्त्रैः कलशाः विन्यस्य तेषु क्षारोदकं, क्षीरम्, दधि, घृतम्, इक्षुरसः, सुरोदकम्, स्वादूदकम्, गर्भोदकम्, इति प्रक्षिपेत्। षष्ठ पंक्तौ दश तेषु कदम्ब, शाल्मली, जम्बू, अशोक, प्लक्ष, चूत, बटः विल्व, नाग, पलाश पत्राणि निक्षिपेत। एषु दशसु क्रमेण लोकपालान् अपि आवाहयेत्। सप्तम पंक्तौ—चत्वारो वृहत्

कलशाः, एको वा । सूक्ष्मसितवस्त्रं, सुगन्ध तैलं, यव, शालि, गोधूम, मसूरिका, बिल्व, आमलकचूर्णं उद्वर्तनार्थम् । अन्यत्तु सुगन्धि वस्तु च ॥ कस्तूरिकायाः द्वौ भागौ, द्वौ भागो कुंकुमस्य च चन्दनस्य त्रयाः भागाः शशिनस्त्वेक एव हि ॥" इति लक्षणकं यक्षकर्दमं जटामांसी चासादयेत् ॥ ततः पंचमपंक्तिस्थे अन्तिमे चतुर्दशे तीर्थोदक कलशे—सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः । आयान्तु यजमानस्य दुरितक्षयकारकाः ॥ इति तीर्थान्यावाहयेत् । इति देवस्नपनद्रव्य प्रकारः ॥

अथ देवस्नपनम्

शंखादि नादेन रथादिना महामण्डप-प्रादक्षिण्येन स्नान-मण्डपं आनयेत् । गुरुदक्षिणवेद्यां कुशास्तृते—ॐ स्तीर्णं वर्हिः सुष्टरीमा जुषाणोरु पृथुप्रथमानम्पृथिव्याम् । देवेभिर्युक्तमदितिः सजोषाः स्योनं कृण्वाना सुविते दधातु ।२९/४ ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रम्पश्येमाक्षभिर्यजत्राः । स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवा ᳪ सस्तनूभिर्व्यशे महि देव हितं यदायुः ॥ इति मन्त्राभ्यां प्राङ्मुखं देवं निवेश्य स्थपति संज्ञं कलशं हिरण्यवस्त्र रत्नादिक सहितं देवसमीपे निधाय तत्र तीर्थान्यावाहयेत् ।

तद्यथा—काशी कुशस्थली मायाऽवन्त्ययोध्या मधोः पुरी । शालिग्रामं सगोकर्णं नर्मदा च सरस्वती ॥१ ॥ तीर्थान्येतानि कुम्भेऽस्मिन् विशन्तु ब्रह्मशासनात् ॥ झषारूढा सरोजाक्षि पद्महस्ता शशिप्रभा ॥२ ॥ आगच्छतु सरिज्ज्येष्ठा गंगापापप्रणाशिनी । नीलोत्पलदलश्यामा पद्म-हस्ताम्बुजेक्षणा ॥३ ॥ आयांतु यमुना देवी कूर्मयान स्थिता सदा । प्राची सरस्वती पुण्या पयोष्णी गौतमी तथा ॥४ ॥ ऊर्मिला चन्द्रभागा च सरयूर्गण्डकी तथा । जम्वुका च शतद्रुश्च कलिंगा सुप्रभा तथा ॥५ ॥ वितस्ता च विपाशा च शर्मदा च पुनः-पुनः । गोदावरी महावर्ता शर्कावर्त्तमार्जनी ॥६ ॥ कावेरी कौशिकी चैव तृतीया च महानदी । विटङ्का प्रतिकूला च सोमनन्दा च विश्रुता ॥७ ॥ करतोया वेत्रवती देविका वेणुका च या । आत्रेय गंगा वैतरणी काश्मीरी ह्लादिनी च या ॥८ ॥ प्लाविनी च शवित्रा सा कल्माषा संशिनी तथा । वसिष्ठा च अपापा च सिन्धुवत्यारुणी तथा ॥९ ॥ ताम्रा चैव त्रिसन्ध्या च तथा

मन्दाकिनी परा। तैलकाह्नी च पारा च दुन्दुभीर्नकुली तथा ॥१० ॥ नीलगन्धा च वोधा च पूर्णचन्द्रा शशिप्रभा। अमरेशं प्रभासं च नैमिषं पुष्करं तथा ॥११ ॥ आषाढीं डिण्डभारत्नं भारभूतं बलाकुलम्। हरिश्चन्द्रं परं गुह्यं मध्य मध्यमकेश्वरम् ॥१२ ॥ श्री पर्वतं समाख्यातं जलेश्वरमतः परम् ॥ आम्नातकेश्वरं चैव महाकालं तथैव च ॥१३ ॥ केदारमुत्तमं गुह्यं महाभैरवमेव च। गयां चैव कुरुक्षेत्रं गुह्यं कनखलं तथा ॥१४ ॥ विमलं चन्द्रहासं च माहेन्द्रं भीममष्टकम् ॥ वस्त्रापदं रुद्रकोटिमविमुक्तं महावलम् ॥१५ ॥ गोकर्णं भद्रकर्णं च महेशस्थानमुत्तमम्। छागलाह्वं द्विरण्डं च कर्कोटमण्डलेश्वरम् ॥१६ ॥ कालञ्जरवनं चैव देवदारुवनं तथा। शंकुकर्णं तथैवेह स्थलेश्वरमतः परम् ॥१७ ॥ एताः नद्याश्च तीर्थानि गुह्यक्षेत्राणि सर्वशः। तानि सर्वाणि कुम्भेऽस्मिन् विशन्तु ब्रह्मशासनात् ॥१८ ॥ इति मन्त्रेण तीर्थानि आवाह्य तेन देवं स्नापयेत् ॥

कलशस्यमुखे विष्णुः० इति अभिमन्त्र्य—देवदानव०- इति प्रार्थ्य—-

यजमानश्च शिल्पिवर्गं यथाशक्तिः पूजयेत्। ततो गुरुर्बहिर्निर्गत्य करिष्यमाण देवस्नपनांगभूतं सिद्धार्थघृतपायसैः रुद्राय बलिदानं करिष्ये। इति संकल्प्य स्नानमण्डपस्य प्रागादि दिक्षु—ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्। इति मन्त्रावृत्या रुद्राय एष सिद्धार्थघृतपायस बलिर्नमः।

इति प्रयोगेण सर्वत्र रुद्राय बलिं दत्त्वाऽऽचम्य स्नानमण्डपमागत्य देवसमीपे उपविश्य ॥ ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रं हवामहे सुहवं शूरमिन्द्रम्। ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्रं स्वस्तिनो मघवा धात्विन्द्रः। (ऋ० ६ ।४७ ।२२) इत्यादि दशदिग्पाल मन्त्रैः दशदिक्षु "भो इन्द्र प्राचीं रक्ष" भो आग्नेयीं रक्ष ॥ इत्यादि प्रयोगेण रक्षां कुर्यात्। आचम्य देवसमीपं आगत्य—

ततः देवस्याग्रे चतुरो ब्राह्मणान् उपवेश्य स्वस्तिवाचनं कारयेत्। तद्यथा—भो ब्राह्मणाः-अमुक देवार्चन शुद्धि स्नपननेत्रोन्मीलन कर्मणः पुण्याहं भवन्तो ब्रवन्तु। ॐ पुण्याहं ३। ॐ पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः। पुनन्तु विश्वाभूतानि जातवेदः पुनीहि माम्।

भो ब्राह्मणाः अमुक देवार्चन शुद्धि स्नपननेत्रोन्मीलन कर्मणः कल्याणं भवन्तः ब्रुवन्तु । ॐ कल्याणं, ॐ यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः । ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च ।

भो ब्राह्मणाः अमुक देवार्चन शुद्धि स्नपननेत्रोन्मीलन कर्मणः ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु । ॐ कर्म ऋध्यताम् । ॐ सत्रस्य ऋद्धिरस्यगन्म ज्योतिरमृता अभूम । दिवं पृथिव्या अध्यारुहामाविदाम देवान्त्स्वर्ज्योतिः ॥ भो ब्राह्मणाः अमुक देवार्चन कर्मणि स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु-ते च-अस्मै-विष्णोः आदि अर्चाशुद्धि स्नपनाय नेत्रोन्मीलन कर्मणे च स्वस्ति इति वदेयुः । ॐ स्वस्तिन इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्तिनस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः स्वस्तिनो वृहस्पतिर्दधातु ॥

ततः कृतस्य पुण्याहवाचन कर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं दक्षिणा द्रव्यं नाना-नाम गोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो विभज्य दातुमहमुत्सृजे ।

इति संकल्पं कृत्वा यजमानः उपविष्ट-ब्राह्मणेभ्यो चन्दनादिना पूजन पूर्वकं दक्षिणां दत्त्वा आशिषो गृह्णीयात् ॥

ततः १. ॐ अग्नि मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम् । अपा७ रेता७ सिजिन्वतिं । इति मृत्तिका कलशेन ।

२. ॐ यज्ञा यज्ञावो अग्नये गिरा गिरा च दक्षसे । प्र प्र वयममृतञ्जातवेदसं प्रियं मित्रं नः शं सिषम् ॥ इति कषायोदकेन ।२७/४२

३. ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि । धियो योनः स्वस्तिनः पूषा विश्ववेदाः । प्रचोदयात् । इति गोमूत्र कलशेन ।

४. ॐ गन्ध द्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् । ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥ इति गोमयोदकेन ।

५. ॐ मानस्तोके तनये मान आयुषि मानो गोषु मानो अश्वेषु रीरिषः । मानो वीरान रुद्रभामिनो वधीर्हविष्मन्तः सद्मित्त्वा हवामहे । इति भस्मोदकेन ।

६. ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि । धियो योनः प्रचोदयात् । इति गन्धोदकेन ।

७. नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शंकराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च ॥ इति गन्धोदकेन ।

८. ॐ त८स शुचिषद् वसुरन्तरिक्ष सद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोपासत। नृषद्वर सदृत सद्व्योम सदब्जागोजा ऋतजाः अद्रिजा ऋतम्वृहत्। इति गन्धोदकेन।

९. ॐ याते रुद्रशिवा तनूरघोरा पापकाशिनी। तया नस्तन्वा शन्त मयागिरि शन्ताभिचाकशीहि। इति गन्धोदकेन।

१०. ॐ विष्णो रराटमसि विष्णोः श्नप्त्रेस्थो विष्णोः स्यूरसि। विष्णोध्रुवोऽसि वैष्णवमसि विष्णवे त्वा। इति गन्धोदकेन।

११. ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्तात् विसीमतः सुरुचो वेन आवः। स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनि मसतश्चविवः। इति गन्धोदकेन।

१२. ॐ शतं वो अम्ब धामानि सहस्रमुत वोरुहः। अधा शतक्रत्वो यूयमिमं मे अगदङ्कृत ॥१२/७६ इति दूर्वाक्षत पुष्पैः सम्पूज्य—ॐ सुजातो ज्योतिषा सह शर्मवरूथमा असदत्स्व।

वासो अग्ने विश्वरूप८सं व्ययस्व विभावसो ॥य० ११।४० ॥

इति सितसूक्ष्मवस्त्रेण देवमाच्छादयेत् ॥ इति प्रथमवेदि स्नपनम् ॥

अथ नेत्रोन्मीलनम्

ततो मध्यवेद्यां "ॐ भद्रंकर्णेभिः शृणुयाम देवाः भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरंगैस्तुष्टुवा८ सस्तनुभिर्व्यशे महि देवहितं यदायुः ॥१ ॥ ॐ स्तीर्णं वर्हिः सुष्टरीमा जुषाणोरु पृथु प्रथमानं पृथिव्याम्। देवेभिर्युक्तमदितिः सजोषाः स्योनङ्कृण्वाना सुविते दधातु ॥२ ॥ इति प्रागग्रास्तृतकुशे पीठे देवं प्राङ्मुखं निधाय स्वयमुदङ्मुखो भूत्वा कुंकुमाक्तेन सूत्रेण लिंगमावेष्ट्य लिंगस्य मध्यभागे मुखं कल्पयित्वा प्रतिमायां मुखे नेत्राणि सुवर्णशलाकया मध्वाज्याक्तया—ॐ चित्रं देवानामुद्गादनीकञ्चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्ने इत्यर्धर्चेन कल्पयेत्। तथैव शलाकया ऊर्ध्वाधः पृथग्भूतं पक्ष्मपुट द्वयं च "ॐ आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च। हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्। अत्र नेत्रोन्मीलनसमये मुहूर्तमात्रं देवस्य पुरतोः कोऽपि न तिष्ठेत्। इति कल्पयेत्। नेत्रमध्ये त्रिभागेन कनीनिकामपि कल्पयेत्। तदा न कश्चित् पुरस्तिष्ठेत् ॥ इति नेत्रोन्मीलनम्।

ततः सुवर्णं पायसं भक्ष्यं भोज्यं आदर्शं च शीघ्रं दर्शयेत्॥ ततो गुरुर्मधुसर्पिभ्यामभ्यज्य "ॐ इमम्मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय । त्वामवस्युरा चके । इति शुद्धोदकेन लौकिकेन अभ्युक्ष्य स्थापित एकादशकलशैः स्नापयेत् पूर्ववत्॥

पुनः स्नपनविधिः

१. ॐ अग्निमूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम्। अपाꣳ रेताꣳ सिजिन्वती ॥ इति मृत्तिका कलशेन ।

२. ॐ यज्ञा यज्ञावो अग्नये गिरा गिरा चक्षसे । प्र प्र वयममृतञ्जातवेदसं प्रियं मित्रन्नः शं सिषम् ॥ इति कषायोदकेन ।

३. ॐ तत्सवित्तुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो योनः प्रचोदयात् ॥ इति गोमूत्रेण कलशेन ।

४. ॐ गन्ध द्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टा किरीषणीम्। ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥ इति गोमयोदकेन कलशेन ।

५. ॐ मानस्तोके तनये मानः आयुषि मानो गोषु, मानो अश्वेषु रीरिषः । मा नो वीरान् रुद्रभामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमित्वा हवामहे ॥ इति भस्मोदकेन ॥

६. ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ॥ इति गन्धोदकेन ॥

७. ॐ नमः शम्भवाय च मयोभवाय नमः शंकराय च मयस्कराय च । नमः शिवाय च शिवतराय च । इति गन्धोदकेन ।

८. ॐ हꣳ स शुचिषद्वसुरन्तरिक्ष यद्धोतावेदिषदतिथिर्दुरोपासत । नृ षद्वरे सदृत सद्व्योम सदव्जागोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतम्वृहत् । इति गन्धोदकेन ।

९. ॐ या ते रुद्र शिवा तनूरघोरा पापकाशिनी । तया न स्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाक शीहि ॥ शन्धोदकेन ।

१०. ॐ विष्णोरराटमसि विष्णोः श्नप्त्रेस्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोः ध्रुवोसि । वैष्णवमसि विष्णवे त्वा । इति गन्धोदकेन ॥

११. ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्तात् विसीमतः सुरुचो वेन आवः। सवुध्न्या उपमा अस्य विष्ठा सतश्च योनिमसतश्च विवः॥ इति गन्धोदकेन संस्नाप्य—

ॐ शतं वो अम्बधामानि सहस्र मुत बो रुहः। अधा शतक्रत्वो यूयमिमम्मे अगदङ्कृत॥ इति दूर्वाक्षत पुष्पैः सम्पूज्य—ॐ सुजातो ज्योतिषा सह शर्म वरूथमाऽसदत्स्वः। वासो अग्ने विश्वरूप॰ संव्ययस्व विभावसो॥ इति मन्त्रेण वस्त्रेण देवमाच्छाद्य सुवर्णशलाकादिकं प्रतिमाघटकाय (शिल्पिने) तदभावे आचार्याय एव दद्यात्॥ ततः दक्षिणा संकल्पं कुर्यात्। इति द्वितीय वेदिस्नपनम्॥

पुनः स्नपनम्

अथ गुरुरुत्तरवेद्यां पूर्ववद् एव देवं स्नापयित्वा आद्यपङ्क्तिस्थाद्यकलशेन—ॐ समुद्राय त्वा वाताय स्वाहा सरिरायत्वा वाताय स्वाहा। अनाधृष्याय त्वा वाताय स्वाहा ऽप्रति धृष्याय त्वा वाताय स्वाहा। अवस्यवे त्वा वाताय स्वाहा ऽशिमिदाय त्वा वाताय स्वाहा॥ इति मन्त्रेण संस्नाप्य। ॐ शतं वो अम्वधामानि सहस्रमुत वो रुहः। अधा शतक्रत्वो यूयमिमम्मे अगदङ्कृत॥ इति दूर्वा-अक्षतान् मूर्ध्नि दत्त्वा प्रार्थयेत्—ॐ नमस्ते अर्चे सुरेशानि प्रकृतेः विश्वकर्मणः। प्रभाविताशेष जगद्धात्रि देवि तुभ्यं नमोनमः॥१॥

त्वयि सम्पूजयामीशं नारायणमनामयम्। हरिताशेष दोषैस्त्वमृद्धियुक्ता सदाभव॥२॥

ततो देवस्य दक्षिणहस्ते प्रतिमा वितस्ति मात्रं ऊर्णसूत्रं—ॐ यदा वध्नन् दाक्षायणा हिरण्य॰ शतानीकाय सुमनस्यमानाः। तन्म आवध्नामि शतशारदायायुष्मान् जरदिष्टर्यथासम्। इति मन्त्रेण वध्नीयात्। ततः सर्वसत्वमयं शान्तं परब्रह्मसनातनम्। त्वामेवालङ्करिष्यामि त्वं वन्द्यो भवते नमः॥ इति पठेत।

ततोऽवशिष्टैः चतुर्भिः शुद्धोदक कलशैः स्नपयेत्। एभिर्मन्त्रैः आद्यपङ्क्तिस्थैः

ॐ इदमापः प्रवहतावद्यञ्च मलञ्च यत् । यच्चाभिदुद्रोहानृतं यच्च शेषे अभीरुणम् ॥ आपो मातास्मादेनसः पवमानश्च मुञ्चतु ॥१ ॥ इति शुद्धोदकेन ॥

ॐ आपोदेवी प्रतिगृभ्णीत भस्मैतत् स्योने कृणुध्व ꣳ सुरभा उ लोके । तस्मै नमन्ताञ्जनयः सुपत्नीर्मातेव पुत्रम्बिभृताप्स्वेनत ॥२ ॥ इति शुद्धोदकेन ।

ॐ इमम्मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय । त्वा मवस्युराचके ॥३ ॥ इति शुद्धोदकेन ।

ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेडमानो वरुणेह वोध्युरुश ꣳ समान आयु-प्रमोषीः ॥ इति शुद्धोदकेन ॥४ ॥

ॐ अग्निर्मूर्धा दिवि ककुत्पतिः पृथिव्या अयम् अपाꣳ रेताꣳ सिजन्वती—इति मृत्तिका कलशेन ॥ ॐ वरुणस्योत्तम्भन मसि वरुणस्य स्कम्भसर्जनीस्थो वरुणस्य ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऋतसदनमसि वरुणस्य ऋतसदनमासीद ॥५ ॥ इति शुद्धोदकेन ॥

ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् । ईश्वरीं सर्व भूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥६ ॥ इतिं गोमयोदकेन ।

ॐ देवीरापो अपान्नपाद्यो व ऊर्म्मि-र्हविष्य इन्द्रियावान् मदिन्तमः । तन्देवेभ्यो देवत्रा दत्त शुक्रपेभ्यो येषां भागस्थ स्वाहा ॥७ ॥ इति शुद्धोदकेन ।

ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो योनः प्रचोदयात् । इति गोमयोदकेन ॥८ ॥

ॐ आपोहिष्ठामयोभुवस्तान ऊर्जे दधातन महेरणाय चक्षसे । इति शुद्धोदकेन ॥९ ॥

ॐ प्रसद्य भस्मना योनि मपश्च पृथिमग्ने । स ꣳ सृज्यमातृभिष्ट्वं ज्योतिष्मान् पुनरासद् ॥१० ॥ इति भस्मोदकेन ॥

ॐ शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंय्योरभिस्त्रवन्तु नः ॥ इति शुद्धोदकेन ॥११ ॥

ॐ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः। पयस्वती प्रदिशः सन्तु मह्यम् ॥ इति पञ्चगव्येन ॥१२ ॥

ॐ यो वः शिवतमोरसस्तस्य भाजयतेह नः। उशतीरिवमातरः ॥ इति शुद्धोदकेन ॥१३ ॥

ॐ आप्यायस्व समेतु विश्वतः सोम वृष्ण्यम्। भवावाजस्य संगथे ॥ इति क्षीर जलेन ॥१४ ॥

ॐ तस्मा अरङ्गमामवो यस्य क्षयाय जिन्वथ। आपो जनयथा च नः ॥ इति शुद्धोदकेन ॥१५ ॥

ॐ दधिक्राव्णो ऽकारिषञ्जिष्णो रश्वस्य वाजिनः। सुरभिनो मुखाकरत् प्रण आयू ꣳ षि तारिषत्। इति दधिजलेन ॥१६ ॥

ॐ युञ्जानः प्रथमं मस्तत्त्वाय सविता धियः। अग्नेः ज्योति—र्निचाय्य पृथिव्या अध्याभरत् ॥ इति शुद्धोदकेन ॥१७ ॥

ॐ घृतवती भुवनानामभिश्रियोर्वी पृथ्वी मधु दुधे सुपेशसा। द्यावापृथिवी वरुणस्य धर्मणा विष्कभिते अजरे भूरिरेतसा।३४/४५। इतिघृतेन ॥१८ ॥

ॐ देवस्यत्वा सवितुः प्रसवेक्षिणो बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्। शुद्धोदकेन ॥१९ ॥

ॐ मधुवाता ऋतायते मधु क्षरन्ती सिन्धवः माध्वीर्न सन्त्वोषधिः ॥ इति मधुना ॥२० ॥

ॐ आपो अस्मान् मातरः शुन्धयन्तु घृतेन नो घृतप्वः पुनन्तु। विश्व ꣳ हि रिप्रं प्रवहन्ति देवीरुदिदाभ्यः शुचिरापूत एमि ॥४/। इति शुद्धोदकेन ॥२१ ॥

ॐ आयंगौ पृश्निरक्रमीदसन्मातरम्पुरः। पितरञ्च प्रयन्त्स्वः ॥ इति शर्करया ॥२२ ॥

ॐ आपो ह्यद्‌वृहती विश्वमायन् गर्भन्दधाना जनयन्ती रग्निम्। ततो देवाना ꣳ समवर्तता सुरेकः कस्मै देवाय हविषा विधेम "इति शुद्धोदकेन।"

ॐ यज्ञा यज्ञावो अग्नये गिरागिरा च दक्षसे। प्र प्र वयममृतञ्जातवेदसम्प्रियम्मित्रन्न श υ सिषम् ॥ इति वस्त्रेण सम्मार्ज्य तेनैव सुगन्धि तैलेनाभ्यज्य—ॐ द्रुपदादिव मुमुचानः स्विन्नाः स्नातो मलादिव । पूतं पवित्रेण वाज्यमापः शुन्धन्तु मैनसः॥ इति मन्त्रेण यवशालि गोधूम—मसूरिकाद्यामलक चूर्णैरुद्वर्त्य ततः-याते रुद्र शिवा तनू रघोरा पापकाशिनी । तयानस्तन्वा शन्तमया गिरि शन्ताभिचाकशीहि ॥ इति मन्त्रेण यक्ष्म कर्दमेन जटामांस्यानुलिम्पेत ॥

ततः तृतीय पंक्तिस्थ कलश द्वयेन—ॐ मानस्तोके तनये मान आयुषि मानो गोषुमानो अश्वेषु रीरिषः । मानो वीरान् रुद्रभामिनो वधीर्हविष्मन्तः सद्मित्वा हवामहे ॥१ ॥

ॐ प्रतद्विष्णुस्तवते वीर्येण मृगो न भीमः कुचरोगिरिष्ठः । यस्योरुष त्रिषु विक्रमणेष्वधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वा ॥२ ॥ इति मन्त्र द्वयेन क्रमेण स्नपयेत ॥

चतुर्थ पंक्तिस्थैः षड्भिः क्रमेण—ॐ आप्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यम् । भवावजस्य संगथे ॥१ ॥ ।१२ ।११४ ।२११

ॐ उरु υ हि राजा वरुणश्चकार सूर्याय पन्थामन्वे तवा उ । अपदे पादा प्रतिधातवेऽकुरुतापवक्ता हृदयाविधश्चित ।१ ।१४ ।९ । इति शुद्धोदकेन ॥२ ॥

सते पयाυसि समुयन्तु वाज़ाः । सं वृष्ण्यान्यभिमातिषाहः । आप्यायमानो अमृताय सोम दिवि श्रवां स्युत्तमानि धिष्व ।१ ।६१ ।९ । इति शुद्धोदकेन ॥३ ॥

ॐ आप्यायस्व मदिन्तम सोम विश्वेभिरंशुभिः । भवा नः सुप्रथस्तमः सखावृधे ।१ ।६१ ।१७ । इति शुद्धोदकेन ॥४ ॥

ॐ अप्स्वग्ने सधिष्ठ्व सौषधीरनुरुध्यसे । गर्भे सञ्जायसे पुनः ।९ ।४३ । इति शुद्धोदकेन ॥५ ॥

ॐ अपाυरसमुद्वयस υ सूर्ये सन्त समाहितम् । अपाυरसस्य यो रसस्तं वो गृह्णाम्युत्तम मुपयाम गृहीतो सीन्द्राय त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम् ॥ इति शुद्धोदकेन ॥६ ॥

अथ पञ्चम पंक्तौ चतुर्दशभिः क्रमेण—ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्य पुष्टां किरीषणीम् । ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥ इति गन्धोदकेन ॥१ ॥

ॐ यज्ञा यज्ञावो अग्नये गिरा-गिरा च दक्षसे । प्र प्र वयममृतञ्जातवेदसं प्रियम्मित्रन्न शᳬसिषम् ॥ इति कषायोदकेन ॥२ ॥

ॐ या औषधिः पूर्वाजाता देवेभ्यः त्रियुगं पुरा । मनैनु बभ्रूणामहᳬ शतं धामानि सप्त च ॥ इति सर्वौषधि जलेन ॥३ ॥

ॐ औषधि प्रतिमोदध्वं पुष्पवती प्रसूवरीः । अश्वा इव सजित्वरी वीरुधः पारयिष्णवः ॥ इति पुष्पोदकेन ॥४ ॥

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ᳬ शान्तिः पृथिवीः शान्तिरापः शान्तिरौषधयः । शान्तिर्वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वᳬ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामा शान्ति रेधि । शान्तिर्भवतु ॥ इति शान्त्युदकेन ॥५ ॥

ॐ या फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः । वृहस्पतिः प्रसूतास्तानो मुञ्चन्त्व ᳬहसः ॥ इति फलोदकेन ॥६ ॥

ॐ हिरण्य गर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । स दाधार पृथिवीं द्यामुते मां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ इति सुवर्णोदकेन ॥७ ॥

ॐ हविष्मतीरिमा आपो हविष्मा आ विवासति । हविष्मान् देवो अद्ध्वरो हविष्मां अस्तु सूर्यः ॥ इति गोशृंगोदकेन ॥८ ॥

ॐ धान्यमसि धिनुहि देवान् प्राणायत्वोदानायत्वा व्यानाय त्वा । दीर्घामनुप्रसिति मायुषे धान् देवो वः सविता हिरण्यपाणिः प्रतिगृभ्णा त्वछिद्रेण पाणिना चक्षुषे त्वामहीनाम्पयोऽसि ॥ इति सप्तधान्योदकेन ॥९ ॥

ॐ अग्ने सहस्व पृतना अभिमाती रपास्य । दुष्टरस्तरन्नरातीर्वर्चो धां यज्ञवाहसि ॥ इति सहस्र छिद्रकलशेन ॥१० ॥

ॐ या ओषधीः सोम राज्ञीर्विष्ठिता पृथिवी मनु । बृहस्पति प्रसूता अस्यै सन्दत्त वीर्यम् ॥ इति पुनः सर्वौषधिकलशेन ॥११ ॥

ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवी मनु । येऽन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः ॥ पंचपल्लवोदकेन ॥१२ ॥

ॐ अष्टो व्यख्यत्ककुभः पृथिव्यास्त्र धन्वयोजना सप्तसिन्धून । हिरण्याक्षः सविता देवाः आगाद् दधद्रत्न दाशुषे वार्याणि ॥ इति नवरत्नोदकेन ॥१३ ॥

ॐ इमम्मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडया। त्वामवस्युराचके। इति तीर्थोदकजलेन ॥१४ ॥

अथ वेदि परितो अष्टभिःसमुद्र कलशैः संज्ञिवः क्रमेण—ॐ कयानश्चित्र आभुवदूती सदावृधः सखा। कयाश चिष्ठयावृता। इति क्षीरोदधिकलशेन ॥१ ॥

ॐ आप्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यम्। भवावाजस्य संगथे ॥२ ॥

इति क्षीरोदधिकलशेन ॥२ ॥

ॐ दधिक्राब्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः । सुरभि नो मुखांकरत् प्रण आयूंषि तारिषत ॥ इति दध्युदधि जलेन ॥३ ॥

ॐ घृतवती भुवनानामभिश्रियोर्वी पृथ्वी मधु दुधे सुपेशसा। द्यावा पृथिवी वरुणस्य धर्मणा विष्कभिते अजरे भूरिरेतसा॥ इति घृतोदधिकलशेन ॥४ ॥

ॐ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयोदिव्यन्तरिक्षे । पयोधाः पयस्वती प्रदिशः सन्तु मह्यम् । इति इक्षुरसोदकेन ॥५ ॥

ॐ देवं वर्हिर्वारितीना मध्वरे स्तीर्णमश्विभ्यामूर्णं म्रदा सरस्वत्या स्योन मिन्द्र ते सदः। ईशायै मन्युꣳराजानं बर्हिषा दधुरिन्द्रियं वसु-वने वसुधेयस्य व्यन्तु यज ॥ इति सुरोदधिकलशेन ॥६ ॥

ॐ स्वादिष्ठया मदिष्ठया पवस्व सोमधारया । इन्द्राय पातवे सुतः । इति स्वादूदधिकलशस्थितेन जलेन ॥७ ॥

ॐ सरस्वती योन्यां गर्भमन्तरश्विभ्यां पत्नी सुकृतं विभर्ति । अपा ꣳ रसेन वरुणो नसाम्नेन्द्रꣳ श्रियै जनयन्नप्सु राजो ॥ इति दर्भोदधि जलेन ॥९ ॥

अथ षष्ठ पंक्तिस्थैः दशभिः क्रमेण स्नापयेत—

ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्र ꣳहवे हवे सुहवꣳशूरमिन्द्रम् । ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्रं स्वस्तिनो मघवा धात्विन्द्रः ॥२० ।५० इति कदम्वजलेन ॥१ ॥

ॐ त्वन्नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो अव यासिसीष्ठाः। यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषा॰ सि प्र मुमुग्ध्यस्मत ॥२१ ।३ इति शाल्मलि जलेन ॥२ ॥

ॐ यमाय त्वा मखाय त्वा सूर्यस्य त्वा तपसे। देवस्त्वा सविता मध्वानक्तु पृथिव्याः स ॰ स्पृशस्पाहि। अर्चिरसि शोचिरसि तपोऽसि ॥३६ ।११ । इति जम्बू जलेन ॥३ ॥

ॐ असुन्वन्त मयजमानमिच्छ स्तेनस्येत्यामन्विहि तस्करस्य। अन्य मस्मदिच्छ सात इत्या नमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु ।१२ ।६२। इति अशोकजलेन ॥४ ॥

ॐ तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः। अहेडमानो वरुणेह वोध्युरुश॰ समान आयु प्रमोषीः ॥१८ ।४९ । इति प्लक्ष जलेन ॥५ ॥

ॐ आनो नियुद्भिः शतिनीभि रध्वरं सहस्त्रि-णीभिरुपयाहि यज्ञम्। वायो अस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।२९ ।२८ इति चूत जलेन ॥६ ॥

ॐ वय॰ सोमव्रते तव मनस्तनूषु विभ्रतः। प्रजावन्तः सचेमहि ॥३ ।५६ इति वट जलेन ॥७ ॥

ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियं जिन्वमवसे हूमहे वयम्। पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥२५ ।१८ ॥ इति विल्व जलेन ॥८ ॥

ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु। ये ऽन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः ॥ इति नागवल्ली—जलेन ॥९ ॥

ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्तात् विसीमतः सुरुचो वेन आवः। स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनि मसतश्च वि वः ॥१३ ।३ ॥ इति पलाश जलेन ॥१० ॥

अथ सप्तम पंक्तिस्थैश्चतुर्भिरेकेन वा-आनोभद्रा इत्यनुवाकेन स्नपनम् ॥ ततो सूक्ष्म वस्त्रेण परिमृज्य—ततः सुमंगल-घोषैः पुरुष सूक्तेन

विष्णवे—रुद्रसूक्तेन शिवस्य—ॐ इमम्मेवरुण इति तीर्थोदकेन देवं स्नापयित्वा सुगन्धिना सित वस्त्रेण परिमृज्य—ॐ विश्वतश्चक्षु रुत विश्वतो मुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात । सम्बाहुभ्यां धमति सम्पतत्रैः द्यावाभूमि जनयन्देव एकः इति मन्त्रेण सकलीकृत्य देवमावाहयेत् ॥

यहां षोडशोपचार पूजन नहीं करना चाहिए । मूर्ति की स्थापना के पश्चात् ही पूजन होना उपयुक्त है ।

इति देवस्नपनविधिः

अथ शय्याधिवासनम्

ततः शय्यायां देवमधिवासयेत्—अधिवासनावसरे द्वादश ब्राह्मणान् पायसान्नेन देवो नः प्रीयताम्—इति भोजयेत् । ततः समलंकृतः चतस्रो गाः सदक्षिणाः सवत्साः आचार्यादिभ्यो दत्त्वा देवम् अधिवासयेत् । १. पूर्वमुखे प्रासादे अग्निकोणे शय्या । २. पश्चिममुखे प्रासादे वायुकोणे शय्या । ३. उत्तरमुखे प्रासादे ईशानकोणे शय्या । ४. दक्षिण-मुखे प्रासादे नैर्ऋत्यकोणे शय्या ॥

तत्रादौ पुरुषसूक्तेन देवं स्तुत्वा—ॐ उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवयन्तस्त्वेमहे । उप प्रयन्तु मरुतः सुदानव इन्द्रप्राशूर्भवासचा ॥१ ॥ ॐ उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गोविन्द उत्तिष्ठ गरुडध्वज । उत्तिष्ठ कमलाकान्त त्रैलोक्य मंगलं कुरु ॥२ ॥ उत्तिष्ठोत्तिष्ठ संसारे त्यजनिद्रां जगत्पते । साधवः संप्रतीक्षन्ते त्वद् दर्शनमहोत्सवाः ॥३ ॥ त्वयि सुप्ते जगत्सुप्तमुत्थिते चोत्थितं जगत् ॥ इत्युत्थाप्य—रथे तिष्ठन् नयति वाजिनः पुरो यत्र-यत्र कामयते सुषारथिः । अभी शूनाम्महिमानम्पुनायत मनः पश्चादनुयच्छन्ति रश्मयः ॥ इति मन्त्रेण रथमारोपयेत् ॥ ततो जयशब्दैः वेदध्वनिभिः सुवासिनी मंगलगीतैः मृदंगादि—घोषैः प्रासाद प्रादक्षिण्येन आनीय यागमण्डप पश्चिम द्वारि—आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशय-न्नमृतम्मर्त्यञ्च । हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्—इति मन्त्रेण प्रवेश्य तदनन्तरं मध्यवेद्याः पश्चिमभाग स्थित पीठे पूर्वाभि-मुखं देवं निधाय मधुपर्कं कुर्यात् ॥

ॐ पुरुष एवेदं सर्व यद्भूतं यच्च भाव्यम्। उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनाति रोहति, इतिपाद्यम् ॥१ ॥

ॐ एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पूरुषः। पादोऽस्य विश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि, इत्यर्घ्यम् ॥२ ॥

ॐ अन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः। प्र प्रदातारं तारिषं ऊर्जन्नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे ॥ इति मधुपर्कम् दद्यात् ॥

ततो मण्डपमध्यवेद्या सर्वतोभद्रे धान्य-पुञ्जोपरि सारकाष्ठभूतां प्राक्शिरां सुपट्टां शय्यां निधाय तदुपरि चन्द्रकालिकां शुभ्रास्तरणां उपधान-द्वारवतीं आस्तीर्य तत्राक्षतैः स्वस्तिकं आलिख्य प्रागग्रान् कुशान् आस्तीर्य पुष्पाणि च विन्यस्य गन्धतोयेन संमार्ज्य मलयागुरुधूपेन धूपयित्वा पुष्पमालाभिः वितानेन च शोभितां कृत्वा शय्यायां परितः पूर्वादि दिक्षु एतान् पूजयेत्।

पूर्वे विष्णवे नमः। दक्षिणे मधुसूदनाय नमः। पश्चिमे त्रिविक्रमाय नमः। उत्तरे वामनाय नमः। आग्नेय्याम्—श्रीधराय नमः। निर्ऋतौ हृषीकेशाय नमः। वायव्ये पद्मनाभाय नमः। ऐशान्यां दामोदराय नमः। इति संपूज्य त्रिः परिक्रमेत ॥

शिव प्रतिष्ठायां तु—पूर्वे—भवाय नमः। दक्षिणे शर्वाय नमः। पश्चिमे ईशानाय नमः। उत्तरे पशु-पतये नमः। आग्नेय्याम् रुद्राय नमः। निर्ऋतौ उग्राय नमः। वायव्याम्—भीमाय नमः। ऐशान्याम्—महते नमः॥ इति संपूज्य शय्यायां मूलमन्त्रेण ॐ नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमश्शंकराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च इति मन्त्रेण प्राक्शिरसं देवं शय्यायां निवेशयेत्।

ॐ विश्वतश्चक्षुरुतविश्वतो मुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात्। सं बाहुभ्यां धमति संपतत्रैर्द्यावा भूमी जनयन् देव एकः ॥१ ॥ इति संकलीकृत्य त्रिभिः पट्टदुकूलैविचित्रैः कार्पास निर्मितैः वा देवमाच्छाद्य।

देवस्य शिरोदेशे भूमावेव सवस्त्रं सहिरण्यं निद्राकलशम्—ॐ आपो देवी प्रतिगृभ्णीत भस्मैतत्स्योने कृणुध्वं सुरभा उ लोके। तस्मै नमन्ताञ्जनयः सुपत्नीर्मातेव पुत्रम्बिभृताप्स्वेनत्—इतिमन्त्रेण स्थापयित्वा—

ॐ आपो अस्मान् मातरः शुन्धयन्तु घृतेन नो घृतप्व पुनन्तु । विश्वं हि रिप्रम्प्रवहन्ति देवीरुदिदाभ्यः शुचिरा पूत एमि दीक्षा तपसोस्तनूरसि तान्त्वा शिवा ꣳ शग्मामपरिदधे भद्रं वर्णं पुण्यन् ॥ इति प्रतिष्ठापयेत ।

ततः—ॐ आप्यायस्वमदिन्तम सोम विश्वेभिरंशुभिः । भवानः सप्रथस्तमः सखावृधे ॥ इतिमन्त्रेण मधुसर्पिभ्यां देवं अभ्यञ्जयेत् ॥

ततः गन्धाक्षतपुष्पाद्यैः देवमभ्यर्च्य—ॐ बृहस्पते परिदीया रथेन रक्षोहा मित्रां ꣳ२ अपवाधमानः । प्रभञ्जन्त्सेनाःप्रभृणो युधाजयन्नस्माकमेद्ध्य वितारथानाम् । इति मन्त्रेण सितं परिधानं दद्यात् ।

ततो विचित्रैः कार्पासवस्त्रैः दुकूलपट्टैश्च देवमाच्छाद्य शिरसि कौशेयं च दद्यात्, चतुरो दीपान् प्रज्वालयेत् ।

ततः देवस्य पाद-नाभि-वक्षः-शिरःसु आलम्भनं कुर्यात्—ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतो मुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात् । साम्बाहुभ्यां धमति सम्पतत्रैः द्यावा भूमी जनयन्देव एकः ॥

ततः देवस्य पुरतः पादुके पार्श्वके पार्श्वयोः शान्तिकुम्भौ दक्षिण पार्श्वे—छत्रं व्यजनं चामर रत्नानि च आसनदर्पण-घण्टा-भक्ष्य-भोज्य-जलपात्रादिकं च पुरतः स्थापयेत् ।

ततो भूतेभ्यः भस्मना दर्भतिलैः देवस्य समन्ताद् रक्षार्थं प्राकारत्रयं कृत्वा मण्डपाद्बहिः गत्वा प्रतिदिशां इन्द्रादि लोकपालेभ्यो गन्धादिदानपूर्वकं पूर्ववत् बलिं दद्यात् ।

ततो भूतेभ्यो बलिदानम्—पूर्वदिग्वासिभ्यो दिक्पति, भूताधिपति-दिग्रुद्र-दिग्गणपति—दिङ्मातृदिक्क्षेत्रपालेभ्यो नमः । ॐ त्र्यम्वकं यजामहे० इति मन्त्रेण पूर्वादिदिक्षु प्रतिदिशं बलिं दत्त्वा आचम्य—होमं कुर्यात् । ॐ पराय विष्ण्वात्मने नमः स्वाहा—इति विष्णवे ।

शिवादि प्रतिष्ठायां तु—ॐ पराय शिवात्मने स्वाहा । **इति शय्याधिवासनम् ॥**

निद्राकलश का स्थापन

देवता के शिर के समीप भूमि में सुवर्ण सहित निद्राकलश को स्थापित करे।

"आप्यायस्व" इस मन्त्र से मधु तथा घी से देवता की मालिश कर "याते रुद्र०" इस मन्त्र से पीली सरसों तथा तेल से अनुलेपन कर गन्ध आदि द्वारा पूजन कर 'वृहस्पते० इस मन्त्र से सफेद सूत का धागा लपेटे, अथवा रक्षा बन्धन करे। तदनन्तर देवता के पैर, नाभि, वक्षःस्थल और सिर का 'विश्वतश्चक्षु' इस मन्त्र से स्पर्श करें। फिर उस देवता के दक्षिण भाग में छाता, पंखा तथा चामर, चरण देश में (पैरों की जगह)—खडाऊं, अगल-बगल में दो शान्तिकलश और आसन, शीशा, घण्टा, भक्ष्य-भोज्य, जलपान आदि देवता के आगे स्थापित करें।

तदनन्तर—भस्म, कुशा तथा तिल देवता के चारों तरफ रक्षार्थ तीन मण्डप बनाकर, मण्डप के बाहर जाकर प्रत्येक स्थान में लोक-पालों के लिये गन्ध आदि पूर्वक बलि दें। भूतों के लिए 'त्र्यम्बकम्' इस मन्त्र से दे। शेष दिग्पालों के निमित्त प्रत्येक दिशा में दे।

इसके पश्चात् विष्णु-शिव आदि देवताओं के निमित्त उन-उन मन्त्रों से हवन करे।

हवन करने के पश्चात् अंग न्यास करें।

त्रातार मिन्द्रमवितारमिन्द्र० इत्यादि मन्त्रों से दश दिग्पालों को पूर्वादि दिशाओं में बलि दें।

ॐ समख्ये देव्या धिया सं दक्षिणयोरु चक्षसा। मा म आयुः प्रमोषीर्मो अहं तव वीरं विदेय तव देवि सन्दृशि। इति मन्त्रेण मातृभ्यो नमः इति बलिं समर्पयामि॥

ततः ॐ नहि स्पशमविदन्नन्यमस्माद् वैश्वानरात पुर एतार मग्नेः। एमेनमवृधन्नमृता अमर्त्यं वैश्वानरं क्षेत्र जित्याय देवाः॥

इति मन्त्रेण क्षेत्रापालाय नमः बलिं समर्पयामि। इति बलिं दद्यात्—आचामेत च। ततो यावन्तो स्थाप्याः—देवाः तान् सर्वान् शय्यात् प्राचा सर्वतोभद्रे सुवर्णादि प्रतिमासु तत्तत् देवमन्त्रेण आवाह्य पूजयेत्।

शय्यामर्चाधिवासे निद्राकलश स्थापनम्

शय्यायां—शिव-प्रदेशे निद्राकलशं स्थापयित्वा तस्मिन्निद्रा-मावाहयेत।

परमेष्ठिनं नमस्कृत्य निद्रामा वाहयाम्यहम् ।
मोहनी सर्वभूतानां मनोविभ्रम कारिणीम् ॥१ ॥
विरूपाक्षो शिवे शान्ते आगच्छ त्वं तु मोहिनी ।
वासुदेव हिते कृष्णे कृष्णाम्बर विभूषिते ॥२ ॥
आगच्छ सहसाऽजस्रं सर्व संसार मोहिनी ।
सुषुप्स्व संहरे देवि कुमार्ये कान्त मानसे ॥३ ॥
श्रमनिश्वासवाह्यं च आगच्छ भुवनेश्वरि ॥
तमः सत्त्वरजोपेते आगच्छ वरवर्णिनि ॥४ ॥
मनो बुद्धि रहंकार संहारस्त्वं सरस्वति ॥
शब्दः स्पर्शश्च रूपं च रसो गन्धश्च पञ्चमः ॥५ ॥
आगच्छ गृह्ण संक्षिप्य मोहपाशनिवन्धिनि ॥
भवस्योत्पत्ति हेतुस्त्वं यावदाभूत संप्लवम् ॥६ ॥
भुवः कल्पान्तसन्ध्यायां वस से त्वं चराचरे ।
योगिशय्यां प्रसुप्तस्य वासुदेवस्यशासने ॥७ ॥
त्वं प्रतिष्ठासि वै देवि मुनि योनि समुत्थिते ॥
पितृदेव मनुष्याणां सयक्षोरगरक्षसाम् ॥८ ॥
पशुपक्षिमृगाणां च योग मायाविवर्धिनि ॥
वससे सर्वसत्त्वेषु मातेव हितकारिणी ॥९ ॥
एहि सावित्रिमूर्त्तिस्त्वं चक्षुर्भ्यां स्थानगोचरे ॥
विशनासापुटे देवि कण्ठे चोत्कण्ठिता विश ॥१० ॥
प्रतिभावय मां सर्वं मातृवद् देवि सुन्दरि ।
इदमर्घ्यं मया दत्तं पूजेयं प्रतिगृह्यताम् ॥११ ॥

ॐ उपप्रागात्परमं यत्सधस्थमर्वां -२ अच्छा पितरं मातरं च। अद्यादेवाञ्जुष्टतमोहि गम्या अथाशास्ते दाशुषे वार्य्याणि ॥ इतिमन्त्रेण निद्रायै नमः । इति निंद्रा पूजयेत् । ततः

मण्डपाद्बहिः पूर्वादिदिक्षु बलिदानकथनम्

१. ॐ त्रातारमिन्द्र मवितारमिन्द्रं हवे-हवे सुहव० शूरमिन्द्रम् । हवयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्रं स्वस्तिनो मघवा धात्विन्द्रः ।

२. ॐ त्वन्नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो अव यासिसीष्ठाः। यजिष्ठो बह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषाᳪ सि प्रमुमुग्ध्यस्मत् ॥

३. ॐ यमाय सोमं सुनृत यमाय जुहुता हविः। यमं ह यज्ञो गच्छत्यग्नि दूतो अरंकृतः। ॥ऋ १० ।१४ ।१३ ॥

४. ॐ असुन्वन्तमयजमानमिच्छस्तेनस्येत्यामन्विहि तस्करस्य। अन्यमस्मदिच्छ सात इत्या नमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु ॥

५. ॐ इमम्मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय। त्वामवस्युराचके। (ऋ० १ ।२५ ।१९)

६. आनो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरं सहस्रणीभिरुपयाहि यज्ञम्। वायो अस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ऋ ७ ।९२ ।५ ॥

७. वयᳪ सोमव्रते तव मनस्तनूषु विभ्रतः। प्रजावन्तः सचे महि ॥ ऋ० १० ।५७ ।६ ॥

८. ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्व मवसे हूमहे वयम्। पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥ ऋ० १ ।८९ ।५

९. ॐ ब्रह्मजज्ञानं प्रथमं पुरस्तात् विसीमतो सुरुचो वेन आवः। स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनि मसतश्च विवः ॥

१०. ॐ स्योना पृथिवी नो भवानृक्षरा निवेशनी। यच्छानः शर्म स प्रथाः ॥ऋ० १ ।२२ ।१५ ॥

इत्यादि मन्त्रों से मण्डप के बाहर पूर्वादि दिशाओं में लोकपालों के लिए बलि को देकर "मातृभ्यो नमः" से लोकमाताओं के लिये बलि दे। तदनन्तर "ॐ क्षेत्रपालाय नमः" से क्षेत्रपाल को बलि देकर हाथ धोकर आचमन करें ॥

जितने देवता स्थापित करने हैं उन सब देवों का शय्या की पूर्व दिशा में सर्वतोभद्र पर उन-उनके मन्त्रों से आवाहन पूर्वक पूजन करे।

विष्णु के द्वादशार चक्र के गर्भावरण अष्टदल के देवता के लिए—वस्त्र, तांबा, सुवर्ण-चांदी आदि की थाली में द्वादशार चक्र का निर्माण कर उस चक्र के अन्तर्गत अष्टदल पद्म के मध्य में देवता का निवेश करे।

विष्णुश्चेत्—द्वादशसु अग्रसुपूर्वक्रमेण देवस्थापनम्—केशवाय नमः,

नारायणः, माधवः, गोविन्दः, विष्णुः, मधुसूदनः, त्रिविक्रम, वामन, श्रीधर, हृषीकेश, पद्मनाभः, दामोदरः, इति विष्णोर्द्वादशमूर्तिः पूजयेत् इति द्वितीयावरणम्।

पुनः प्रागादितः अष्टदलेषु देवस्थापनम्—खड्गाय नमः, गदायै, चक्राय, शंखाय पद्माय, हलाय, मुसलाय शाङ्गर्गाय। इति तृतीयावरणम्॥

शिव प्रतिष्ठायां तु—पृथिवीमूर्तये नमः। पृथिवीमूर्त्यधिपतये शर्वायनमः, अग्निमूर्त्तये नमः, अग्नि मूर्त्यधिपतये रुद्राय नमः। जलमूर्तये०, जलमूर्त्यधिपतये भवाय०। वायुमूर्त्तये० वायुमूर्त्त्यधिपतये उग्राय०॥ पशुपतये नमः पशुपत्यधिपतये यजमानमूर्त्तये नमः॥ इन्दुमूर्त्तये नमः, इन्दुमूर्त्यधिपतये महादेवाय नमः। स्वमूर्त्तये नमः स्वमूर्त्त्यधिपतये भीमाय नमः। ईशानाय नमः ईशानमूर्त्यधिपतये सूर्यमूर्त्तये नमः। इत्यष्टौ मूर्त्ती तदधिपांश्च अर्चयेत।

विष्णु प्रतिष्ठायाम्—पूर्वे तत्त्वन्यासः पृथ्वी मूर्तये नमः। पृथिवीमूर्त्यधिपतये वासुदेवाय नमः। दक्षिणेजलमूर्तये नमः। पश्चिमे-अग्निमूर्तये नमः—अग्नि-मूर्त्यधिपतये प्रद्युम्नाय नमः। उत्तरे-वायुमूर्तये नमः। वायुमूर्त्यधिपतये अनिरुद्धाय नमः। मध्ये—ॐ स्वमूर्तये नमः। ॐ स्वमूर्त्यधिपतये नारायणाय नमः। इति चतुर्थावरणम्।

वाह्ये-इन्द्रादि दशदिग्पालाः पूजनीयाः—इति पंचमावरणम्। ततो दिव्य वाससा देवमाच्छाद्य पुरुषसूक्तेन स्तुत्वा पुष्पांजलिं दत्त्वा गन्धपुष्पादिभिः मण्डपं वेदिं चावकीर्य देवस्याग्रे चतुरस्रमण्डले स्वस्तिकं लिखित्वा तत्र ब्रह्म-विष्णु-रुद्रान् प्रतिदिशं लोकपान्, वसून् रुद्रान्, द्वादशादित्यान् विश्वेदेवान्-साध्यान् मरुद्गणगन्धर्वाप्सरसश्च पितृगण पुण्यतीर्थानि स्कन्ददुर्गाक्षेत्रपालादींश्च यथावकाशं संपूज्य देवपार्षदेभ्यो नमः इत्युच्चार्य साष्टांगम् प्रणमेत।

अत्र रात्रौ जागरणं कुर्यात्।

मोहिनीं सर्वभूतानां मनोविभ्रमकारिणीम्॥
विरूपाक्षि शिवे शान्ते आगच्छ त्वं तु मोहिनी॥१॥

वासुदेवहिते कृष्णे कृष्णाम्बर विभूषिते ॥
आगच्छ सहसाजस्त्रं सुप्तसंसारमोहिनी ॥२ ॥
सुषुप्तं संहरे देवी कुमार्ये कान्तमानसे ॥
श्रमनिःश्वासबाह्ये तु आगच्छ भुवनेश्वरि ॥३ ॥
तमः सत्त्वरजोपेते आगच्छ वरवर्णिनि ॥
मनोबुद्धिरहंकारसंहारस्त्वं सरस्वति ॥४ ॥
शब्दः स्पर्शश्च रूपं च रसो गन्धश्च पञ्चमः ॥
आगच्छ गृह्ण संक्षिप्य मोहपाशनिबन्धिनि ॥५ ॥
भवस्योत्पत्तिहेतुस्त्वं यावदाभूतसंप्लवः ॥
भुवः कल्पान्तसंध्यायां वससे त्वं चराचरम् ॥६ ॥
भोगिशय्या-प्रसुप्तस्य वासुदेवस्य शासने ॥
त्वं प्रतिष्ठासि वै देवि मुनियोनिसमुत्थिते ॥७ ॥
पितृ-देवमनुष्याणां स-यक्षोरग-रक्षसाम् ॥
पशु-पक्षि-मृगाणां च योगमायाविवर्धिनी ॥८ ॥
वससे सर्वसत्त्वेषु मातेव हितकारिणी ॥
एहि सावित्रिमूर्ति त्वं चक्षुर्भ्यां स्थानगोचरे ॥९ ॥
विश नासापुटे देवि कण्ठे चोत्कण्ठिता विश ॥१० ॥
प्रतिभावय मां सर्वे मातस्त्वं देवि सुन्दरि ॥
इदमर्घ्यं मया दत्तं पूजेयं प्रतिगृह्यताम् ॥११ ॥
उपप्रागात्परमं यदिति तस्याः पूजाविधेः स्मृतः ॥

उपप्रागात्परमं यत्सधस्थ मर्वां -२ अच्छापितरं मातरं च । अद्या देवां जुष्ट तमोहि गम्या अथाशास्ते दाशुषे वार्याणि ॥ ऋ० १ ।६३ ।१३ इति मन्त्रेण निद्रायै नमः । कलशे निद्रां पूजयित्वा लोकपाल क्षेत्रपाल भूतेभ्यो बलिं दत्त्वा मातृः स्थाप्य देवं शय्यातः प्राच्यां सर्वतोभद्रे लिंगतोभद्रमण्डले वा पूजयेत् । ।

विष्णुश्चेद् द्वादशारे चक्रमध्याष्टदल पद्मे मूलमन्त्रेण देवं निवेशयेत् ।

ॐ हूं हृदयाय नमः इति कर्णिकायां हृदयं पूजयेत् । ॐ विष्णवे नमः इति शिरः पूर्वपत्रे । ॐ ब्रह्मणे नमः इति शिखां दक्षिणपत्रे । ॐ ध्रुवाय नमः इति कवचं पश्चिमपत्रे । चक्रिणे नमः इति फट् अस्त्रं उत्तरपत्रे । शंभवाय नमः इति

गायत्रीम् आग्नेयदले। विजयाय नमः इति सावित्रीं ईशानदले। ॐ ज्योतिरूपाय नमः निर्ऋति दले। ॐ चक्रिरूपाय नम इति पिंगलास्यम् वायव्यदले।

इति गर्भावरणम्

शिव प्रतिष्ठायाम् तु मण्डले असृक् दले मेरु कर्णिकायम्। ॐ त्र्यम्बकं—यजामहे—इति मन्त्रेण देवं संस्थाप्य तत्र ह्रां हृदयाय नमः इति देवस्य हृदये। ॐ शिवाय नमः इति पूर्वपत्रे। ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ ब्रह्मण्याय नमः दक्षिणे। ॐ ह्रूं शिवायै वषट्। ध्रुवाय नमः इति पश्चिमदले। ॐ ह्रैं कवचाय हुं शूलिने नमः इति उत्तरे दले। इति प्रथम गर्भावरणम्।

ततः अष्ट पत्रेषु प्रागादितः अनन्ताय नमः पूर्वे। सूक्ष्माय नमः आग्नेयाम्। शिवोत्तमाय० दक्षिणे। एकनेत्राय० नैर्ऋत्ये। एक रुद्राय० पश्चिमे। त्रिमूर्त्तये नमः वायव्ये। श्री कण्ठाय नमः उत्तरे। शिखण्डिने नमः ऐशान्याम्।

ततः प्रागादितः पत्रेषु टंकायै नमः। कृपाणाय० वज्राय०, दमनाय० भोगेन्द्राय० घण्टायै० अंकुशाय० पाशाय नमः। इति शिवप्रतिष्ठायां गर्भावरणम्॥

तत्त्वन्यासः सर्वदेव साधारणः

पूर्वादि दिक्षु—पृथ्वीमूर्तये नमः पृथिवी मूर्त्यधिपतये शर्वाय नमः। अग्निमूर्त्तये नमः, अग्निमूर्त्यधिपतये पशुपतये नमः। यजमानमूर्तये नमः, यजमानमूर्त्यधिपतये उग्राय नमः। अर्कमूर्तये नमः, अर्कमूर्त्यधिपतये रुद्राय नमः। जलमूर्तये नमः जलमूर्त्यधिपतये भवाय नमः। वायुमूर्तये नमः, वायुमूर्त्यधिपतये ईशानाय नमः। इन्दुमूर्तये नमः, इन्दुमूर्त्यधिपतये महादेवाय नमः। खमूर्तये नमः खमूर्त्यधिपतये भीमाय नमः। इत्यष्टौ मूर्तीः तदधिपाश्चार्चयेत्॥

(सूर्यहनुमत्प्रतिष्ठायां विष्णुमूर्तीनां गणपति शक्त्योस्तु शिवमूर्तीनां आवाहनं—इति भास्करे—द्योते च। वस्तुतस्तु विष्ण्वादि सर्व देव प्रतिष्ठायां पृथिव्याद्यष्ट मूर्तिः—तदधिपानाम् एव आवाहनं न शिवमूर्तीनाम् उक्तम् इति हेमाद्रयादयः सर्वे)।

अथ शान्तिक मन्त्रैः होमः

तदनन्तर आचार्य क्रम से पलाश, उदुम्बर, अश्वत्थ, अपामार्गकी समिधा (लकड़ी) से शान्तिक मन्त्रों द्वारा १०८ वार हवन करें।

१. ॐ शन्नो वातः पवतां मातरिश्वा शन्नस्तपतु सूर्यः। अहानि शं भवन्तु नः शं रात्रि प्रतिधीयताम्॥ अ० ४२।१॥

२. शं न इन्द्राग्नि भवता मवोभिः शं नः इन्द्रावरुणा रातहव्या। शमिन्द्रा-सोमा सुविताय शं योः शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ। ऋ० ७।३५।१॥

३. शन्नो देवीरभिष्टयः आपो भवन्तु पीतये। शंय्यो रभिस्त्रवन्तु नः॥

पौष्टिक मन्त्रैः होमः

१. पुष्टिर्न रण्वा क्षितिर्न पृथ्वी गिरिर्न भुज्य क्षोदो न शं भु। अत्यो नाज्मन् सर्गं प्रतक्तः सिन्धुर्न क्षोदः क ईं वराते॥ ऋ० १।६५।३॥

२. ॐ वास्तोष्पते प्रतरणो न एधि गयस्फानो गोभि रश्वेभिरिन्दो। अजरासस्ते सख्ये स्याम पितेव पुत्रान् प्रति नो जुषस्व॥ऋ ७।५४।२॥

३. अमी वहा वास्तोष्पते विश्वा रूपाण्या विशन। सखा सुशेव एधि नः। ऋ० ७।५५।१॥

४. ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टि वर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान् मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्॥ ऋ० ७।५९।१२॥

तदनन्तर ऋत्विज-गण कुण्ड में पलाश की समिधा, तिल या घृत द्रव्य से—१ ॐ अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्त्विजम्। होतारं रत्न धातमम्॥ ऋ० १।१।१॥ से १०८ वार आहुति दें।

यहां अधिक कुण्डों की रचना हुई हो तो पूर्व कुण्ड में अग्नि मीले से, पश्चिम में "अग्न आयाहि" से, दक्षिण में "इषेत्वोर्जेत्वा" से, उत्तर में "शन्नोदेवी" से १०८ वार आहुति दे। नव कुण्डी का समायोजन हो-तो अन्य वेदमन्त्रों से आहुति दें। यह वेदादिहोम आचार्य कुण्ड में नहीं करना चाहिए? मूर्धानं से पूर्णाहुति दें।

तदनन्तर मूर्ति. मूर्तिप, लोकपालों के लिये पलाशसमिधा, घृत-तिल से १०८ वार आहुति दे। मन्त्र इस प्रकार है—

१. स्योना पृथिविनो भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छानः शर्मसप्रथा । इति पृथ्वीमूर्त्तेः ।

२. ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोर-घोर तरेभ्यः । सर्वेभ्य-शर्व-सर्वेभ्यो नमस्ते ऽस्तु रुद्र रूपेभ्यः । इति मूर्तिपतेः ।

३. ॐ इन्द्र मरुत्व इह पाहि सोमं यथा शार्याते अपि वः सुतस्य । तव प्रणीति तव शूर शर्मन्ना विवसन्ति कवयः सुयज्ञाः ॥ऋ० ३ ।५ ।१७ इतीन्द्राय ।

४. अग्नि दूतं पुरोदधे हव्यवाहमुप ब्रुवे । देवां -२ आसादयादिह ॥ ऋ ८ ।४४ ।३ इत्यग्निमूर्तये ।

५. तेजः पशूनामधिपतिः रुद्र स्तन्ति रचो वृषा । पशूनामस्माकं मा हिंसीः । एतदस्तु हुतं तव स्वाहा ॥ अग्नि मूर्तिपतेः पशुपतेः ।

६. ॐ अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये । नि होता सत्सि वर्हिषी । ऋ ६ ।१५ ।१० इत्यग्नये नमः ।

७. ॐ असि हि वीर सेन्योऽसि भूरि परादिदः । असि दभ्रस्य चिद्वृधो यजमानाय शिक्षसि सुन्वते भूरे ते वसु ॥ ऋ १ ।८१ ।२ इति यजमान मूर्तये नमः ।

८. ॐ तमिन्द्रं जोहवीमि मघवानमुग्रं सत्रा दधानम् प्रतिष्कृते शवांसि । महिष्णे गीर्भिरा य यज्ञियो ववर्तद्रार्य नो विश्वा सुपथा कृणोतु वज्री ॥ ऋ ८ ।९७ ।१३ । इति यजमान मूर्त्यधिपतये ।

९. ॐ यमाय त्वाऽगिंरस्वते पितृमते स्वाहा । स्वाहा घर्माय—स्वाहाघर्मः पित्रे ॥ इति यमाय ॥

१०. ॐ उदुत्यं जातवेदसं देवं वहन्ती केतवः ॥ दृशे विश्वाय सूर्यम् । ऋ० १ ।५० ।०१ ॥ इति सूर्य मूर्तये ।

११. ॐ आवो राजानमध्वरस्य रुद्रं होतारं सत्य यजं रोदस्योः । अग्निपुरा नतयित्नो रचिताद् विरण्यरूपमवसे कृणुध्वम् ॥ ऋ० ४ ।३ ।१ इति सूर्यमूर्तिपतेः रुद्राय ॥

१२. ॐ असुन्वन्तं समं जहि दूणाशं यो न ते मयः अस्मभ्यमस्य वेदनं दद्धि सूरिश्चिदोहते ॥१ ॥७६ ।४ ॥ इति निर्ऋतये ।

१३. ॐ आपोहिष्ठा मयो भुवस्तान ऊर्जे दधातन । महेरणाय चक्षसे ॥ ऋ० १० ।९ ।१ इति जलमूर्तये ॥

१४. ॐ विभूषन्नग्ने उभयां अनुव्रता दूतौ देवानां रजसी समीयसे । यत् ते धीतिं सुमतिमावृणामहेऽधस्मा न स्त्रिवरूथः शिवो भव ॥ ऋ० ६ ।१५ ।९ ॥ जलमूर्तिपतेः भवाय ॥

१५. ॐ इमम्मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय । त्वामवस्युरा चके । ऋ० १ ।२५ ।१९ ॥ इति वरुणाय ।

१६. ॐ वात आ वातु भेषजं शंभु मयोभुवो हृदे । प्रण आयूंषि तारिषत् । ऋ० १० ।८६ ।०१ ॥ इति वाममूर्तये ।

१७. ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियं जिन्वमवसे हूमहे वयम् । पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥ ऋ० १ ।८९ ।५ ॥ वायुमूर्तिपतेरीशानस्य ॥

१८. ॐ आनो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरं सहस्त्रिणीभिरुप याहि यज्ञम् । वायो अस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ ऋ० ७ ।९२ ।५ ॥ इति वायवे ।

१९. ॐ वयꣳ सोमव्रते तव मनस्तनूषु विभ्रतः । प्रजावन्तः सचेमहि ऋ० १० ।५७ ।६ । इति सोम मूर्तये ।

२०. ॐ इन्द्रं तं शुम्भ पुरुहन्मन्नवसे यस्य द्विता विधर्तरि । हस्ताय वज्रः प्रतिधायि दर्शतो महो दिवे न सूर्यः ॥ ऋ० ८ ।७० ।२ । इति सोममूर्तिपतेः महादेवाय ॥

२१. ॐ अभित्यं देवं सवितार मूण्योः कविक्रतुमर्चामि सत्यसवसं रत्नधामभिः प्रियं मतिमुर्ध्वा यस्यामतिर्भा अदिद्युतत सवीमानि हिरण्य पाणिरमिमीत सुक्रतुः कृपा सु वः । प्रजाभ्यास्त्वा प्राणायत्वा व्यानायत्वा प्रजास्वमनु प्राणिहि प्रजास्त्वामनु प्राणन्तु ॥ तै० १ ।२ ।६ । इति कुवेराय ।

२२. ॐ आदित् प्रत्नस्य रेतसो ज्योतिष्पश्यन्ति वासारम् । परो यदिध्यते दिवा । ऋ० ८ ।६ ।३० ॥ इति आकाश मूर्तये ।

२३. ॐ मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः परावत आ जगन्था परस्याः । सृकं संशाय पविमिन्द्र तिग्मं विशत्रून् ताह्वि वि मृधो नुदस्व ॥ ऋ १० ।१८० ।२ ॥ इति आकाशमूर्तिपतेः भीमाय ।

२४. ॐ अभित्वा देव सवितार मीशानं वार्याणाम् । सदावन् भाग मीमहे । ऋ० १ ।२४ ।३ ॥ इति ईशानाय ।

इन मन्त्रों की १०८ या २८ या ८ मन्त्रों की आवृति से कुण्ड में आहुति दें । यह हवन आचार्य कुण्ड में नहीं होता । यह मूर्ति-मूर्तिप-लोकपालों के लिये हवन है ।

महाव्याहृति होमः

ऋत्विज पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर कुण्डों, उत्तर कुण्डों में तिल-ब्रीहि मधु आज्य चरु-द्रव्यों के क्रम से प्रत्येक द्रव्य से १०८, २८ या आठ आवृत्ति से "ॐ भूर्भुवः स्वः स्वाहा" इस मन्त्र से एक साथ हवन करें ।

स्थाप्य देवता लिंगक मन्त्र होमः

तदनन्तर आचार्य जितने स्थापित होने वाले देवता हैं, उनके लिंगक मन्त्र से १०८, २८ या आठ संख्या से तिल या घृत से अपने कुण्ड में हवन कर पूर्णाहुति दे । फिर आचार्य देवता के चरणों को स्पर्श करे । फिर आठ की संख्या में दक्षिण कुण्ड में दधि का हवन करें । फिर देवता की नाभि का स्पर्श करे । पश्चिम कुण्ड में क्षीर का हवन करें । हृदय का स्पर्श करें । उत्तर कुण्ड में शहद चतुष्टय मिश्रित से हवन कर देवता के सर्वांग का स्पर्श करें । यह पंचमुखी कुण्ड के पक्ष में होता है ।

कूर्मशिला-ब्रह्म शिलादीनाम् अधिवासनम् ॥

तदनन्तर कूर्मशिला पर ॐ कूर्मशिलायै नमः, कूर्मशिलाम् आवाहयामि, ब्रह्मशिलायै नमः-ब्रह्मशिलां आवाहयामि, विष्णु-पिण्डिकायै नमः विष्णुपिण्डिकां आवाहयामि, दुर्गापिण्डिकायै नमः । गणपतिपिण्डिकायै नमः, गरुड़पिण्डिकायै नमः । लक्ष्मी पिण्डिकायै० । नारायणपिण्डिकायै नमः । ब्रह्मपिण्डिकायै नमः । सूर्य पिण्डिकायै नमः । भैरव पिण्डिकायै नमः ! हनुमत्पिण्डिकायै नमः । पार्वती पिण्डिकायै नमः । रामपिण्डिकायै नमः । वाहन परिवार के देवों का वैदिक मन्त्रों या नाम मन्त्रों से पूजन कर मुख्य प्रतिमा के

बायें भाग में अधिवासन करें। यदि परिवार की प्रतिमाओं की स्थापना न करनी हो तो नाम मात्र से ही स्मरण करना चाहिये, अधिवासन नहीं करना चाहिये। यदि परिवार की प्रतिमाएं हों तो उनको मधु और घृत लगाकर पवित्र जल से प्रक्षालन कर पूजन करके वस्त्र से आच्छादन कर प्रधान देवता की पिण्डिका में पंचांगमन्त्र से न्यास करें। उसका क्रम इस प्रकार होगा—

इदं विष्णु० हृदयाय नमः। इदं विष्णु० शिरसे स्वाहा। इदं विष्णुः शिखायै वषट्। इदं विष्णुः-कवचाय हुम्। इदं विष्णु० नेत्रत्रयाय वौषट् अस्त्रायफट् इत्यादि में देवतान्तर प्रधान पिण्डिका में न्यास करें। ॐ नमस्ते रुद्र० हृदयाय नमः अथवा लक्ष्म्यै नमः हृदयाय नमः, रुं लक्ष्म्यै नमः कवचाय हुम्। ॐ फं लक्ष्म्यै नेत्रत्रयाय वौषट्। इन मन्त्रों से पिण्डिका में न्यास करें।

ॐ ह्रीं श्रीं ह्रां क्षः ब्रह्मणे सर्वाधाराय नमः ॐ ह्रीं श्रीं ह्रां दिव्य तेजो धारिण्यै सुभगायै नमः। इन दो मन्त्रों से कूर्मादि शिला का अधिवासन करें।

लिंगकमन्त्रेण—अष्टोत्तरशतं अष्टाविंशतिः अष्टौ वा तिलयवैः हुत्वा प्रतिमायां न्यासं कुर्यात्।

अथ न्यासम्—न्यास करते समय सभी अक्षरों के साथ ॐ का उच्चारण अवश्य होना चाहिए।

देवसम्मुखो भूत्वा देशकालौ संकीर्त्य अस्मिन् अमुक देवार्चाधिवासनकर्मणि देव कलासान्निध्यर्थं प्रणवादिन्यासं करिष्ये। हाथ में पुष्प लेकर देवता का अंग न्यास करें।

१. प्रथम प्रणव न्यासः सर्वसाधारणः

१. अं पादयोः—उं हृदये। मं ललाटे इति प्रणवन्यासः।

२. द्वितीयो व्याहृतिन्यासः

२. भूः पादयोः—भुवः हृदये। स्वः ललाटे इति व्याहृतिन्यासः।

३. तृतीयो मातृका न्यासः

३. अं तालुके। आं मुखे। इं दक्षिणे नेत्रे। ईं वामनेत्रे। उं दक्षिण कर्णे। ऊं वाम कर्णे। ऋं वामगण्डे। लृं दक्षिण नासापुटे। लॄं वामनासा पुटे। एं ऊर्ध्वोष्ठे। ऐं अधरोष्ठे। ओं ऊर्ध्व दन्तपंक्तौ। औं अधर दन्तपंक्तौ। अं

ललाटे । अः जिह्वायाम् । यं त्वचि । रं चक्षुषोः । लं नासिकायाम् । वं दशनेषु । शं श्रोत्रयोः । षं उदरे । सं कटौ । हुं हृदये । क्षं नाभ्याम् । लं लिंगे । पं फं बं भं मं दक्षिणबाहौ । तं थं दं धं नं बामबाहौ । टं ठं डं ढं णं दक्षिणजंघायाम् । चं छं जं झं ञं वाम जंघायाम् । कं खं गं घं ङं सर्वांगुलीषु ॥ इति-मातृका न्यासः ।

४. चतुर्थो ऋक्षन्यासः

४. रवि चन्द्राभ्यां नमः नेत्रयोः । भौमाय नमः हृदये । वुधाय नमः स्कन्धे । वृहस्पतये नमः जिह्वायाम् । शुक्रायनमः लिंगे । शनैश्चराय नमः ललाटे । राहवे नमः पादयोः । केतवे नमः केशेषु । रोहिणीभ्यो० हृदये । मृगशिरसे० शिरसि० । आर्द्रायै० केशेषु । पुनर्वसवे० ललाटे । पुष्याय० मुखे । आश्लेषाभ्यो० नासायाम् । मघाभ्यो० दन्तेषु । पूर्वाफाल्गुणीभ्यो० दक्षिणकर्णे । उत्तराफाल्गुणीभ्यो० वामकर्णे । हस्ताय० हस्तयोः । चित्रायै० दक्षिणभुजे । स्वात्यै० वामभुजे । विशाखानुराधाभ्यां० स्तनयोः । शुद्राय० पादयोः ।

ज्येष्ठाभ्यो० दक्षिणकुक्षौ । मूलाय० लिंगे । श्रवणधनिष्ठाभ्यो० वृषणयोः । शतभिषग्भ्यो० नेत्रे । पूर्वाभाद्रपदोत्तराभाद्रपदाभ्यो वृषणयोः । शतभिषग्भ्यो० ऊर्वोः । रेवतीभ्योऽश्विनीभ्यो० जंघयोः । भरणी कृत्तिकाभ्यो० पादयोः । ध्रुवाय० नाभ्याम् । सप्तर्षिभ्यो० कण्ठे । मातृका मण्डलाय नमः कटिदेशे । विष्णुपदेभ्यो० पादयोः । नागवीथ्यै अंगवीथ्यै० वनमाला देशे न्यसामि । ताराभ्यो० रोमकूपेषु० । अगस्त्याय० कौस्तुभे । इति ग्रहादिन्यासः ।

नोट—सभी शब्दों के आरम्भ में ॐ लगाएं, पीछे नमः शब्द अवश्य लगाएं ।

५. पंचमः कालन्यासः

५. चैत्राय० शिरसि । वैशाखाय० मुखे । ज्येष्ठाय० हृदये । आषाढाय श्रवणाय० स्तनयोः । भाद्रपदाय० उदरे । आश्विनाय० कट्याम् । कार्तिकाय मार्गशीर्षाय० ऊर्वोः । पौषाय-माघाय जङ्घयोः । फाल्गुनाय० पादयोः । संवत्सराय नमः दक्षिणोर्ध्व बाहौ । परिवत्सराय० दक्षिणाधोवाहौ । इडावत्सराय० वत्सराय नमः दक्षिणोर्ध्वात् प्रादक्षिण्येन चतुर्षु बाहुषु । पर्वभ्यो० सन्धिषु । ऋतुभ्यो० लिंगे । अहोरात्रेभ्यो० अस्थिषु । क्षणाय० लवाय० । काष्ठयै० रोमसु । कृताय० मुखे । कामायै नमः त्रेताय० हृदये । द्वापराय०

नितम्बे। कलियुगाय० पादयोः। मन्वन्तरेभ्यो० बाहवे। परायपरार्धाय० जंघयोः। महा-कल्पाय० शरीरे। उदगयनाय दक्षिणायनाय० पादयोः। विषुवते नमः सर्वांगुलीषु। इतिकाल न्यासः।

६. षष्ठो वर्णन्यासः

ब्राह्मणाय० मुखे। क्षत्रियाय० बाहवे। वैश्याय० ऊर्वोः। संकरजेभ्यो० पादाग्रे। अनुलोमजेभ्यो० सर्वांग सन्धिषु। गोभ्यो० मुखे। अजाविकाभ्यो० हस्तयोः। ग्राम्यारण्यपशुभ्यो० कुक्षिदेशे। इतिवर्ण न्यासः। ॐ शब्द आदि में नमः शब्द अन्त में लगाना आवश्यक है।

७ सप्तमः तोय न्यासः

७. मेघेभ्यो० केशेषु। अभ्रेभ्यो० रोमसु। नदीभ्यो० सर्वगात्रेषु। समुद्रेभ्यो कुक्षिदेशे। इति तोयन्यासः।

८. अष्टमो वेद न्यासः

८. ॐ ऋग्वेदाय नमः शिरसि। यजुर्वेदाय० दक्षिणभुजे। सामवेदाय० वामभुजे। सर्वोपनिषद्भ्यो० हृदये। इतिहास-पुराणेभ्यो० जंघयोः। अथर्वांगिरसे नमः नाभौ। कल्प सूत्रेभ्यो० पादयोः। व्याकरणाय० वक्त्रे। तर्केभ्यो० कण्ठे। मीमांसायै निरुक्ताय० हृदये। छन्दो ज्योतिःशास्त्रेभ्यो० नेत्रयोः। गीतभूतशास्त्रेभ्यो० श्रोत्रयोः। आयुर्वेदाय० दक्षिणभुजे। धनुर्वेदाय० वामभुजे। योगशास्त्रेभ्यो० हृदये। नीतिशास्त्रेभ्यो० पादयोः। वश्यतन्त्राय ओष्ठयोः। इति विद्या न्यासः।

९. वैराज न्यासः

९. ॐ शिवे नमः मूर्ध्नि। सूर्यचन्द्रलोकाभ्यां० नेत्रयोः। अनिल लोकाय० घ्राणे। व्योम्ने० नाभ्याम्। समुद्रेभ्यो० वस्तिदेशे। पृथिव्यै० पादयोः। इति वैराजन्यासः।

१०. दशमो देवयोनि न्यासः

१०. हिरण्यगर्भाय० शिरसि। कृष्णाय० केशेषु। रुद्राय० ललाटे। यमाय० भ्रूकुट्याम्। अश्विभ्यां० कर्णयोः। वैश्वानराय० मुखे। महद्भ्यो० घ्राणे। वसुभ्यो० कण्ठे। रुद्रेभ्यो० दन्ते। सरस्वत्यै० जिह्वायाम्। इन्द्राय०

दक्षिण-भुजे। वलये० वामभुजे। प्रह्लादायनमः दक्षिण स्तने। विश्वकर्म्मणे० वामस्तने। नारदाय० दक्षिण कुक्षौ।

११. एकादश मूर्ति न्यासः

मत्स्याय० मूर्ध्नि। कूर्माय० पादयोः। नृसिंहाय० ललाटे। वाराहाय० जंघयोः॥ वामनाय० मुखे। परशुरामाय० हृदि। रामाय० वाहुषु। कृष्णाय० नाभ्याम्। बुद्धाय० बुद्धौ। कल्किने० जान्वोः। केशवाय० शिरसि। नारयणाय० मुखे। माधवाय० ग्रीवायाम्। गोविन्दाय० वाह्वोः। विष्णवे० हृदि। मधूसूदनाय० पृष्ठे। त्रिविक्रमाय० कट्याम्। वामनाय० जठरौ। श्रीधर हृषीकेशाभ्यां० जंघयोः। पद्मनाभाय० गुल्फयोः दामोदराय नमः पादयोः। इति मूर्तिन्यासः॥

१२. द्वादशः क्रतुन्यासः

अश्वमेधाय नमः मूर्ध्नि। नरमेधाय० ललाटे। राजसूयाय० मुखे। गोसवाय० कण्ठे। द्वादशाहाय० हृदि। अहीनेभ्यो० नाभौ। सर्वजितेभ्यो० दक्षिण कट्याम्। सर्वमेधाय० वामकट्याम्। अग्निष्टोमाय० लिंगे। अतिरात्राय० वृषणयोः आप्तोर्यामाय० ऊर्वोः। षोडशिने० जान्वोः। उक्थाय० दक्षिण जंघायाम्। वाजपेयाय० वामजंघायाम्। अत्यग्निष्टोमाय० दक्षिणबाहौ। चातुर्मास्याय० वामबाहौ॥ सौत्रामण्ये० हस्तेषु। पश्विष्टिभ्यो० अंगुलीषु। दर्शपौर्णमासाभ्यां० नेत्रयोः। सर्वेष्टिभ्यो० रोमकूपेषु। स्वाहाकाराय० स्तनयोः। पंचमहायज्ञेभ्यो० पादांगुलीषु। दक्षिणाग्नये० हृदये। आहवनीयाय० मुखे। गार्हपत्याय० नाभौ। वेद्यै० उदरे। प्रवर्ग्याय० भूषणेषु०। सवनेषु पादयोः। एधोभ्यो० बाहुषु। दर्भेभ्यो० केशेषु॥ इति क्रतुन्यासः॥

१३. त्रयोदशो गुण न्यासः

धर्मायनमः मूर्ध्नि। ज्ञानाय० हृदये। वैराग्याय० गुह्ये। ऐश्वर्याय० पादयोः। इति गुण न्यासः।

चतुर्दशो आयुधन्यासः

अथ विष्णुप्रतिष्ठायाम्—खड्गाय० शिरसि। शार्ङ्गाय० मस्तके। मुसलाय० दक्षिणभुजे। हलाय० वामभुजे। चक्राय० नाभ्यां जठरे पृष्ठे च।

शंखाय० लिंगे-वृषणे च । गदायै० जंघयोः—जाघ्राणेश्च । पद्माय० गुल्फयोः पादयोः ।) इत्यायुधन्यासः ॥

२. विष्णोः शक्ति न्यासः—लक्ष्म्यै० ललाटे । सरस्वत्यै० मुखे । रत्यै० गुह्ये । प्रीत्यै० कण्ठे । कीर्त्यै० दिक्षु । शान्त्यै० हृदि । तुष्ट्यै० जठरे । पुष्ट्यै० सर्वत्र ।

३. अथ विष्णोः द्वादशाक्षर न्यासः—ॐ पादयोः । नं जानुनोः । मों गुह्ये । भं नाभौ । गं हृदये । वं कण्ठे । तें मुखे । वां नेत्रयोः । सुं भाले । दे मूर्ध्नि । वां दक्षिणपार्श्वे । यं उत्तरपार्श्वे ।

४. शिव प्रतिष्ठायां आयुध न्यासः—वज्राय० शिरसि । शक्तये० मस्तके दण्डाय० दक्षिणभुजे । खड्गाय० वामभुजे । पाशाय० पृष्ठदेशेषु । ध्वजाय० नाभ्याम् । अंकुशाय० लिंगे वृषणयोश्च । त्रिशूलाय० जठरनाभि जान्वोश्च । पद्माय० गुल्फ पादयोः ॥ इत्यायुध-न्यासः ॥

५. शिवस्य शक्तिन्यासः—वामायै० ललाटे । ज्येष्ठायै० मुखे । रुद्राण्यै० गुह्ये । काल्यै० कण्ठे । कलविकरण्यै० दन्तेषु । बलायै० हृदये । बलप्रमथनायै० जठरे । सर्व भूतदमनायै० नाभौ । उन्मनायै० सर्वांगेषु ।

६. शिवस्य अंगन्यासः—ॐ नमः हृदये । नं नमः शिरसि । मं नमः शिखायै वषट् । शिं नमः कवचाय हुम् । वां नमः नेत्रत्रयाय वौषट् । यं नमः अस्त्रायफट् ॥

७. शिवस्य द्वादशाक्षर मन्त्रन्यासः—ॐ नमो भगवते शिवाय नमः । ॐ नमः पादयोः । नं नमो जानुनि । मो गुह्ये । भं नाभौ । गं हृदये । वं कण्ठे । तें मुखे । शिं नेत्रयोः । वां ललाटे । यं शिरसि । नं दक्षिणपार्श्वे । मं वामपार्श्वे । ।

८. गणेश प्रतिष्ठायाम्—वीजपूराय० शिरसि । गदायै० मस्तके । धनुषे० वामभुजे । त्रिशूलाय० दक्षिणभुजे । चक्राय नमः नाभ्याम् । कमलाय नमः जठरे । पाशाय० पृष्ठे । उत्पलाय नमः—लिंगे वृषणे च । वाणाय० जंघयोः । अंकुशाय नमः जानुनोः । विषाणाय० गुल्फयोः । रत्नकलाय० पादयो इति गणेशस्य आयुधन्यासः ।

९. गणेशस्य शक्ति न्यासः—तीव्रायै० ललाटे। ज्वालिन्यै० मुखे नन्दायै० गुह्ये। भोगदायै० कण्ठे। कामरूपिण्यै० दन्तेषु। उग्रायै० हृदये। तेजोवत्यै० नाभौ। सत्यायै० उदरे। सर्वविघ्नविनाशायै० सर्वांगेषु॥

१०. गणपतेरंगन्यासः—ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं षड्वीजस्य गां हृदयाय नमः। ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं षड़वीजस्य गीं नमः शिरसे स्वाहा। ॐ ह्रीं क्लीं ग्लौं गं षड्वीजस्य गूं शिखायै वषट्। ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लों गं षड्वीजस्य गैं कवचाय हुम्। ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं षड्वीजस्य गौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लों गं अस्त्राय फट्।

११. गणेशस्य मन्त्रन्यासः—ॐ मूर्ध्नि। ॐ नमः शिखायाम्। ॐ श्रीं ललाटे। ॐ ह्रीं दक्षभ्रुवि। ॐ क्लीं वामभ्रुवि। ॐ ग्लों दक्षिण नेत्रे। ॐ गं वामनेत्रे। ॐ गं दक्षिण श्रोंत्रे। ॐ पं वाम श्रोत्रे। ॐ तं दक्षनासा पुटे। ॐ यें वामनासापुटे। ॐ सं ओष्ठयोः। ॐ वं तालुदेशे। जं नाभौ। ॐ नं उदरे। ॐ में कट्याम्। ॐ शं लिंगे। ॐ वं वृषणे। ॐ मां ऊर्वोः। ॐ नं० जंघयो०। ॐ मं गुल्फयोः। ॐ स्वां पादयोः। ॐ हां अंगुलीषु॥

१२. दुर्गाप्रतिष्ठायाम्—त्रिशूलाय० शिरसि। खड्गाय० मस्तके। चक्राय० दक्षिणभुजे। वाणाय० वाभुजे। शक्तये० नाभौ। खेटकाय० गुह्ये। चापाय० जंघयोः। पाशाय० जानुनोः। अंकुशाय० गुल्फयो०। परशवे० पादयोः। इति दुर्गायाः आयुध न्यासः॥

१३. देव्याः शक्तिन्यासः—प्रभायै० ललाटे। उमायै० मुखे। जयायै० गुह्ये। सूक्ष्मायै० कण्ठे। विशुद्धायै० दन्तेषु। नन्दिन्यै० हृदये। सुप्रभायै० नाभौ। विजयायै० उदरे। सर्वसिद्धिप्रदायिन्यै० सर्वांगेषु॥

१४. देव्याः अंगन्यासः—ॐ हां दुर्गायै० हृदयाय नमः। ह्रीं दुर्गायै० शिरसे स्वाहा। ह्लूं दुर्गायै० शिखायै वषट्। ॐ हैं दुर्गायै कवचाय हुम्। ह्रौं दुर्गायै नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रः दुर्गायै अस्त्रायफट्॥

१५. देव्याः मन्त्रन्यासः—ॐ नमो मूर्ध्नि। ह्रीं मुखे। क्लीं कण्ठे। चां हृदि। मुं दक्षिणपार्श्वे। डां वामपार्श्वे। यैं नाभौ। विं गुह्ये। च्चें पादयोः॥

१६. मूलमन्त्र न्यासः—ॐ हृदयं हृदये। शिरः शिरसि। शिखा-शिखायां। कवचं सर्वत्र। नेत्रं नेत्रयोः। ऊर्वं करयोः। मुक्ताहराय दक्षिण स्तने ॥ श्री वत्साय वामस्तने। कौस्तुभाय० उरसि। वनमालायै० कण्ठे ॥

अथ प्रतिमायां जीव न्यासः

अस्य श्री प्राणप्रतिष्ठा मन्त्रस्य ब्रह्म-विष्णु-महेश्वराः ऋषयः ऋग्यजुः सामानि छन्दासि चैतन्य देवता आं वीजं ह्रीं शक्तिः क्रौं-कीलकं अमुक देव प्रतिमायाः प्राणप्रतिष्ठायां जीव न्यासे विनियोगः।

ॐ ब्रह्मविष्णु रुद्र ऋषिभ्यो नमः शिरसि। ऋग्यजुः सामछन्दोभ्यो नमः मुखे। प्राणाख्य देवतायै नमो हृदि। आं वीजाय नमो गुह्ये। ह्रीं शक्तये नमः पादयोः। क्रौं कीलकाय नमः सर्वांगे ॥

ॐ कं खं गं घं ङं अं पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशात्मने आंहृदयाय नमः। ॐ चं छं जं झं ञं इं शब्द स्पर्श रूपरस गन्धात्मने ईं शिरसे स्वाहा। ॐ टं ठं डं ढं णं उं श्रोत्रत्वक् चक्षुः जिह्वा घ्राणात्मने ॐ शिखायै वषट्। ॐ तं थं दं धं नं एं वाक् पाणिपादपायूपस्थात्मने ऐं कवचाय हुम्। ॐ पं फं बं भं मं ओं वचनादानविहरणोत्सर्गा नन्दात्मने औं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं मनोबुद्ध्यहङ्कारचित्तात्मने अः अस्त्राय फट्। ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं सः विष्णो र्वा अमुक देवस्य प्राणाः। ॐ आं विष्णो र्वा अमुक देवस्य सर्वेन्द्रियाणि। ॐ आं ह्रीं० अमुक देवस्य वाङ्मनः चक्षुः श्रोत्र जिह्वाघ्राण प्राणाः इहागत्य स्वस्तये सुखेन त्रिरं तिष्ठन्तु स्वाहा। इति मन्त्रं वार त्रयं पठेत् ॥

ततः प्रतिमायाः हृद्यंगुष्ठं दत्त्वा जपेत्—ॐ अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाश्चरन्तु च। अस्यै देवत्वमर्चायै मामिह च कश्चन। इति पुरुषभावं सम्भावयित्वा—

ॐ इति प्रणवेन सन्निरुध्य सजीवं ध्यात्वा मूलमन्त्रं गायत्रीमन्त्रं च देव कर्णे जपित्वा—

स्वागतं देव देवेश मद्भाग्यात् त्वमिहागतः।
प्राक्कृतं त्वमदृष्ट्वा मां बालवत् परिपालय ॥

अथ जीव न्यासे तत्त्व न्यासः—

ॐ मं जीवात्मने नमः । ॐ मं प्राणात्मने नमः शरीर व्यापकत्वेन न्यसेत। ॐ बं बुद्ध्यात्मने नमः । फं अहङ्कारात्मने नमः । ॐ पं मनः आत्मने नमः हृदये। ॐ नं शब्द तन्त्रात्मने नमः शिरसि । ॐ धं स्पर्शतन्मात्रात्मने नमः वक्त्रे । ॐ दं रूपतन्मात्रात्मने नमः हृदये । ॐ थं रस तन्मात्रात्मने नमः अंसयोः । ॐ तं गन्धतन्मात्रात्मने० नमः पादयोः । ॐ णं श्रोत्रात्मने नमः श्रोत्रयोः । ॐ ढं त्वगात्मने नमः त्वचि । ॐ डं चक्षुरात्मने० चक्षुषोः । ॐ ठं जिह्वात्मने० जिह्वायाम् । ॐ टं घ्राणात्मने० घ्राणे ।

अथ द्वादशाक्षर नारायणस्य मूर्त्तिन्यासः—

ॐ केशवाय नमः शिरसि । ॐ नं नारायणाय० मुखे । ॐ मो माधवाय० ग्रीवायाम् । ॐ भं गोविन्दाय० कण्ठे । ॐ गं विष्णवे० पृष्ठे । ॐ वं मधुसूदनाय० कुक्षौ । ॐ तें त्रिविक्रमाय० कट्याम् । ॐ वां वामनाय० जंघयोः । ॐ सु श्रीधराय० वामगुल्फे । ॐ दें हृषीकेशाय० दक्षिण गुल्फे । ॐ वां पद्मनाभाय० वामपादे । ॐ यं दामोदराय० दक्षिणपादे । इति नारायण द्वादशाक्षरन्यासः ।

नारायणमूर्त्तौ अष्टांग विष्णुन्यासः—ॐ हुं हृदयाय नमः हृदये । ॐ विष्णवे नमः शिरसि । ॐ ब्रह्मणे० शिखायाम् । ॐ माधवाय० कवचे । ॐ चक्रिणे० नेत्रयोः । ॐ चक्रिणे नमः अस्त्राय फट् ॥ ॐ शंभवे० गायत्र्यै० दक्षिण-नेत्रे । विजयाय० सावित्र्यै० वामनेत्रे । चक्रिणे० चक्रनेत्रायै पिंगलास्त्रं सर्वदिक्षु ।

नारायणमूर्त्तौ पुरुषसूक्त न्यासः—पुरुषसूक्त के मन्त्रों का पाठ करते हुए अंगन्यास करें ॐ सहस्रशीर्ष० इतिपादयोः । पुरुष एव० जंघयोः । एतावानस्य० जानुनोः । त्रिपादूर्ध्व० ऊर्वोः । ततोविराड० वृषणयोः । तस्माद्यज्ञाद्० कट्याम् । तस्माद्यज्ञात्० नाभ्याम् । तस्मादश्वा० हृदि । तं यज्ञं० स्तनयोः । यत्पुरुषं वामाङ्गे० । ब्राह्मणोऽस्य० मुखे । चन्द्रमा मनसो० चक्षुषोः । नाभ्या० कर्णयोः । यत्पुरुषेण० भ्रुवोः । सप्तास्या० भाले । यज्ञेन यज्ञ० शिरसि । इति पुरुषसूक्तन्यासः ।

अथ नारायणमूर्तौ उत्तर नारायण न्यासः—अद्भ्यः संभृत०—हृदये। वेदाहमे०—शिरसि। प्रजापति० शिखायाम्। योदेवेभ्यः० कवचे। रुचं ब्राह्मम्०—नेत्रयोः। श्रीश्चते० अस्त्रम्। (इन पूरे मंत्रों का पाठ करें)

अथ शिवस्य पञ्चदश ब्रह्मन्यासः—अंगुष्ठयोः ईशानम्। तर्जन्यो० तत्पुरुषम्। मध्यमयोः अघोरम्। अनामिकयोः वामदेवम्। कनिष्ठिकयोः सद्योजातम्।

ततः—कनिष्ठिकयोः हृदयम्। अनामिकयोः शिरः। मध्यमयोः-शिखायाम्। तर्जन्योः कवचम्। अंगुष्ठयोः अस्त्रम्॥ इति विन्यस्य परेण तेजसा संयोज्य हं इति कवचेन अवगुण्ठ्य सर्वकर्मसु नियोजयेत्।

एवमेव देवस्य करन्यासं कृत्वा लिंग मुद्रां वध्वा—ॐ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपति—ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदा शिवोम्॥ इति मन्त्रेण ईशान नाम्नीं मुष्टिं वद्ध्वा ततः अंगुष्ठाग्रेण रुद्रमुद्रया मूर्ध्नि॥१॥ ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नोरुद्रः प्रचोदयात्—इति तर्जनी—अंगुष्ठयोगात् तत्पुरुषं मुखे॥२॥ ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः। सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः। इति मध्यमा-अंगुष्ठयोगेन हृदि अघोरम्॥३॥ ॐ वाम देवाय नमो ज्येष्ठायनमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो वलविकरणाय नमो वलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूत दमनाय नमः उन्मनाय नमः इति अंगुष्ठ—अनामिका योगेन गुह्ये॥४॥ ॐ सद्यो जातं प्रपद्यामि सद्यो जाताय वै नमो नमः। भवं भवे नातिभवे भवस्व-मां भवोद्भवाय नमः॥ इति कनिष्ठका—अंगुष्ठ योगेन पादौ आरभ्य मस्तकान्तम्॥ यावन्मूर्ति व्यापकत्वेन ब्रह्म न्यसेत्॥

शिवस्य कलान्यासः

ततः—ईशानः सर्वविद्यानां नमः—शशिनं उपरितनं मूर्ध्नि। ईश्वरः सर्वभूतानां इति कल्पितं चन्द्रोभयदलं पूर्व-मूर्ध्नि॥ ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिः इति हृष्टां दक्षिणमूर्ध्नि। शिवो मे अस्तु नम इति मरीच्याम् उत्तरमूर्ध्नि। सदाशिवों नमः इति ज्वालिनीं पश्चिममूर्ध्नि॥

तत्पुरुष कला चतुष्टय न्यासः

तत्पुरुषाय विद्महे नमः इति पूर्ववक्त्रे शान्तिम्। महादेवाय धीमहि-इति दक्षिण वक्त्रे-विद्याम्। तन्नोरुद्र इत्युत्तरवक्त्रे प्रतिष्ठाम्। प्रचोदयात् इति पश्चिम वक्त्रे धृतिम्। इति तत्पुरुषस्य कला चतुष्टय न्यासः।

अघोर कलान्यासः

ततः—अघोरेभ्योः उरसि। अथ घोरेभ्यो मोहायै० ग्रीवायाम्। घोराय नमः क्षमायै—स्कन्धयोः। घोरतरेभ्यो निद्रायै० नाभौ। सर्वेभ्यः सर्वव्याध्यै० कुक्षौ। सर्वशर्वेभ्यो मृत्यवे नमः पृष्ठे। नमस्ते अस्तु क्षुधायै० वक्षसि। रुद्ररूपेभ्यः तृषायै० उरसि। इत्यष्टा घोर कला न्यासः।

वामदेव कला-न्यासः

ॐ वामदेवाय नमः गुदे। ज्येष्ठाय० रक्षां लिंगे। श्रेष्ठाय नमः रतिं दक्षिणोरौ। रुद्राय नमः इति कामां वामोरौ। कालाय नमः कट्याम् दक्षिणजानौ। कलविकरणाय नमः संजीवनीम्—वामजानौ। बलविकरणाय नमः क्रियाम् दक्षिण जंघायाम्। बलाय नमः बुद्धिं वामजंघायाम्। बलविकरणाय नमः छायां दक्षिण स्फिचि। बलप्रमथनाय नमः धात्रीं वामस्फिचि॥ सर्वभूतदमनाय नमः भ्रामणीं कट्याम्। मनसे नमः शोषिणीं दक्षिणपार्श्वे। उन्मनाय नमः ज्वरां वामपार्श्वे इति त्रयोदश कलान्यासः॥

सद्योजात कलाष्टक न्यासः

सद्यो जातं प्रपद्यामि नमः सिद्धिं दक्षिण पादे। सद्योजाताय वै नमः ऋद्धिं वामपादे। भवे नमः जयां दक्षिणपाणौ। अभवे नमः लक्ष्मीं वामपाणौ। नातिभवे मेधां नासायाम्। भवस्व मां नमः कान्तिं शिरसि। भवाय नमः स्वधां दक्षिणबाहौ। उद्भवाय नमः प्रभां वामबाहौ। इति सद्योंजात कलाष्टक न्यासः॥

ततो देवं हंसं संपाद्य हंस हंसेति हृदयादि न्यासं कुर्यात्। ॐ हंस हंसेति हृदयाय नमः। ॐ हंस हंसेति शिरसे स्वाहा। ॐ हंस हंसेति शिखायै वषट्। ॐ हंस हंसेति कवचाय हुम्। ॐ हंस हंसेति नेत्र-त्रयाय वौषट्। इति शिवन्यासः॥

अथ षोडश तत्त्वन्यासः—रामतत्त्वाय नमः। विद्यातत्त्वाय०। नीति तत्त्वाय०। तर्क तत्त्वाय०। काल तत्त्वाय। माया तत्त्वाय०। बुद्धि तत्त्वात्मने० बुद्धौ। अहंकार तत्त्वात्मने नमः। सत्त्वाय नमः। रजसे नमः। तमसे नमः। पुरुषतत्त्वाय नमः। सदाशिव तत्त्वाय०। शक्तितत्त्वाय०। शिव तत्त्वाय। इति षोडश न्यासः।

अथ मन्त्र न्यासः—ॐ अग्नि मीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्त्विजम्। होतारं रत्नधातमम् ॥१ ॥ पादयोः।

ॐ इषे त्वोर्ज्जे त्वा वायवस्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्वमघ्न्या इन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवा अयक्ष्मा मावस्तेन ईशतमाघशꣳ स्ते ध्रुवा अस्मिन् गौपतौ स्यात् बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि ॥२ गुल्फयोः ॥

ॐ अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये। निहोता सत्सि वर्हिषि ॥ जंघयोः ॥३ ॥

ॐ शन्नोदेवी रभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंय्योरभिस्त्रवन्तु नः। जानुनोः ॥४ ॥

ॐ सुपर्णोसि गरुत्मान् त्रिवृत्ते शिरोगायत्रञ्चक्षुर्वृहद्रथंतरपक्षौ। स्तोम आत्मा छन्दाꣳ स्यङ्गानि यजूंषि नाम। सामते तनूर्वामदेव्यं यज्ञाय यज्ञियं पुच्छधिष्ण्याः शफाः। सुपर्णोसि गरुत्मान् दिवं गच्छ स्वपत। ऊर्वोः ॥५ ॥

ॐ स्वस्तिनः इन्द्रो वृद्धश्रवा स्वस्तिनः पूषा विश्वेदेवाः। स्वस्तिनस्तार्क्ष्यो अरिष्ट नेमिः स्वस्तिनो वृहस्पतिर्दधातु ॥ जठरे ॥६ ॥

ॐ दीर्घायुत्वाय बलाय बर्च्चसे सुप्रजास्त्वाय सहसा अथो जीव शरदः शतम् ॥ हृदये ॥७ ॥

ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्या वहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्। इष्णन्निषाण मुम्म इषाण सर्वलोकम्म इषाण। कण्ठे ॥८ ॥

ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रं हवे-हवे सुहवꣳ शूरमिन्द्रम्। ह्वयामि शक्रम्पुरुहूतमिन्द्रं स्वस्तिनो मघवा धात्विन्द्रः। वक्त्रे ॥९ ॥

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव वन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात्। स्तनयोः नेत्रयोश्च ॥१०॥

ॐ मूर्द्धानं दिवो अरतिम्पृथिव्या वैश्वानरमृतमाजातमग्निम्। कवि॑ सम्राजमतिथिं जनाना मासन्ना पात्रं जनयन्त देवाः। मूर्ध्नि ॥११॥

इति॥

देवीमूर्तौ षोडश न्यासानन्तरं निवृत्तिन्यासः

ॐ ह्रीं अं निवृत्त्यै नमः शिरसि। ॐ ह्रीं आं प्रतिष्ठायै० मुखे। ॐ ह्रीं इं विद्यायै० दक्षिणनेत्रे। ॐ ह्रीं ईं शान्त्यै० वामनेत्रे। ॐ ह्रीं उं धुन्धिकायै० दक्षिण श्रोत्रे। ॐ ह्रीं ऊं दीपिकायै० वामश्रोत्रे। ॐ ह्रीं ऋं रेचिकायै० दक्षिणनासा पुटे। ॐ ह्रीं ॠं मोचिकायै० वामनासापुटे। ॐ ह्रीं ऌं परायै० दक्षकपोले। ॐ ह्रीं ॡं सूक्ष्मायै० वामकपोले। ॐ ह्रीं एं सूक्ष्मामृतायै० ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ। ॐ ह्रीं ऐं ज्ञानामृतायै० अधोदन्तपंक्तौ। ॐ ह्रीं ओं सावित्र्यै० ऊर्ध्वोष्ठे। ॐ ह्रीं औं व्यापिन्यै० अधरोष्ठे। ॐ ह्रीं अं सुरूपायै० जिह्वायाम्। ॐ ह्रीं अनन्तायै० कण्ठे। ॐ ह्रीं कं सृष्टयै० दक्षबाहुमूले। ॐ ह्रीं खं ऋध्यै० दक्षकूपरे। ॐ ह्रीं गं स्मृत्यै० दक्षमणिबन्धे। ॐ ह्रीं घं मेधायै० दक्षकरांगुलिमूलेषु। ॐ ह्रीं ङं कान्त्यै दशाङ्गुल्यग्रेषु। ॐ ह्रीं चं लक्ष्म्यै वाम बाहुमूले। ॐ छं द्युत्यै वामकूपरे। ॐ ह्रीं जं स्थिरायै० वाममणिबन्धे। ॐ ह्रीं झं स्थितायै वामांगुलिमूले। ॐ ह्रीं ञं सिध्यै० वामांगुल्यग्रेषु। ॐ ह्रीं टं जरायै० दक्षपादमूले। ॐ ह्रीं ठं पालिन्यै० दक्षजानुनि। ॐ ह्रीं डं शक्त्यै० दक्षगुलके। ॐ ह्रीं ढं ऐश्वर्य्यै० दक्षपादांगुलिषु। ॐ ह्रीं णं रत्यै वामपादमूले। ॐ ह्रीं तं कामिन्यै० दक्षपादमूले। ॐ ह्रीं थं रदायै० वामजानुनि। ॐ ह्रीं दं ह्लादिन्यै० वामगुल्फे। ॐ ह्रीं धं प्रीत्यै० वामपादांगुलिमूले। ॐ ह्रीं नं दीर्घायै० वामपादांगुल्यग्रेषु। ॐ ह्रीं पं तीक्ष्णायै० दक्षिण कुक्षौ। ॐ ह्रीं फं सुप्त्यै० वामकुक्षे। ॐ ह्रीं बं अभयायै० पृष्ठे। ॐ ह्रीं भं निद्रायै० नाभौ। ॐ ह्रीं मं मात्रे० उदरे। ॐ ह्रीं यं शुद्धायै० हृदि। ॐ ह्रीं रं क्रोधिन्यै० कण्ठे। ॐ ह्रीं लं कृपायै० ककुदि। ॐ ह्रीं वं उल्कायै० स्कन्धयोः। ॐ ह्रीं शं मृत्यवे दक्षिण करे। ॐ ह्रीं षं पीतायै० वाम करे। ॐ ह्रीं सं श्वेतायै० दक्षिणपादे। ॐ ह्रीं

हं अरुणायै० वामपादे । ॐ ह्रीं त्रं असितायै० मूर्द्धादिपादान्ताय । ॐ ह्रीं क्षं सर्वसिद्धिगौर्यै० पादादि मूर्द्धान्तम् ।

इति तृतीयो निवृत्तिन्यासः

देवमूर्त्तौ वशिन्यादिन्यासः—ॐ अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लृं एं ऐं ओं औं अं अः क्लीं वासिनी वाग्देवतायै नमः ब्रह्मरन्ध्रे । ॐ कं खं गं घं ङं क्लीं ह्रीं कामेश्वरी वाग्देवतायै ऐश्वर्य्यै नमः ललाटे । ॐ चं छं जं झं ञं क्लीं मोदिनी वाग्देवतायै० भ्रूमध्ये । ॐ टं ठं डं ढं णं क्ल्यूं विमला वाग्देवतायै० आधारे । ॐ शं षं सं हं क्षं श्रीं कौलिनी वाग्देवतायै० सर्वांगे । ॐ मं जीवात्मने नमः । ॐ भं प्राणात्मने नमः । ॐ वं बुद्धि हृदात्मने नमः । ॐ श्रीं फं अहंकारात्मने नमः ॥ इति वशिन्यादि न्यासः ॥

अथ प्रासादाधिवासनम्

नवीन प्रसाद का अधिवासन करे—संकल्प—

अस्मिन् प्रासादे देवता प्रतिष्ठान योग्यता सिद्धयर्थं स्नपनपूर्वकं प्रासादाधिवासनं करिष्ये ।

प्रासाद के आगे इक्यासी पद का मण्डल अक्षतों से बनाकर उन पर सप्तधान्य पुञ्जों को कर जल से भरे इक्यासी घड़ों को लाकर उस पर नौ के मध्य-मध्यों को जान कर उन मध्यों में नौ कुंभों को पूर्वादिक्रम से मध्यभागों में विन्यास करे । मध्य कुम्भ में—

(१) शमी-उदुम्बुर- अश्वत्थ-चम्पक- अशोक-पलाश- प्लक्ष-न्यग्रोध-कदम्ब-आम्र-विल्व और अर्जुन वृक्ष के पत्ते, इन बारह वृक्षों के पत्तों को ॐ सोमाय वनस्पत्यन्तर्गताय नमः । इस मन्त्र से पत्तों को छोड़ देवे ।

(२) पूर्वादि मध्य कलश में पद्मक-गोरोचन-दूर्वांकुर-दर्भपिञ्जून सफेद सरसों पीली सरसों सफेद चन्दन लाल चन्दन-जाती-पुष्प (चमेली) और नन्द्यावर्त ये दस वस्तुएं ॐ सोमाय वनस्पत्यन्तर्गताय नमः । इस मन्त्र से इन में छोड़ दे ।

(३) अग्नि कोण के मध्य कलश में यव-ब्रीहि-तिल-सुवर्ण-चांदी नदी तट की मृत्तिका-भूमि पर न गिरा हुआ गोबर इन सात वस्तुओं को ॐ सोमाय वनस्पत्यन्तर्गताय नमः इस मन्त्र से छोड़ दें।

(४) दक्षिण दिशा वाले मध्य कुंभ में सहदेवी-विष्णुक्रान्ता-भृंगराज-महोषधि-शमी-शतावरी-गुडूची और श्यामाक इन आठ वस्तुओं को ॐ सोमाय वनस्पत्यन्तर्गताय नमः ॥ इस मन्त्र से छोड़ दे।

(५) नैर्ऋत्य कोण वाले मध्य कुंभ में केला-सुपारी-नारिकेल-विल्व-नारंगी-मातुलिंग-वेर और आंवला इन आठ वस्तुओं को ॐ सोमाय वनस्पत्यन्तर्गताय नमः। इस मन्त्र से छोड़ दे।

(६) पश्चिम वाले मध्य कुम्भ में—शमी-उदुम्बर-अश्वत्थ-न्यग्रोध और पलाश की त्वचा के कषाय को ॐ सोमाय वनस्पत्यन्तर्गताय नमः। इस मन्त्र से छोड़ दे।

(७) उत्तर दिशा वाले मध्यकलश में शंख पुष्पी-सहदेवी-बला-शतावरी-कुमार-गुडूची-वच और व्याघ्री इन आठ वस्तुओं को ॐ सोमाय वनस्पत्यन्तर्गताय नमः। इस मन्त्र से छोड़ दे।

(८) ईशान कोण में मध्यस्थित कलश में वल्मीक आदि सात मृत्तिका को ॐ सोमाय वनस्पत्यन्तर्गताय नमः ॥ इस मन्त्र से छोड़ दे।

इसके पश्चात् ॐ हिरण्यवर्णा० इस मन्त्र से मध्य के नौ कलशों का अभिमन्त्रण करे।

अवशिष्ट कलशों को गन्धोदक से भर कर मध्यमादि कलशों के चारों ओर पूर्वादि क्रम से आठ-आठ रख कर मूल मन्त्र से अभिमन्त्रण कर सूत्र से वेष्टन कर-भीतर और बाहर प्रासाद को पंचगव्य से प्रोक्षण कर (मूर्द्धानं दिवः) इस मन्त्र से वल्मीक मृत्तिका से लेपन कर (समुद्र ज्येष्ठा) इस मन्त्र से ईशान कोण में स्थित मृत्तिका कुंभ से स्नान करवाये (यज्ञा यज्ञावः) इस मन्त्र से वायव्य कोण स्थित कषाय कुंभ से स्नान करवाये। (पयः पृथिव्यां) इस मन्त्र से पश्चिम दिशा वाला पंचगव्य वाले कुम्भ से स्नान करावे (या फलिनीः) इस मन्त्र से नैर्ऋत्य कोण वाले फल कुंभ से स्नान करावे। (हंसः शुचिपद) इस मन्त्र से उत्तर दिशा वाले मूल कुंभ से स्नान करावे। पूर्व वाले मध्य कुंभ से (विष्णोरराटमसि) इस मन्त्र से स्नान करावे। अग्नि कोणस्थ मध्य कुंभ से (सोमे राजानं)

इस मन्त्र से स्नान करावे। (विश्वतश्चक्षु) इस मन्त्र से दक्षिण दिशा वाले मध्य कुंभ से स्नान करावे। (नमोऽस्तु सर्पेभ्यः) इस मन्त्र से मध्य कुंभ कलश से स्नान करावे।

प्रासाद शिखर स्नान

(इदमापः) इस मन्त्र से आठ कलशों द्वारा पूर्वादि क्रम से प्रासाद और शिखर को स्नान करावे।

यदि इक्यासी कुंभों को इकट्ठा न कर सके उसके अभाव में गन्धोदक पूरित एक कलश से (देव्याय कर्मणे) से प्रासाद का प्रक्षालन करे। फिर सूत्र से वेष्टन कर स्नान करवाकर देवरूप प्रासाद की चिन्ता कर पताका आदि से सुशोभित कर गन्ध आदि से पूजन कर उसके नीचे देव की चिन्ता कर मन्त्र से प्रासाद का अधिवासन करे। (ॐ ह्रीं) इस मन्त्र से सब देवों की चिन्ता कर प्रार्थना करे कि जब तक सूर्य-चन्द्र आदि नक्षत्रगण स्थिर हैं, तब तक यहां स्थिर रहें। यही प्रासाद का अधिवासन है। ऐसा करने के बाद विष्णुपिण्डिका मन्त्र या शिव पिण्डिका मन्त्र से अट्ठाइस आहुतियां दें। यहां बारह ब्राह्मणों के भोजन का विधान है। ऐसा करके रात्रि को जागरण करे। प्रासाद को साष्टांग प्रणाम करे।

अथ प्रासाद-अधिवासनम्

प्रासाद प्रतिष्ठा

तत्र प्रासादाग्रे एकाशीतिं पदमण्डलं अक्षतैः कृत्वा तेषु पदेषु सप्तधान्यपुञ्जानं कृत्वा जलपूर्णान् एकाशीतिकुम्भान् आहृत्य तत्र नव-नवक-अंकानां मध्ये मध्यमं कोष्ठं ज्ञात्वा तेषु धान्य पुञ्जेषु कुम्भान् मध्य पूर्वादिक्रमेण न्यस्य।

१. मध्यकुम्भे शमी-उदुम्बर-अश्वत्थ-चम्पक-अशोक-पलाश-प्लक्ष-न्यग्रोध कदम्ब-आम्र-विल्व-अर्जुन वृक्ष सम्भवं पल्लव द्वादशम्—ॐ सोमाय वनस्पत्यन्तर्गताय नमः इति निक्षिपेत।

ततः पूर्वकलशादिषु—

पद्मक-गोरोचन-दूर्वांकुर-दर्भपिञ्जूल-श्वेत-पीत-सित रक्त-चन्दन-जाती-कुसुम-नन्द्यावर्तम् इति दशकम् पूर्वे।

३. यव-व्रीहि-तिल सुवर्ण-रजत-समुद्रगामिनी-कूलमृत्तिका-भूम्यसंपृष्टगोमयम् इति सप्तकम् आग्नेय।

४. आग्नेय-सहदेवी विष्णु क्रान्ता-भृंगराज-महाबधि-शमीशतावरी गुडूची-श्यामाकम्-इत्यष्टकम् याम्ये ।

५. कदली-पूगीफल-नारिकेल-विल्व-नारंग-मातुलुंग-वदर-आम्रकम् इति फलाष्टकम् नैर्ऋत्ये ।

६. मन्त्रसाधितं पंचगव्यम्। वारुणे-शमी-उदुम्वर-अश्वत्थ-न्यग्रोध-पलाश-कषाय पञ्चकम् वायव्ये ।

७. शंखपुष्पी-सहदेवी-वला-शतावरी-कुमारी गुडूची-वचा-व्याघ्री इति मूलाष्टकम्। सौम्ये ।

८. बल्मीकमार्द सप्तमृत्तिका-ईशान कुम्भे। एवं निधाय—ॐ हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम्। चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह—इति मध्यकुम्भान् अभिमन्त्र्य। शेषान् गन्धोदकेन पूरयित्वा मूलमन्त्रेण अभिममन्त्र्य रक्तसूत्रेण आवेष्ट्य अन्तः-बहिः-अधस्ताद्-ऊर्ध्वं च सर्वत्र प्रासादं पंचगव्येन संप्रोक्ष्य—इति मन्त्रेण बल्मीकमृदा विलिप्येत ।

ॐ मूर्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानर मृत-आजातमग्निम्। कवि ᳪ सम्राजमतिथिं जनाना मासन्ना पात्रं जनयन्त देवाः ॥१ ॥

ततः समुद्रादूर्मि र्मधुमां -२ उदार दुपाᳪ शुना सममृतत्वमानट्। घृतस्य नाम गुह्यं यदस्ति जिह्वा देवानाममृतस्य नाभिः ।१७/८९ ॥२ ॥ इति मन्त्रेण ईशान्दिक् संस्थेन मृत्तिका कुम्भेन प्रासादं स्नापयेत ।

ॐ यज्ञायज्ञावो अग्नये गिरा गिरा च दक्षसे। प्र प्र वयममृतञ्जातवेदसम्प्रियं मित्रन्न शᳪ सिषम्। ३. वायव्येन कषाय कुम्भेन ।

ॐ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः पयस्वती प्रदिशः सन्तु मह्यम् ॥ ४. इति वारुणेन पञ्चगव्यकुम्भेन ।

ॐ या फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणी वृहस्पतिः। प्रसूतास्तास्ते मुञ्चन्त्वᳪ हसः। ५. इति नैर्ऋतेन फलकुम्भेन ।

ॐ हᳪसः शुचिषद्वसु रन्तरिक्ष सद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोण सत। नृषद्वरं सदृत सद्व्योम सद्व्जागोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतम्वृहत्॥ ६. इति सौम्यस्थमूलाष्टक कुम्भेन॥

ॐ विष्णोरराटमसि विष्णोः श्नप्त्रेस्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णो र्ध्रुवोसि वैष्णवमसि विष्णवे त्वा॥ ७. इति पूर्वेण कुम्भेन॥

ॐ सोमःराजानमवसेऽग्नि मन्वारभामहे। आदित्यान् विष्णु ᳪ सूर्यं ब्रह्माणञ्च वृहस्पति ᳪ स्वाहा॥

ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुतविश्वतस्पात्। सम्बाहुभ्यां धमति सम्पतत्रैर्द्यावा भूमी जनयन् देव एकः॥ ९. इति याम्यदिक्स्थेन कुम्भेन।

ॐ नममोस्तुऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु। ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः। १०. इति मध्य कुम्भेन।

अथ प्रासादशिखरस्नपनम्

ॐ इदमापः प्रवहतावद्यञ्च मलं च यत्। यच्चाभिदुद्रोहान्नृतं यच्च शेषे अभीरूणम् आपो मा तस्मादेनसः पवमानश्च मुञ्चतु। इत्यष्टाभिः पूर्वादिक्रमेण प्रासादं सशिखरं स्नापयेत।

ॐ दैव्याय कर्म्मण शुन्धध्वं देवयज्यायै यद्वोऽशुद्धः पराजघ्नुरिदम्वस्तच्छुन्धामि।

एकाशीति कुम्भासम्भवे तु गन्धोदक पूरितैः नवकलशैः एकेन कलशेन वा स्नापयेत, प्रासादं च सम्प्रोक्ष्य प्रासादं सूत्रेणावेष्ट्य स्नापयित्वा देवरूपं प्रासादं चिन्तयित्वा पताकादिना शोभयित्वा गन्धादिना पूजयित्वा स्थाप्याधस्ताद्देवं संचिन्त्य वक्ष्यमाण मन्त्रेण प्रासादमधिवासयेत्। तत्रमन्त्रः—ॐ ह्रीं सर्वदेवमयाचिन्त्य सर्वरत्नोज्ज्वलाकृते। यावच्च्चन्द्रश्च सूर्यश्च तावदत्र स्थिरोभव।

प्रासाद वास्तु-पूजनम्

इत्यधिदग्स्य ॐ रक्षोहणं वल गहनं वैष्णवीमिदमहन्तं—इति पूर्वोक्त रक्षोघ्नसूक्तेन—ॐ अपसर्पन्तु ते भूताः ये भूताः भूमिः संस्थिताः। ये भूताः विघ्न कर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया॥ भूतानि राक्षसाः वापि यत्र तिष्ठन्ति केचन। ते सर्वेऽप्यपसर्पन्तु विष्णोर्यागं करोम्यहम्॥ इति मन्त्राभ्यां भूतसंघं श्वेत सर्षपैः निस्सार्य—ॐ वास्तुपुरुषाय नमः—इति वास्तुं संपूज्य—पूर्व स्थापित पञ्च कषाय-पञ्चामृत-पञ्चपल्लव-पञ्चगव्य-पञ्चरत्न सर्वौषधी-कलश जलेन कुशैश्च सर्वतः प्रासादं प्रोक्ष्य प्रासादं स्पृष्ट्वा प्रासादन्यासं कुर्यात्।

प्रासादन्यासम्

तद्यथा ॐ ह्रां पृथिवी तत्त्वाय नमः। ॐ ह्रां पृथिवी तत्त्वाधिपतये श्री कूर्माय नमः। ॐ ह्रां अप्तत्त्वाय नमः अप्तत्त्वाधिपतये जलेशाय नमः। ॐ ह्रां तेजस्तत्त्वाय० तेजस्तत्त्वाधिपतये त्विषां निधिपतये नमः। ॐ ह्रां वायु तत्त्वाय० वायु तत्त्वाधिपतये मातरिश्वने नमः। ॐ ह्रां आकाशतत्त्वाय० आकाश तत्त्वाधिपतये सूक्ष्माय नमः इति प्रसाद पादेषु॥

ॐ ह्रां रूप तन्मात्राधि नमः ॐ ह्रां रूपतन्मात्राधिपतये नमः—भानुमते नमः। ॐ ह्रां रस तन्मात्राय० रसतन्मात्राधिपतये जलदाय नमः। ॐ ह्रां स्पर्शतन्मात्राय० स्पर्शतन्मात्राधिपतये वलतत्त्वाय नमः। ॐ ह्रां शब्दतन्मात्राय० शब्द तन्मात्राधिपतये सूक्ष्मनादाय नमः। इति प्रासाद जंघयोः।

अथ कटि प्रदेशे—वाक्तत्त्वाय० वाक्तत्त्वाधिपतये दुन्दुभये०। ॐ पाणितत्त्वाय० पाणितत्त्वाधिपतये समादानाय०। ॐ पादतत्त्वाय० पाद तत्त्वाधिपतये संक्रमाय०। ॐ पायुतत्त्वाय० पायुतत्त्वाधिपतये विसर्गाय नमः। ॐ उपस्थत्त्वाय० उपस्थ तत्त्वाधिपतये आनन्दाय नमः।

अथ प्रासाद नाभौ—ॐ ह्रां श्रोत्रतत्त्वाय० श्रोत्रतत्त्वाधिपतये व्योमाय नमः। ॐ ह्रां त्वक्तत्त्वाय० त्वक्तत्त्वाधिपतये सर्वांगाय नमः। ॐ चक्षुस्तत्त्वाय० चक्षुस्तत्त्वाधिपतये आकाशाय नमः। ॐ रसना तत्त्वाय०

रसनातत्त्वाधिपतये महावक्त्राय नमः । ॐ घ्राण तत्त्वाय० घ्राण तत्त्वाधिपतये विलुण्ठाय नमः ।

अथ प्रासाद कण्ठे—ॐ मनस्तत्त्वाय० मनस्तत्त्वाधिपतये संकल्पाय नमः । ॐ बुद्धितत्त्वाय० बुद्धितत्त्वाधिपतये बुद्धये नमः ।

ॐ अहंकार तत्त्वाय० अहंकार तत्त्वाधिपतये अहंकृतये नमः ॥

ॐ चित्ततत्त्वाय० चित्ततत्त्वाधिपतये मनसे० ॥

अथद्वार मध्ये—प्रकृतितत्त्वाय नमः प्रकृति तत्त्वाधिपतये पितामहाय नमः ।

प्रासाद मध्ये—(हृदये) पुरुषतत्त्वाय० पुरुष तत्त्वाधिपतये विष्णवे नमः । प्रासाद वक्त्रे—ॐ कला तत्त्वाय० कला तत्त्वाधिपतये क्रतु-ध्वजाय० । ॐ विद्यातत्त्वाय० विद्यातत्त्वाधिपतये गुरवे नमः ॥

प्रासाद कलशे—ॐ सदाशिवतत्त्वाय० सदाशिव तत्त्वाधिपतये अजेशाय नमः ।

प्रासाद कलशोपरि—ॐ चक्रायुध चिह्नेभ्यो नमः । ॐ ह्रां सं सत्त्वाय नमः, रं रजसे नमः, तं तमसे नमः, मं बह्निमण्डलाय नमः । ॐ सोम मण्डलाय नमः । ॐ अर्क मण्डलाय नमः । इति संपूज्य प्रणवेन व्याहृतिभिः उपचारान् अथ आचरेत । इति प्रासाद न्यासं कृत्वा ऋत्विग्भिः सह कुण्डे तत्त्व-होमं कुर्यात् । घृताक्ततिलैरेव जुहुयात्—

ॐ ह्रां पृथ्वी तत्त्वाय स्वाहा । ॐ पृथिवी तत्त्वाधिपतये कूर्माय स्वाहा—इत्यादि पूर्वोक्त प्रासादन्यासमन्त्रैः तत्त्वहोमः कुर्यात् ॥

होमान्ते-अनेन कृतेन तत्त्व होमेन लक्ष्मीकान्तः प्रीणातु-इति देवाय निवेदयेत ।

ततो वहिर्दिगीशेभ्योऽघोर मन्त्रेण माषान्न-बलिं दत्त्वा क्षेत्रपालाय भूतेभ्यश्च दत्त्वा आचम्य मण्डपं प्रविशेत् ॥

अथ देवालय शिखर कलशप्रतिष्ठा

आचार्यो मण्डपस्योत्तर-भागे स्वस्तिक मण्डलं लिखित्वा यजमान-ऋत्विक्सहितौ यत्र कट्यां शिल्पिभिः कलशसंघट्टनं कृतं तत्र गत्वा

पञ्चभिः कलशैः शिखर कलशं संस्नाप्य तत्रैव ॐ मनोजूति र्जुषतामा०-इति मन्त्रेण प्रतिष्ठाप्य लोकपालेभ्यो बलिं दत्त्वा आचम्य कलशं तैलेन अभ्युक्ष्य चन्दनादिभिरभ्यर्च्य त्रिसूत्र्यावेष्ट्य वामहस्ते गृहीत्वा शान्तिमंगलतूर्यघोषेण स्नानमण्डपमानयेत्—आनीय स्वस्तिकोपरि भद्रासनं तस्योपरि स्थापयेत। तस्य पुरतः पुण्याहवाचनं अथवा शान्ति पाठं कृत्वा ॐ घृतं घृतपावानः इति मन्त्रेण घृतेन अभ्यज्य ॐ द्रुपदादिवमुमुचानः—

इति मन्त्रेण यव-मसुर-हरिद्रा-पिष्टेन उद्वर्त्य उष्णोदकेन प्रक्षाल्य ॐ मूर्धानं दिव—इति बल्मीक मृत्तिकया उपलिप्य—ॐ या दिव्याः आपः पयसा सम्बभूवुःया अन्तरिक्ष उत्पार्थि वीर्या। हिरण्यवर्णा यज्ञियास्तान आपः शिव_ऽस्योनः सुहवाः भवन्तु ॥

इति गन्धोदकेन स्नापयेत।

देविक कोणस्थैः कलशैः चतुर्भिः ॐ मानस्तोके तनये मान आयुषि मानो गोषुमानो अश्वेषु रीरिषः। मानो वीरान् रुद्रभामिनो वधीर्हविष्मन्तः सद्मित्त्वा हवामहे। १० ।११४ ।८ इति प्रथमेन।

ॐ विष्णोरराटमसि विष्णोश्नप्त्रेस्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोः ध्रुवोसि वैष्णव मसि विष्णवे त्वा ॥ इति द्वितीयेन।

ॐ सोमः राजान मवसेऽग्नि मन्वारभामहे। आदित्यान् विष्णु सूर्य-ब्रह्माणं च वृहस्पतिः स्वाहा। इति तृतीयेन ॥

ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतो वाहुरुत विश्वतस्पात। सम्बाहुभ्यां धमति संपतत्रैः द्यावाभूमि जनयन्त देव एक इति चतुर्थेन।

ॐ पयः पृथिव्यां पयः ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम्। इति शुद्धोदकेन स्नापयित्वा

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय इति।

द्वादशाक्षरेण मूलेन वाऽर्चयित्वा गन्धाद्यैः संपूज्य वस्त्रै राच्छाद्य शान्तिपाठं पठित्वा ॐ स्वस्तिन इन्द्रो वृद्धश्रवाः इति मन्त्रेण उत्थाय मण्डप देवालय प्रादक्षिण्येन मण्डपमानीय पश्चिम द्वारेण प्रविश्य देवसमीपे भ्रद्रासने निवेश्य गन्धादिना संपूज्य भक्ष्यभोज्यादिना परिपूर्य ॐ विश्वतश्चक्षु इति मन्त्रं

पठित्वा संकलीकृत्य आचार्यः घृत-दधि-क्षीर-मधुभिः पृथक्-पृथक् ॐ त्र्यम्बकं यजामहे—इति मन्त्रेण अष्टोत्तर शतं हुत्वा शान्तिकलशे संस्रवं निक्षिप्य तेनोदकेन पाद-नाभि-गुदा-अक्षि-शिरांसि कलशस्य क्रमेण स्पृशेत्।

कलशे पुरुषसूक्तं विन्यस्य कलशं गन्धादिना संपूज्य बलिं दत्त्वा प्रासादमारुह्य शान्ति मंगल-तूर्य-जय स्वनैः कलशं प्रासाद मस्तकमानीय क्षणं विश्राम्य सुमुहूर्ते प्रासादे द्वादशाक्षरेण ॐ आजिघ्रकलशं मह्यन्त्वा विशन्त्विन्दवः। पुनरूर्जा निवर्तस्व शानः सहस्रं धुक्ष्वोरु धारा पयस्वती पुनर्माविशताद्रयिः। इति मन्त्रेण प्रतिष्ठाप्य तदुपरि वस्त्रेणावेष्ट्य अस्त्रेण हुं फट् इति मन्त्रेण तस्योपरि न्यसेत। तस्मिन् कलशे चक्रं हिरण्मयं वा ताम्रमयं स्थापनीयम्। सूर्य-लक्ष्मी विरञ्चीनां पद्मम्। शंकरस्य त्रिशूलम्। भूतादि निवारणार्थं आयुधानि विन्यसेत। शिल्पितं कलशं स्थिरीकृत्य शुभवारिणा संस्थाप्य गन्धपुष्पैः पूजयित्वा प्रासादात् उत्तीर्य भूमौ साष्टांगं प्रासादं प्रणमेत।

विशेष—यदि मन्दिर के कलश की स्थापना पहले कर दी गई हो, तब लगे हुए कलश का पूजन आदि विधान वहीं करना चाहिये। यह आवश्यक है।

अथ कलश समीपे-मानस्तम्भस्य अथवा ध्वजस्तम्भस्य प्रतिष्ठा।

प्रासाद-कलशप्रतिष्ठानन्तरं तद्दिने महात्मना—

ध्वजारोपः कार्यः—वृक्षसार मयोऽश्वसारमयो लोहमयो वा मान स्तम्भः ध्वजदण्ड घटनाचितो वर्तुलो वा प्रासाद प्रमाणस्तदधिको वा यथोचितविस्तारो वा भवति। अष्टौ चत्वारो वा मानस्तम्भाः भवन्ति। ध्वजस्य एक एव स्तम्भो भवति। ऐशान्यां विधिना तं गन्ध-पुष्प-धूप-दीपादिभिः संपूज्य क्षुद्रघण्टाभिः शोभितं कृत्वा प्रतिष्ठां च कृत्वा पताकां स्तम्भोपरि निवेश्य यजमानमभिषेचयेत्।

महिमा— मानस्तम्भो भवेद् देवो ध्वजो दैवः सदोच्यते।
तयोः प्रतिष्ठा कथिताऽश्वमेध फलदायिनी।
असुराः यातुधानाश्च पिशाचोरग राक्षसाः।
ध्वजहीने तु प्रासादे वस्तुमिच्छन्ति नित्यदा॥
तस्माद् ध्वजविहीनं तु न कुर्यात् सुरमन्दिरम्।

यावन्तः तन्तवस्तस्य ध्वजस्य वर वर्णिनि ।
तावद् वर्षसहस्राणि कर्ता स्वर्गे महीयते ॥
यथा विधूते वातेन ध्वजः प्रासाद मस्तके ।
तथा कर्त्ता त्यजेत्पापं सप्तजन्मार्जितं क्षणात् ॥
यत्रैतत्क्रियते राष्ट्रे ध्वज यष्टि निवेशनम् ।
नाकालमृत्युस्तत्रास्ति नालक्ष्मीः पापकृत्स्वपि ॥
नोपसर्गभयं तत्र नापि रोगः न विभ्रमः ।
विपरीतानि नो तत्र नराणामपि भूयसाम् ।
स्वकाल वर्षो पर्जन्यः सुभिक्षं विजयी नृपः ।
शान्तानि सर्वभूतानि पयस्विन्यः पयोभृतः ।
कृतघ्नो ब्रह्महा गोघ्नो दृष्ट्वा ध्वज निवासिनम् ।
प्राप्नोति पाप निर्मोक्षं किमु कर्तुः कुलद्वयम् ।
प्रतिमा लिंग वेदीनां यावन्तः प्रमाणवः ।
तावद् वर्ष सहस्राणि कर्ता स्वर्गे महीयते ।

प्रासाद का देवरूप

प्रासादाभिमुखो भूत्वा देवरूपं प्रासादं ध्यायेत्—

पादौ पाद शिला स्तस्य जंघापादोर्ध्वमुच्यते ।
गर्भश्चैवोदरं ज्ञेयं कटिश्चैव तु मेखला ॥१ ॥
स्तम्भाश्च बाहवो ज्ञेया घण्टा जिह्वा प्रकीर्तिता ।
दीपः प्राणोऽस्य विज्ञेयो ह्यपानो जलनिर्गमः ॥२ ॥
ब्रह्मस्थानं तु यत्तस्य तन्नाभिः परिकीर्त्तिता ।
हृत्पद्मं पिंडिका ज्ञेया प्रतिमा पुरुषः स्मृतः ॥३ ॥
पादचारस्त्वहंकारो ज्योतिस्तच्चक्षुरेव च ।
तदूर्ध्वं प्रकृतिस्तस्य प्रतिमात्मा स्मृतो बुधैः ॥४ ॥
जल कुम्भास्तथा द्वारं तस्य प्रजननं स्मृतम् ।
शुकनासा भवेन्नासा गवाक्षः कर्ण उच्यते ॥५ ॥
कपोत पालिः स्कन्धोऽस्य ग्रीवा चामलसारकः ।
कलशस्तु शिरो ज्ञेयं मज्जा क्षिप्त रसं स्मृतम् ॥६ ॥

मेदश्चैव सुधां विद्यात् प्रलेपो मांसमुच्यते ।
अस्थीनि च शिलास्तस्य स्नायुः कीलादयः स्मृताः ॥७ ॥
चक्षुषी शिखारास्तस्य ध्वजाः केशः प्रकीर्तिताः ।
एवं पुरुष रूपं तं ध्यात्वा च मनसा सुधीः ॥८ ॥
प्रासादं पूजयेत् पश्चाद् गन्ध पुष्पादिभिः शुभैः ।
सूत्रेण वेष्टयेद् देवं वासस्तत् परिकल्पयेत् ॥९ ॥
प्रासादं एवं अभ्यर्च्य वाहनं चाग्र मण्डपे ॥ इति ध्यात्वा—
संपूज्य प्रासादं चात्मानं निवेद्य प्रणमेत् ॥

प्रासाद के पूजन के पश्चात् रुद्र गायत्री—ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्, अथवा विष्णु गायत्र्याः ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि । तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ।

इन मन्त्रों से अथवा देवता के मूल मन्त्र से एक सौ आठ वार आहुति दे ।

इति सर्व देव प्रासादाधिवासन विधिः ॥

प्रासादोत्सर्गः रात्रौ जागरण-विधानं च

कर्ता आचमन आदि क्रियाओं को करके मास-पक्ष आदि को कह कर "इमं शिला-इष्टका-दार्वादि निर्मित वलभी-जगती-प्राकार-परिवार, गोपुरपरिवार, देवतालयसंयुतं तत्तद् देवता-लोकावाप्ति कामः कुलद्वयानुग्रहाणां अमुक देवता प्रीतये अहमु-त्सृजामि । इस से कुश-जल और यव को छोड़कर देवता को नमस्कार करें ।

ॐ सर्वभूतेभ्यः उत्सृष्टः प्रासादोऽयं मयार्जितः । रमन्तु सर्वभूतानि छाया संश्रयणादिभिः ॥

ततः सायंकालीन बलि देकर वेदघोष पुराण-पाठ आदि करके आचार्य के साथ यजमान रात्री को जागरण करे ।

अथ अचल प्रतिष्ठा कर्म

जिस वेदी पर मूर्त्ति की स्थापना करनी हो—पहले उसकी पूजा करनी चाहिए । यदि कूर्मशिला, ब्रह्मशिला या पिण्डिका का निर्माण हो चुका है तो—इस शिला का पूजन करना होगा ।

ॐ नमो व्यापिनि स्थिरे अचले ध्रुवे ॐ श्री लं स्वाहा—इति मन्त्रेण यथाशक्तिः संपूज्य प्रार्थयेत्—त्वमेव परमा शक्तिः त्वमेवासन-धारिका। शिवाज्ञया त्वया देवि स्थातव्यमिह सर्वदा ॥ इति प्राथ्र्य ततः आसन शिलायां पूजयेत—वर्णाध्वने नमः पदाध्वने नमः मन्त्राध्वने नमः। भुवनाध्वने नमः। तत्त्वाध्वने नमः। संकलाध्वने नमः। इति

आसन-स्थानस्थां कूर्मशिलां संपूज्य पुष्पांजलित्रयं दत्त्वा प्रणमेत। इति शिलां स्थिरीकृत्य देवपत्नी लिंगकेन मन्त्रेण पिण्डिकां अभिमन्त्रयेत्।

तत्र विष्णुश्चेत्—ॐ श्रीश्च ते लक्ष्मीः इति मन्त्रं पठेत्।

यदि शिवश्चेत्—ॐ आयंगौ पृश्निरक्रमीद० इति मन्त्रं पठेत्। ॐ गौरीर्मिमाय सलिलानि तक्षत्येकपदी द्विपदी सा चतुष्पदी। अष्टापदी नवपदी वभूवुषि सहस्राक्षरा परमे व्योमन्। ॐ जातवेदसे० इत्यादि मन्त्रान् पठेत्।

तदनन्तर ब्रह्मशिला के ऊपर के भाग में या कूर्म शिला के ऊपर भाग में। श्वभ्र (गर्त) पिण्डिका को पूर्व-पश्चिम मुख प्रासाद में उत्तर प्रणाली और दक्षिणोत्तर मुख में, पूर्व प्रणाली को ध्रुवसूक्त से रखकर देव-पत्नी लिंगक मन्त्र से पिण्डिका का अभिमन्त्रण करे। उसमें विष्णु पिण्डिका स्थापना में "श्रीश्चते" से रुद्रपिण्डिका स्थापना में गौरीर्मिमाय से, सूर्य की स्थापना में "उषस्तच्चित्राणाम्" से, गणेश पिण्डिका स्थापना में पावमानः सरस्वती से, देवी पिण्डिका मे, "जातवेदसे सुनवाम" तथा अन्य, सभी देवता पिण्डिकाओं में जातवेदसे सुनवाम० इस मन्त्र का प्रयोग करे तदनन्तर पिण्डिका में तत्त्व न्यास करें।

ततः तत्त्व न्यासं कुर्यात्। ॐ आत्म तत्त्वाय नमः आत्मतत्त्वाधिपत्यै क्रियाशक्त्यै नमः। ॐ विद्या तत्त्वाय नमः विद्या तत्त्वाधिपत्यै ज्ञान शक्त्यै नमः। ॐ शिव तत्त्वाधिपत्यै इच्छा-शक्त्यै नमः। इति तत्त्वन्यासः। प्रति तत्त्वं मूर्ति-मूर्तिप-लोकपालान् विन्यसेत्। ततः आधारशक्त्यै नमः इति न्यस्य—ॐ अनन्तासनादि-वह्नि तत्त्वान्तपीठ देवताभ्यो नमः इति पीठपूजां निवर्त्य—आसन शक्तिभ्यो नमः इत्युक्त्वाऽभ्यर्च्य प्रार्थयेत्। ॐ सर्वदेव-मयीशानि त्रैलोक्याह्लादकारिणी। त्वां प्रतिष्ठाम्यत्र मन्दिरे विश्वनिर्मिते। यावच्चन्द्रश्च सूर्यश्च यावदेषा वसुन्धरा। तावत्त्वं देवदेवेशि मन्दिरेऽस्मिन् स्थिराभव। पुत्रानायुश्च लक्ष्मीं च अचलामजरा मराम्। अभयं सर्व भूतेभ्यः कुरु देवि नमोऽस्तु ते ॥ इति पार्वतीं लक्ष्मीं च प्राथ्र्य देवं प्रार्थयेत्।

ॐ प्रबुध्यस्व महाभाग देव-देव जगत्पते। मेघश्याम गदापाणे वुध्यस्व कमलेक्षण। बुध्यस्व भूधरानन्त वासुदेव-नमोऽस्तु ते। ॐ नृसिंहाय उग्ररूपाय ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल स्वाहा—इति प्रार्थ्य।

तदनन्तर प्रति तत्त्व में पिण्डिका में मूर्तिपति लोकपालों का न्यास करे।

पिण्डिका में तत्त्व न्यासः

तदनन्तर प्रतितत्त्व में, पिण्डिका में मूर्ति, मूर्तिपति, लोकपालों का न्यास करे—पृथ्वीमूर्तये नमः। इन्द्राय नमः १। अग्निमूर्तये नमः। अग्निमूर्त्यधिपतये नमः पशुपतये नमः अग्नये नमः २। यजमान मूर्तये नमः। यजमान मूर्त्यधिपतये उग्राय नमः यमाय नमः ३। सूर्य मूर्तये नमः। सूर्य मूर्त्यधिपतये रुद्राय नमः। नैर्ऋतये नमः ४। जलमूर्तये नमः। जलमूर्त्यधिपतये भवाय नमः। वरुणाय नमः ५। वायु-मूर्तये नमः। वायुमूर्त्यधिपतये महादेवाय नमः। कुवेराय नमः ७। आकाशमूर्तये नमः। आकाशमूर्त्यधिपतये भौमाय नमः ईशानाय नमः ॥८॥ सर्वदेव प्रतिष्ठासु मूर्तिपास्तु एते एव हि॥

इसके बाद पिण्डिका में मन्त्रों द्वारा गन्धाक्षत आदि से अर्चन करे। तदनन्तर प्रार्थना करे।

पिण्डिका में मन्त्रद्वारा पूजन

तदनन्तर पिण्डिका में ॐ आधारशक्त्यै नमः। अनन्तासनतत्त्वेभ्यो नमः। आसन शक्तिभ्यो नमः, इन वाक्यों को कह कर गन्धाक्षत से अर्चन कर प्रार्थना करे—

सर्व देवमयीशानि त्रैलोक्याह्लाद कारिणि।
त्वां प्रतिष्ठापयाम्यत्र मन्दिरे विश्वनिर्मिते ॥१॥
यावच्चन्द्रश्च सूर्यश्च यावदेषा वसुन्धरा।
तावत्त्वं देव देवेशि मन्दिरेऽस्मिन् स्थिरा भव ॥२॥
पुत्रानां ऽऽयुष्मतो लक्ष्मीमचलामजरामृताम्।
अभयं सर्व भूतेभ्यः कर्तुर्नित्यं विधेहि भो ॥३॥
विजयं नृपतेः सर्वलोकानां क्षेममेव च।
सुभिक्षं सर्व वस्तूनां कुरु देवि नमो नमः॥ इति प्रार्थयेत्॥

तदनन्तर गर्त आदि में षोडशस्वर आदि की स्थापना करे।

पिण्डिका में षोडश स्वर—आदि की स्थापना

हाथ से शिला का स्पर्श करके मध्य में—ॐ नमः १ । उसके बाहर—अं नमः । आं नमः । इं नमः । ईं नमः । उं नमः । ऊं नमः । ऋं नमः । ॠं नमः । लृं नमः । लॄं नमः । एं नमः । ऐं नमः । ओं नमः । औं नमः । अं नमः । अः नमः । इन सोलह स्वरों का विन्यास करें । उनके चारों तरफ व्यञ्जनों का विन्यास करें—ॐ कं नमः । खं नमः । गं नमः । घं नमः । ङं नमः । चं नमः । छं नमः । जं नमः । झं नमः । ञं नमः । टं नमः । ठं नमः । डं नमः । ढं नमः । णं नमः । तं नमः । थं नमः । दं नमः । धं नमः । नं नमः । पं नमः । फं नमः । बं नमः । भं नमः । मं नमः । यं नमः । रं नमः । लं नमः । वं नमः । शं नमः । षं नमः । सं नमः । हं नमः । क्षं नमः ।

तदनन्तर बाह्य परिधि में और उसके मध्य चार परिधियों में पूर्वादि से आठ दिशाओं से पूर्व ईशान के मध्य में क्रम से नौ छिद्रों में पूर्व दिशा में आवरण पूजा करे ।

प्रथमावरण में

यव, ब्रीहि, मटर, प्रियंगु, तिल, माष, निवार, शालि । पूर्व और ईशान के मध्य में पीली सरसों ।

द्वितीयावरण में

फिर पूर्वादि क्रम से ऊपर के छिद्रों में—वज्र, मौक्तिक, पन्ना, शंख, स्फटिक, पुष्पराग (पुखराज) चन्द्रकान्त, नीलम, पूर्व और ईशान के मध्य में ऊपर वाले छिद्रों में पद्मराग ॥

तृतीयावरण में

पूर्वादि क्रम से मनशिला, हरिताल, अञ्जन, कासी, सौराष्ट्री, गोरोचन, गेरु, पूर्व और ईशान मध्य में पारा ।

चतुर्थ आवरण में

पूर्व आदि क्रम से ऊपर वाले छिद्रों में सुवर्ण, चांदी, लोहा, तांबा, रांगा, कांसा, पीतल, पूर्व और ईशान के मध्य में तीक्ष्ण लोह ॥

पंचम आवरण में

पूर्वादि क्रम से सफेद चन्दन, लाल चन्दन, अगर, अर्जुन, ऊशीर, वैष्णवी,

सहदेवी, लक्ष्मणा। सोम और ईशान के मध्य में पंचमावरण में द्रव्य का प्रक्षेप नहीं होता।

विशेष—बीजों के अभाव में यवों को, रत्नों के अभाव में वज्र को, धातुओं के अभाव में हरताल को, ताम्र आदि के अभाव में सुवर्ण को, औषधियों के अभाव में सहदेवी को रखें।

देवता का दिग्बन्धन—"ॐ नरसिंह उग्ररूपाय ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल हुं फट्" इस मन्त्र से देवता का दिग्बन्धन करे।

प्रबोधक मन्त्र—जिस देवता की स्थापना हो—उस उस देवता के अनुसार मूर्तियों पर देवता से प्रार्थना करे।

देवता के लिये अर्घ्यदान—जल, दूध, कुशाग्र तिल, चावल एवं पीली सरसों और पुष्प को शंख में रख कर मुद्रा से देवता के लिये अर्घ्य दे।

तदनन्तर देवता को उठा कर "उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते" ॐ रथे तिष्ठत्" इस मन्त्र से रथ पर बिठा कर आचार्य आगे हो, यजमान पीछे हो—प्रासाद का भ्रमण करवा कर शान्ति पाठ करते हुए प्रासाद में रखें। रथ से उतार कर प्रासाद द्वार के सम्मुख पीठ पर देवता को स्थापित करवाए। लिंग प्रतिमा हो तो अर्घ्य देकर प्रासाद में प्रवेश करवा दे। ध्रुव सूक्त का पाठ करें।

इसके बाद मण्डप के उत्तर से पूर्वकल्पित शान्तिकलश जलों से चावल से निर्मित अष्ट दल के ऊपर भद्रासन पर उपविष्ट सपरिवार यजमान का अभिषेक करे। तदनन्तर यजमान, आचार्य मूर्तियों और ब्राह्मण स्थपतियों को प्रसन्न कर प्रासादोत्सर्ग करे।

तदनन्तर स्थापन मुहूर्त में आचार्य जितने स्थापित होने वाले देव हैं उनके मूल मन्त्रों से एक सौ आठ, अट्ठाइस या आठ आहुति देकर और मूर्ति, मूर्तिपति, लोकपाल मन्त्रों से प्रत्येक के मन्त्र से यथासंख्या समिधा-तिल-घृत से हवन करे।

तदनन्तर अधिवासित कूर्मशिला, ब्रह्मशिला और पिण्डिका को "त्रातारमिन्द्रम्" इस मन्त्र से ग्रहण कर विघ्न के अभावार्थ 'ॐ अस्त्राय फट्' इस अस्त्र मन्त्र से पुष्पोदक की धारा से या शान्तातीय सूक्त से प्रासाद गर्भ का अभ्युक्षण कर "महां इन्द्राय" इस मन्त्र से कुशा से ॐ 'अस्त्राय फट्' इससे अभिमन्त्रित जल से फिर प्रासाद और द्वार का मध्य, यव या यवार्ध से ईशान या उत्तर दिशा का आश्रय कर स्नानोदक से सुसंस्कृत कूर्मशिला का प्रोक्षण 'मध्य' साधन कर देवता की दृष्टि की पवित्रता का निर्णय कर—वहां पर 'ॐ' इस प्रणव से पञ्चरत्न के ऊपर रख कर उस छिद्र में सुवर्ण के कूर्मद्वार के सम्मुख (द्वार के सामने) रखकर उसके ऊपर 'ॐ' इस प्रणव मन्त्र से रत्नों को रखकर छत्तीस गर्त (गढ़ा) वाली पैंतालीस गर्त वाली ब्रह्मशिला को 'ॐ नमो व्यापिनि स्थिरेऽचले ध्रुवे श्री लं स्वाहा' इस मन्त्र से ब्रह्मशिला को रखकर यथाशक्ति गन्ध-अक्षत-पुष्प आदिकों से पूजन कर प्रार्थना करे।

हे शिले ! तुम्हीं परम शक्ति हो, तुम ही आसन धारिका हो, हे देवि, यहां पर शिव की आज्ञा से सर्वदा तुम स्थित रहो।

तदनन्तर ॐ वर्णाध्वने नमः, प्रासादाध्वने नमः, मन्त्राध्वने नमः, भुवनाध्वने नमः, तत्त्वाध्वने नमः, सकलाध्वने नमः । इति सकलाध्वानं तदारूढं ध्यायेत ॥

इनसे नमस्कार करते हुए सम्पूर्ण अध्वान ब्रह्मशिलारूढ का ध्यान करें । वहां पुण्याहवाचन या स्वस्ति पाठ करे । तदनन्तर कुण्ड में मूलमन्त्र से १२८, २८ या ८ आहुतियां दें ।

शान्तातीयसूक्तम्

ॐ शंवतीः पारयन्त्येते तं पृच्छन्ति वचो युजा । अभ्यारं तं यमाकेतुं य एवेदमिति ब्रुवन् ॥१ ॥

भासकेतुं परिस्रुतुं भारती ब्रह्मवर्धनीः । संजनाना मही माता य एवेदमिति ब्रुवन् ॥२ ॥

इन्द्रस्तं किं विभुं प्रभुं भानुनेयं सरस्वतीम् । येन सूर्यमरोचयद्येनेमे रोदसी उभे ॥३ ॥

जुषस्वाग्ने काण्वं मेध्यातिथिम् । मा त्वा सोमस्य वर्वृहत् सुतस्य मधुमत्तमः ॥४ ॥

त्वमग्ने अंगिराः शोचस्व देववीतमः । आ शन्तम् शन्तमभिरभिष्टिभिः शान्तिः स्वस्तिमकुर्वत ॥५ ॥

शं न कनिक्रदद् देवाः पर्जन्यो अभिवर्षतु । शं नो द्यावा पृथिवी शं प्रजाभ्यः शं न एधि द्विपदे शं चतुष्पदे ॥६ ॥ ऋ० १४ ।१ ।६ ॥

ध्रुव सूक्त

ॐ ध्रुवाद्यौर्ध्रुवा पृथिवी ध्रुवासः पर्वतो इमे । ध्रुवं विश्वमिदं जगत् ध्रुवो राजा विशामयम् ॥१ ॥

ध्रुवं ते राजा वरुणो ध्रुवं देवो वृहस्पतिः । ध्रुवं ते इन्द्रश्चाग्निश्च राष्ट्रं धारयतां ध्रुवम् ॥२ ॥

ध्रुवं ध्रुवेण हविषाऽभिसोमं मृशामसि । अथो ते इन्द्रः केवलीर्विशो बलिहृतस्करत् ॥ ऋ० १० ।१७३ ।४-६ ॥

गौरीर्मियाय सलिलानि तक्षत्येकपदी द्विपदी सा चतुष्पदी । अष्टापदी नवपदी वभूवुषी सहस्राक्षरा परमे व्योमन् । ऋ० १ ।१६४ ।४१ ॥

उषस्तच्चित्रमा भरास्मभ्यं वाजिनीवती । येन तोकं च तनयं च धामहे ॥ ऋ० १ ।९२ ।१३ ॥

इस प्रकार रत्नों के न्यास करने के पश्चात् दिक्पाल मन्त्रों से आलम्भन कर सुवर्ण के पृथ्वी, मेरु तथा कूर्म वाहन को द्वारोन्मुख कर उसके मध्य पिण्डिका गर्त में पारद को रखे । गुग्गुलरस आदि से रत्नादि को स्थित कर मधु और दूध की खीर से गर्त का अनुपेलन कर वस्त्र से ढक कर "ॐ कवचाय हुम्" इस मन्त्र से अवगुण्ठन मुद्रा द्वारा "ॐ अस्त्रायफट्" इस मन्त्र से संरक्षण कर—ॐ गृहावै प्रतिष्ठा सूक्तं तत्प्रतिष्ठिततया वाचा शंस्तव्यं तस्माद् यद्यपि दूरे एव पशूंल्लभते गृहानि वै नाना जिगमिषति गृहा हि पशुनां प्रतिष्ठा ॥ इससे प्रासाद का अभिषेचन कर इन्द्रादि को बलि देकर आचमन करे । इस प्रकार पिण्डिका की प्रतिष्ठा करे ।

प्रासाद से बाहर आठ स्थण्डिलों का निर्माण

प्रासाद से बाहर आठ दिशाओं में एक हाथ के आठ स्थण्डिलों का निर्माण कर, वहां पर स्थण्डिलों के ईशानादि भागों में आठ कलशों को समन्त्रक स्थापन कर पंच भूसंस्कार पूर्वक अग्नियों की स्थापना कर ब्रह्मोपवेशनान्त आज्यभाग के अन्त में प्रत्येक स्थण्डिल में पलाश समिधा से १०८ बार मूल मन्त्र से हवन कर फिर "ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि। तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्। इस विष्णु गायत्री मंत्र से घी से १०८ वार, २८ या ८ बार हवन करे ।

देव मूर्ध्नि अभिषेचनम्

आचार्य आठ दिशाओं में स्थापित कुम्भपात्रों से जल को किसी एक पात्र में लेकर मूल मन्त्र से सौ वार अभिमन्त्रित कर प्रतिमा के समीप में जाकर "सर्वतीर्थमयं जलम्" । ऐसा ध्यान करते हुए देवता के शिर पर अभिषेक करें ॥

देवस्य दिग्बन्धनम्

"ॐ नरसिंह उग्ररूप ज्वल-ज्वल प्रज्वल प्रज्वल हुं फट्" ॥ इस मन्त्र से देवता का दिग्बन्धन करें ।

इति द्वितीय दिन कृत्यम् ।

तृतीय दिन कृत्यम्

अथ प्राणप्रतिष्ठा

ततो देवस्य मूर्ध्नि हृदये वा स्पृष्ट्वा प्राणप्रणिष्ठां कुर्यात्। अस्य श्री प्राणप्रतिष्ठा मन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुरुद्र ऋषयः ऋग्यजुः सामाथर्वाणि छन्दांसि क्रियामय वपुः प्राणाख्याः देवता आं बीजं ह्रीं शक्तिः क्रों कीलकं प्राणप्रतिष्ठायां विनियोगः।

ब्रह्मविष्णुरुद्र ऋषिभ्यो नमः शिरसि। ऋग्यजुसामछन्दोभ्यो नमः मुखे। प्राणाख्यदेवतायै नमः हृदि। आं वीजाय नमः गुह्ये। क्रों शक्त्यै नमः पादयोः।

ॐ अं कं खं गं घं ङं पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशात्मने आं हृदयाय नमः ॐ इं चं छं जं झं ञं शब्द स्पर्श रूप रसगन्धात्मने ईं शिरसे स्वाहा। ॐ उं टं ठं डं ढं णं ॐ श्रोत्रत्वकचक्षुजिह्वा घ्राणात्मने शिखायै वषट्। ॐ पं फं बं भं मं ॐ वचनादानविहरणोत्सर्गानन्दात्मने औं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ अं यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं मनो बुद्ध्यहंकार चित्त विज्ञानात्मने अः अस्त्रायफट्। एवमात्मनि देवे च न्यासं कुर्यात्।

ततः देवं स्पृष्ट्वा जपेत्—ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं हं देवस्य इह प्राणाः। ॐ आं ह्रीं यं रं लं वं शं षं सं हं सः देवस्य जीव इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं सः देवस्य सर्वेन्द्रियाणि। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं सः देवस्य वाङ्मनश्चक्षुः श्रोत्रजिह्वा घ्राणप्राणः इहागत्य स्वस्तये सुखेन सुचिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

ततः—ध्रुवासि ध्रुवोऽयं यजमानोऽस्मिन्नायतने प्रजया पशुभिर्भूयात्। घृतेन द्यावापृथिवी पूर्येथा मिन्द्रस्य छदिरसि विश्वजनस्य छाया॥ आत्वा हार्ष मन्तरभू ध्रुवस्तिष्ठा विचाचलिः। विशस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तुमा त्व द्राष्ट्र मधिभ्रशत्॥ ध्रुवासिधरुणास्तृता विश्वकर्मणा। मात्वा समुद्र उद्बधीन्मा सुपर्णोऽव्यथमाना पृथिवी दृ७ह॥

शंखे—जल-क्षीर-कुशाग्र-तिल-तण्डुल-यव-सिद्धार्थक-पुष्पाणि कृत्वा शंखमुद्रया देवाय अर्घं दत्त्वा—ॐ उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवयन्तस्त्वेमहे।

उपप्रयन्तु मरुतः सुदानव इन्द्र प्राशूर्भवा सचा ॥ इति मन्त्रेण देवं उत्थाप्य ॐ रथे तिष्ठन्नयति वाजिनः पुरो यत्र यत्र कामयते सुषारथिः । अभीशूनाम्महिमानं पनायतमनः पश्चादनुयच्छन्ति रश्मयः । इति रथे उपवेश्य पुरतो गुरुः पृष्ठतो यजमानः पुत्रकलत्रबन्धुयुतः तूर्यघोषेण शनैः रथात् अवतीर्य प्रासादद्वारसन्मुखं देवं लिंगं वा कृत्वा अर्घ्यं दत्त्वा सुमुहूर्ते प्रासादं प्राविशेत् । ततः यजमानः गुरु देवं पिण्डिकायां स्थापयेत् ।

ततः ध्रुवसूक्तं पठेत—ॐ ध्रुवा द्यौः ध्रुवा पृथिवी ध्रुवं विश्वमिदं जगत् । ध्रुवाश्च मे नगाः सर्वे ध्रुवाः पति कुले स्त्रियः । ॐ ध्रुवा द्यौः ध्रुवा पृथिवी ध्रुवासः पर्वताः इमे । ध्रुवं विश्वमिदं जगद् ध्रुवो राजा विशामयम् ॥ ध्रुवं ते राजा वरुणो ध्रुवं देवो वृहस्पतिः । ध्रुवं ते इन्द्रश्चाग्निश्च राष्ट्रं धारयतं ध्रुवम् ॥ ध्रुवं ध्रुवेण हविषाभिसोमं भृशामसि। अथो त इन्द्र केवलीर्विशो बलिहृतस्करत् ॥

इति सूक्तं पठित्वा-यवं यवार्द्धं वा उत्तराश्रितं वा ईशानाश्रितं वा देवं पिण्डिकाश्वभ्रे निधाय स्थिरोभव शाश्वतो भव इत्युक्त्वा पिण्डिका-लिंगयोरन्तराले वालुकासीसकादिभिः दृढं पूरयित्वा पुन र्न चालयेत ॥ ततो देवस्य वामभागे देवपत्नीं न्यसेत् ।

तत्र मन्त्राः—विष्णोर्वामभागे विष्णुपत्नीं लक्ष्मीं, रामपत्नीं सीतां, कृष्णसखीं राधिकां स्थापयेत्—ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीः—इति मन्त्रेण । शंकरस्य वामभागे पार्वतीं—ॐ आयंगौ-इति गौरीम् । ब्रह्मणो वामभागे सावित्रीम् । सूर्यस्य वामभागे प्रभाम् । गणपतेः वामदक्षिणोः सिद्धिवुद्धी-स्थापयेत् ।

ततः विश्तश्चक्षुरुतविश्वतोमुखोविश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात् । सम्बाहुभ्यामति सम्पतत्रैर्द्यावा भूमी जनयन् देव एकः । इति मन्त्रेण देवस्य मूर्ध्नि हस्तं निधाय पर देवं ध्यात्वा पुरुषसूक्तेन रुद्रसूक्तेन वा सामनी जप्त्वा प्रार्थयेत—स्वागतं देवदेवेश मद्भाग्यात् त्वमिहागतः । प्राकृतं त्वमदृष्ट्वा मां बालबत् परिपालय । धर्मार्थकामसिद्ध्यर्थं स्थिरो भव शिवाय नः । सान्निध्यं तु महादेव स्वर्च्चायां परिकल्पय ॥ यावच्चन्द्रावनीसूर्याः तिष्ठन्त्यप्रतिघातिनः । तावत्त्वयाऽत्र देवेश स्थेयं भक्तानुकम्पया ॥ इति प्रार्थयेत् ॥

विष्णुश्चेत्—ॐ अतसी पुष्प संकाशं शंखचक्रगदाधरम् । संस्थापयामि देवेशं देवो भूत्वा जनार्दनम् ॥

रुद्रश्चेत्—त्र्यक्षं च दशबाहुं च चन्द्रार्धकृतशेखरम् ॥ गणेशं वृषभस्थं च स्थापयामि त्रिलोचनम् ।

अन्येषां देवानां तत्त्व प्रकाशकान् मन्त्रान् जपित्वा प्रणव व्याहृति शिरः सहितां गायत्रीं प्राणसूक्तं च जपित्वा सान्निध्यं कुर्यात् ।

ॐ नमस्ते त्यक्तसंगाय सन्तोषपरमात्मने । ज्ञानविज्ञानरूपाय ब्रह्मतेजोऽनुशीलिने । गुणातिक्रान्तवेगाय पुरुषाय महात्मने । अव्यक्ताय पुराणाय विष्णो सन्निहितोभव ॥ भगवन् देव देवेश त्वं पिता सर्व देहिनाम् । त्वया व्याप्तमिदं सर्वं जगत् स्थावर जंगमम् । त्वमिन्द्रः पावकश्चैव यमो निर्ऋतिरेव च । वरुणो मारुतः सोम ईशानः प्रभुरव्ययः । येन रूपेण भगवन् सन्निधिमानं सदा । सूर्य चन्द्रमसौ यावद् यावत् तिष्ठति मेदिनी । तावत्त्वयाऽत्र देव देवेश स्थातव्यं स्वेच्छया प्रभो ॥ यावच्चन्द्रो यमः सूर्यः तिष्ठन्त्यप्रतिघातिनः । तावदत्र तु देवेश स्थेयं सर्वानुकम्पया ॥ इति प्रार्थ्य स्थापितं देवं प्रधानं कृत्वा तस्य परितः परिवारदेवताः स्थापयेत् । ततः कुण्डे सर्वायुधेभ्यः स्वाहा, विमलादि नव पीठ शक्तिभ्यां स्वाहा, सर्वेभ्योऽग्निभ्यः स्वाहा । सपरिवार देवताभ्यः स्वाहा । सर्व दिगीशेभ्यः स्वाहा । अघोर मन्त्रेण—अष्टोत्तर शतं, अष्टाविंशतिः अष्टौ वा आहुतिः देयाः । ततः देवं प्रार्थयेत्—लोकानुग्रह हेत्वर्थं स्थिरो भव सुखासने । सान्निध्यं हि मया देव प्रत्यहं परिवर्तय ॥ मा भूत पूजा विरामोऽस्मिन् यजमानः समृद्धयताम् । सम्पादय सतां राष्ट्रं सर्वोपद्रव वर्जितम् । क्रमेण वृद्धिमतुलां सुखमक्षय्यमश्नुताम् । इति संप्राार्थ्य षोडशोपचारैः देवं सांगं समर्चयेत् । ।

षोडशोपचार लक्ष्मीनारायण पूजनम्

ध्यानम्— शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं,
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभांगम् ।
लक्ष्मी कान्तं कमल नयनं योगिभिर्ध्यानगम्यम्,
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्व लोकैक नाथम् ॥

आवाहनम्—ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् । स भूमि υ सर्वतस्पृत्वात्यतिष्ठद् दशांगुलम् ॥

श्री लक्ष्मी नारायणाभ्यां नमः आवाहयामि ।

आसनम्—ॐ पुरुष एवेद υ सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् । उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनाति रोहति ॥ पुष्पासनं सम० ।

पाद्यम्—ॐ एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पूरुषः । पादोऽस्य विश्वा-भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिविः ॥ पाद्यं समर्पयामि ।

अर्घ्यम्—ॐ त्रिपादूर्ध्व उदैत् पुरुषः पादोऽस्येहा भवत्पुनः । ततो विश्वङ् व्यक्रामत् साशनानशने अभि ॥ अर्घ्यं सम० ।

आचमनम्—ॐ ततो विराडजायत विराजो अधिपूरुषः । स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद् भूमि मथोपुरः ॥ आचमनीयं सम० ।

स्नानम्—ॐ तस्माद्यज्ञात् सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम् । पशूंस्तांश्चक्रे वायव्यानारण्याग्राम्याश्च ये ॥ स्नानं सम० ।

पयः स्नानम्—ॐ पयः पृथिव्यां पय ओधषीषु पयोदिव्यन्तरिक्षे पयोधाः । पयस्वती प्रदिशः सन्तु मह्यम् ॥ पयः स्नानं सम० । पयः स्नानन्ते शुद्धस्नानम् ।

दधिस्नानम्—ॐ दधिक्राब्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः । सुरभिनो मुखाकरत् प्रण आयूυषि तारिरषत् ॥ दधिस्नानं सम० । दधिस्नानान्ते शुद्धस्नानम् ।

घृतस्नानम्—ॐ घृतं घृतपावानः पिवतवसां पावानः पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा । दिशः प्रदिशः आदिशो विदिशः उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा । दधिस्नानं सम० । दधिस्नानान्ते शुद्धस्नानम् ।

मधुस्नानम्—ॐ मधुवाता ऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्धवः। माध्वीर्नः सन्त्वोषधिः। मधुनक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिव॑रजः मधुद्यौरस्तु नः पिता। मधुमान्नोवनस्पतिर्मुधमां -२ अस्तु सूर्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु नः॥ मधु स्नानं सम०। मधु स्नानान्ते शुद्ध स्नानम्।

शर्करास्नानम्—ॐ अपा॑ रसमुद्वयस॑सूर्ये सन्त समाहितम्। अपा॑रसस्य यो रसस्तं वो गृह्णाम्युत्तममुपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम्। शर्करा-स्नानं सम०। शर्करा-स्नानान्ते शुद्ध स्नानम्॥

पञ्चामृत स्नानम्—ॐ पञ्चनद्यः सरस्वती मपियन्ति सस्रोतसः। सरस्वतीं तु पञ्चधा सोद्देशेऽभवत्सरित। पंचामृत स्नानं समर्पयामि।

शुद्धोदकस्नानम्—ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनो वाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्। शुद्धोदकेन स्नापयामि। स्नानान्ते पुनराचमनीयम्।

कौशेय युग्मम्—ॐ तस्माद्यज्ञात् सर्वहुतः ऋचः सामानि जज्ञिरे। छन्दासि॑सि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत। वस्त्रोपवस्त्रं समर्पयामि।

यज्ञोपवीतम्—ॐ तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः। गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः॥ यज्ञोपवीतं समर्पयामि॥

गन्धम्—ॐ तं यज्ञं वर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रतः। तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये॥ गन्धमालेपयामि।

अक्षतम्—अक्षताभावे पुष्पम्—ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्रिया अधूषत। अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठया मतीयोजान्विद्रते हरी। अक्षताभावे पुष्पं समर्पयामि॥

पुष्पम्—यत्पुरुषं व्यदधु कतिधा व्यकल्पयन्। मुखं किमस्यासीद् किम्बाहू किमूरुपादा उच्येते॥ पुष्पाणि समर्पयामि॥

धूपम्—ॐ ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् वाहुराजन्यः कृतः। उरु तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्या॑ शूद्रो अजायत॥ धूपं धूपयामि।

दीपम्—ॐ चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत । श्रोत्राद् वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत ॥ दीपं प्रदर्शयामि ।

नैवेद्यम्—ॐ नाभ्या आसीदन्तरिक्ष॰शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत् । पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकां -२ अकल्पयन् ॥ नैवेद्यं समर्पयामि नैवेद्यान्ते पुनराचमनीयम् समर्पयामि ।

तुलसी पत्रम्—ॐ विष्णोः कर्माणि पश्यत यतो व्रतानि पस्पशे । इन्द्रस्य युज्यः सखा ।

तुलसीं हेमरूपां च रत्न रूपां च मंजरीम् ।

भवमोक्षप्रदां तुभ्यमर्पयामि हरिप्रियाम् ॥ तुलसीदलं समर्पयामि ।

आभूषणम्—ॐ रत्न कंकण वैदूर्य मुक्ताहरादिकानि च । सुप्रसन्नेन मनसा दत्तानि स्वीकुरुष्व भो । अलंकरणानि समर्पयामि ॥

ऋतुफलम्—ॐ यत् पुरुषेण हविषा देवाः यज्ञमतन्वत वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः ॥ ऋतुफलं समर्पयामि ।

ताम्बूलम्—ॐ अद्भ्यः सम्भृतः पृथिव्यै रसाच्च विश्वकर्मणः समवर्तताग्रे । तस्य त्वष्टा विदधद्रूपमेति तन्मर्त्यस्य देवत्वमाजानमग्रे ॥ एलालवंगादि संयुक्तं ताम्बूलदलं समर्पयामि ।

नमस्कारः—ॐ वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् । तमेव विदित्वातिमुत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ॥ नमस्करोमि ॥

प्रदक्षिणा—ॐ सप्तास्यासन् परिधयः त्रिसप्त समिधः कृताः । देवा यद् यज्ञं तन्वाना अवध्नन् पुरुषं पशुम् ।

यानि कानि च पापानि जन्मान्तर कृतानि च ।

तानि तानि प्रणश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे ।

पुष्पांजलि—ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन । तेह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ।

श्री लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः पुष्पांजलिं समर्पयामि ।

ॐ विष्णवे नमः । ॐ मधुसूदनाय नमः । ॐ त्रिविक्रमाय नमः । ॐ वामनाय नमः । ॐ श्रीधराय नमः । ॐ हृषीकेशाय नमः । ॐ पद्मनाभाय नमः । ॐ वासुदेवाय नमः । एतैः नामभिः संपूज्य प्रार्थयेत् ।

प्रार्थना—मेघश्यामं पीतकौशेय वासं श्रीवत्साङ्कं कौस्तुभोद् भासिताङ्गम् । पुण्योपेतं पुण्डरीकायताक्षं विष्णुं वन्दे सर्वलोकैक नाथम् ॥

सशङ्खचक्रं सकिरीट कुण्डलं सपीतवस्त्रं सरसी रुहेक्षणम् ।
सहारवक्षस्थल कौस्तुभश्रियं नमामि विष्णुं शिरसा चतुर्भुजम् ॥

पूजन करने के पश्चात् देवता का नामकरण करना चाहिए ।

महाविद्यास्तोत्रम्

जितं ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन ।
सुब्रह्मण्य नमस्तेऽस्तु महापुरुष पूर्वज ॥१ ॥
नमो हिरण्य गर्भाय प्रधानाव्यक्त रूपिणे ।
ॐ नमो वासुदेवाय शुद्ध ज्ञानस्वरूपिणे ॥२ ॥
देवानां दानवानां च सामान्यमसि दैवतम् ।
सर्वदा चरण द्वन्द्वं व्रजामि शरणं तव ॥३ ॥
एक स्त्वमसि लोकस्य स्रष्टा संहारकस्तथा ।
अध्यक्षश्चानु मन्ता च गुण माया समावृतः ॥४ ॥
संसार सागरं घोरमनन्तं क्लेशभाजनम् ।
त्वामेव शरणं प्राप्य निस्तरन्ति मनीषिणः ॥५ ॥
न ते रूपं न चाकारो नायुधानि न चास्पदम् ।
तथापि पुरुषाकारो भक्तानां त्वं प्रकाशसे ॥६ ॥
नैव किञ्चित् परोक्षन्ते प्रत्यक्षोऽसि न कस्यचित् ।
नैव किंचिदसाध्यं ते न च साध्योऽसि कस्य चित् ॥७ ॥
कार्याणां कारणं पूर्वं वचसां वाच्य मुत्तमम् ।
योगिनां परमां सिद्धिं परमं ते परं विदुः ॥८ ॥
अहं भीतोऽस्मि देवेश संसारेऽस्मिन् महाभये ।
त्राहि मां पुण्डरीकाक्ष न जाने शरणं परम् ॥९ ॥

कालेष्वपि च सर्वेषु दिक्षु सर्वासु चाच्युत ।
शरीरेऽपि गतौ चापि वर्तते मे महद्भयम् ॥१० ॥
त्वत्पाद कमलादन्यन्न मे जन्मान्तरेष्वपि ।
निमित्तं कुशलस्यास्ति येन गच्छामि सद्गतिम् ॥११ ॥
विज्ञानं यदिदं प्राप्तं यदिदं ज्ञानमर्जितम् ।
जन्मान्तरेऽपि मे देव माभूदस्य परिक्षयः ॥१२ ॥
दुर्गतावपि जातायां त्वं गतिस्त्वं मतिर्मम ।
यदि नाथ च परिज्ञेयं तावतामस्मि कृती सदा ॥१३ ॥
आकाम कलुषं चित्तं मम ते पादयोः स्थितिम् ।
कामये वैष्णवत्वं तु सर्वजन्मसु केवलम् ।

इति महाविद्यास्तवेन पुराणमन्त्रैरन्यैः स्तोत्रादिभिश्च स्तुत्वा क्षमस्व इत्युक्त्वा देवं प्रार्थयेत् । ज्ञानतो ऽज्ञानतो वाऽपि यावद् विधिरनुष्ठितः । स सर्वस्त्वत्प्रसादेन समग्रो भवतान्मम ॥ अथवा—ज्ञानतो ऽज्ञानतो वाऽपि भगवन् यत्कृतं मया । तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादा-न्महेश्वर ॥ इति प्रार्थ्य देवस्य देवनाम कुर्यात् ।

ॐ पुष्टिर्नरण्वाक्षितिर्न पृथ्वी गिरिर्न भुज्म क्षोदोन शम्भुः । अत्योनाज्मन्त्सर्ग प्रतक्तः सिन्धुर्नक्षोदः कइं बराते ॥१ ॥ ॐ शिवोनामासि स्वधितिस्ते पिता नमस्ते अस्तु मामाहि ᳪ सीः । निवर्त्तयाम्यायुषे ऽन्नाद्याय प्रजननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्य्याय ॥२ ॥ ॐ गय स्फानो अमी वहावसुवित्पुष्टिवर्धनः । सुमित्रः सोम नो भव ॥३ ॥ ॐ इह पुष्टिं पुष्टिपतिर्दधात्विह प्रजा ᳪ रमयतु प्रजापतिः । अग्नये ग्रहपतये रयिमते पुष्टिपतये स्वाहा ॥४ ॥ ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगिन्धिम्पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुक मिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥ त्र्यम्वकं यजामहे सुगन्धिम्पति वेदनम् । उर्वारुकमिव बन्धनादितो मुक्षीय मामुत ॥५ ॥ इति पौष्टिक मन्त्राः ॥

अथ शान्तिकमन्त्राः—ॐ शन्नो वातः पवतां शन्नस्तपतु सूर्यः । शन्नः कनिक्रदद्देवः पर्जन्यो अभिवर्षतु ॥१ ॥ ॐ शन्न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शन्न इन्द्रावरुणा रात हव्या । शन्न इन्द्रा पूषणा वाजसातौ शमिन्द्रा सोमा सुविताय

शंभो ॥२ ॥ ॐ शन्नो देवी रभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंय्योरभि स्रवन्तु नः ॥३ ॥ ॐ द्यौः शान्ति रन्तरिक्षः० ॥४ ॥ इति शान्तिक मन्त्राः ॥

तत्त्व न्यासः

ॐ ञं वागात्मने० वाचि । ॐ झं पाण्यात्मने० पाण्योः । ॐ जं पादात्मने० पादयोः । ॐ छं वाय्वात्मने० पायौ । ॐ चं उपस्थात्मने० उपस्थे । ॐ ङं पृथिव्यात्मने० पादयोः ॐ घं अप्तत्त्वात्मने० वस्तौ । ॐ गं तेजः आत्मने० हृदये । ॐ खं वायुतत्त्वात्मने० घ्राणे । ॐ कं आकाशात्मने० शिरसि । ॐ शं पुण्डरीकाक्षाय नमः हृदि । ॐ षं सूर्याय नमः हृत्पुण्डरीके । ॐ सं सोमात्मने० स्तनमध्ये । ॐ रं बह्न्यात्मने नमः स्तनयोः ।

ततः बं वीजं स्वाभिमतमर्त्यां स्व मन्त्रेण संयोज्य ॐ पुरुषात्मने नमः । इति पुरुषभावनीयं ध्यात्वा स्वमन्त्रेण संयोज्य तत्पुरुषात्मने नमः । पुरुष भावमानीय ध्यात्वा—ॐ पं परमात्मने नमः इति सर्वसाक्षिणं भावयित्वा—ॐ गं सर्वात्मने नमः । इति सर्वतोमुखम् । ॐ बं अनुग्रहात्मने नमः—इति अनुग्रहकरणम् । ॐ सं सर्वात्मने नमः इति संभूति करणम् । ॐ लं सर्वसंहरणात्मने नमः इति संहरणात्मकम् ॥ ॐ क्षं कोषात्मने नमः इति सर्व संयम कारकं इति ध्यात्वा सर्वेश्वरे तत्र तत्त्वाश्रयन्यासं न्यसेत । अत्र ओंकारं आदौ अन्ते नमः इति संयोज्यम् ।

अथ तत्त्वत्रय होमः

ॐ आत्म तत्त्वाय स्वाहा । ॐ आत्म तत्त्वाधिपतये ब्रह्मणे स्वाहा । ॐ विद्यातत्त्वाय स्वाहा । ॐ विद्यातत्त्वाधिपतये विष्णवे स्वाहा । ॐ शिव तत्त्वाय० शिव तत्त्वाधिपतये० रुद्राय स्वाहा । इति तत्त्वेभ्यो हुत्वा न्यसेत् ।

ॐ आत्मतत्त्वाय० पादयोः । ॐ विद्यातत्त्वाय० हृदि । ॐ शिवतत्त्वाय० शिरसि । इति त्रितत्त्वन्यासः ।

ॐ पृथिवी तत्त्वात्मने नमः पादयोः । अप् तत्त्वात्मने० वस्तौ । तेजस्तत्त्वात्मने० हृदये । वायुतत्त्वात्मने० शिरसि । गन्ध तत्त्वात्मने० हृदये । स्पर्श तत्त्वात्मने० घ्राणे । शब्द-तत्त्वात्मने० शिरसि । घ्राण तत्त्वात्मने० घ्राणे । जिह्वा तत्त्वात्मने० जिह्वायाम् । चक्षुस्तत्त्वात्मने० चक्षुषोः । त्वक् तत्त्वात्मने०

त्वचि । श्रीं तत्त्वात्मने० कर्णयोः । पायुतत्त्वात्मने० पायौ । उपस्थ तत्त्वात्मने० उपस्थे । हस्त तत्त्वात्मने० हस्तयोः । पाद तत्त्वात्मने० पादयोः । वाक्तत्त्वात्मने० वाचि । मनस्तत्त्वात्मने० मनसि ।

अथ प्रतिष्ठा होमं कुर्यात्

ॐ शिवाय स्थिरोभव स्वाहा । ॐ शिवायाप्रमेयोभव स्वाहा । ॐ शिवायानादि वोधो भव स्वाहा । ॐ शिवाय नित्यो भव स्वाहा । ॐ शिवाय सर्वगो भव स्वाहा । ॐ शिवायाविनाशो भव स्वाहा । ॐ शिवाय क्लृप्तोभव स्वाहा ॥

सर्वशान्त्यर्थं अघोरमन्त्रेण अष्टोत्तरशत होमः

ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोर घोरतरेभ्यः सर्वेभ्यः सर्व शर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्र रूपेभ्यः ।

नारायण प्रतिष्ठायां—ॐ नारायणाय स्थिरोभव स्वाहा । ॐ नारायाणाप्रमेयो भव स्वाहा । ॐ नारायणायानादिवोधो भव स्वाहा । ॐ नारायणाय नित्यो भव स्वाहा । ॐ नारायणायाविनाशो भव स्वाहा । ॐ नारायणाय क्लृप्तो भव स्वाहा ॥

अथ ब्रह्मादिमण्डलदेवतानां आज्येन होमः

ॐ ब्रह्म जज्ञानं० ब्रह्मणे स्वाहा । ॐ वयꣳ सोमाय० स्वाहा । ॐ तमीशानं० ईशानाय स्वाहा । ॐ त्रातारमिन्द्रं० इन्द्राय स्वाहा । ॐ त्वन्नो० अग्नये स्वाहा । ॐ यमाय त्वा० यमाय स्वाहा । ॐ असुन्वत० निर्ऋतये स्वाहा । ॐ तत्त्वायामि० वरुणाय स्वाहा । ॐ आनो नियुद्भिः० वायवे स्वाहा । ॐ वसोः पवित्रमसि० अष्टवसुभ्यो स्वाहा । ॐ नमस्ते रुद्र० रुद्राय स्वाहा । ॐ मण्महां असि० द्वादशादित्येभ्यः स्वाहा । ॐ यावांकशा० अश्विभ्यां स्वाहा । ॐ विश्वेदेवास आ० सपैतृक विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा । ॐ अभित्यं देवः सवि० सप्तयक्षेभ्यः स्वाहा । ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो० अष्ट कुलनागेभ्यः स्वाहा । ॐ ऋताषाढ ऋत० गन्धर्वाप्सरोभ्यः स्वाहा । ॐ यदक्रन्दः० स्कन्दाय स्वाहा । ॐ आशुशिशान० वृषभाय स्वाहा । कार्षिरसि० शूलाय स्वाहा । ॐ कार्षिरसि० भूतकालाय स्वाहा । ॐ नमो गणेभ्यो० दुर्गायै

स्वाहा। ॐ इदं विष्णु० विष्णवे स्वाहा। ॐ पितृभ्यः० स्वधायै स्वाहा। ॐ परं मृत्यो० मृत्युरोगेभ्यः स्वाहा। ॐ गणानान्त्वा० गणपतये स्वाहा। ॐ आपोहिष्ठा० अद्‌भ्यः स्वाहा। ॐ मरुतो यस्य० मरुद्‌भ्यः स्वाहा। ॐ स्योनापृथिवी० पृथिव्यै स्वाहा। ॐ इमम्मे वरुण० गंगादिनदीभ्यः स्वाहा। ॐ पंचनद्यः० सप्तसागरेभ्यः स्वाहा। ॐ प्र पर्वतस्य० मेरवे स्वाहा। ॐ गणानान्त्वा० गदायै स्वाहा। ॐ त्रिंशद्धाम० त्रिशूलाय स्वाहा। ॐ महां इन्द्रो वज्र० वज्राय स्वाहा। ॐ वसु च मे० शक्तये स्वाहा। ॐ इडएह्य० दण्डाय स्वाहा। ॐ खड्‌गो वैश्व० खड्‌गाय स्वाहा। ॐ अंशुच मे० अंकुशाय स्वाहा। ॐ आयंगौ० गौतमाय स्वाहा। ॐ अयं दक्षिणा० भरद्वाजाय स्वाहा। ॐ इदमुत्तरात्० विश्वामित्राय स्वाहा। ॐ त्र्यायुषं जम० कश्यपाय स्वाहा। ॐ अयं पश्चा० जमदग्नये स्वाहा। ॐ अयं पुरो० वशिष्ठाय स्वाहा। ॐ अत्रपितरो० अत्रये स्वाहा। ॐ पत्नी० अरुन्धत्यै स्वाहा। ॐ आदित्यै रास्ना० ऐन्द्रयै स्वाहा। ॐ अम्बे अम्बिके अम्बालिके० कौमार्यै स्वाहा। ॐ पावकः नः० ब्राह्म्यै स्वाहा।

ॐ इन्द्रस्य क्रोडोदित्यै पाजस्यं दिशां जत्रवोऽदित्यै भसज्जीभूतान् हृदयौपशेनान्तरिक्षं पुरीतता नभ उदर्येण चक्रवाकौ मतस्नाभ्यां दिवं वृक्काभ्यां गिरीन् प्लाशिभिरुपलान् प्लीहना वल्मीकान् क्लोमभि ग्लौमिर्गुल्मान् हिराभिः स्रवन्तीह्रदान् कुक्षिभ्यां समुद्रमुदरेण वैश्वानरं भस्मना—वाराह्यै स्वाहा।

ॐ अम्बे अम्बिके अम्बालिके० चामुण्डायै स्वाहा। ॐ श्रीश्च ते० वैष्णव्यै स्वाहा। ॐ या ते रुद्रशिवा० माहेश्वर्य्यै स्वाहा। ॐ समख्ये देव्या० वैनायक्यै स्वाहा॥ ततः स्विष्टकृद् होमः०।

ॐ अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराण मेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम। ॐ स्वाहा स्वधा-यताग्नये वैश्वानराय नमः इति मन्त्रेण अग्निं सम्पूज्य—ब्रह्मणान्वारब्धः—

ॐ अग्नये स्विष्ट कृते स्वाहा। ॐ भूः स्वाहा। ॐ भुवः स्वाहा। ॐ स्वः स्वाहा।

ॐ सत्वन्नो अग्ने वमोभवोती नेदिष्ठो अस्य उपसो व्युष्ठौ । अवयक्ष्वनो वरुण ꣳ रराणो वीहि मृडीक ꣳ सुहवो न एधि स्वाहा । इदमग्निवरुणाभ्यां० ।

ॐ अयाश्चाग्नेऽस्य नभिशस्तीपाश्च सत्त्वमित्वमया असि । अयानो यज्ञं वहास्य या नो धेहि भेषज ꣳ स्वाहा । इदमग्नये० ।

ॐ ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितताः महान्तः । तेभिर्नो अद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा । इदं वरुणाय० ।

ॐ उदुत्तमं वरुणपाशमस्मदवाधमं विमध्यम ꣳ श्रथाय । अथा वयमादित्यव्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा । इदं वरुणाय० ।

ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं० ।

ततो वर्हिः होमः । ततः संस्रवप्राशनं, प्रणीता विमोकनं कुर्यात् ।

ततः आस्तरण क्रमेण वर्हिरुत्थाय आज्येन अभिघार्य—

ॐ देवा गातु विदो गातु वित्त्वागातु मित मनसस्पत इमं देवयज्ञꣳ स्वाहा, वातेधा स्वाहा । हस्तेनेव जुहुयात् ।

अथ बलिदानम्

डूनों में उड़द-चावल दधि सिन्दूर डालकर, सभी वलियों के समीप दीप जलाते हुए मन्त्र पढ़ कर जल छोड़े ।

संकल्प—ॐ तत्सदद्य अमुकगोत्रः अमुक शर्माहं कृतस्य कर्मणः सांगता सिद्ध्यर्थे दशदिग्पाल पूर्वकं आदित्यादि ग्रहमण्डल स्थापित देवताभ्यो बलिदानं करिष्ये ।

इन्द्र—ॐ त्रातारमिन्द्रं मवितार मिन्द्रꣳ हवे हवे सुहवꣳ शूरमिन्द्रम् । ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्रꣳ स्वस्तिनो मघवा धात्विन्द्रः । ॐ इन्द्राय नमः, इन्द्रानुचरेभ्यो नमः, भो इन्द्र दिशं रक्ष इमां बलिं भक्ष यजमानस्य सपरिवारस्य अभ्युदयं कुरु—शान्तिकर्ता तुष्टिकर्ता पुष्टिकर्ता वरदो भव । पूर्वदिशि वलिं दद्यात् ।

२. अग्नि—ॐ त्वन्नो अग्ने तव देवपायुर्भिर्मघोनो रक्ष तन्वश्च वन्द्य । त्राता तोकस्य तनये गवामस्य निमेष ꣳ रक्षमाणस्तव व्रते । ॐ अग्नये नमः ।

अग्नेरनुचरेभ्यो नमः। भो अग्ने दिशं रक्ष इमां बलिं भक्ष सपरिवारस्य यजमानस्य अभ्युदयं कुरु। शान्तिकर्ता तुष्टिकर्ता पुष्टिकर्ता वरदोभव। आग्नेयदिशि वलिं दद्यात्।

३. यम—ॐ सुगन्नः पन्थां प्रदिशन्न एहि ज्योतिष्मद् धेह्य जरन्न आयुः। अपैतुमृत्युरमृतन्न आगाद् वैवस्वतो नो अभयं कृणोतु स्वाहा।

ॐ यमाय नमः, यमस्यानुचरेभ्यो नमः। भो यम-दिशं रक्ष इमां वलिं भक्ष सपरिवारस्य यजमानस्याभ्युदयं कुरु। शान्तिकर्ता, तुष्टिकर्ता पुष्टिकर्ता वरदोभव। दक्षिणदिशि बलिं दद्यात्।

४. निर्ऋति—ॐ असुन्वन्तमयजमानमिच्छस्तेन स्येत्यामन्विह तस्करस्य। ॐ अन्यमस्मदिच्छसात इत्या नमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु। ॐ निर्ऋतये नमः, निर्ऋत्यनुचरेभ्यो नमः। भो निर्ऋते दिशं रक्ष इमां वलिं भक्ष सपरिवारस्य यजमानस्य अभ्युदयं कुरु, शान्तिकर्ता तुष्टिकर्ता, पुष्टिकर्ता वरदोभव। निर्ऋति कोणे वलिं दद्यात्।

५. वरुण—ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः। अहेडमानो वरुणेह वोध्युरुश౮ समान आयुः प्रमोषीः। वरुणाय नमः, वरुणस्यानुचरेभ्यो नमः, भो वरुण दिशं रक्ष इमां बलिं भक्ष सपरिवारस्य यजमानस्य अभ्युदयं कुरु। शान्तिकर्ता तुष्टिकर्ता, पुष्टिकर्ता वरदोभव। पश्चिम दिशि वलिं दद्यात्।

६. वायु—ॐ आनो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वर सहस्त्रिणी भिरुपयाहि यज्ञम्। वायो ऽस्मिन्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥ ॐ वायवे नमः, वायोरनुचरेभ्यो नमः। भो वायो दिशं रक्ष इमां बलिं भक्ष सपरिवारस्य यजमानस्य अभ्युदयं कुरु, शान्तिकर्ता तुष्टिकर्ता पुष्टिकर्ता वरदो भव। पश्चिमोत्तर कोणे वलिं दद्यात्।

७. कुवेर—ॐ वय ౮ सोमव्रते तव मनस्तनूषु विभ्रतः। प्रजावन्तः सचेमहि। ॐ कुवेराय नमः, कुवेरानुचरेभ्यो नमः। भो कुवेर दिशं रक्ष इमां बलिं भक्ष सपरिवारस्य यजमानस्याभ्युदयं कुरु, शान्ति कर्ता तुष्टिकर्ता, पुष्टिकर्ता वरदो भव। उत्तरस्यां दिशि वलिं दद्यात्।

८. ईशान—ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियं जिन्वमवसे हूमहे वयम् । पूषा नो यथा वेदसामसद्‌वृधे-रक्षितापायु रदब्धः स्वस्तये । ॐ ईशानाय नमः, ईशानुचरेभ्यो नमः । भो ईशान दिशं रक्ष इमां वलिं भक्ष सपरिवारस्य यजमानस्य अभ्युदयं कुरु, शान्तिकर्ता, तुष्टिकर्ता, पुष्टिकर्ता वरदो भव । ईशानकोणे वलिं दद्यात् ।

९. ब्रह्मा—ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद विसीमतः सुरुचो वेन आवः । स बुध्न्या उपमा अस्यविष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः । भो ब्रह्मणे नमः, ब्रह्मणोऽनुचरेभ्यो नमः । ॐ भो ब्रह्मन् दिशं रक्ष इमां बलिं भक्ष सपरिवारस्य यजमानस्य अभ्युदयं कुरु, शान्तिकर्ता तुष्टिकर्ता पुष्टिकर्ता वरदो भव । ईशान पूर्वयोर्मध्ये बलिं दद्यात् ।

१०. अनन्त—ॐ स्योना पृथिवी नो भवानृक्षरा निवेशिनी । यच्छानः शर्मसप्रथा । ॐ अनन्ताय नमः, अनन्तानुचरेभ्यो नमः । भो अनन्त दिशं रक्ष इमां वलिं भक्ष सपरिवारस्य यजमानस्याभ्युदयं कुरु, शान्तिकर्ता तुष्टिकर्ता पुष्टिकर्ता वरदो भव । निर्ऋति वरुणयोर्मध्ये वलिं दद्यात् ।

एभिः बलिदानैः इन्द्रादि दशदिक्पालाः प्रीयन्ताम् ।

ततोः ग्रहवेदी समीपे पत्रावल्युपरि वलिं निधाय आदित्यादि ग्रहार्थं बलिद्रव्याय नमः सर्वोपचारार्थे गन्धपुष्पाणि समर्पयामि ।

नवग्रहेभ्यो बलिदानम्—ॐ सूर्यादि ग्रहेभ्यः सांगेभ्यः सपरिवारेभ्यः सायुधेभ्यः सशक्तिकेभ्यः अधिदेवता—प्रत्यधिदेवता गणपत्यादि पञ्चलोकपाल वास्तोष्पति सहितेभ्यः एतं सदीपमाषभक्त वलिं समर्पयामि—इति जलमुत्सृजेत ।

भो भो सूर्यादिनवग्रहाः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधाः, सशक्तिकाः अधिदेवता-प्रत्यधिदेवता-गणपत्यादि पंच लोकपाल—वास्तोष्पति सहिताः इमां बलिं गृह्णीत मम सकुटुम्वस्य सपरिवारस्य आयुः कर्तारः क्षेमकर्तारः शान्तिकर्तारः तुष्टिकर्तारः, पुष्टिकर्तारः, वरदा भवत। अनेन बलिदानेन सूर्यादि-ग्रहाः प्रीयन्ताम् ।

अथ क्षेत्रपाल वलिः—एकस्मिन् वंशपात्रे कुशान् आस्तीर्य आहार-चतुर्गुणं द्विगुणं वा माषभक्त द्रव्यौदनं जलपात्रं च निधाय हरिद्राकुंकुम सिन्दूर कज्जल द्रव्यपताकायुतं कृत्वा—ॐ अद्येत्यादि० सकलारिष्ट शान्ति पूर्वकं प्रारीप्सित कर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं क्षेत्रपाल पूजनं बलिदानं च करिष्ये—इति संकल्प्य ।

ॐ न हि स्पर्श मविदन्नन्यमस्माद् वैश्वानरात्पुर एतारग्मग्नेः। एमेनमवृधन्नमृता अमर्त्यं वैश्वानरं क्षेत्रजिन्याय देवाः । भो क्षेत्रपाल इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदोभव क्षेत्रपालाय नमः—क्षेत्रपालं आवाहयामि स्थापयामि सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षत पुष्पाणि दक्षिणां च समर्पयामि—श्रीक्षेत्रपालाय नमः, इति सम्पूज्य ध्यायेत्—

भ्राजद् वक्त्र जटाधरं त्रिनयनं नीलांजनाद्रिप्रभं ।
दोर्दण्डान्त गदा कपालमरुणं स्रग्गन्धवस्त्रावृतम् ।
घण्टा घुर्घुर मेखलाध्वनिमिलद् हुंकार भीमं प्रभुं
वन्दे संहित सर्प कुण्डलधरं श्री क्षेत्रपालं सदा ॥
इति ध्यात्वा हस्ते साक्षत जलमादाय—
क्षेत्रपाल महावाहो महावल पराक्रम ।
क्षेत्राणां रक्षणार्थाय बलिं गृह्ण नमोऽस्तुते ॥

ॐ क्षेत्रपालाय साङ्गाय भूतप्रेत पिशाच डाकिनी शाकिनी पिशाचिनी मारिगण वेतालादि परिवारयुताय सायुधाय सशक्तिकाय सवाहनाय इमां चतुर्मुखदीप—दधिमाष भक्त बलिं समर्पयामि—इति जलमुत्सृज्य प्रार्थयेत्—

ॐ भो भो क्षेत्रपाल स्वक्षेत्रं रक्ष बलिं भक्ष यज्ञं परिरक्षत मम सकुटुम्बस्य अभ्युदयं कुरु आयुः कर्ता क्षेमकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता निर्विघ्नकर्ता वरदो भव । अनेन बलिदानेन क्षेत्रपालः प्रीयताम् ।

ततो नापितेन—दुर्ब्राह्मणेन वा बलिं गृहीत्वा सपत्नीक—यजमानस्य मस्तकोपरि सकृत् भ्रामयित्वा पृष्ठतोऽनवलोकयन् चतुष्पथे निर्ऋतिप्रदेशे वा निक्षिपेत ।

यजमानोऽपि तस्य पृष्ठतो द्वारपर्यन्तं गत्वा जलं क्षिपेत । ततः वलिस्थाने शान्ति पाठं पठेत् ।

ॐ हिंकाराय स्वाहा । हिङ्कृताय स्वाहा । क्रन्दते स्वाहा अ वक्रन्दाय स्वाहा । प्रोथते स्वाहा । प्रप्रोथाय स्वाहा । गन्धाय स्वाहा । घ्राताय स्वाहा । निविष्टाय स्वाहोपविष्टाय स्वाहा सन्दिताय स्वाहा बल्गते स्वाहा आसीनाय स्वाहा शयानाय स्वाहा स्वपते स्वाहा जाग्रते स्वाहा, कूजते स्वाहा, प्रबुद्धाय स्वाहा विजृम्भमाणाय स्वाहा विचृत्ताय स्वाहा स॒हानाय स्वाहोपस्थिताय स्वाहायनाय स्वाहा प्रायणाय स्वाहा ॥

कंकण बन्धनम्—ॐ येन वद्धो बलिः राजा दानवेन्द्रो महाबलः । तेन त्वां प्रतिवध्नामि रक्षे मा चल मा चल ।

प्रतिष्ठायाग में पूर्णाहुतिः

ततः यजमानः पाणिपादं प्रक्षाल्य-आचम्य-नारिकेलं रक्त वस्त्रावेष्टितं द्वादश षट् चतुःस्रुवेण गृहीतमाज्यं स्रुच्यां कृत्वा स्रुच्युपरि नारिकेलं संस्थाप्य पूर्णाहुत्यै नमः इति सम्पूज्य पूर्णाहुतिं जुहुयात्—तत्रमन्त्राः—ॐ समुद्रादूर्मि मधुमां -२ उदारदुपा॒ शुनासममृतत्वमानट् । घृतस्य नाम गुह्यं यदस्ति जिह्वा देवानाममृतस्य नाभिः ॥१ ॥

वयं नाम प्र ब्रवामा घृतस्यास्मिन्यज्ञे धारयामा नमोभिः । उपब्रह्मा शुणुवच्छस्यमानं चतुः शृंगोऽवमीद गौर एतत् ॥२ ॥

चत्वारि शृंगाः त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्तहस्तासो अस्य । त्रिधावद्धो वृषभो रौरवीति महो देवो मर्त्यां आविवेश ॥३ ॥

त्रिधाहितं पणिभिर्गुह्यमानं गवि देवासो घृतमन्व विन्दन । इन्द्र एक॒ सूर्य एकं जजान वेनादेक॒स्वधायानिष्टतक्षु ॥४ ॥ १७/९२

एताः अर्षन्ति हृद्यात्समुद्राच्छत व्रजा रिपुणा नाव चक्षे । घृतस्य धारा अभिचाकशीभिः हिरण्ययो वेतसो मध्य आसाम् ॥५ ॥ १७/९३

सम्यक् स्रवन्ति सरितो न धेना अन्तर्हृदा मनसा पूयमानाः । एते अर्षन्त्यूर्म्मयो घृतस्य मृगा इव क्षिपणो रीषमाणाः ॥६ ॥ १७/९४

सिन्धोरिव प्राद्ध्वने शूघनासो वात प्रमियः पतयन्ति यह्वाः । घृतस्य धाराः अरुषो न वाजी काष्ठा भिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः ॥७ ॥ १७/९५

अभिप्रवन्तु समनेव योषाः कल्याण्यः स्मयमानासो अग्निम् । घृतस्य धारा समिधो नसन्त ता जुषाणो हर्यति जातवेदाः ॥८ ॥ १७/९६

कन्या इव बहतुमेतवा उ अञ्ज्यञ्जाना अभि चाकशीमिः । यत्र सोमः सूयते यत्र यज्ञो घृतस्य धारा अभि तत्पवन्ते ॥९ ॥ १७/९७

अभ्यर्षत स्त्रष्टुतिं गव्यमाजि मस्मासु भद्रा द्रविणानि धत्त । इमं यज्ञं नयत देवता नो घृतस्य धारा मधुमत्पवन्ते ॥१० ॥ १७/९८

धामं ते विश्वं भुवनमधि श्रितमन्तः समुद्रे हृद्यन्तरायुषि । अपामनीके समिथे य आभृतस्तमश्याम मधुमन्तं त ऊर्मिम् ॥११ ॥ १७/९९

पुनस्त्वादित्याः रुद्राः वसवः समिन्धतां पुनर्ब्रह्मणो वसुनीथयज्ञैः । घृतेन स्वं तन्वं वर्धयस्व सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः ॥१२ ॥

सप्त ते अग्ने समिध सप्तजिह्वाः ऋषयः सप्त धामप्रियाणि । सप्तहोत्राः सप्तधा त्वा यजन्ति सप्त योनी रापृणस्व घृतेन स्वाहा ॥१३ ॥ १७/७९

१४. देहि मे ददामि ते नि मे धेहि नि त दधे । निहारं च हरासि मे निहारं निहराणि ते स्वाहा ॥३ ।५० ॥

१५. पूर्णादर्वि परापत सुपूर्णा पुनरापत । वस्नेव विक्रीणावहा इषमूर्ज॑ शतक्रतो ॥३ ।४९ ॥

१६. पुनन्तु मा देवजना पुनन्तु मनसाधियः । पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा ॥१९ ।३९ ॥

१७. मूर्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानरमुत आ जातमग्निम् । कवि॑ सम्राजमतिथिं जनानामासन्ना पात्रं जनयन्त देवाः ॥७ ।२४ ॥

इदमग्नये वैश्वानराय वसुरुद्रादित्येभ्यः शतक्रतवे सप्तवते अग्नये अद्भ्यश्च न मम ॥ इति पूर्णाहुतिः ॥

पूर्णाहुति खड़े होकर करनी चाहिये । ग्रहहोम तथा शतहोम में एक पूर्णाहुति होती है । सहस्रयाग में दो, अयुत होम में चार, सहस्रपुष्प होम में एक । सीमन्तोन्नयन आदि संस्कारों में एक-पूर्णाहुति होती है ।

वसोर्द्धारां जुहुयात्

यजमान आचार्य कुण्ड में, अधिक फल की प्राप्ति के लिए सब कुण्डों में स्रुचि में घी भरकर सोने की जिह्वा लगाकर पूजन करके घृत की यवमात्र छिद्र से धारा छोड़ते हुए मन्त्रों को पढ़े ।

ॐ सप्त ते अग्ने समिधः सप्तजिह्वा सप्त ऋषयः सप्तधामप्रियाणि सप्तहोत्रा सप्तधा त्वा यजन्ति सप्त योनीरापृणस्व घृतेन स्वाहा ॥१ ॥

ॐ शुक्र ज्योतिश्च चित्रज्योतिश्च सत्य ज्योतिश्च ज्योतिष्मांश्च । शुक्रश्च ऋतपाश्चात्य॑हा ॥२ ॥

ॐ ऋतश्च सत्यश्च ध्रुवश्च धरुणश्च । धर्ता च विधर्ता च विधारय ॥३ ॥

ॐ ऋत जिच्च सत्यजिच्च सेनजिच्च सुषेणश्च । अन्तिमित्रश्च दूरे अभित्रश्च गणः ॥४ ॥

ॐ घृतं मिमिक्षे घृतमस्य योनिर्घृते श्रितो घृत म्वस्यधाम । अनुष्वधमावह मादयस्व स्वाहा कृतं वृषभ वक्षि हव्यम् ॥५ ॥

ॐ वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्रधारम् । देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः स्वाहा । इदमग्नये वैश्वानराय न मम ॥६ ॥ इति वसोर्द्धारा ।

पूर्णाहुति के पश्चात् अग्ने नय० इस मन्त्र से प्रदक्षिणा करके पश्चिम दिशा में बैठकर प्रार्थना करे ।

जितं ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन ।
नमस्तेऽस्तु हृषीकेश महापुरुष पूर्वज ॥१ ॥
नमो हिरण्य गर्भाय प्रधानाध्यक्षरूपिणे ।
नमो वासुदेवाय शुद्धज्ञान स्वरूपिणे ॥२ ॥
देवानां दानवानां च सामान्यमधिदैवत ।
सर्वदा चरणद्वन्द्वं व्रजामि शरणं तव ॥३ ॥
एकस्त्वमसि लोकस्य स्रष्टा संहारकस्तथा ।
अध्यक्षश्चानुमन्ता च गुणमाया समावृतः ॥४ ॥

संसारसागरं घोरमनन्तक्लेशभाजनम् ।
त्वामेवशरणं प्राप्य निस्तरन्ति मनीषिणः ॥५ ॥
न ते रूपं न चाकारो नायुधानि न चास्पदम् ।
तथापि पुरुषाकारो भक्तानां त्वं प्रकाशसे ॥६ ॥
नैव किञ्चित्परोक्षं ते प्रत्यक्षोऽपि न कस्यचित् ।
नैव किञ्चिदसाध्यं ते नच साध्योऽसि कस्यचित् ॥७ ॥
नैव किञ्चिदसिद्धं ते न च सिद्धोऽसि पावकः ।
कार्याणां कारणं पूर्वं वचसां वाक्यमुत्तमम् ॥८ ॥
योगिनां परमासिद्धिः परमं ते परं विदुः ।
अहं भीतोऽस्मि देवेश संसारेऽस्मिन् भयप्रदे ॥९ ॥
त्राहि मां पुण्डरीकाक्ष न जाने परमं पदम् ।
कालेष्वपि च सर्वेषु दिक्षु सर्वासु च चाच्युत ॥१० ॥
शरीरे जगता वापि वर्द्धते मे महद्भयम् ।
त्वत्पाद-कमलादन्यत् मम जन्मान्तरेष्वपि ॥११ ॥
विज्ञानं यदिदं प्राप्तं यदिदं स्थानमर्चितम् ।
जन्मान्तरेऽपि मे देव मा भूदस्य परिग्रहः ॥१२ ॥
दुर्गतावपि जातस्य त्वद्गतो मे मनोरथः ।
यदि नाशं च विन्देयं तावदस्मि कृती सदा ॥१३ ॥
अकालकलुषं चित्तं मम ते पादयोः स्थितम् ।
कामये विष्णुपादौ तु सर्वजन्मसु केवलम् ॥१४ ॥

त्र्यायुषकरणम्

ततोऽग्निं प्रदक्षिणीकृत्य पश्चिमदेशे प्राङ्मुखः उपविश्य स्रुवेण भस्मानीय त्र्यायुषं कुर्यात् ॥

ॐ त्र्यायुषं जगदग्नेः इति ललाटे । कश्यपस्य त्र्यायुषम् इति ग्रीवायाम् । यद्देवेषु त्र्यायुषम् इति दक्षिणांसे । तन्नो अस्तु त्र्यायुषम् इति हृदि ।

संस्रव प्राशनम् । आचमनम् । पूर्णपात्र संकल्पः—कृतस्य अमुक देवस्य प्रतिष्ठा होमकर्मणि इदं पूर्ण पात्रं सदक्षिणं ब्रह्मणे तुभ्यमहं सम्प्रददे । ॐ द्यौस्त्वा

ददातु पृथ्वी त्वा प्रतिगृह्णातु इति पूर्णपात्रं गृह्णीयात्। ततोऽग्नेः पश्चादैशान्यां ब्रह्मग्रन्थि विमोकः। ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम्। उपयमन कुशै मार्जयेत्। उपयमन कुशानां अग्नौ प्रक्षेपः।

अभिषेकमन्त्राः

अभिषेको मूर्ध्नि होमं मांगल्यं स्वस्ति वाचनम्।
प्रैषं च मन्त्रपाठं च तिष्ठन् कुर्यात् सदैव हि॥

प्रधान-देवता कलश-पात्रस्थजलेन दूर्वापञ्चपल्लवैः आचार्यः सपरिवारं यजमानं प्राङ्मुखमुपविष्टं अभिषिञ्चेयुः—

ॐ आपो हिष्ठामयोभुवस्तान ऊर्जे दधातन, ॐ महेरणाय चक्षसे यो वः शिवतमोरसस्तस्य भाजयतेहनः उशतीरिव मातरः। ॐ तस्मा अरङ्ग मामवो यस्य क्षयाय जिन्वथ आपो जनयथा च नः॥

ॐ समुद्र ज्येष्ठा सलिलस्य मध्यात्पुनाना यन्त्यनिविशमानाः। इन्द्रो वा वज्री वृषभो रराद ता आपो देवीरिह मामवन्तु। ॐ या आपो दिव्या उतवा स्रवन्तु खनित्रिमा उत वा या स्वयंजाः। समुद्रार्थाः याः शुचयः पावकास्ता आपो देविरिह मामवन्तु। ॐ यासां राजा वरुणो याति मध्ये सत्यानृते अवपश्यञ्जनानाम्। मधुश्चुतः शचयो याः पावकास्ता आपो देवीरिह मामवन्तु। ॐ यासुराजा वरुणो यासु सोमो विश्वेदेवाः यासूर्ज मदन्ति। वैश्वानरो यास्वग्निः प्रविष्टस्ता आपो देवीरिंह मामवन्तु॥

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष॰ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरौषधयः शान्तिर्वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व॰ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामा शान्तिरेधिः। सुशान्तिर्भवतु॥

ॐ पुनन्तु मा देवजना पुनन्तु मनसाधियः। पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा।

ॐ सुरास्त्वामभिषिञ्चन्तु ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः।
वासुदेवोजगन्नाथस्तथा संकर्षणो विभुः॥

प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च भवन्तु विजयाय ते ।
अखण्डो ऽग्निर्भगवान् यमो वै निर्ऋतिस्तथा ॥
वरुणः पवनश्चैव धनाध्यक्षस्तथैवहि ।
ब्रह्मणा सहिता सर्वे दिग्पालाः पान्तु ते सदा ॥
कीर्तिः लक्ष्मीः धृतिमेधा पुष्टिः श्रद्धा क्रियामतिः ।
बुद्धिर्लज्जा वपुः शान्ति स्तुष्टिः कान्तिश्च मातरः ॥
एतास्त्वामभिषिञ्चन्तु देवपत्न्यः समागताः ।
आदित्यश्चन्द्रमा भौमो बुद्धजीव सितार्कजाः ॥
ग्रहास्त्वामभिषिञ्चन्तु राहुकेतुश्च तर्पिताः ।
देवदानव गन्धर्वाः यक्षराक्षस पन्नगाः ॥
ऋषयो मानवो गावो देवमातर एव च ।
देवपत्न्यो द्रुमाः नागाः दैत्याश्चाप्सरसां तथा ।
वस्त्राणि सर्वशस्त्राणि राजानो वाहनानि च ।
औषधानि च रत्नानि कालस्यावयवाश्च ये ॥
सरितः सागराः शैलास्तीर्थानि जलदाः नदाः ।
एते त्वामभिषिञ्चन्तु धर्माकामार्थ सिद्धये ॥
आदित्याः वसवो रुद्राः विश्वेदेवाः मरुद्गणाः ।
अभिषिञ्चन्तु ते सर्वे धर्मकामार्थ सिद्धये ॥ अमृताभिषेकोऽस्तु ।

ॐ सौमनस्यमस्तु इति पुष्पम् । ॐ अक्षतञ्चारिष्टं चास्तु; इत्यक्षतान् दद्यात् ॥

भवन्नियोगेन मया अमुकदेवता प्रीत्यर्थं कृतो यः साङ्गपाठ होमस्तदुत्पन्नं यच्छ्रेयस्तत्तुभ्यमहं सम्प्रददे ।

ततः कोऽसि कतमोऽस्मि कस्मै त्वा कामाय त्वा सुश्लोक सुमङ्गल सत्य राजन् । इत्यनेन अभिषिक्तं यजमानमाचार्यः प्रशंसति । अथ यजमानः प्रार्थयमानः अङ्गान्यालभते ।

ॐ शिरो मे श्रीर्यशो मुखं त्विषिः केशाश्च श्मश्रूणि राजा मे प्राणोऽमृतꣳ सम्राट् चक्षुर्विराट् श्रोत्रम् ।

जिह्वा मे भद्रं वाङ्महो मनो मन्युः स्वराड् भामः। मोदाः प्रमोदा अङ्गुलीरङ्गानि मित्रं मे सह। वाहू मे बलमिन्द्रिय ँहस्तौ मे कर्म वीर्यम्। आत्मक्षत्रमुरो मम। पृष्ठीर्मे राष्ट्रमुदरयसी ग्रीवाश्च। उरु अरत्नी जानुनी विशो मेऽङ्गानि सर्वतः। नाभिर्मे चित्तं विज्ञानं पायुर्मे अपचितिर्भसत्। आनन्द-नन्दा वाण्डौ मे भगः सौभाग्यं पसः। जंघाभ्यां पद्भ्यां धर्मोऽस्मि विशि राजा प्रतिष्ठितः॥

भद्रमस्तु शिवञ्चास्तु महालक्ष्मी प्रसीदतु।
रक्षन्तु त्वां सदा देवाः सम्पदः सन्तु सर्वदा।
सपत्नाः दुर्ग्रहाः पापाः दुष्ट सत्त्वाद्युपद्रवाः।
तमालपत्रमालोक्य निष्प्रभावाः भवन्तु ते॥

प्रदक्षिणा—ॐ यानि कानि च पापानि जन्मान्तर कृतानि च। तानि तानि प्रणश्यन्ति प्रदक्षिणाय पदे पदे॥

आशीर्वादः—मन्त्रार्था सफलाः सन्तु पूर्णाः सन्तु मनोरथाः। शत्रूणां बुद्धिनाशोऽस्तु मित्राणामुदयस्तव।

आयुष्कामो यशस्कामः पुत्र पौत्रस्तथैव च।
आरोग्यं धनकामश्च सर्वे कामा भवन्तु ते॥

ॐ श्रीवर्चस्वमायुष्यमारोग्य माविधात्पवमानं महीयते। धान्यं धनं पशुं बहुपुत्रलाभं शतसम्वत्सरं दीर्घमायुः॥

ॐ शिवाः आपः सन्तु। सौमनस्यमस्तु। अक्षयं चारिष्टं चास्तु। दीर्घमायुः शान्तिः पुष्टिः तुष्टिश्चास्तु।

देवता विसर्जनम्—देवतानामुत्तरपूजनं कृत्वा क्षमापयेत्।

गच्छ त्वं भगवन्नग्ने स्वस्थाने कुण्ड मध्यतः।
हुतमादाय देवेभ्यः शीघ्रं देहि प्रसीद मे।
गच्छ गच्छ सुरश्रेष्ठ स्वस्थाने परमेश्वर।
यत्र ब्रह्मादयो देवास्तत्र गच्छ हुताशन।
यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकीम्।
इष्ट काम समृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च।

एवं ग्रहादि देवान् विसृज्य यज्ञोपकरणादिकं ऋत्विग्भ्यो दत्त्वा गुर्वादीन् संपूज्य करौ सम्पुटीकृत्य—मया यत्कृतं देवकर्म तत्कालहीनं भक्तिहीनं श्रद्धाहीनं द्रव्यहीनं च भवता ब्राह्मणानां वा वचनात् श्री विष्णोः प्रसादाच्च सर्वं विधिवत् परिपूर्णमस्तु । ततस्ते ब्राह्मणाः सर्वं सम्पूर्णमच्छिद्र मस्तु इति वदेयुः ।

आचार्यकर्तृक श्रेयोदानम्—भवन्नियोगेन मया एभिः ब्राह्मणैः सह कृतं यदाचार्यत्वं ब्रह्मत्वं सदस्यत्वं गाणपत्यं जपहोमादिकं च बहूत्पन्नं यच्छ्रेयस्तदमुना फलादिना तुभ्यमहं सम्प्रददे ।

ऐसा कहकर आचार्य यजमान को फल दे । यजमान वह फल एकान्त में रख दे बाद में उसे खाये ।

यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपः पूजाक्रियादिषु । न्यूनं संपूर्णतामेति सद्यो वन्दे तमच्युतम् । प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत् । स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः ।

श्रीरस्तु

अथ षोडशोपचार शिवपूजनम्

श्री शंकर भगवान् की पूजा करने से पूर्व गणपतिदेव का पूजन करे। तदनन्तर नन्दीश्वरः, वीरभद्र, स्वामिकार्तिक, कुवेर, कीर्तिमुख-शिवगणों का क्रम से पूजन करे।

१. नन्दीश्वर पूजनम्

ॐ आयङ्गौ पृश्निरक्रमीदसदन्मातरं पुरः। पितरं च प्रयन्त्स्वः। ३/६

इस मन्त्र से षोडशोपचार से या पञ्चोपचार से नन्दीश्वर का पूजन करके प्रार्थना करे—

ॐ प्रेतुवाजी कनिक्क्रदन्नानदद्रासभः पत्त्वा। भरन्नग्निं पुरीष्यं मापाद्यायुषः पुरा।

वृषाग्निं वृषण भरन्नपां गर्भ ँ समुद्रियम्। अग्न आ याहि वीतये ॥ यजुः ११/४६

२. वीरभद्र पूजनम्

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवा ँ सस्तनूभिर्व्यशे महिदेवहितं यदायुः ॥ २५/२१

इस मन्त्र से पूजन करके प्रार्थना करे—

ॐ भद्रो नो अग्निराहुतो भद्रा रातिः सुभगः भद्रो अध्वरः। भद्रः उत प्रशस्तयः ॥ यजुः १५/३८

३. स्वामिकार्तिक पूजनम्

ॐ यद् क्रन्द प्रथमं जायमान उद्यन्त्समुद्रादु तवा पुरीषात्। श्येनस्य पक्षा हरिणस्य वाहू उपस्तुत्यं महिजातं ते अर्वन् ॥ २९/१२ इस मन्त्र से पूजन करके प्रार्थना करे—

ॐ यत्र वाणाः सम्पतन्ति कुमारा विशिखा इव। तन्न इन्द्रो वृहस्पतिरदितिः शर्मयच्छतु विश्वाहा शर्म यच्छतु ॥ २७/४८

इस मन्त्र से पूजन करते हुए प्रार्थना करे—

ॐ वय ँ सोम व्रते तव मनस्तनूषु विभ्रतः। प्रजावन्तः सचेमहि। यजुः ३/५६

५. कीर्तिमुख पूजनम्

ॐ असवे स्वाहा, वसवे स्वाहा विभुवे स्वाहा विवस्वते स्वाहा, गणश्रिये स्वाहा गणपतये स्वाहा ऽभिभुवे स्वाहा ऽधिपतये स्वाहा शूषाय स्वाहा सᳬ सर्पाय स्वाहा चन्द्राय स्वाहा, ज्योतिषे स्वाहा, मलिम्लुचाय स्वाहा दिवापतये स्वाहा। यजुः २२/३०

इस मन्त्र से पूजन करते हुए—प्रार्थना करे—

ॐ ओजश्च मे सहश्च मे आत्मा च मे तनूश्च मे शर्म च मे वर्म च मे ऽङ्गानि च मे अस्थीनि च मे परूᳬ षि च मे शरीराणि च मे आयुश्च मे जरा च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ यजुः १८/३

शिवषोडशोपचार-पूजनम्

ध्यानम्—ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारु चन्द्रावतंसं। रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम्। पद्मासीनं समन्तात्स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं। विश्वाद्यं विश्ववन्द्यं निखिलभय हरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम्॥

आवाहनम्—ॐ नमस्ते रुद्रमन्यव उतोत इषवे नमः। वाहुभ्यामुत ते नमः। १६/१

श्री भगवते साम्वसदाशिवाय नमः आवाहनं समर्पयामि आवाहनार्थे पुष्पं समर्पयामि।

आसनम्—ॐ या ते रुद्र शिवा तनूरघोराऽपापकाशिनी। तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि॥ १६/२

श्री भगवते साम्बसदाशिवाय नमः आसनार्थे पुष्पं समर्पयामि।

पाद्यम्—ॐ यामिषुं गिरिशन्त हस्ते विभर्ष्यस्तवे। शिवां गिरित्र तां कुरु माहिंᳬ सी पुरुषं जगत्॥ १६/३

श्री भगवते साम्वसदाशिवाय नमः पाद्यं समर्पयामि॥

अर्घ्यम्—ॐ शिवेन वचसा त्वा गिरिशाच्छा वदामसि। यथा नः सर्वमिज्जगदयक्ष्म ꣳ सुमना असत्॥ १६/४

श्री भगवते साम्वसदाशिवाय नमः अर्घ्यं समर्पयामि।

आचमनं—ॐ अद्ध्यवोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्यो भिषक्। अहींश्च सर्वाञ्जम्भयन्त्सर्वांश्च यातु धान्यो धराची परासुव। यजुः १६/५

श्री भगवते साम्ब सदाशिवाय नमः आचमनं समर्पयामि।

मधुपर्क—ॐ यन्मधुनो मधव्यं परम ꣳ रूपमन्नाद्यम्। तेनाहं मधुनो मधव्येन परमेण रूपेणान्नाद्येन परमो मधव्योऽन्नादोऽसानि॥

श्री भगवते साम्ब सदाशिवाय नमः मधुपर्कं समर्पयामि॥

स्नानम्—ॐ असौ यस्ताम्रो अरुण उत वभ्रु सुमङ्गलः। ये चैन ꣳरुद्रा अभितो दिक्षु श्रिताः सहस्रशो वैशाꣳहेड ई महे॥ यजुः १६/६

श्री साम्बसदाशिवाय नमः स्नानं समर्पयामि।

पयः स्नानम्—ॐ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः। पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम्। १८/३६

श्री भगवते साम्बसदाशिवाय नमः पयः स्नानं समर्पयामि। पयः स्नानान्ते शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि॥

दधि स्नानम्—ॐ दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः। सुरभिनो मुखाकरत्प्र ण आयूꣳषि तारिषत्॥ यजुः २३/३२

श्री भगवते साम्बसदाशिवाय नमः दधिस्नानं समर्पयामि।

दधि स्नानन्ते शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि।

घृत स्नानम्—ॐ घृतं मिमिक्षे घृतमस्य योनिर्घृते श्रितो घृतमस्य धाम। अनुष्वधमा वह मादयस्व स्वाहा कृतं वृषभवक्षि हव्यम्। (१७/८८)

श्री साम्बसदाशिवाय नमः घृतस्नानं समर्पयामि।

घृत स्नानान्ते शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि॥

मधुस्नानम्—ॐ मधुवाता ऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्धवः। माद्ध्वीर्न्न सन्त्वोषधीः॥ मधुनक्तमुतोषसो मधुंमत् पार्थिवꣳरजः। मधुद्यौरस्तु नः

पिता ॥ मधुमान्नो वनस्पतिः मधुमां-२ अस्तु सूर्यः । माद्ध्वीर्गावो भवन्तु नः । १३/२७, २९

श्री साम्बसदाशिवाय नमः मधुस्नानं समर्पयामि ।

मधु स्नानान्ते शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि ।

शर्करा स्नानम्—ॐ अपाꣳ रसमुद्वयसꣳ सूर्ये सन्तꣳ समाहितम् । अपा ꣳ रसस्य यो रसस्तं वो गृह्णाम्युत्तममुपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वाजुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम् ॥ यजुः ९/१३

श्री भगवते साम्बसदाशिवाय नमः शर्करा स्नानं समर्पयामि ।

शर्करा स्नानान्ते शुद्धस्नानं समर्पयामि ।

पुनराचमनीयम्—ॐ अद्ध्य वोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्यो भिषक् । अहींश्च सर्वाञ्जम्भयन्त्सर्वांश्च यातुधान्यो धराचीः परासुव ।

श्री साम्बसदाशिवाय नमः पुनराचमनीयम् समर्पयामि ॥

वस्त्रम्—ॐ असौ योऽवसर्पति नीलग्रीवो विलोहितः । उतैनं गोपा अदृश्रन्नदृशन्नुदहार्यः सदृष्टो मृडयाति नः । १६/७

श्री साम्बसदाशिवाय नमः वस्त्रं समर्पयामि ।

उपवस्त्रम्—ॐ सुजातो ज्योतिषा सह शर्म वरुथमाऽसदत्स्वः । वासो अग्ने विश्वरूपꣳ सं व्ययस्व विभावसो । यजुः ११/४०

श्री भगवते साम्बसदाशिवाय नमः उपवस्त्रं समर्पयामि ।

यज्ञोपवीतम्—ॐ नमोऽस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे । अथो ये अस्य सत्त्वानो हंतेभ्यो अकरं नमः ॥ १६/८

श्री साम्बसदाशिवाय नमः यज्ञोपवीतम् समर्पयामि ।

गन्धम्—ॐ प्रमुञ्च धन्वनस्त्वमुभयोरात्र्योर्ज्याम् । याश्च ते हस्त इषवः परा ता भगवो वप ॥ १६/९

श्री साम्बसदाशिवाय नमः चन्दनं विलेपयामि ॥

भस्मम्—ॐ प्रसद्य भस्मना योनिमपश्च पृथिवीमग्ने । स ꣳ सृज्य मातृभिष्ट्वं ज्योतिष्मान् पुनराऽसदः ॥ १२/३८

श्री साम्बसदा शिवाय नमः भस्म समर्पयामि ।

अक्षताः—ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्रिया अधूषत । अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठया मती योजान् विन्द्रते हरी ॥ यजुः ३/५१

श्री साम्बसदाशिवाय नमः अक्षतान् समर्पयामि ।

पुष्पमाला—ॐ ओषधीः प्रतिमोद्ध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः । अश्वा इव सजित्त्वरी वीरुधः पारयिष्ण्वः ॥ १२/७७

श्री साम्बसदाशिवाय नमः पुष्पमालां समर्पयामि ॥

विल्वपत्राणि—ॐ नमो विल्मिने च कवचिने च नमो वर्मिणे च वरूथिने च नमः श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुभ्याय चाहनन्याय च । यजुः १६/३५

त्रिदलं त्रिगुणाकारं त्रिनेत्रञ्च त्रिधायुधम् ।
त्रिजन्म पाप संहारं विल्व पत्रं शिवार्पणम् ॥
अमृतोद्भवं श्रीवृक्षं शङ्करस्य सदाप्रियम् ।
तत्ते शम्भो प्रयच्छामि विल्वपत्रं सुरेश्वर ॥
त्रिशाखैः विल्वपत्रैश्च अच्छिद्रैः कोमलैः शुभैः ।
तव पूजां करिष्यामि अर्चये परमेश्वर ॥
गृहाण विल्वपत्राणि सुपुष्पाणि महेश्वर ।
सुगन्धीनि भवानीश शिव त्वं कुसुमप्रिय ॥

श्री साम्ब सदाशिवाय नमः विल्वपत्राणि समर्पयामि ॥

अखण्डित ग्यारह विल्वपत्र चढ़ाएं ।

धूपम्—या ते हेतिमीढुष्टम हस्ते वभूव ते धनुः। तयास्मान् विश्वतस्त्वमयक्ष्मया परि भुज ॥ (१६/११)

श्री साम्ब सदाशिवाय नमः धूपं समर्पयामि ॥

दीपम्—ॐ परि ते धन्वनो हेतिरस्मान् वृणक्तु विश्वतः । अथो य इषुधिस्तवारे अस्मन्निधेहि तम् । (१६/१२)

श्री साम्ब सदाशिवाय नमः दीपं प्रदर्शयामि ॥

नैवेद्यं—ॐ अवतत्त्य धनुष्ट्व॒ सहस्राक्ष शतेषुधे । निशीर्य्यशल्यानां मुखा शिवो न सुमना भव ॥ (१६/१३)

श्री साम्ब सदाशिवाय नमः नैवेद्यं समर्पयामि ॥

ॐ प्राणाय स्वाहा, ॐ अपानाय स्वाहा, ॐ व्यानाय स्वाहा, ॐ समानाय स्वाहा, ॐ उदानाय स्वाहा ।

इस प्रकार मुद्राओं का प्रदर्शन करते हुए ग्रास मात्र समर्पण करे । मुख प्रक्षालनार्थ आचमनीय समर्पित करे ।

ऋतुफलानि—ॐ या फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणी । वृहस्पतिः प्रसूतास्ता नो मुञ्चत्व॰ हसः ॥ १२/८९

श्री साम्बसदाशिवाय नमः ऋतुफलानि—विल्वफलानि समर्पयामि ।

धतूर फलम्—ॐ कार्षिरसि समुद्रस्य त्वा क्षित्या उन्नयामि । समापो अद्भिरग्मत समोषधीभिरौषधीः । ६/२८

धत्तूर फलं, अर्कपत्राणि, विजयापत्राणि समर्पयामि ।

ताम्बूलम्— ॐ नमस्ते आयुधायानातताय धृष्णवे । उभाभ्यामुत ते नमो बाहुभ्यां तव धन्वने ॥ १६/१४

श्री साम्ब सदाशिवाय नमः एला लवंग-पूगीफलादि संयुक्तं ताम्बूलं समर्पयामि ॥

दक्षिणा—ॐ हिरण्य गर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ १३/४

श्री साम्वसदाशिवाय नमः दक्षिणां समर्पयामि ॥

प्रार्थना— शुद्ध स्फटिक संकाशं त्रिनेत्रं पंच वक्त्रकम् ।
गंगाधरं दशभुजं सर्वाभरण भूषितम् ॥
नीलग्रीवं शशाङ्काङ्कं नाग यज्ञोपवीतिनम् ।
व्याघ्र चर्मोत्तरीयं च वरेण्यमभयप्रदम् ॥
कमण्डल्वक्ष सूत्राभ्यामन्वितं शूल-पाणिनम् ।
ज्वलन्तं पिंगल-जटाशिखामुद्योतकारिणम् ॥
अमृतेनाप्लुतं हृष्टमुमा-देहार्द्ध-धारिणम् ॥
दिव्यसिंहासनासीनं दिव्य-भोग समन्वितम् ।

दिग्देवतासमायुक्तं सुरासुर नमस्कृतम् ।
नित्यं च शाश्वतं शुद्धं ध्रुवमक्षरमव्ययम् ।
सर्वव्यापिनमीशानमेवं विश्व-रूपिणम् ॥
गौरीं चतुर्भुजां चण्डीं त्रिनेत्रां मुकुटोज्ज्वलाम् ।
पद्म-दर्पण हस्तां च वरदाभय-हस्तकाम् ॥
दिव्य-वस्त्र परीधानां दिव्यालंकार-भूषिताम् ।
प्रसन्न वदनां ध्यायेच्छिवोत्संगे तु वामतः ॥

इस प्रकार प्रार्थना करके—

ततः पुष्पोदकेन तर्पणम्—ॐ भवं देवं तर्पयामि । ॐ शर्वं देवं तर्पयामि । ॐ ईशानं देवं तर्पयामि । ॐ पशुपतिं देवं तर्पयामि । ॐ रुद्रं देवं तर्पयामि । ॐ उग्रं देवं तर्पयामि । ॐ भीमं देवं तर्पयामि । ॐ महान्तं देव तर्पयामि । ॐ देव-देवं तर्पयामि । ॐ ज्येष्ठाय नमः—पुनराचमनीयम् । ॐ श्रेष्ठाय नमः मधुपर्कः । ॐ मधुपर्कं गृहाणेश सर्वदा मधुपर्कपः । मधुपर्क-प्रदानेन प्रीतोभव महेश्वर । ॐ कालाय नमः गन्धः । ॐ कलविकरणाय नमः पुष्पाणि । ॐ सर्व-भूतदमनाय नमः धूपः । ॐ मनोन्मनाय नमः दीपः । ॐ भवोद्भवाय नमः नैवेद्यम् ॥

अथ अष्टौ पुष्पांजलयः—ॐ भवाय देवाय नमः । ॐ शर्वाय देवाय नमः । ॐ ईशानाय देवाय नमः । ॐ पशुपतये देवाय नमः । ॐ रुद्राय देवाय नमः । ॐ उग्राय देवाय नमः । ॐ भीमाय देवाय नमः । ॐ महते देवाय नमः । ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोर घोरतरेभ्यः । सर्वेभ्यः सर्व शर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्र रूपेभ्यः । ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् । ॐ शर्वाय क्षितिर्मूर्त्तये नमः । ॐ भवाय जलमूर्त्तये नमः । ॐ रुद्रायाग्निमूर्त्तये नमः । ॐ उग्राय वायुमूर्त्तये नमः । ॐ भीमायाकाश मूर्त्तये नमः । ॐ पशुपतये यजमान मूर्त्तये नमः । ॐ महादेवाय सोममूर्त्तये नमः । ॐ ईशानाय सूर्यमूर्त्तये नमः ॥

एवं सम्पूज्य ततः सहस्रघटैः स्नपनम् ॥

ॐ नमः शिवाय इति जपः ।

आर्तिक्यम्—ॐ आरात्रिः पार्थिव॒रजः पितुरप्रायिधामभिः। दिवः सदा॒ सि वृहती वितिष्ठ स आत्त्वेषं वर्तते तमः। यजुः ३४/३२

पुष्पांजलिः—ॐ आरात्रि पार्थिव॒रजः पितुरप्रायिधामभिः। दिवः सदा॒ सि वृहती वितिष्ठ स आत्त्वेषं वर्तते नमः।

पुष्पांजलिः—ॐ यज्ञेन यज्ञमजयन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्, तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्या सन्तिदेवाः। यजुः ३१/१६ ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे। स मे कामान् काम कामाय मह्यं कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु। कुवेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः।

प्रदक्षिणा—ॐ सप्तास्यासन्परिधयस्त्रि सप्त समिधः कृताः। देवा यद् यज्ञं तन्वाना अवघ्नन्पुरुषं पशुम्॥

इति प्रदक्षिणा नमस्कारं च कृत्वा ब्रह्मणाशिषो गृह्णीयात्।

अथ षोडशोपचार दुर्गा पूजनम्

रक्त-पुष्पं गृहीत्वा दुर्गा देव्याः ध्यानं कुर्यात्—

ध्यानम्—विद्युद्दाम समप्रभां मृगपतिं स्कन्ध-स्थितां भीषणाम्। कन्याभिः करवाल खेट विलसद् हस्ताभिरासेविताम्॥ हस्तैश्चक्र गदासिखेट विशिखांश्चापं गुणं तर्जनीम्। विभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे॥

ॐ अम्बे अम्बिके ऽम्बालिके न मा नयति कश्चन।

ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पील बासिनीम्॥

आवाहनम्—ॐ हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजत स्रजाम्। चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह॥

श्री दुर्गादेव्यै नमः आवाहयामि स्थापयामि।

आवाहनार्थं पुष्पं सम०।

आसनम्—ॐ तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्। यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम्॥

श्री दुर्गा देव्यै नमः आसनार्थे पुष्पं समर्पयामि।

पाद्यम्—ॐ अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनाद प्रमोदिनीम्। श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम् ॥

श्री दुर्गा देव्यै नमः पाद्यं समर्पयामि ।

अर्घ्यम्—ॐ कांसोस्मितां हिरण्यप्राकारमार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम् । पद्मे स्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥

श्री दुर्गादेव्यै नमः अर्घ्यं समर्पयामि ।

आचमनम्—ॐ चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम् । तां पद्मनीमिं शरणमहं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणोमिः ॥

श्री दुर्गा देव्यै नमः आचमनीयं जलं समर्पयामि ।

स्नानम्—ॐ आदित्य वर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ विल्वः । तस्य फलानि तपसा नुदन्तु मायान्तरायांश्च वाह्या अलक्ष्मीः ।

श्री दुर्गादेव्यै नमः स्नानीयं जलं समर्पयामि ।

सुगन्धित द्रव्यस्नानम्—ॐ अꣳ शुनाते अꣳ शु० पृच्यतां परुषा परुः । गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसो अच्युतः ॥

श्री दुर्गा देव्यै नमः सुगन्धिद्रव्यं समर्पयामि ॥

पयः स्नानम्—ॐ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम् ।

श्री दुर्गादेव्यै नमः दुग्धस्नानं समर्पयामि । शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि ।

दधिस्नानम्—ॐ दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णो रश्वस्य वाजिनः । सुरभिनो मुखाकरत प्रण आयुꣳ षि तारिषत् ।

श्री दुर्गा देव्यै नमः दधि स्नानं समर्पयामि । शुद्धोदक स्नानं सम० ।

घृतस्नानम्—ॐ घृतं घृतपावानः पिवत वसां-वसां पावानः पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा । दिशः प्रदिशः आदिशः विदिशः उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ।

श्री दुर्गा देव्यै नमः घृतस्नानं समर्पयामि । शुद्धोदक स्नानं सम० ।

मधुस्नानम्—ॐ मधुवाता ऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्धवः। माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः। ॐ मधुनक्त मुतोषसो मधुमत् पार्थिव৺ रजः। मधुद्यौरस्तु नः पिता। ॐ मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमां अस्तु सूर्यः माध्वीर्गावो भवन्तु नः।

श्री दुर्गा देव्यै नमः मधु स्नानं समर्पयामि॥ शुद्धोदकस्नानं सम०।

शर्करास्नानम्—ॐ अपा৺ रसमुद्वयस৺ सूर्ये सन्तसमाहितम्। अपा৺ रसस्य यो रसस्त वो गृह्णाम्युत्तममुपयामगृहीतोसीन्द्राय त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम्।

श्री दुर्गादेव्यै नमः शर्करास्नानं समर्पयामि। शुद्धोदक स्नानं सम०।

पञ्चामृत स्नानम्—ॐ पञ्चनद्यः सरस्वतीमपियन्ति सस्रोतसः। सरस्वती तु पञ्चधा सोद्देशे अभवत्सरित्॥

श्री दुर्गा देव्यै नमः, पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि। शुद्धोदक स्नानं सम०।

गन्धोदकस्नानम्—ॐ त्वां गन्धर्वा अखनं स्त्वामिन्द्रस्त्वां वृहस्पतिः। त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान्यक्ष्मादमुच्यत॥

श्री दुर्गादेव्यै नमः गन्धोदक-स्नानं समर्पयामि। शुद्धोदक स्नानं सम०॥

उद्वर्तनम्—ॐ अ৺ शुनाते अ৺ शु पृच्यतां परुषा परुः। गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसो अच्युतः॥

श्री दुर्गादेव्यै नमः, उद्वर्तनस्नानं समर्पयामि। शुद्धोदक-स्नानं सम०।

महाभिषेक स्नानम्—श्रीसूक्तेन शंखद्वारा जलधारां दद्यात्।

शुद्धोदक स्नानम्—ॐ शुद्धवालः सर्व शुद्धवालो मणिवालस्ते आश्विना श्येतः श्येताक्षोऽरुणस्ते रुद्राय पशुपतये कर्णा यामा अवलिप्ता रौद्रा नभो रूपा पार्जन्यः॥

श्री दुर्गादेव्यै नमः शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि।

वस्त्रोपवस्त्रम्—ॐ उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह। प्रादुर्भूतोऽस्मि राष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिं वृद्धिं ददातु मे।

श्री दुर्गादेव्यै नमः वस्त्रद्वयं समर्पयामि।

यज्ञोपवीतम्—ॐ क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम्। अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निर्णुद मे गृहात् ॥

श्री दुर्गा देव्यै नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि।

गन्धम्—ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्।

ईश्वरीं सर्वभूतानां त्वामिहोपह्वये श्रियम् ॥

श्री दुर्गा देव्यै नमः चन्दनं समर्पयामि।

अक्षतान्—ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यव प्रिया अधूषत। अस्तोषत स्वभानवो विप्रानविष्टया मती योजान् विन्द्रते हरी ॥

श्री दुर्गा देव्यै नमः अक्षतान् समर्पयामि ॥

हरिद्राचूर्णम्—ॐ तत्सूर्यस्य देवत्वं तन्महित्वं मध्याकर्त्तो विततꣳ संजभार। यदेद युक्तं हरितः सधस्थाद् दाद्रात्री वासस्तनुते सिमस्मै।

श्री दुर्गा देव्यै नमः, हरिद्रा चूर्णं समर्पयामि।

कुंकुमम्—ॐ उस्रावेतं धूर्षाहौ युज्येथामनश्रू अवीरहणौ ब्रह्मचोदनौ। स्वस्ति यजमानस्य गृहान् गच्छतम ॥ ४/३३

श्री दुर्गादेव्यै नमः कुंकुमं समर्पयामि।

सिन्दूरम्—ॐ सिन्धोरिव प्राद्ध्वने शूघनासो वात प्रमिय पतयन्ति यह्वाः। घृतस्य धारा अरुषो न वाजी काष्ठा भिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः।

श्री दुर्गा देव्यै नमः सिन्दूरं समर्पयामि।

कज्जलम्—ॐ चित्रं देवानामुद्गादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्ने। आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षꣳ सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥

श्री दुर्गा देव्यै नमः कज्जलं समर्पयामि।

दूर्वाङ्कुरान्—ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषस्परुषस्परि। एवा नो दूर्वे प्रतनू सहस्रेण शतेन च ॥

श्री दुर्गा देव्यै नमः दूर्वाङ्कुरान् समर्पयामि ॥

पल्लवान्—ॐ अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता। गोभाज इत्किलासथ यत्सनवथपूरुषम्॥

श्री दुर्गायै नमः पल्लवान समर्पयामि॥

फलानि—ॐ या फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः। वृहस्पतिः प्रसूतास्तां नो मुञ्चन्त्व ꣳ ह सः॥

श्री दुर्गा देव्यै नमः फलम् समर्पयामि।

आभूषणम्—ॐ युवं तमिन्द्रा पर्वता पुरोयुधा यो नः पृतन्यादप। तन्तमिद्धतं वज्रेण तन्तमिद्धतम्। दूरे चत्ताय छन्त्सद् गहनं यदि नक्षत्॥ ८/५३

श्री दुर्गा देव्यै नमः आभूषणं समर्पयामि।

पुष्पमालाम्—ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्या वहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्। इष्णन्निषाण मुम्म इषाण सर्वलोकम्म इषाण।

श्री दुर्गा देव्यै नमः पुष्पमालां समर्पयामि॥

पुष्पाणि—ॐ मनसः काम माकूतिं वाचः सत्यमशीमहि। पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः॥

श्री दुर्गा देव्यै नमः पुष्पाणि समर्पयामि।

नानापरिमल द्रव्याणि—ॐ अहिरिव भोगैः पर्य्येति बाहु ज्याया हेतिं परिबाधमानः। हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान् पुमान् पुमा ꣳ सं परिपातु विश्वतः। श्री दुर्गा देव्यै नमः नानापरिमल द्रव्याणि समर्पयामि।

सौभाग्य द्रव्याणि—ॐ कर्दमेन प्रजाभूता मयि सम्भव कर्दम। श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम्।

श्री दुर्गा देव्यै नमः सौभाग्य द्रव्यं समर्पयामि।

सुगन्धिद्रव्यम्—ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात॥

श्री दुर्गा देव्यै नमः सुगन्धिद्रव्यं समर्पयामि।

अथ अङ्गपूजनम्

ॐ दुर्गायै नमः पादौ पूजयामि । ॐ महाकाल्यै नमः गुल्फौ पूजयामि । ॐ मङ्गलायै नमः जानुद्वयं पूजयामि । ॐ कात्यायिन्यै नमः उरुद्वयं पूजयामि । ॐ भद्र काल्यै नमः कटिं पूजयामि । ॐ कमलवासिन्यै नमः नाभिं पूजयामि । ॐ शिवायै नमः उदरं पूजयामि ॥ ॐ क्षमायै नमः हृदयं पूजयामि । ॐ कौमार्य्यै नमः स्तनौ पूजयामि ॥ ॐ उमायै नमः हस्तौ पूजयामि । ॐ महागौर्य्यै नमः दक्षिण वाहुं पूजयामि । ॐ वैष्णव्यै नमः वामबाहुं पूजयामि । ॐ रमायै नमः स्कन्धौ पूजयामि । ॐ स्कन्दमात्रे नमः कण्ठे पूजयामि । ॐ महिषासुरमर्दिन्यै नमः नेत्रे पूजयामि । ॐ सिंह बाहिन्यै नमः मुखं पूजयामि । ॐ माहेश्वर्यै नमः शिरः पूजयामि । ॐ कात्यायिन्यै नमः सर्वांगं पूजयामि ।

प्रत्येक नाम से गन्धाक्षत समर्पित करे ।

धूपम्—ॐ धूरसि धूर्वं धूर्वन्तं धूर्वतं योऽस्मान् धूर्वति तं धूर्वयं वयं धूर्वामः देवानामसि **वह्नितमं सस्नितमं** पप्रितमं जुष्टतमं देवहूतमम् ।

श्री दुर्गा देव्यै **नमः धूपमाघ्रापयामि ।**

दीपम्—ॐ आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे । निचदेवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले ॥

श्री दुर्गा देव्यै **नमः दीपं दर्शयामि ।**

नैवेद्यम्—ॐ आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिंगलां पद्ममालिनीम् । चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥

श्री दुर्गा देव्यै नमः नैवेद्यं निवेदयामि ।

नैवेद्यं जलेनाभ्युक्ष्य गन्ध पुष्पाभ्यामाच्छादयेत । ततः धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य योनिमुद्रां प्रदर्श्य घण्टां वादयेत् । ततः ग्रासमुद्रां प्रदर्श्य—ॐ प्राणाय स्वाहा, ॐ अपानाय स्वाहा, ॐ व्यानाय स्वाहा, ॐ समानाय स्वाहा, ॐ उदानाय स्वाहा इति नैवेद्यं प्रदर्शयेत् । मध्ये मध्ये आचमनीयम् जलं समर्पयामि । उत्तरापोशनार्थे पुनर्नैवेद्यं निवेदयामि । पुनराचमनीयम् समर्पयामि ।

करोद्वर्तनम्—(गन्धम्) ॐ अ ʋ शुनाते अ ʋ शु पृच्यतां परुषा परुः। गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसो अच्युतः ॥

दुर्गा देव्यै नमः करोद्वर्त्तनार्थं गन्धं समर्पयामि ।

ऋतु फलम्—ॐ या फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणी। वृहस्पतिः प्रसूतास्तानो मुञ्चन्त्व ʋ हसः ।

श्री दुर्गा देव्यै नमः एलालवंगादि सहितं ताम्बूलं समर्पयामि ।

दक्षिणा—ॐ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्। स दाधार पृथिवीं द्यामुते मां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

श्री दुर्गा देव्यै नमः दक्षिणा द्रव्यं समर्पयामि ।

नमस्कारः—ॐ आर्द्रां यस्करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम् । सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ।

श्री दुर्गा देव्यै नमः नमस्कारं समर्पयामि ।

ज्योतिः पूजनम्—ज्योतिः स्वरूपायै दुर्गायै नमः, कुलदेवि स्वरूपायै दुर्गायै नमः—इति पाद्यादिभिः सम्पूज्य—

ॐ सरसिजनिलये सरोजहस्ते धवलतरांशुक गन्धमाल्य शोभे । भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञे त्रिभुवनभूतिकरि प्रसीद मह्यम् ॥

ॐ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा। अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा सूर्योवर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा । ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ।

वटुक पूजनम्—ॐ ह्रीं वं वटुकाय नमः, इति पाद्यादिभिः वटुकं सम्पूज्य ।

प्रार्थयेत्—ॐ करकलित कपालः कुण्डली दण्डपाणिः,
तरुण तिमिरनीलव्याल-यज्ञोपवीती ।
क्रतु समय सपर्या विघ्नविच्छेद हेतुः,
जयति वटुक नाथः सिद्धिदः साधकानाम् ।

मन्त्र पुष्पांजलिः—ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् । तेह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥

आरार्तिकम्—ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महि। स मे कामान् कामकामाय मह्यम्। कामेश्वरो ददातु। कुवेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः ॥

ॐ स्वस्ति साम्राज्यं भौज्यं स्वराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं महाराज्यमाधिपत्यमयं समन्तपर्यायी स्यात्। सार्वभौमः सर्वायुष आन्तादापरार्धात् पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया एकराडिति। तदप्येष श्लोकोऽभिगीतो मरुतः परिवेष्टारो मरुतस्यावसन् गृहे। अविविक्षतस्य कामप्रेर्विश्वेदेवाः सभासदः ॥

ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतो मुखो विश्वतो वाहुरुत विश्वतस्पात्। सम्वाहुभ्यां धमति सम्पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन्देव एकः ॥

दुर्गागायत्री—ॐ कात्यायिन्यै विद्महे कन्याकुमारी च धीमहि। तन्नो दुर्गिः प्रचोदयात्।

प्रदक्षिणा—ॐ ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृका हस्ता निषंगिणः। तेषांँ सहस्रयोजनेऽवधन्वानि तन्मसि ॥

यानि कानि च पापानि जन्मान्तर कृतानि च।
तानि तानि प्रणश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे।
पदे पदे या परिपूजकेभ्यः।
सद्योऽश्वमेधादि फलं ददाति।
तां सर्वपापक्षयहेतुभूतां प्रदक्षिणां ते परितः करोमि ॥

अभिवादनम्—

दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः।
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि।
दारिद्रय दुःखभय हारिणी का त्वदन्या
सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता ॥
सर्वदेवमयीं देवीमीश्वरीं शंकरप्रियाम्।
विश्वेश्वरीं विश्ववन्द्यां चण्डिकां प्रणमाम्यहम्।
सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके।

शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते ॥
नमस्ते देवदेवेशि नमस्ते ईप्सित प्रदे ।
नमस्ते जगतां धात्रि नमस्ते शंकरप्रिये ॥
जयन्ती मंगला काली भद्रकाली कपालिनी ।
दुर्गा क्षमा शिवाधात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तुते ।
विश्वेश्वरी विश्व पूज्ये पुत्रपौत्र प्रदायिनि ।
आयुरारोग्यमैश्वर्यं सुखशान्तिं च देहि मे ।
देवि प्रपन्नार्ति हरे प्रसीद प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य ।
प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं त्वमीश्वरि देवि चराचरस्य ॥

सामान्यतो हनुमत् प्रतिमा स्थापनम्

शुचौ देशे मण्डलस्थण्डिलादिकं कृत्वा सुमूहूर्ते नित्य कार्यं समाप्य शिल्प स्थानाद् देवं तत्रानीय आसने निधाय आचान्तः प्राणानाम्य—अद्येत्यादि देशकालौ संकीर्त्य—मम दीर्घायुः लक्ष्मी-सर्वकाम समृद्ध्यर्थं अस्यां मूर्तौ देवकलासान्निध्यर्थं हनुमत्प्रतिष्ठां करिष्ये इति । तदंगत्वेन गणेश पूजनं नव ग्रह पूजनं आचार्यादि वरणं च करिष्ये-इति संकल्प्य गणेश पूजां विधाय-पुण्याहवाचनं, सामान्यतो नवग्रह पूजनं आचार्यादि वरणं कृत्वा कुण्डे स्थण्डिले वा पंचभू संस्कारान् कृत्वा तत्र अग्निः प्रतिष्ठाप्य परिस्तरणादि कर्म समाप्य आघारावाज्यभागो हुत्वा ग्रहेभ्यः तिलहोमं च कृत्वा प्रधान देव होमं कुर्यात् । तद्यथा—ॐ नमो रामचन्द्राय स्वाहा, इदं विष्णवे । ॐ हनुमते स्वाहा, इदं हनुमते । इत्येताभ्यां अष्टोत्तरशतं चरुणा हुत्वा सहस्रशीर्षा० इति सूक्तेन तिलाहुती स्तैरेव जुहुयात् । ततः—ॐ अग्नये स्विष्ट कृते स्वाहा । इदं अग्नये स्विष्ट कृते० इति स्विष्टकृतं होमं व्याहृति होमं पञ्चवारुण प्रजापति होमं हुत्वा दिग्पालेभ्यो बलीन् दद्यात् ।

ततो देवं नत्वा—स्वागतं देव देवेश विश्व रूप नमोऽस्तु ते इति प्रार्थ्य—ॐ उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवयन्त स्त्वेमहे । उपप्रयन्तु मरुतः सुदानव इन्द्र प्राशूर्भवा सचा । इति सर्त्विगाचार्यो देवमुत्थाप्य यज्ञिय काष्ठ पीठे निधाय पंचगव्यैः पञ्चामृतैश्च पृथक्-पृथक् तत्तन्मन्त्रैः संस्थापयेत् । ततः ॐ शन्नो

देवीति शुद्धोदकेन संस्नाप्य घृताभ्यङ्गमुद्वर्तनमुष्णोदकेन क्षालनं च कृत्वा पुनः चतुर्भिः कलशैः वारुणमन्त्रैरभिषिपच्य (इमम्मे वरुण-इत्याद्याः) पुनः सर्वौषधि जलेन गंगोदकेन च आपोहिष्ठा मयोभुवः इति तिसृभिः—पवमान सूक्तेन च संस्नाप्य वाससी परिधाय उपवीतं दत्त्वा गन्ध-पुष्प धूप-दीपः षोडशोपचारेण संपूज्य नीराजनं च कृत्वा सुवर्णादिपात्रे मधुघृतं गृहीत्वा हिरण्यशलाकया—ॐ चित्रं देवानामद्‌गादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः इत्यर्धर्चेन—ॐ तेजोऽसि शुक्रमसीति मन्त्रेण च, ॐ नमो भगवते हनुमते नमः इति दक्षिण-सव्ये नेत्रे मन्त्राऽऽवृत्या लिखेत। ततः अञ्जनेन अञ्जयित्वा भक्ष्य भोज्यऽऽदर्शादि दर्शयेत। तत्राग्रे कोऽपि न तिष्ठेत्।

ततः पुरुष सूक्तेन स्तुत्वा देवं नीराजयित्वा—ॐ रुद्राय नमः इति चतुष्पथे बलिं दद्यात्। ततो देवमुत्थाप्य, शय्यामासने वा निधाय न्यासं कुर्यात्।

अथ पुरुषसूक्त न्यासः—ॐ सहस्रशीर्षा० पुरुष एवेदं० इति करयोः ॥१॥ एतावानस्य-त्रिपादूर्ध्व० इति जान्वोः ॥२॥ ततो विराड० तस्माद् यज्ञात् सर्वहुतः० इति कट्योः ॥३॥ तस्माद्यज्ञात० नाभौ ॥४॥ तस्मादश्वा० हृदि ॥५॥ तं यज्ञं० कण्ठे ॥६॥ यत्पुरुषं० ब्राह्मणोस्य० बाह्वो० ॥७॥ चन्द्रमा मनसो० नाभ्या आसीत्० नासयोः ॥८॥ यत्पुरुषेण० सप्तास्या० अक्ष्णोः ॥९॥ यज्ञेन यज्ञं शिरसि ॥१०॥ इति न्यासं कृत्वा ॐ नमो भगवते वासुदेवाय इति शतवारं दशवारं वा जलं अभिमन्त्र्य देवशिरसि अभिषिच्य—ॐ उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते० इत्युत्थाप्य० सुमुहूर्ते-मुख्य मन्दिरे पुरुष सूक्तेन गायत्र्या ध्रुवसूक्तेन वा अर्चां प्रतिष्ठाप्य प्राण प्रतिष्ठां कुर्यात्।

अथ हनुमत् प्राण प्रतिष्ठा

अस्य श्री प्रतिष्ठा मन्त्रस्य ब्रह्म-विष्णु-रुद्राः ऋषयः ऋग्यजुः सामानि छन्दांसि क्रियामय वपुः प्राणाख्या देवता आं वीजं क्रौं शक्तिः प्राण प्रतिष्ठायां विनियोगः।

ॐ ब्रह्म-विष्णु-रुद्र ऋषिभ्यो नमः शिरसि। ॐ ऋग्यजुः सामछन्दोभ्यो नमः मुखे। प्राणाख्य देवतायै नमः हृदि। ॐ आं वीजाय नमः गुह्ये। ॐ क्रौं शक्त्यै नमः पादयोः। ओं कं खं गं घं ङं अं पृथिव्यप्तेजो वाय्वाकाशात्मने आं

हृदयाय नमः। ॐ चं छं जं झं ञं इं शब्द स्पर्श-रूप-रस-गन्धात्मने शिरसे स्वाहा। ॐ टं ठं डं ढं णं उं श्रोत्रत्वक्-चक्षुर्जिह्वा-प्राणात्मने ऊं शिखायै वषट्। ॐ तं थं दं धं नं एं वाक्पाणिपादपायूपस्थानात्मने ऐं कवचाय हुम्। ॐ पं फं बं भं मं ओं वचनादान विहरणोत्सर्गानन्दात्मने औं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ यं रं लं वं शं षं सं हं सः देवस्य प्राणाः इह प्राणाः। ओं आं ह्रीं क्रीं यं रं ळं वं शं षं सं हं सः देवस्य जीव इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं क्रौ यं रं लं वं शं सं हं सः देवस्य सर्वेन्द्रियाणि। ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं सं हः देवस्य वाङ्मनः चक्षुः श्रोत्र-घ्राण-प्राणाः इहागत्य स्वस्तये सुखेन सुचिरं तिष्ठन्तु स्वाहा॥

ततः प्रतिमायाः हृद्यङ्गुष्ठं दत्त्वा जपेत्। ॐ अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाश्चरन्तु च। अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति कश्चन॥

ततो देवस्य कर्णे गायत्रीं जप्त्वा पुरुषसूक्तेन स्तुत्वा पाद-नाभि-शिरः स्पृष्ट्वा प्रार्थयेत—स्वागतं देवदेवेश मद्भाग्यात्त्वमिहागतः। प्राकृतं त्वामदृष्ट्वा मां बालवत् परिपालय॥१॥ धर्मार्थ कामसिद्ध्यर्थं शिवो भव शिवाय नः। सान्निध्यं तु महावीर स्वार्चायां परिकल्पय॥२॥ यावच्चन्द्रावनीसूर्याः तिष्ठन्त्यप्रतिघातिनः। तावत्त्वयाऽत्र देवेश स्थेयं भक्तानुकम्पया॥३॥

इति प्रार्थ्य-षोडशोपचारैः संपूज्य सिन्दूरादिना सुशोभितं कृत्वा नारिकेलं समर्प्य रक्तपताकां ध्वजं चोच्छ्रयेत॥ ततः पूर्णाहुतिं हुत्वा कर्म शेषं समाप्य देवान् विसृज्य आचार्यादिभ्यो दक्षिणां दद्यात्॥

हनुमत् गायत्री—ॐ तत्पुरुषाय विद्महे वायुपुत्राय धीमहि। तन्नो हनुमत्प्रचोदयात्॥

हनुमत् षोडशोपचारपूजनम्

१. ध्यानम्— अतुलित बलधामं हैमशैलाभ देहं
दनुज वन कृशानुं ज्ञानिनामग्र्य गण्यम्।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपति प्रिय भक्तं वातजातं नमामि॥
मनोजवं मारुत तुल्य वेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्।
वातात्मजं वानरयूथ मुख्यं श्रीराम दूतं शरणं प्रपद्ये॥

२. **आवाहन**— नमस्ते रुद्रमन्यव उतोत इषवे नमः वाहुभ्यामुतते नमः ॥
श्री हनुमते नमः आवाहयामि । आवाहानार्थं पुष्पाणि समर्पयामि ॥

३. **आसन**—ॐ या ते रुद्र शिवा तनूरघोरा पापकाशिनी । तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभि चाकशीहि ॥ श्री हनुमते नमः आसनं समर्पयामि ॥

४. ॐ या मिषुंगिरिशन्त हस्ते विभर्ष्यस्तवे । शिवाङ्गिरित्रतां कुरु मा हिंसीः पुरुषं जगत् ॥ श्री हनुमते नमः पाद्यं स० ॥

५. **अर्घ्य**—ॐ शिवेन वचसा त्वा गिरिशाच्छा वदामसि । यथा नः सर्वमिज्जगदयक्ष्मं सुमना असत् ॥ श्री हनुमते नमः अर्घ्यं सम० ॥

६. **आचमनं**—ॐ अद्ध्य वोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्यो भिषक् । अहींश्च सर्वाञ्जम्भयन्त्सर्वांश्च यातु धान्यो धराचीः परासुव ॥ श्री हनुमते नमः आचमनं सम० ॥

७. ॐ असौ यस्ताम्रो अरुण उत बब्भ्रूः सुमंगलः । ये चैनं रुद्रा अभितोदिक्षु श्रिताः सहस्रशो वैषांहेड ईमहे ॥

श्री हनुमते नमः स्नानं समर्पयामि ॥

८. **पंचामृत**—ॐ पञ्चनद्यः सरस्वती मपियन्ति सस्रोतसः । सरस्वती तु पञ्चधा सो दूदेशे ऽभवत्सरित् । श्री हनुमते नमः पंचामृतस्नानं सम० ॥

९. **शुद्धोदक०**—ॐ शुद्धवालः सर्वशुद्धवालो मणिवालस्त आश्विनाः । श्येतः श्येताक्षोऽरुणस्ते रुद्राय पशुपतये कर्णा यामा अवलिप्तः रौद्रा नभोरूपा पार्जन्याः ॥

श्री हनुमते नमः शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि ॥

१०. **वस्त्र**—ॐ असौ योऽवसर्पति नीलग्रीवो विलोहितः । उतैनं गोपा अदृशन्न दृशन्नुदहार्य सदृष्टो मृडयाति नः ॥

श्री हनुमते नमः कटि वस्त्रं सम० ।

११. **यज्ञोपवीत**—ॐ नमोऽस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे । अथो ये अस्य सत्त्वानो हन्तेभ्यो अकरं नमः ॥

श्री हनुमते नमः यज्ञोपवीतं सम० । यज्ञोपवीतान्ते आचमनीयं जलं सम० ॥

१२. गन्ध—ॐ प्रमुञ्च धन्वनस्त्वमुभयोरात्र्योर्ज्याम्। याश्चते हस्त इषवः पराता भगवो वप ॥

श्री हनुमते नमः गन्धं सम० ।

१३. अक्षत—ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्रिया अधूषत। अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठया मती योजान् विन्द्रते हरी ॥

श्री हनुमते नमः अक्षतान् स० ।

१४. तुलसी—ॐ विज्यन्धनु कपर्दिनो विशल्यो वाणवां -२ उत। अनेशन्नस्य या इषव आभुरस्य निषङ्गधिः ॥

श्री हनुमते नमः पुष्पमालां समर्पयामि । तुलसीदलं च सम० ॥

१५. ग्रन्थिपूजनम्—अंजनी सूनवे नमः, प्रथमग्रन्थिं पूजयामि । हनुमते नमः द्वितीय ग्रन्थिं पू० । वायुपुत्राय नमः तृतीय० । महाबलाय० चतुर्थ० । रामेष्टाय नमः पञ्चम० । फाल्गुनसखाय० । षष्ठ० पिंगाक्षाय नमः सप्तम० । अमितविक्रमाय० अष्टम० । कपीश्वराय नमः दशम० । लक्ष्मण प्राणदात्रे० एकादश० । दशग्रीव दर्पघ्नाय० द्वादश० । भविष्यद् ब्रह्मणे० त्रयोदश० ।

इति ग्रन्थि पूजनम्

१६. अबीर-गुलाल—ॐ अहिरिव भौगैः पर्य्येति बाहुं ज्यायां हेतिं परिवाधमानः। हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान् पुमान पुमाꣳसं परिपातु विश्वतः।

अवीरं च गुलालं च हरिद्रादि समन्वितम्।
नाना परिमलं द्रव्यं गृहाण वायुनन्दन ॥
श्री हनुमते नमः गुलालं सम० ॥

१७. सिन्दूर—ॐ सिन्धोरिव प्राद्ध्वने शूघनासौ वातप्रमियः पतयन्ति यह्वाः। घृतस्यधारा अरुषो न वाजी काष्ठा भिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः ॥

दिव्य नागसमुद्भूतं सर्वमंगलकारकम्।
तैलेनाभ्यंगयिष्यामि सिन्दूरं गृह्यतां प्रभो ॥
श्री हनुमते नमः सिन्दूरं लेपयामि ।

१८. अंग पूजा—हनुमते नमः पादौ पूजयामि। सुग्रीवसखाय नमः गुल्फौ०। अंगदमित्राय० जंघे०। रामदासाय० उरु पू०। अक्षघ्नाय० कटि पू०। लंकादहनाय० बालं पू०। राम मणिदाय० नाभिं०। सागरोल्लघंनाय० मध्यं०। लंकामर्दनाय० केशावलिं०। सञ्जीवनहर्त्रे० स्तनौ०। सौमित्रीप्राण-दाय० वक्षः०। कुण्ठितदशकण्ठाय० कण्ठं०। रामाभिषेक- कारिणे० हस्तौ०। मन्त्ररचितरामायणाय० वक्त्रं पू०। प्रसन्नवदनाय० वदनं०। पिंगनेत्राय० नेत्रे०। श्रुतिपारगाय० श्रुति०। ऊर्ध्वपुण्ड्रधारिणे० कपोलं पूजयामि। मणिकण्ठमालिने० शिरसि पूजयामि। सर्वाभीष्ट प्रदाय० सर्वांगं पूजयामि॥

१९. सुगन्धिद्रव्य—ॐ त्र्यम्वकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्।

मनोहरं गन्ध द्रव्यं रुचिरागुरु वासितम्।
देह शोभाकरं नित्यं गृहाण कपि पुंगव॥
श्री हनुमते नमः सुगन्धि द्रव्यं सम०॥

२०. ॐ या ते हेतिर्मीढुष्टम् हस्ते बभूव ते धनुः। तयास्मान् विश्वतस्त्वमयक्ष्मया परिभुज॥ श्री हनुमते नमः धूपं धूपयामि।

२१. दीप—ॐ परि ते धन्वनो हेतिरस्मान् वृणक्तु विश्वतः। अथो य इषुधिस्तवारे अस्मिन्निधेहि तम्। "हनुमते नमः दीपं०।"

२२. नैवेद्य—अवतत्त्यधनुष्ट्व ν सहस्राक्ष शतेषुधे। निशीर्यशल्यानां मुखा शिवो नः सुमनाभव॥ हनुमते नमः नैवेद्यं०।

२३. आपोशान—उतस्मास्य द्रवतस्तुरण्यतः। पर्णन्न वे रनुवाति प्रगर्द्धिनः। श्येनस्येव ध्रजतो अङ्कसंपरि दधिक्राव्णः सहोर्ज्जा तरित्रतः स्वाहा॥

२४. दक्षिणा—ॐ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्। स दाधार पृथिवीं द्यामुते मां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

हिरण्य गर्भ गर्भस्थं हेमबीज विभावसो।
अनन्त पुण्य फलदमतः शान्ति प्रयच्छ मे॥
श्री हनुमते नमः दक्षिणां सम०।

२५. नीराजनं—ॐ इद ँहविः प्रजनन मे अस्तु दशवीरँसर्वगण ँ स्वस्तये। आत्मसनि प्रजासनि पशुसनि लोक सन्यभय सनि। अग्निः प्रजां बहुलां मे करोत्त्वन्नं पयोरेतो अस्मासू धत्तः।

ॐ आरात्रि पार्थिव ँ रजः पितुरप्रायि धामभिः।
दिवः सदा ँ सि वृहती तिष्ठस आ त्त्वेषं वर्त्तते तमः॥

२६. प्रदक्षिणा—ॐ मानो महान्तमुत मानो अर्भकं मान उक्षन्तमुतमान उक्षितम्। मानो वधीः पितरं मोत मातरं मा नः प्रियास्तन्वो रुद्ररीरिषः॥

यानि कानि च पापानि जन्मान्तर कृतानि च।
तानि तानि प्रणश्यन्ति प्रदक्षिणि पदे पदे॥

२७. (मन्त्रपुष्पांजलिः) ॐ मानस्तोके तनये मा न आयुषि मा नो गोषु मा नो अश्वेषुरीरिषः। मानो वीरान् रुद्र भामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमित्त्वा हवामहे।

ॐ यज्ञेन यज्ञ मयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्। ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।

ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे। स मे कामान् कामकामाय मह्यम्। कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु। कुवेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः॥

ॐ स्वस्ति साम्राज्यं भौज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं महाराज्यमधिपत्यमयं समन्तपर्यायी स्यात्। सार्वभौमः सार्वायुष आन्तादापरार्धात् पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया एकराडिति।

तदप्येष श्लोको अभिगीतो मरुतः परिवेष्टारो मरुतस्यावसन गृहे। आविक्षितस्य कामप्रेर्विश्वेदेवाः सभासदः। ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतो मुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात्। सम्बाहुभ्यां धमति सम्पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन्देव एकः॥

हनुमत गायत्री—ॐ रामदूताय विद्महे वायुपुत्राय धीमहि। तान्नो हनुमत्प्रचोदयात्।

हनुमत् प्रतिष्ठा के पश्चात् पठनीय मन्त्र

१. ॐ समुद्रादूर्मि मधुमां -२ उदारदुपा ꣳ शुना सममृतत्वमानट् ।
घृतस्य नाम गुह्यं सदस्ति जिह्वा देवानाममृतस्य नाभिः ॥

२. ॐ वयन्नाम प्र ब्रवामा घृतस्यास्मिन् यज्ञे धारयामा नमोभिः ।
उपब्रह्मा शृणवच्छस्यं मानं चतुः शृंगो ऽवमदीद् गौर एतत् ।

३. ॐ चत्वारि शृंगाः त्रयोऽस्य पादाः द्वे शीर्षे सप्तहस्तासो अस्य ।
त्रिधावद्धो वृषभो रौरवीति महोदेवो मर्त्यां -२ आविवेश ॥

४. ॐ त्रिधाहितं पणिभिर्गुह्य मानङ्गवि देवासो घृतमन्वविन्दन् ।
इन्द्र एक ꣳ सूर्य एकञ्जजान बेनादेक ꣳ स्वधया निष्टतक्षुः ॥

५. ॐ एता अर्पन्ति हृद्यात्समुद्राच्छत व्रजा रिपुणा नाव चक्षे ।
घृतस्यधारा अभिचाकशी मि हिरण्ययो वेतसो मध्य आसाम् ॥

६. ॐ सम्यक् स्रवन्ति सरितो न धेना अन्तर्हृदा मनसा पूयमानाः ॥
एते अर्पन्त्यूर्मयो घृतस्य मृगा इव क्षिपणोरीषमाणाः ॥

७. ॐ सिन्धोरिव प्राद्ध्वने शूंघनासो वातप्रमियः पतयन्ति यह्वाः ।
घृतस्य धारा अरुषो न वाजीकाष्ठा भिन्दनूर्मिभिः पिन्वमानः ॥

८. ॐ अभिप्रवन्त समनेव योषाः कल्याण्या स्मयमानासो अग्निम् ।
घृतस्य धाराः समिधो न सन्त ता जुषाणो हर्यति जातवेदाः ॥

९. ॐ कन्या इव बहतुमेतवा उ अञ्ज्यञ्जाना अभिचाकशीमि ।
यत्र सोमः सूयते यत्र यज्ञो घृतस्यधारा अभि तत्पवन्ते ॥

१०. ॐ अभ्यर्षत् सुष्टुतिङ्ग व्ययमाजिमस्मासु भद्रा द्रविणानि धत्त ।
इमं यज्ञं नयत देवतानां घृतस्यधारा मधुमत्पवन्ते ॥

११. ॐ धामन्ते विश्वम्भुवनमधिश्रितमन्त ꣳ समुद्रे हृद्यन्तरायुषि ॥
अपामनीके समिथे य आभृतस्तमश्याम मधुमन्त ऊर्मिम् ॥

१२. ॐ मूर्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानर मृतमाजात मग्निम् ।
कवि ꣳ सम्राज मतिथिञ्जनानामासन्ना पात्रं जनयन्त देवाः ॥

१३. ॐ पुनस्त्वादित्या रुद्राः वसवः समिन्धताम्पुनर्ब्रह्मणो वसुनीथ यज्ञैः ।
घृतेन त्वन्तन्ववर्धयस्व सत्या ꣳ सन्तु यजमानस्य कामाः ॥

१४. ॐ पूर्णादर्विपरापत सुपूर्णा पुनरापत ।
वस्नेव विक्रीणावहा इषमूर्ज ꣳ शतक्रतो स्वाहा ॥

अथ राधाकृष्ण प्रतिष्ठा

आचम्य, प्राणानायम्य आत्मानं पूजा सामग्रीं, च संप्रोक्ष्य हस्ते अक्षतपुष्पाणि गृहीत्वा स्वस्ति वाचनं कृत्वा देशकालौ संकीर्त्य० मम सर्वपापक्षयार्थं दीर्घायुर्विपुल पुत्र पौत्राद्य नवच्छिन्न सन्तति वृद्धि स्थिर लक्ष्मी कीर्ति लाभ शत्रुपराजय सर्वपापनिरसन सकलसुखधर्मार्थ काम मोक्ष प्राप्तिद्वारा श्री राधा कृष्ण प्रीत्यर्थं शत्रुपराजय सर्वपापनिरसन सकलसुख-धर्मार्थ काम मोक्ष प्राप्तिद्वारा श्री राधा कृष्ण प्रीत्यर्थं सनवग्रहमख-सप्राण राधा कृष्ण मूर्त्योः स्थिर प्रतिष्ठां करिष्ये। इति संकल्प्य ग्रहप्रयोगानुसारेण पूजनं समाप्य-जलाधिवासं—देव स्नपनादिकं समाप्य प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात्—

अथ प्राण प्रतिष्ठा

अस्य प्राण प्रतिष्ठा मन्त्रस्य ब्रह्म-विष्णु-महेश्वरा ऋषयः ऋग्यजुसामाथर्वाणि छन्दांसि क्रियामयवपुः प्राणाख्या देवता राधा कृष्णयोः प्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः।

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं सः राधा कृष्णयोः प्राणा इह प्राणाः। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं सः राधा कृष्णयोः जीव इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं सः राधा कृष्णयोः वाङ्मनः त्वक्-चक्षुः-श्रोत्र-जिह्वाः घ्राणप्राणाः इहागत्य स्वस्तये सुखेन चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

देवस्य मूर्ध्नि हस्तं न्यस्य गायत्रीं जपेत्।

ॐ देवकीनन्दनाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि। तन्नः कृष्णः प्रचोदयात्।

अतसीपुष्प संकाशं शंख चक्रगदाधरम्।
संस्थापयामि देवेशं देवो भूत्वा जनार्दनम्॥

ततः पुरुषसूक्तेन देवमभिमन्त्र्य राधिकायाः मूर्ध्नि हस्तं निधाय—ॐ समुद्धृतायै विद्महे विष्णुनैकेन धीमहि। तन्नो राधा प्रचोदयात्।

आवाहनम्—आवाहयामि देवेशं श्री राधा वल्लभं हरिम्।
देवकी तनयं कृष्णं श्री कृष्ण प्रकृतेः परम्॥ श्री राधाकृष्णाभ्यां नमः आवाहयामि॥

आसनम्—राजाधिराजेन्द्रं कृष्णं चन्द्रादित्यं समुद्भवम् । इदं सिंहासनं तुभ्यं दास्यामि स्वीकुरु प्रभो ॥ श्री राधा कृष्णाभ्यां नमः आसनं सम० ।

पाद्यम्—त्रैलोक्य पावनत्वं हि राधया सहितो हरे । पाद्यं गृहाण देवेश नमो राजीवलोचन ॥ श्री राधा कृष्णाभ्यां नमः पाद्यं सम० ।

देवं उत्थाप्य कुशप्रस्तरे शुभ्रवस्त्रेणाच्छाद्य प्राक्शिरसं देवं स्थापयेत् । ततो ग्रहाहुतिपूर्वकं वास्तुहोमं समित्तिलचर्वाज्य द्रव्यैः प्रत्येकं अष्टाष्ट संख्याभिः हुत्वा प्रधान होमं कुर्यात् ॥ ॐ सहस्रशीर्षा० स्वाहा ॥१ ॥ ॐ पुरुष एवेदं० स्वाहा ॥२ ॥ ॐ एतावानस्य० स्वाहा ॥३ ॥ ॐ त्रिपादूर्ध्व० स्वाहा ॥४ ॥ ॐ ततो विराडजायत० स्वाहा ॥५ ॥ ॐ तस्माद्यज्ञात० स्वाहा ॥६ ॥ ॐ तस्माद्यज्ञात्० स्वाहा ॥७ ॥ ॐ तस्मादश्वा० स्वाहा ॥८ ॥ ॐ तं यज्ञं० स्वाहा ॥९ ॥ ॐ यत्पुरुषं० स्वाहा ॥१० ॥ ॐ ब्राह्मणोऽस्य० स्वाहा ॥११ ॥ ॐ चन्द्रमा मनसो० स्वाहा ॥१२ ॥ ॐ नाभ्या आसी० स्वाहा ॥१३ ॥ ॐ यत्पुरुषेण० स्वाहा ॥१४ ॥ ॐ सप्तास्यासन्० ॥१५ ॥ ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्तः० स्वाहा ॥१६ ॥

इति षोडशाहुतिर्हुत्वा—ततः श्रीश्चते० इति मन्त्रेण अष्टोत्तरशतं, अष्टाविंशतिः हुत्वा । ॐ इदं विष्णुः० इति मन्त्रेण हुत्वा देवचरणौ स्पृष्ट्वा-पुनः तेनैव हुत्वा नाभिं स्पृष्ट्वा, पुनः तेनैव हुत्वा शिरसि स्पृशेत । पुरुष सूक्तेन सर्वांगं स्पृशेत् । उदुत्यं जात वेदसं देवं वहन्ति केतवः । दृशे विश्वाय सूर्यम् ॥ इति देवमुत्थाप्य देवालयं प्रवेश्य गर्ते पञ्चरत्नं सुवर्णखण्डं वा निधाय मूर्तिं दृढ़ं कृत्वा—तत्त्वन्यासं कुर्यात् ।

अथ तत्त्वन्यासः—धर्मतत्त्वाय नमः मूर्ध्नि । ज्ञानाय नमः हृदि । वैराग्याय नमः गुह्ये । ऐश्वर्याय नमः पादयो० । खड्गाय नमः शिरसि । शार्ङ्गाय नमः मस्तके । मुसलाय नमः दक्षिणभुजे । इलाय नमः वामभुजे । चक्राय नमः नाभ्यां जठरे पृष्ठे च । शंखाय नमः लिंगे वृषणे च । गदायै नमः जंघयोर्जानुनोश्च । पद्मायै नमः गुल्फयोः पादयोश्च । लक्ष्म्यै नमः ललाटे । सरस्वत्यै नमः मुखे । देवत्यै नमः गुह्ये । प्रीत्यै नमः कण्ठे । कीर्त्यै नमः नेत्रे । शान्त्यै नमः हृदये । तुष्ट्यै नमः जठरे । पुष्ट्यै नमः सर्वांगे ।

पुरुष सूक्तन्यासः—सहस्रशीर्षाः० पादयोः। पुरुष एवे० जंघयोः। एतावानस्य० जान्वोः। त्रिपादूर्ध्व० ऊर्वोः। ततो विराड० वृषणयोः। तस्माद्यज्ञा० कट्याम्। तस्माद्यज्ञात्० नाभौ। तस्मादश्वा० हृदि। तं यज्ञं० स्तनयोः। यत्पुरुषं० वाह्वोः। ब्राह्मणोऽस्य० मुखे। चन्द्रमा० नेत्रयोः। नाभ्या० कर्णयोः। यत्पुरुषेण० भ्रुवोः। सप्तास्या० भाले। यज्ञेन यज्ञ० शिरसि। अद्भ्यः हृदये। वेदाहमेतं० शिरसि। प्रजापतिश्च० शिखायाम्। यो देवेभ्यः-कवचम्। रुचं ब्रह्म० नेत्रयोः। श्रीश्चते० अस्त्रम्॥

अर्घ्यम्— परिपूर्ण परानन्द ब्रह्मादि देवतात्मक।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं दीर्घवारि समन्वितम्॥
श्री राधा कृष्णाभ्यां नमः अर्घ्यं प्रदा०।

मधुपर्कम्— वासुदेवाय कृष्णाय तत्वज्ञान स्वरूपिणे।
मधुपर्कं प्रदास्यामि दीनानाथाय ते नमः॥
श्री राधा कृष्णाभ्यां नमः मधुपर्कं सम०।

आचमनम्— नमः शुद्धाय बुद्धाय ज्ञान रूपिणे।
गृहाण आचमनं नाथ सर्वलोकैकनायक॥
श्री राधा कृष्णाभ्यां नमः आचमनीयं सम०।

पंचामृतम्— पञ्चामृतं मयानीतं पयोदधि घृतं मधु॥
शर्करया युतं देव गृहाण जगतीपते॥
श्री राधा कृष्णाभ्यां नमः पंचामृतं सम०।

स्नानम्— ब्रह्माण्डोदर मध्यस्थं तीर्थैश्च यदुनन्दन।
स्नापयिष्यामि अहं भक्त्या स्वकरेण जनार्दन॥
श्री राधा कृष्णाभ्यां नमः स्नानं सम०।

वस्त्रम्— श्रीकृष्णाच्युत यज्ञेश श्रीधरानन्द राधन।
ब्रह्मसूत्रं सोत्तरीयम् गृहाण यदुनायक।
राधा कृष्णाभ्यां नमः वस्त्रोपवस्त्रं सम०।

भूषणम्— किरीटहार-केयूर-वंश-कुण्डल-मेखला।
ग्रीवेयकौस्तुभो हार-रत्न-कंकण-नूपुरौ।
एवमादीनि सर्वाणि भूषणानि सुरोत्तम।

अहं दास्यामि सद्भक्त्या संगृहाण जनार्दन ॥
श्री राधा कृष्णाभ्यां नमः अलंकरणं स० ।

गन्धम्— कुंकुमागुरु-कर्पूर-कस्तूरी मिश्रचन्दनम् ।
तुभ्यं दास्यामि विश्वेश राधया सहितो हरे ॥
श्री राधा कृष्णाभ्यां नमः गन्धं स० ।

पुष्पमालाम्— तुलसी-कुन्द-मन्दार-जाति-पुन्नाग-चम्पकैः० ।
कदम्ब करवीरैश्च कुंकुमैः शतपत्रकैः ।
नीलांवुजैर्विल्वदलैः पुष्पमाल्यै केशव ॥
पूजयिष्यामि अहं भक्त्या संगृहाण जनार्दन ॥
श्री राधा कृष्णाभ्यां नमः पुष्पमा० सम० ।

अथांगपूजा

श्रीकृष्णाय नमः पादौ पूजयामि । श्रीराधावल्लभाय नमः गुल्फौ पू० । श्री केशवाय० जानुनि पू० । श्री पद्मनाभाय० नाभि पू० । श्री परमात्मने नमः हृदयं पू० । ॐ श्रीकण्ठाय नमः कण्ठं पू० । ॐ सर्वास्त्रधारिणे० बाहु० पू० । ॐ यदूद्भवाय० मुखं पू० । ॐ वाचस्पतये० उरू पू० ।

ॐ विश्वरूपाय० जंघे पू० । ॐ माधवाय० कटि पू० ।
ॐ विश्वमूर्तये० मेढं पू० । ॐ विश्वेशाय० जिह्वां पू० ।
ॐ दामोदराय० दन्तान् पू० । ॐ गोपीनाथाय० ललाटं पू० ।
ॐ ज्ञान गम्याय० शिरः पूजयामि । ॐ सर्वात्मने० सर्वांग पू० ।

धूपम्— ॐ वनस्पतिरसोद्भूतं सुगन्धाढ्यं मनोहरम् ।
धूपं गृहाण देवेश राधया सह केशव ॥
श्री राधा कृष्णाभ्यां नमः धूपं आ० ।

दीपम्— ज्योतिषां पतये तुभ्यं नमः कृष्णाय वेधसे ।
गृहाण दीपकं विष्णो त्रैलोक्य तिमिरापह ॥
श्री राधा कृष्णाभ्यां नमः दीपं प्र० ।

नैवेद्यम्—सुदिव्यान्नममृतं रसैः षड्भिः समन्वितम् ।
श्री कृष्ण सत्यभामेश नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् ॥
श्री राधा कृष्णाभ्यां नमः नैवेद्यं सम० ।

ताम्बूलम्— पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लैः समन्वितम् ।
लवंगादि युतं दिव्यं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ॥
श्री राधा कृष्णाभ्यां नमः ताम्बूलपत्रं सम० ।

दक्षिणा—हिरण्य गर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् ।
स दाधार पृथिवीं द्यामुते मां कस्मै देवाय हविषा विधेम ।
श्री राधा कृष्णाभ्यां दक्षिणां सम० ।

प्रार्थना— स्वागतं देवदेवेश मद्भाग्यात् त्वमिहागतः ।
प्राकृतं त्वामहं दृष्ट्वा बालवत् परिपालय ॥
धर्मार्थ कामसिद्ध्यर्थं सर्वेषां च शुभासिनः ।
सान्निध्यं तु सदा कृष्ण स्वार्चायां परिपालय ।
यावच्चन्द्रावनी सूर्याः तिष्ठन्त्यप्रतिघातिनः ।
तावत् कृपास्तु देवेश स्वयं भक्त्याऽनुकम्पया ॥
भगवन् देवदेवेश त्वं पिता सर्वदेहिनाम् ।
येन रूपेण भगवन् त्वया व्याप्तं सचराचरम् ।
तेन रूपेण देवेश स्वार्चायां सन्निधोभव ॥

ततः तर्पणं कुर्यात्—ॐ केशवं तर्पयामि । माधवं० । गोविन्दं० । नारायणं० । विष्णुं त० । मधुसूदनं त० । त्रिविक्रमं त० । वामनं त० । श्रीधरं त० । हृषीकेशं त० । पद्मनाभं त० । दामोदरं तर्प० । संकर्षणं० । एतै० नामभिः संतर्प्य पुष्पाणि च निवेद्य—ततः पूर्णाहुत्यादि कर्म समाप्य कर्मेश्वरार्पणं कुर्यात् ।

ठइति राधाकृष्ण प्रतिष्ठा

अथ गणपति प्रतिष्ठा विधानम्

मण्डप पूजन आदि करने के पश्चात् प्रतिमा अधिवासन । प्रासादाधिवासन कार्य करके—गणपति के न्यासक्रम को करे ।

आचार्य मूलमन्त्र "ॐ गं गणपतये नमः" इस मन्त्र का दस बार जप कर—ॐ आत्वा हार्ष मन्तर भूर्ध्रुवस्तिंष्ठा विचाचलिः । विशस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु मा त्वद्राष्ट्रमधिभ्रशत ॥ य० १२ ।११ ॥

इस ध्रुवसूक्त से, पुरुष सूक्त से एवं गणपति गायत्री से व्याहृतिसहित गणपति की मूर्ति का प्रतिष्ठापन करके भूत शुद्धि करे ।

गणपति गायत्री—ॐ तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि, तन्नो दंतिः प्रचोदयात् ॥

न्यास—ॐ आमोदाय नमः शिरसि। प्रमोदाय० शिखायाम्। संमोदाय० भ्रुवो०। गणाधिपाय नमः भ्रूमध्ये। गलक्रीडाय० चक्षुषोः। गणनाथाय० नासिकायाम् गलक्रीडान्विताय० वदने। समुखाय० जिह्वायाम्। दुर्मुखाय० स्कन्धे। विघ्नेशाय० हृदये। विघ्ननाथाय० वक्षसि। गणनाथाय० बाहुयुग्मे। विघ्नकर्त्रे० उदरे ॥ विघ्न हर्त्रे० लिंगे। गजवक्त्राय० जंघायाम्। एकदन्ताय० नितंवे। लम्बोदराय० गुह्ये। व्यालयज्ञोपवीताय० पादयोः। जापकाय० जंघयो०। हारिद्राय० सर्वांगे।

अथ ध्यानम्—

गजाननं भूतगणादि सेवितं कपित्थजम्बूफल चारु भक्षणम्।
उमासुतं शोक विनाशकारकं नमामि विघ्नेश्वर पाद पंकजम् ॥

प्राण प्रतिष्ठा—ॐ अस्य प्राण प्रतिष्ठा मन्त्रस्य ब्रह्मविष्णु महेश्वराः ऋषयः ऋग्यजुः सामानि छन्दांसि प्राणप्रतिष्ठा शक्तिः देवता आं वीजं ह्रीं शक्तिः क्रों कीलकं गणपति प्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः।

ॐ आं ह्रीं क्रीं यं रं लं वं शं षं सं हं सौ स्त्रां सः तिष्ठतु स्वाहा। गणपति प्रतिमा के हृदय में अपने हाथ का स्पर्श कर मन्त्र जाप करे। गणपति प्रतिमा का ध्यान करे—ॐ अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च।

अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन ॥

प्राणप्रतिष्ठा के पश्चात् आचार्य गणपति के कान में गणेश गायत्री का उच्चारण करे।

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि, तन्नो दंतिः प्रचोदयात्।

स्वागतं देव-देवेश मद्भाग्यात् त्वमिहागतः।

सान्निध्यं सर्वदा देव स्वार्चायां परिकल्पय ॥

पश्चात् पंचरत्न प्रक्षिप्त कलश के जल से विधिवत गणदेवता की नाभि का अभिषेक कर गणपति को कूर्मासन प्रदान कर—दूर्वा, विष्णुक्रान्ता श्यामाक, पद्मपत्र, जिस कलश में डाली गई हो उस कलश के जल से आचार्य—ॐ आपोहिष्ठामयो भुवस्तान ऊर्ज्जे दधातन महेरणाय चक्षसे यो वः शिवतमो रसः तस्य भाजयतेह नः उशतीरिव मातरः ॥ तस्माऽरंग मामवो यस्य क्षयाय जिन्वथ आपोजनयथा च नः ॥

ॐ हिरण्य वर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्त्रजाम् चन्द्रां हिरण्यमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥१ ॥

ॐ तां म अ वह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् । यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥२ ॥

ह्रीं अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रबोधिनीम् । श्रियं देवि मुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम् ॥३ ॥

ॐ कांसोस्मितां हिरण्य प्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम् । पद्मे स्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥४ ॥

इन मन्त्रों से स्नान कराकर, नेत्रोन्मीलन करे—ॐ चित्रं देवाना-मुद्गादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्ने० । इस मन्त्र से ताम्र पात्र से ॐ मधुवाता ऋतायते इस मंत्र से मधु लेकर, ॐ घृतंमिमिक्षे० इस मन्त्र से घृत अभिमन्त्रित कर स्वर्ण की शलाका से अंजित कर प्रतिमा के आगे पायसभक्ष्य भोज्य दर्पण आदि दिखाए । प्रतिमा के आगे दण्डवत् प्रणाम करके प्रार्थना करे—

भगवन् देवदेवेश त्वं माता सर्वदेहिनाम् । त्वया व्याप्तमिदं सर्वं जगत् स्थावर जंगमम् । त्वमिन्द्रा पावकश्चैव यमो निर्ऋतिरेव च । वरुणो मातरः सोमः ईशानः प्रभुरव्ययः । येन रूपेण भगवन् त्वया व्याप्तं चराचरम् । तेन रूपेण देवेश अर्चायां सन्निधोभव ॥

अग्नि की स्थापना करके—नवग्रह आदि देवता के निमित्त हवन करके शान्तिक और पौंष्टिक मन्त्रों से हवन कर—गणपति स्वाहाकार मन्त्रों से हवन करे ।

ॐ आतू न इन्द्रवृत्रहन्नस्माकमर्द्धमागहि । महान् महीभिरूतिभिः स्वाहा ॥१ ॥

ॐ त्वमिन्द्र प्रतूर्तिष्वभि विश्वा असि स्पृधः । अशस्तिहा जनिता विश्वतूरसि त्वं तूर्य तरुष्यतः स्वाहा ॥२ ॥

ॐ अनु ते शुष्मन्तुरयन्तमीयतुः क्षोणी शिशुं न मातराः । विश्वास्ते स्पृधः श्नथयन्त मन्यवे वृत्रं यदिन्द्र तूर्वसि स्वाहा ॥३ ॥

ॐ यज्ञो देवानां प्रत्येति सुम्नमादित्यासो भवताः । मृडयन्तः आवोऽर्वाची सुमति ववृत्यादꣳहोश्चिद्या वरिवो वित्तरासत् स्वाहा ॥४ ॥

ॐ अदब्धेभिः सवितः पायुभिष्ट्व॑ शिवेभिरद्य परि पाहि नो गम्यम्। हिरण्य जिह्वः सुविताय नव्यसे रक्षा माकिर्नो अघश॑स ईशत स्वाहा ॥५ ॥

ॐ प्र वीरया शुचयो दद्रिरे वामध्वर्युभिर्मधुमन्तः सुतासः। वह वायो नियुतो याह्यच्छा पिवा सुतस्यान्धसो मदाय स्वाहा ॥६ ॥

ॐ गावः उपारतावतं मही यज्ञस्य रप्सुदा। उभा कर्णा हिरण्यया स्वाहा ॥७ ॥

ॐ काव्ययो राजानेषु क्रत्वा दक्षस्य दुरोणे। रिशादसा सधस्थ आ स्वाहा ॥८ ॥ य० ३३ ।६५ ।७२ ॥

इन आठों मन्त्रों से आहुति डालकर गणपत्यथर्वशीर्ष से आहुतियां डालें।

गणपत्यथर्वशीर्ष

(इन मन्त्रों से स्तुति करते हुए आहुतियां दें)

ॐ नमस्ते गणपतये। त्वमेव प्रत्यक्षं तत्त्वमसि। त्वमेव केवल कर्तासि। त्वमेव केवलं धर्तासि। त्वमेव केवलं हर्तासि। त्वमेव सर्वं खल्विदं ब्रह्मासि त्वं साक्षादात्मासि नित्यं स्वाहा ॥१ ॥

ऋतं वच्मि सत्यं वच्मि स्वाहा ॥२ ॥

अव त्वं माम्। अव वक्तारम्। अव श्रोतारम्। अव दातारम्। अव धातारम् अवाऽनूचानमव शिष्यम्। अव पश्चात्तात। अव पुरस्तात्। अवोत्तरात्। अव दक्षिणात्तात्। अव चोर्ध्वात्तात्। सर्वतो मां पाहि, पाहि समन्तात् स्वाहा ॥३ ॥

त्वं वाङ्मयस्त्वं चिन्मयस्त्वमानन्दमयस्त्वं ब्रह्ममयस्त्वं सच्चिदानन्दाद्वितीयोऽसि। त्वं प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वं ज्ञानमयो विज्ञानमयोऽसि स्वाहा ॥४ ॥

सर्वं जगदिदं त्वत्तो जायते। सर्वं जगदिदं त्वत्तस्तिष्ठति। सर्व जगदिदं त्वयि लयमेष्यति। सर्वं जगदिदं त्वयि प्रत्येति। त्वं भूमिरापोऽनलोऽनिलो नभः। त्वं चत्वारि वाक्पदानि स्वाहा ॥५ ॥

त्वं गुणत्रयातीतः त्वमवस्थात्रयातीतः त्वं देहत्रयातीतः। त्वं कालत्रयातीतः। त्वं मूलाधारस्थितोसि नित्यम्। त्वं शक्तित्रयात्मकः। त्वां

योगिनो ध्यायन्ति नित्यम्। त्वं ब्रह्मा त्वं विष्णुः त्वं रुद्रस्त्वमग्निस्त्वं सूर्यस्त्वं वायुस्त्वं चन्द्रमा त्वं ब्रह्मा भूर्भुवः स्वरोम् स्वाहा ॥६ ॥

गणादिं पूर्वमुच्चार्य वर्णादींस्तदनन्तरम्। अनुस्वारः परतरः अर्धेन्दुलसितम्। तारेण रुद्धम्। एतत्तव मनुस्वरूपम्। मकारः पूर्वरूपम्। अकारो मध्यमरूपम्। अनुस्वारश्चान्त्य रूपम्। विन्दुरुत्तररूपम्। नादः सन्धानम्। सं॒हिता सन्धिः। सैषा गणेश विद्या। गणक ऋषिः। निचृद्गायत्री छन्दः। गणपति देवता गं गणपतये नमः स्वाहा ॥७ ॥

एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्तिः प्रचोदयात् स्वाहा ॥८ ॥

एकदन्तं चतुर्हस्तं पाशमंकुश धारिणम्। अभयं च वरदं हस्तैर्विभ्राणं मूषकध्वजम्। रक्तं लम्बोदरं शूर्पकर्णकं रक्त वाससम्। रक्त गन्धानुलिप्तांगं रक्त पुष्पैः सुपूजितम्। भक्तानुकम्पिनं देवं जगत्कारणमच्युतम्। आविर्भूतं सृष्ट्यादौ प्रकृतेः पुरुषात् परम्। एवं ध्यायन्ति यो नित्यं स योगी योगिनां वरः स्वाहा ॥९ ॥

नमो व्रातपतये नमो गणपतये नमः प्रमथपतये नमस्तेऽस्तु लम्बोदराय एकदन्ताय विघ्ननाशिने शिवसुताय वरद मूर्तये नमः स्वाहा ॥१० ॥

एतदर्थशीर्षं योऽ धीते सो ब्रह्मभूयाय कल्पते सः सर्वविघ्नैः न वाध्यते सःसर्वत्र सखमेधते। स पञ्चमहापापात् प्रमुच्यते। सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति। प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति। सायं-प्रातः प्रयुञ्जानो अपापो भवति। सर्वत्राधीयानोऽपविघ्नो भवति। धर्ममर्थं कामं मोक्षं च विन्दति। इदमथर्वशीर्षमशिष्याय न देय़म्। यो यदि मोहाद् दास्यति स पापीयान् भवति। सहस्रावर्तनाद् यं-यं काममधीते तं तमनेन साधयेत् स्वाहा ॥११ ॥

अनेन गणपतिमभिषिञ्चति स वाग्मी भवति। चतुर्थ्यामनश्नन् जपति स विद्यावान् भवति। इत्यथर्वण वाक्यम्। ब्रह्माद्यावरणं विद्यान्न विभेति कदाचनेति स्वाहा ॥१२ ॥

यो दूर्वांकुरैः यजति स वैश्रवणोपमो भवति । यो लाजैः यजति स यशोवान् भवति। स मेधावान् भवति। यो मोदक सहस्रेण यजति स वाञ्छितं फलमवाप्नोति यः साज्यं समिद्भिः यजति स सर्वं लभते स्वाहा ॥१३ ॥

अष्टौ ब्राह्मणान् सम्यग् ग्राहयित्वा सूर्यवर्चस्वी भवति । सूर्यग्रहे महानद्यां प्रतिमासन्निधौ वा जप्त्वा सिद्धमन्त्रो भवति। महाविघ्नात् प्रमुच्यते। महादोषात् प्रमुच्यते महाप्रत्यवायात् प्रमुच्यते । स सर्वविद् भवति य एवं वेद स्वाहा ॥१४ ॥

तदनन्तर ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा ।

इसके पश्चात् गणपति का षोडशोपचार पूजन करे—

आवाहन—ॐ गणानांत्वा गणपति ꣳ हवामहे० ...... ।

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात। स भूमि ꣳ सर्वतस्पृत्वा त्यतिष्ठद्दशांगुलम् । आवाहयामि गणनाथमुमासुतं तं सिन्दूर शोण वपुषं गजवक्त्र शोभम् ।

दुर्गां च तस्य जननीं हरिपृष्ठसंस्थां भक्त्याह्वयामि सुतहार्द गलकुचाढ्याम् । श्री गणपतये नमः ।

आसनम्—ॐ पुरुष एवेद ꣳ सर्वं यद्भूतं यच्चभाव्यम् । उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनाति रोहति ॥

आविहिताय च ददामि यथा स्वशक्तिः, स्वर्णासन मणिमय कुसुमासनं वा । एकेन दन्तममलेन विराजमानो गृह्णातु भक्तिनिहितं सदयाम्बिका च ॥ पुष्पासनं स० ।

पाद्यम्—एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पुरुषः। पादोऽस्य विश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥

पादार्थमेतदुकं सुरसिन्धुरेवागोदादाशतद्रु सरयू-यमुनादिकाभ्यः । भक्त्याऽक्षतसुरभि वस्तुभिरामद्यम्बु प्रीत्या गृहाण सदयं स विनायको मे । पाद्यं स० ।

अर्घ्यम्—पाद्य समर्पित करने के पश्चात्—एला-लवंग-कर्पूर-मिश्रित जल से अर्घ्य प्रदान करें ।

अर्घ्यम्—त्रिपादूर्ध्व उदैत पुरुषः पादोऽस्येहा भवत्पुनः। ततो विश्वं व्यक्रामत् साशनानशने अभि॥

अर्घ्यं गृहाण मम देव तथाम्व मह्यं, प्रीतौ सदा प्रमुदितौ भवतां भवन्तौ।

अष्टांग मध्यमुदितं मुनिभिः पुराणैः भक्त्या मया तु विहितं जलमात्रमेव। गणपतये नमः अर्घ्यं स०।

आचमनम्—ततो विराडजायत विराजोऽधिपूरुषः। सजातो अत्यरिच्यत पश्चाद् भूमि मिथो परः॥ गणपतये नमः। आचमनीय स०।

स्नानम्—तस्माद्यज्ञात् सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे। छन्दा ᳪ सि जज्ञिरे तस्माद्यजु स्तस्मादजायत्। गणपतये नमः स्नानं स०।

वस्त्रम्—तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः। गावोह जज्ञिरे तस्मात् तस्माज्जाता अजावयः॥ गणपतये नमः वस्त्रं सम०।

यज्ञोपवीतम्—तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रतः। तेन देवा अयजन्त साध्याः ऋषयश्च ये॥ गणपतये नमः यज्ञोपवीतं सम०।

गन्धम्—यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्। मुखं किमस्यासीत् किम्बाहु किमूरुपादा उच्येते॥ गणपतये नमः गन्ध०।

अक्षतम्—ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद बाहुराजन्यः कृतः। उरु तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्याᳪ शूद्रो अजायत॥ गणपतये नमः अक्षतान् स०।

पुष्पमालाम्—चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्य्योऽजायत। श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत। गणपतये नमः पुष्पं स०।

धूपम्—नाभ्या आसीदन्तरिक्ष ᳪ शीर्ष्णो द्यौः समवर्त्तत। पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात् तथा लोकां-२ अकल्पयन्॥ गणपतये नमः धूपं प्र०।

दीपम्—यत्पुरुषेण हविषा देवाः यज्ञमतन्वत। वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः। गणपतये नमः ताम्बूलं स०। गणपतये नमः दीपं प्र०।

नैवेद्यम्—ॐ गणानां त्वा गणपतिᳪ हवामहे प्रियणान्त्वाप्रियपतिᳪ हवामहे निधिना न्त्वा निधि पतिᳪ हवामहे—वसो मम आहम जानि गर्भधमात्वमजासि गर्भधम्॥ गणपतये नमः। नैवेद्यं सम०।

ताम्बूलम्—तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः संभृतं पृषदाज्यम्। पशूंस्तांश्चक्रे वायव्या नारण्या ग्राम्याश्च ये। गणपतये नमः ताम्बूलं स०।

दक्षिणा—हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्। स दाधार पृथिवीं द्यामुते मां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ गणपतये नमः दक्षिणाद्रव्यं स०।

नीराजनम्—सप्तास्यासन् परिधया त्रिसप्त समिधाः कृतः। देवाः यद्यज्ञम् तन्वानः अवध्नन् पुरुषं पशुम्।

ॐ हिरण्य गर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्। स दाधार पृथिवीं द्यामुते मां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥१॥

ॐ य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः। यस्य छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥२॥

ॐ यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो वभूव। य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥३॥

ॐ यस्ये मे हिमवन्तो महित्त्वा यस्य समुद्रं रसया सबाहुः। यस्येमाः प्रदिशो यस्य बाहुः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥४॥

ॐ येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्व स्तभितं येन नाकः। यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥५॥

ॐ यं क्रन्दसी अवस तस्तभाने अभ्यैक्षेतां मनसा रेजमाने। यत्राधि सूर उदितो विभाति कस्मै देवाय हविषा विधेम॥६॥

ॐ आपो ह यद्वृहती विश्वमायन् गर्भं दधाना जनयन्तीरग्निम्। ततो देवानां समवर्ततासुरेकः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥७॥

ॐ यश्चिदापो महिनां पर्यपश्यद् दक्षं दधाना जनयन्तीर्यज्ञम्। यो देवेष्वधि देव एक आसीत् कस्मै देवाय हविषा विधेम॥८॥

इन मन्त्रों से आठ दीपक जला कर आरती करे।

पुष्पांजलि— यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥
पुष्पांजलिं सम० गणपतये नमः।

अभिषेकः

सपत्नीक यजमान् पूर्व स्थापित कलशों से जल लेकर आम्रपल्लवों से मूर्ति पर अभिषेक करे—

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनो र्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् । सरस्वत्यै वाचो यन्तुर्यन्त्रेणाग्ने साम्राज्येनाभिषिञ्चामि ॥२ ॥

देवस्त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् । अश्विनौ भैषज्येन तेजसे ब्रह्मवर्चसायाभिषिञ्चामि सरस्वत्यै भैषज्येन वीर्यायान्नांद्याया भिषिञ्चामीन्द्रस्येन्द्रियेण बलाय श्रियै यशसेऽभिषिञ्चामि ॥३ ॥

शिरो मे श्रीर्यशो मुख त्विषिः केशाश्च श्मश्रूणि । राजा मे प्राणो अमृत७सम्राट् चक्षुर्विराट् श्रोत्रम् ॥४ ॥

जिह्वा भद्रं व्याङ्मोह मनो मन्युः स्वराड् भाम । मोदा प्रमोदा अंगुलीरंगानि मित्रं मे सह ॥५ ॥

बाहु मे बलमिन्द्रिय७हस्तौ मे कर्म्म वीर्यम् । आत्मा क्षत्रमुरोमम ॥६ ॥

पृष्ठीर्मे राष्ट्रमुदरम७सौ ग्रीवाश्च श्रोणी । ऊरू अरत्नी जानुनी विशो मेऽङ्गानि सर्वतः ॥७ ॥

नाभिर्मे चित्तं विज्ञानं पायुर्मेऽपचितिर्भसत् । आनन्दनन्दा वाण्डौ मे भगः सौभाग्यं पसः । जंघाभ्यां पद्भ्यां धर्मोऽस्मि विशि राजा प्रतिष्ठितः ॥८ ॥

प्रतिक्षत्रे प्रति तिष्ठामि राष्ट्रे प्रति प्रत्यश्वेषु प्रति प्रतिष्ठामि गोषु । प्रत्यंगेषु प्रतितिष्ठाम्यात्मन् प्रति प्राणेषु प्रतितिष्ठामि । पुष्ठे प्रति द्यावा पृथिव्योः प्रतितिष्ठामि यज्ञे ॥९ ॥

त्रया देवा एकादश त्रयस्त्रिंशाः सुराधसः । वृहस्पतिः पुरोहिता देवस्य सवितुः सवे । देवा देवैरवन्तु मा ॥१० ॥

प्रथमा द्वितीयैः द्वितीयस्तृतीयैस्तृतीयाः सत्येन सत्यं यज्ञेन यज्ञो यजूंषि **सामभिः सामान्यृग्भिः ऋचेः** पुरोऽनुवाक्याभिः पुरोऽनुवाक्या याज्याभिर्याज्या **वषट्कारैर्व**[illegible]**ट्कारा** आहुतिभि राहुतयो मे कामान् समदर्धयन्तु भूः **स्वाहा ॥११ ॥**

धामच्छदग्निरिन्द्रो ब्रह्मा देवो वृंहस्पतिः। सचेतसो विश्वे देवा यज्ञं प्रावन्तु नः शुभेः ॥१२॥

त्वं यविष्ठ दाशुषो नृः पाहि शृणुधि गिरः रक्षा तोक मुत्मना ॥१३॥

आपोहिष्ठा मयो भुवस्तान ऊर्जे दधातन। महेरणाय चक्षसे ॥१४॥

यो वः शिव तमो रसस्तस्य भाजयतेह नः। उशतीरिवमातरः ॥१५॥

तस्मा अरंग माम वो यस्य क्षयाय जिन्वथः आपोजनयथा च न ॥१६॥

द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष७शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः सान्तिरौषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिः ब्रह्मशान्तिः सर्व७ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधिः ॥१७॥

यतो यतः समीहसे ततो नो अभयं कुरु। शन्नः कुरु प्रजाभ्यो अभयं न पशुभ्यः ॥१८॥

पुनन्तु मा देवजना पुनन्तु मनसाधियः। पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा ॥१९॥

आप्यायस्व समेतु विश्वतः सोम वृषण्यम्। भवावाजस्य संगथे ॥२०॥

पंचनद्यः सरस्वती मपियन्ति सस्रोतसः। सरस्वती तु पञ्चधा सोदेशे अभवत्सरित ॥२१॥

ॐ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद् भद्रं तन्न आसुव ॥२२॥

अमृताभिषेकोऽस्तु ॥

पूर्णाहुति डालकर कार्य की निर्विघ्नता के लिए प्रार्थना करे।

इति गणपति प्रतिष्ठा

कालिका प्रतिष्ठा प्रयोग

किसी भी शुभ दिन में यजमान स्नानादि कार्यो से निवृत्त होकर आचमन एवं प्राणायाम करके शुभ आसन पर सपत्नीक पूर्वाभिमुख बैठ कर अपने ऊपर एवं सामग्री पर जल छिड़क कर शान्ति पाठ करके संकल्प करें—

संकल्प—ॐ अस्यां कालिका प्रतिमायां देवतासान्निध्यर्थं दीर्घायुर्लक्ष्मी सर्वकार्य समृद्ध्यर्थं अक्षयसुख प्राप्तिकामः कालिकायाः

अचलप्रतिष्ठां करिष्ये । तत्रादौ निर्विघ्नता सिद्ध्यर्थं महागणपति पूजनं, स्वस्ति पुण्याहवाचनं, मातृकापूजनं, नान्दी श्राद्धं आचार्यादिवरणं च करिष्ये ।

गणपत्यादि पूजन करने के पश्चात् आचार्य का वरण करे—

ॐ अद्य अमुक गोत्रोऽमुक **शर्माहं** अमुक गोत्रं अमुकशर्माणं अमुक शाखाध्यायिनं ब्राह्मणं अस्मिन् **कालिका** प्रतिमायाः अचलप्रतिष्ठायां आचार्यत्वेन त्वामहं वृणे ।

संकल्प के पश्चात् आचार्य के हाथ में यजमान फल आदि देकर गन्धादि से पूजन करते हुए आचार्य को प्रार्थना करे—

आचार्यस्तु यथा स्वर्गे शक्रादीनां बृहस्पतिः ।
तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन्नाचार्यो भव सुव्रत ॥

आचार्य से प्रार्थना के पश्चात् आचार्य कालिका की अचल प्रतिष्ठा कर्म को प्रारम्भ करें—

पक्ष में कुण्ड मण्डप का निर्माण कर अथवा छाया मण्डप बनाकर निम्न मन्त्रों का उच्चारण करते हुए आचार्य उदुम्बर के पत्ते और दूर्वा के जलों से प्रोक्षण करें—

ॐ आपो हिष्ठा मयोभुवस्तान ऊर्ज्जे दधातन महेरणाय चक्षसे ॥

ॐ शं न इन्द्राग्नी भवता मवोभिः शन्न इन्द्रावरुणारात हव्या ॥ शन्न इन्द्रापूषणावाज सातौ शमिन्द्रासोमा सु विताय शंय्योः ॥

तत्पश्चात् आचार्य निम्न श्लोकों का उच्चारण करते हुए प्रादेशान्त कर्म को करावे—

यदत्र संस्थितं भूतं स्थानमाश्रित्य सर्वदा ।
स्थानं त्यक्त्वा तु तत्सर्वं यत्रस्थं तत्र गच्छतु ॥
अपसर्पन्तु ये भूता ये भूताः भूमि संस्थिताः ।
ये भूता विघ्नकर्त्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥

प्रादेशान्त कर्म की समाप्ति के पश्चात् आचार्य निम्न क्रमानुसार विधिविधान से पञ्चगव्य बहावे—

आचार्य गायत्री मन्त्र पढ़ कर गोमूत्र "गन्ध द्वारा" इस मन्त्र से गोबर, आप्यायस्व इस मन्त्र से दूध, दधिक्राव्णो इस मन्त्र से दधि "घृतंमिमिक्षे" इस मंत्र से घृत "आपोहिष्ठा"

इस मन्त्र से कुशोदक एक पात्र में लेकर "प्रणव" का उच्चारण करते हुए **यज्ञ काष्ठ से** मिलावे तथा प्रणव मन्त्र से ही उसे अभिमन्त्रित करे ।

तत्पश्चात् निम्न मन्त्र का उच्चारण करते हुए पञ्चगव्य को दिशाओं में भूमि में और अन्तरिक्ष में छिड़के—

आपो हिष्ठामयो भुवस्तान ऊर्ज्जे दधातन महेरणाय चक्षसे ॥

उपर्युक्त कर्म की समाप्ति के पश्चात् यजमान मूर्त्ति का निर्माण करने वाले शिल्पी का संस्कार अर्थात् उसे द्रव्यादि से प्रसन्न करके उससे मूर्ति ले आवे ।

तत्पश्चात् निम्न मन्त्रों के द्वारा आचार्य जलाधिवास कर्म को करावे—

अवतेहेडो वरुण नमोभिरव यज्ञेभिरीमहे हविर्भिः । क्षयन्नस्मभ्य सुरप्रचेता राजन्नेनांसि शिश्रथः कृतानि ॥

उदुतमं वरुण पाशमस्मद बाधमं विमध्यमं श्रथाय । अथावयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम् ॥

जलाधिवास कर्म की समाप्ति के अनन्तर आचार्य यजमान से निम्न प्रार्थना करवाये ।

स्वागतं देव देवेश विश्वरूप नमोऽस्तु ते ।
श्रद्धेऽपि त्वदधिष्ठाने शुद्धिं कुर्मः सहस्व भोः ॥

भूतशुद्धि आदि तथा निम्नलिखित मातृकान्यास-पुरुषसूक्तन्यास करे ।

मातृकान्यासः

अं नमः तालुके । आं नमः मुखे । इं नमः दक्षिणनेत्रे । ईं नमः वामनेत्रे । उं नमः दक्षिण श्रोत्रे । ऊं नमः वाम श्रोत्रे । ऋं नमः दक्षिण गंडे । ॠं नमः वाम गंडे । लृं नमः दक्षिण चिबुके । लॄं नमः वाम चिबुके । एं नमः ऊर्ध्वदशनेषु । ऐं नमः अधोदशनेषु । ओं नमः ऊर्ध्वोष्ठे । औं नमः अधरोष्ठे । अं नमः ललाटे । अः नमः जिह्वायां । यं नमः त्वचिरं चक्षुषोः । लं नमः नासिकाभ्याम् । वं नमः दशनेषु । शं नमः श्रोत्रयोः । षं नमः उदरे । सं नमः कटिदेशे । हं नमः हृदये । क्षं नमः नाभ्यां । कं नमः लिंगे । पं फं बं भं मं नमः दक्षिणबाहौ । तं थं दं धं नं नमः वामबाहौ । टं ठं डं ढं णं नमः दक्षिणजंघायां । चं छं जं झं ञं नमः वामजंघायां । कं खं गं घं ङं नमः सर्वांगुलीषु ।

इति मातृका न्यासः

पुरुषसूक्त न्यासः

सहस्त्रशीर्षा० पादयोः। पुरुषएवे० जंघयोः। एतावानस्य० जान्वोः। त्रिपादूर्ध्व० उर्वोः। तस्माद्विराट्० वृषणयोः। यत्पुरुषेण० कट्योः। तस्माद्यज्ञात्० हृदि। तस्माद्यज्ञात्० स्तनयोः। तस्मादश्वा० वाह्वोः। यत्पुरुषं० मुखे। ब्राह्मणोऽस्य० चक्षुषोः। चन्द्रमामनसो० कर्णयोः। नाभ्या आसीत्० भ्रुवोः। सप्तास्यासन्० भाले। यज्ञेनयज्ञ० शिरसि। यत्पुरुषं० हृदयायनमः। ब्राह्मणोस्य० शिरसे स्वाहा। चन्द्रमामनसो० शिखायै वषट्॥ नाभ्या आसीत्० कवचाय हुं। सप्तास्यास० नेत्रत्रयायवौषट्॥ यज्ञेनयज्ञ० अस्त्रायफट्।

इति पुरुष सूक्त न्यासः

इस प्रकार अपने शरीर में न्यासों को करके कालिका देवी की मूर्ति में न्यासों को करें—वे न्यास नीचे क्रमानुसार दिए जा रहे हैं—

सर्व प्रथम पूर्वोक्त मातृका न्यास करे। फिर यथा क्रम आगे दिए हुए न्यासों को करें—

निवृत्यादि न्यासः

अं ह्रीं अनिवृत्यै नमः शिरसि। आं प्रतिष्ठायै नमः मुखे। इं विद्यायै नमः दक्षिणनेत्रे। ई शांत्यै नमः वामनेत्रे। उं इंधिकायै नमः दक्षिणश्रोत्रे। ऊं दीपिकायै नमः वामश्रोत्रे। ऋं रेचिकायै नमः दक्षनासापुटे। ॠं मोचिकायै नमः वामनासापुटे। लृं परादक्षायै नमः कपोले। ॡं सूक्ष्मायै० नमः वामकपोले। एं सूक्ष्मामृतायै० नमः ऊर्ध्वदन्तेषु। ऐं ज्ञानामृतायै० नमः अधोदंतेषु। ओं सावित्र्यै० नमः ऊर्ध्वोष्ठे। औं व्यापिन्यै० नमः अधरोष्ठे। अं सुरूपायै० नमः जिह्वायां। अः अनंतायै० नमः कण्ठे। कं सृष्ट्यै नमः दक्षबाहुमूले॥ खं ऋध्यै० नमः दक्षकपूरि। गं स्मृत्यै० नमः दक्ष मणिबन्धे। घं मेधायै० नमः वामबाहुमूले। ङं कान्त्यै नमः दक्ष अंगुल्यग्रेषु। चं लक्ष्म्यै नमः वामबाहुमूले। छं द्युत्यै नमः वाम कपूरि। जं स्थिरायै० नमः वामपाणिवन्धे। झं स्थित्यै नमः वामांगुलिमूलेषु। ञं सिध्यै नमः वामांगुल्यग्रेषु। टं जरायै नमः दक्षपाद मूले। ठं पालिन्यै नमः दक्षजानुनि०। डं शांत्यै नमः दक्षगुल्फे। ढं ऐश्वर्यै नमः दक्षमूले०। णं रत्यै० दक्षांग्रेषु। तं कामिन्यै नमः० वाममूले। थं रदायै नमः० वामजानुनि। दं ह्लादिन्यै० नमः वामगुल्फे। धं प्रीत्यै० नमः वाममूले। नं दीर्घायै

नमः वामांगुल्यग्रेषु०। पं तीक्ष्णायै नमः दक्षिणकुक्षौ०। फं सुमत्यै० नमः वामकुक्षौ। बं अमायै० नमः पृष्ठे। भं निद्रायै नमः नाभौ०। मं तन्द्रयै नमः उदरे०। यं शुद्धायै नमः हृदि०। रं क्रोधिन्यै नमः कंठे। लं कृपायै नमः ककुदि०। वं उल्कायै नमः स्कन्धयोः०। शं मृत्यवे नमः दक्षकरे०। षं पीतायै नमः वामकरे०। सं श्वेतायै नमः दक्षपादे। हं अरुणायै नमः वामपादे। त्रं असितायै नमः मूर्धादिपादान्तं। क्षं सर्वसिद्धिगौर्यै नमः पादादिमूर्धांतम्।

॥ इति निवृत्यादि न्यासः ॥

वशिन्यादि न्यासः

अं आं अः ब्लूं वशिनी वाग्देवतायै-ब्रह्मरन्ध्रे।

कं ङं कल्हीं कामेश्वरी वाग्देवतायै-ललाटे।

चं ञंन्कीं मोदिनी वाग्देवतायै-भ्रूमध्ये।

टं णं ब्यूं विमलावा वाग्देवतायै-कण्ठे।

तं नं भ्रीं अरुणा वाग्देवतायै-हृदि।

पं मं हस्लव्यूं जयिनी वाग्देवतायै-नाभौ।

यं रं लं वं हस्ल्यूं सर्वेश्वरी वाग्देवतायै-आधारे।

शं संक्ष्म्रीकौली वाग्देवतायै-सर्वांगे।

इति वशिन्यादि न्यासः

आयुध-न्यासः

ततः खड्गाय-पादादिशिरः पर्यन्तम्।

इसके पश्चात् सद्यकृत शिरसे० सिर से पाद पर्यन्त।

इत्यायुध न्यासः

इसके पश्चात् काली देवी के मूल मन्त्र का न्यास मन्त्र आचार्य से जानकर ही यजमान करे।

तत्पश्चात् क्रां इत्यादि दीर्घ बीज से करांङ्गुली न्यास करने के पश्चात् यजमान षडंग न्यास कर देवताओं का ध्यान करे।

स्योना पृथिविनो भवान्नृक्षरा निवेशनी। यच्छा नः शर्म्म सप्रथाः॥

उपर्युक्त मन्त्र का उच्चारण कर मूर्ति को बाराह मिट्टी से शुद्ध करके मूर्ति के उत्तर भाग में स्थण्डिल का निर्माण कर उसके चारों कोनों पर चार कलश स्थापित कर प्रथम कलश में सप्तमृत्तिका, द्वितीय कलश में क्षीरवृक्षत्वक्, तृतीय कलश में यवशाली, चतुर्थ कलश में गन्ध पुष्प डालकर 'आपोहिष्ठा' आदि मन्त्रों से अलङ्कृत करे।

आपोहिष्ठा मयोभुवस्तान उर्ज्जे दधातन। महेरणाय चक्षसे॥

तत्पश्चात् उपर्युक्त मन्त्र का उच्चारण करते हुए आचार्य यजमान से प्रथम कलश के जल से मूर्ति का अभिषेक कराए।

योवः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः उशतीरिव मातरः॥

पुनः उपर्युक्त मन्त्र का उच्चारण करते हुए आचार्य यजमान से द्वितीय कलश के जल से मूर्ति का अभिषेक करावे—

तस्मा अरंगमामवो यस्य क्षयाय जिन्वथ।

आपो जनयथा च नः

द्वितीय कलश के जल से अभिषेक करवाने के पश्चात् आचार्य पुनः उपर्युक्त मन्त्र का उच्चारण करते हुए यजमान से तृतीय कलश के जल से मूर्ति का अभिषेक करावे—

शन्नो देवी रभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंय्योरभिस्त्रवन्तु नः॥

उपर्युक्त मन्त्र का उच्चारण करते हुए आचार्य यजमान से चतुर्थ कलश के जल से मूर्ति का अभिषेक करावे।

उद्वर्तन द्रव्य यह है—

१. चंदन, २. कर्पूर, ३. इलायची, ४. काचौर, ५. उशीर, ६. शतपत्र, ७. भद्रमुश्ता।

इनको चूर्णकर दुग्ध में मिलाकर निम्न मन्त्र का उच्चारण करते हुए दश बार अभिमन्त्रित करे—

मन्त्रः—या सा चन्द्रचूडनीलकंठ जटाजूट वृत सुशींता मोदवाहना रुतांगप्रत्यंगावयवा—तुभ्य एतन् मूर्ते निष्काश्य दाहं तापं शमय शमय सुशीतलत्वं कुरु-कुरु देहि-देहि यां सां स्वाहा॥

अभिमन्त्रित करने के पश्चात् आचार्य निम्न मन्त्र का उच्चारण करते हुए यजमान से मूर्ति में उद्वर्तन लगवाए—

या ओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा। मनैनु बभ्रूणामहं शतं धामानि सप्त च॥

विशेष—कालिका प्रतिष्ठा में अग्न्युत्तराण कर्म कृता-कृत है ।

उपर्युक्त कर्म के पश्चात् आचार्य निम्न अनुवाक्य का उच्चारण यजमान से करवाते हुए मूर्ति पर जलधारा गिरावे ।

अनुवाक्य—पवमान सुवर्जनः ।

तत्पश्चात् यजमान से पायस बलि प्रदान करवाएं ।

पायस बलि प्रदान करवाने के पश्चात् जलपूर्ण वस्त्रावेष्टित तथा आम्रपल्लव विभूषित आठकलशों को आचार्य निम्न मन्त्रों का उच्चारण करते हुए यजमान से आठों दिशाओं में क्रमानुसार स्थापित करवाये—

१. हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्। स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

२. य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः । यस्य छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

३. यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो वभूव । य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम् ॥

४. यस्येमे हिमवन्तो महित्वा यस्य समुद्रं रसया सहाहुः यस्येमाः प्रदिशो यस्य बाहु कस्मै देवाय हविषा विधेम् ॥

५. येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढहा येन स्वः स्तभितं येन नाकः । यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम् ॥

६. यं क्रन्दसी अवसा तस्तभाने अभ्यैक्षेतां मनसा रेजमाने । यत्राधि सर उदितो विभाति कस्मै देवाय हविषा विधेम् ॥

७. आपो ह यद्वृहतीविश्वमायन् गर्भं दधाना जयन्तीरग्निम्। ततो देवानां समवर्ततासुरेकः कस्मै देवाय हविषा विधेम् ॥

८. यश्चिदापो महिना पर्यपश्यद् दक्षं दधाना जनयन्तीर्यज्ञम्। यो देवेष्वपि देव एक आसीत् कस्मै देवाय हविषा विधेम् ॥

आठों दिशाओं में आठों कलशों को स्थापित करने के पश्चात् आठ दीपकों को प्रज्वलित कर पास में रखे । पश्चात् किसी तेजस पात्र में घृत और शहद मिलाकर स्वर्ण (सोने) की शलाका से मूर्ति के दक्षिण नेत्र का उन्मीलन आचार्य निम्न मन्त्र का उच्चारण करते हुए यजमान के द्वारा करवाये—

चित्रं देवानामुद्गादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः ॥

उपर्युक्त कर्म की समाप्ति के पश्चात् आचार्य निम्न मन्त्र का उच्चारण करे—

यजिष्ठं त्वां ववृमहे देवं देवत्रा होतारममर्त्यम् अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम् ॥८ ।१९-३ ॥

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनो र्वाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् । सरस्वत्यै वाचो यन्तुर्यान्त्रिये दधामि, वृहस्पतेष्ट्वा साम्राज्येनाभि षिञ्चाम्यसौ । ।

तत्पश्चात् यजमान शलाका को जल से स्वच्छ करे और मधु लेकर मूर्ति के वामनेत्र का उन्मीलन करे, वामनेत्र के उन्मीलन के समय आचार्य निम्न वैदिक मन्त्र का उच्चारण करें—

निम्न क्रम से तीन मन्त्रों का उच्चारण करें—

१. सुपर्णा वाचमिक्रचतोप द्रव्या खरे कृष्णा इषिरा अनर्तिषुः यन्त्युपरस्य निष्कृतिं पुरुरोते दधिरे सूर्याश्रितः ।

२. उद्वयं तमसस्परि ज्योतिषा पश्यन्त उत्तरम् । देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योति रुत्तमम् ।

३. चित्रं देवानामुगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः ॥ऋ० १ ।५० ।१० ॥

उपर्युक्त वैदिक मन्त्रों का उच्चारण आचार्य उस समय करें जब सामने कोई भी न रहे ।

तत्पश्चात् देवी को अन्न राशि और दर्पण दिखावें, मन्त्र घोष एवं वाद्य घोष करें ।

उपर्युक्त कर्म की समाप्ति के पश्चात् यजमान, आचार्य सहित अन्य ब्राह्मणों की पूजा करे एवं उसके पश्चात् देवी को शयन करावे ।

उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवयन्तस्त्वेमहे । उप प्र यन्तु मरुताः सुदानव इन्द्र प्राशूर्भवा स च ॥ऋ० १ ।४० ।१ ॥

उपर्युक्त मन्त्र का उच्चारण आचार्य प्रतिष्ठा स्थल पर देवी को शयन निद्रा से जागृत करें ।

पुनः निम्न मन्त्रों का उच्चारण करते हुए देवी को स्नान करावे—

समुद्रज्येष्ठाः सलिलस्य मध्यात् पुनाना यन्त्यनिविशमानाः । इन्द्रो या वज्रो वृषभो रराद ता आपो देवीरिह मामवन्तु ॥७ ।४९ ।९ ॥

या आपो दिव्या उत वा स्त्रवन्ति खनित्रिमा उत वा याः स्वयंजाः । समुद्रार्था याः शुचयः पावकास्ता आपोदेवीरिह मामवन्तु ॥२ ॥

या सां राजा वरुणो याति मध्ये सत्यानृते अवपश्यञ्जनानाम् । मधुश्च्युतः शुचयो याः पावकास्ता आपोदेवीरिह मामवन्तु ।

यासुराजा वरुणो यासु सोमो विश्वेदेवा या सूजं मदन्ति । वैश्वानरो या स्वग्निः प्रविष्टन्तां आपो देवीरिह मामवन्तु ॥३ ॥

देवी के स्नान के पश्चात् निम्न मन्त्र का उच्चारण करते हुए आचार्य वस्त्र युग्म से आच्छादित करें—

अभिवस्त्रा सुवानान्यर्षाऽभिधेनुः सुदुधाः पूयमानः । अभिचन्द्रा भर्तवे नो हिरण्याऽभ्यश्वान् रतिथन देव सोम ॥९ ।९७ ।५० ॥

आचार्य निम्न मन्त्र का उच्चारण करते हुए यजमान से मूर्ति के दाहिने हाथ ये श्वेत ऊनी धागों को बंधवाएं—

कनिक्रदज्जुनुषं प्रब्रुवाण इयर्ति वाचमरितेव नावम् । सुमङ्गलश्च शकुने भवासि मा त्वा काचिदभिमा विश्व्या विदत् ॥

मूर्ति के दाहिने हाथ में श्वेत ऊनी धागा बंधवाने के पश्चात् आचार्य स्वयं भी और यजमान से भी पुरुषसूक्त के मन्त्रों का उच्चारण करवाकर देवी की स्तुति करावे ।

पश्चात् आचार्य देवी की भूतशद्धि करावे ।

भूतशुद्धि के लिए निम्न दो मन्त्रों का उच्चारण क्रमानुसार करें—

१. विश्वकर्मन् हविषा वावृधानः स्त्रयं यजस्य पृथिवी मुतद्याम् । मुहावन्वये अभितो जनास इहास्माकं मघवा सूरिरस्तु ॥

२. हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । स दाधार पृथिवीं द्यामुते मां कस्मै देवाय हविषा विधेम् ॥

पुनः भूतशुद्धि के लिए 'इयममाप्रजाम्' इस मन्त्र का उच्चारण करें ।

तत्र मन्त्रः—यतो बुद्धयहंकारचित्तं पृथिव्यप्तेजो आकाश शब्द स्पर्श रूपरसगंध श्रोत्रत्वक् चक्षुर्जिह्वा घ्राणवाक् पाणिपाद पायूपस्थ जीव प्राणा इहागच्छथ सुखं चिरं तिष्ठ्तु स्वाहा ।

ओं आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं हं सः सोऽहं इति ॥

यजमान के हाथ को देवी के मस्तक पर रखवाकर उपर्युक्त मन्त्रों का उच्चारण आचार्य स्वयं तीन बार करें ।

प्राण-प्रतिष्ठा

तदनन्तर काली देवी के शिर या हृदय को स्पर्श कर प्रतिष्ठा करें—

अस्य प्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्म-विष्णु-रुद्रा ऋषयः ऋग्यजुः सामानि छन्दांसि । क्रियामयवपुः प्राणाख्या देवता, ओं बीजं, ह्रीं शक्तिः, क्रों कीलकं, प्राणप्रतिष्ठायां विनियोगः ।

इसके पश्चात् ऋष्यादियों का निम्न क्रम से शिर-मुख-हृदय-नाभिगुह्य और पैरों में न्यास करें ।

ॐ ब्रह्मविष्णुरुद्रऋषिभ्यो नमः—शिरसि । ॐ ऋग्यजुः सामछन्दोभ्यो नमः—मुखे । ॐ प्राणाख्यदेवतायै नमः—हृदि । ॐ आं बीजाय नमः—गुह्यस्थाने । शक्त्यै नमः—पादयोः ।

ॐ कं खं गं घं ङं अं पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशात्मने आं हृदयाय नमः—हृदय में । ॐ चं छं जं झं ञं इं शब्दस्पर्शरूपरसगन्धात्मने ईं शिरसे स्वाहा—शिर में । ॐ टं ठं डं ढं णं उं श्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वा घ्राणात्मने ऊं शिखायै वषट्—शिखा में । ॐ तं थं दं धं नं एं वाक्पाणिपादपायूपस्थात्मने, ऐं कवचाय हुम्—कवच में । ॐ पं फं बं भं मं ॐ वचनादानविहरणोत्सर्गानन्दात्मने ॐ नेत्रत्रयाय वौषट्—नेत्रों में । ॐ अं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं मनोबुद्ध्यहङ्कार चित्तात्मने अः अस्त्राय फट्—अस्त्र में ।

इस प्रकार से आत्मा और काली देवी की मूर्ति में न्यास करे, उपर्युक्त कर्म के पश्चात् देवी का स्पर्श कर जप करे—

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं सः देवस्य प्राणाः इह प्राणाः ।

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं सः देवस्य जीव इह स्थितः ॥

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं सः देवस्य सर्वेन्द्रियाणि ।

ॐ ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं सः देवस्य वाङ्मनश्चक्षुः श्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणा इहागत्य स्वस्तये सुखं चिरं तिष्ठतु स्वाहा ।

तत्पश्चात् आचार्य निम्न सूक्त का जप करके अर्जित हृदय में अंगूठे से स्पर्श कर जप करे—

ध्रुवा द्यौ र्ध्रुवा पृथिवि ध्रुवासः पर्वतो इमे । ध्रुवं विश्वमिदं जगद् ध्रुवो राजा विशामयम् ।

ध्रुवं ते राजा वरुणो ध्रुवं देवो बृहस्पतिः। ध्रुवं तं इन्द्रश्चाग्निश्च राष्ट्रं धारयतां ध्रुवम् ॥

ध्रुवं ध्रुवेण हविषा ऽभि सोमं मृशामसि। अथो त इन्द्रः केवलीर्विशो बलिहृतस्करत् ॥

तत्पश्चात् निम्न श्लोक का उच्चारण करें—

अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु, अस्यै प्राणा क्षरन्तु च।
अस्यै देवत्वमर्चायै स्वाहा।

उपर्युक्त कर्म के पश्चात् प्रणव (ॐ) से देवी का सजीव ध्यान करे।

निम्न मन्त्र से देवी के सिर में हाथ रखकर तथा ध्यान कर उच्चारण करें।

विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतो मुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात्।
सम्बाहुभ्यान्धमति संपतत्रैर्द्यावा भूमि जनयन देवऽएकः ॥

इति प्राण प्रतिष्ठा

प्राण-प्रतिष्ठा के पश्चात् आचार्य पुरुष सूक्त के मन्त्रों का उच्चारण करते हुए कालिका देवी का उपस्थान करावें, उसके पश्चात् यजमान से आचार्य निम्न प्रार्थना करवाये—

स्वागतम् देव-देवेशि मद्भाग्यात्त्वमिहागता।
धर्मार्थ काम मोक्षार्थं स्थिरा भव शुभानने ॥

प्रार्थना कर्म की समाप्ति के पश्चात् आचार्य मंत्र का उच्चारण करते हुए यजमान से कालीदेवी के पैर से सिर तक का स्पर्श करावे—

प्रतिष्ठा सूक्तः

ॐ मनो जूतिर्जुषता माज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनो त्वरिष्टं यज्ञ॰ समिमन्दधातु। विश्वे देवा स इहमादयन्ता मो ३ म्प्रतिष्ठ।

प्रतिष्ठा सूक्त के पश्चात् निम्न पांच मन्त्रों का तीन बार उच्चारण करें—

१. इह वैधि माप ज्योष्ठाः पर्वत इवा विचाचलिः। इन्द्र इवेह ध्रुवस्तिष्ठे ॥

२. इम मिन्द्रो अदीधरद् ध्रुवं ध्रुवेण हविषा तस्मै सोमो अदिब्रवल तस्मा उ ब्रह्मणस्पतिः ॥

३. ध्रुवा द्यौ र्ध्रुवा पृथिवि ध्रुवासः पर्वतो इमे। ध्रुवं विश्वमिदं जगद् ध्रुवो राजा विशामयम्।

४. ध्रुवं ते राजा वरुणो ध्रुवं देवो बृहस्पतिः। ध्रुवं त इन्द्रश्चाग्निश्च राष्ट्र धारयतां ध्रुवम् ॥

५. ध्रुवं ध्रुवेण हविषाऽभि सोमं मृशामसि। अथोत इन्द्रः केवली विशोबलि हृतस्करत् ॥

उपर्युक्त कर्म की समाप्ति के पश्चात् आचार्य निम्न पौराणिक श्लोकों एवं इन वैदिक मन्त्रों का उच्चारण करते हुए, क्रमानुसार देवी को पाद्य—आचमन करावे तथा पञ्चामृत से स्नान करावे—

पाद्यम्— सुवर्ण पात्रेऽतितमां पवित्रे, भागीरथी वारि मयोपनीतम्।
सुरासुरै रर्चित पाद युग्मे, गृहाण पाद्यं विनिवेदितं ते ॥
एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पुरुषः।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि ॥

आचमनम्— समस्तदुःखौघ विनाश दक्षे।
सुगन्धितं फुल्लप्रशस्त पुष्पैः।
अयि। गृहाणाचमनं सुवन्द्ये,
निवेदनं भक्तियुतः करोमि।

पञ्चामृत स्नानम्— दुग्धेन दध्ना मधुना घृतेन,
संसाधितं शर्करया सुभक्त्या।
आलोक तृप्ती कृतलोक। देवि।
पञ्चामृतं स्वीकुरु लोक पूज्ये ॥

इसके पश्चात् समस्त पूजन करके हवन का कार्य समाप्त करके पूर्णाहुति देकर कार्य की समाप्ति करे।

ॐ पञ्चनद्यः सरस्वती मपियन्ति सस्रोतसः, सरस्वती तु पञ्चधा सोद्देशे ऽभवत्सरित् ॥

इमा आपः शिवतमः इस मन्त्र के द्वारा आचार्य देवी का अभिषेक करे। तत्पश्चात् विभिन्न सूक्तों का उच्चारण कर आचार्य देवी को स्नान करावे तथा वस्त्रादिक उपचारों से यजमान से देवी की मूर्ति का पूजन करावें।

अग्नि पूजनम्

आचार्य निम्न मन्त्र का उच्चारण कर यजमान से अग्नि का पूजन करावे—

ॐ अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोद्ध्यस्मज्जुहुराण मेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम ॥

तत्पश्चात् किसी बड़े पात्र में तिलों को ग्रहण कर दाहिने हाथ से घी भर कर स्रुव को ले दाहिने पैर की जांघ को मोड़ कर ब्रह्मा से स्पर्श कर निम्न मन्त्र से स्विष्टकृत संज्ञक आहुति देवे—

ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा। इदमग्नये स्विष्टकृते न मम।

उपर्युक्त कर्म की समाप्ति के पश्चात् अग्निदेव की प्रदक्षिणा कर अग्नि के पीछे पश्चिम देश में पूर्वाभिमुख बैठ कर स्रुव के द्वारा कुण्ड से भस्म लेकर निम्न नाम मन्त्रों से यजमान क्रमानुसार ललाट-गले दाहिने बाहु और हृदय से भस्म लगावें—

ॐ त्र्यायुषञ्जमदग्ने—ललाट में लगावें। ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषम्—गले में लगावें। ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषम्—दाहिने बाहु में लगावें। ॐ तन्नोऽस्तु त्र्यायुषम्—हृदय में लगावें।

तत्पश्चात् आचार्य होम कर्म को समाप्त करावें।

आचार्य निम्न श्लोक का उच्चारण कर यजमान से विसर्जन करावे—

गच्छ-गच्छ सुर श्रेष्ठ स्वस्थाने परमेश्वर।
यत्र ब्रह्मादयः देवास्तत्र गच्छ हुताशन ॥

विसर्जन के पश्चात् आचार्य यजमान से गोदान करावे।

यजामन आचार्य को दक्षिणा अलंकार तथा स्वर्णादि देने से पूर्व निम्न संकल्प करें—

कृतस्य कालिकायाः अचल प्रतिष्ठा कर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं तत्सम्पूर्ण फलप्राप्त्यर्थं च आचार्यादिभ्यो ऋत्विग्भ्यः दक्षिणां विभज्य दातुमहमुत्सृजे ॥

दक्षिणा के पश्चात् ब्राह्मण भोजन करवाएं।

ब्राह्मण भोजन के पश्चात् दीनों अनाथों के लिए भूरि दक्षिणा दे। इसके पश्चात् यजमान अपने सम्बन्धियों एवं इष्ट मित्रों के साथ भोजन करें।

इति कालिका प्रतिष्ठा समाप्त ॥

जीर्णोद्धार प्रतिमा विधि

अग्नि पुराण में कहा है—विधि से जीर्ण-आदि लिंगों का उद्धार करें। वज्रादि से हत, लक्षण से रहित, टूटे हुए, अंगहीन, फूटे हुए, चाण्डाल आदि से स्पर्शित प्रतिमाओं को त्याग देना चाहिए। लक्षण—वाणादि के भ्रम से विधिपूर्वक स्थापित किया हो परन्तु लक्षणों से रहित हो। भग्न—अनेक टुकड़ों में बिखरा हुआ। वज्रहतम्—बिजली से ताडित। संपुट—उल्टा, टेढ़ा। स्फुटित—एकदेश जिसका टूट गया हो। व्यंग—पिण्डिका और नाली से रहित। किसी के द्वारा उखाड़ दिया गया हो, स्वयं हिल गया हो, स्वयं गिर पड़ा हो उसका पुनः संस्कार करना चाहिये। प्रासाद, गोपुर मण्डप आदि के गिरने से उसी के आकार का उन्हीं द्रव्यों से उसी प्रमाण से लिंग या प्रतिमा स्थापित करा देवें।

तिथि, नक्षत्र, बार आदि का उद्धार के लिये विचार न करे। विद्वान जीर्ण का उद्धार करे, जो अजीर्ण नहीं है उसकी रक्षा करे। जीर्ण के धारण में दोष है और अजीर्ण के चालन में दोष हैं। सौ आहुति देकर स्थापन करे और एक हज़ार आहुति देकर चालन करे। विद्वान पुरुष वैदिक विधान से चलार्चा प्रतिष्ठा प्रकार से दूषित या विधिपूर्वक उत्थापित अचललिंग या मूर्ति को स्थापित करें। पहले के आसन को त्याग कर उसी मन्दिर में दूसरे आसन पर वैदिक विधान से पुनः स्थापित करें।

आचार्य पूजित जीर्ण मूर्ति को सवारी में चढ़ाकर वस्त्र आदि से ढक कर शंख, दुन्दुभि के घोष से मंगल गीत आदि के साथ गहरे जल में प्रक्षेप कर दें।

विष्णु भक्तों को शुद्ध भोजन करावे, तीन रात, पांच रात या सात रात का उत्सव करें। जीर्ण संस्कार कार्य में संशय नहीं करना चाहिये। शिवलिंग में "व्यापकेश्वराय नमः" इस मंत्र से अंग न्यास करे। शिव पूजन कर अभिषेक करें। तदनन्तर सौ या एक हज़ार आहुतियां दें। तदनन्तर बलि दे।

अथ जीर्णोद्धार विधि

ततो यजमानः शुभदिने प्रासादस्योत्तरैशान्यां वा पश्चिम-द्वारैक तोरणं मण्डपं विधाय तन्मध्ये चतुरस्त्रां वेदीं तन्नैर्ऋत्ये वास्तुवेदीं उत्तरे हवनार्थं स्थण्डिलं च कृत्वा, आचम्य, प्राणानायम्य हस्ते अक्षतपुष्पाणि गृहीत्वा आनोभद्द्रादीन् मंगलमन्त्रान् पठेत्। देश कालौ संकीर्त्य अमुक गोत्रः अमुक शर्माऽहं ईश्वर-प्रीतिकामो जीर्णादि दोष दुष्टलिंगस्य (प्रतिमायाःवा) जीर्णोद्धारं करिष्ये। तदंगत्वेन स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृका पूजनं वसोर्द्धारा पूजनं

आयुष्यमन्त्र जपं नान्दीश्राद्ध आचार्यादिवरणं च करिष्ये। तत्रादौ निर्विघ्नता सिद्धयर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजनमहं करिष्ये। गणेशादिकं सम्पूज्य मण्डपे दिग्रक्षणं प्रोक्षणं वास्तुपूजनं सर्वतोभद्रादि देवता पूजनं च कृत्वा पीठादौ प्रणवेन आसनपूजनं कृत्वा—ॐ व्यापकेश्वराय एह्येहि नमः। व्यापकेश्वराय हृदयाय नमः, ॐ व्यापकेश्वराय शिरसे स्वाहा।

ॐ व्यापकेश्वराय शिखायै वषट्। ॐ व्यापकेश्वराय कवचाय हुम्। ॐ व्यापकेश्वराय नेत्रत्रयाय वौषट्। व्यापकेश्वराय अस्त्राय फट् इति मन्त्रैः शिवं देवं वा पूजयेत्।

अन्यदेवतोद्धारे मूलमन्त्रेण अर्चयेत्। ॐ अघोरेभ्योऽथ० इति मन्त्रमष्टोत्तरशतं जप्त्वा ततोऽग्निं संस्थाप्य आज्यभागान्तं हुत्वा, देवगायत्रीमन्त्रेण वा तिलाहुतिः हुत्वा मण्डलदेवता होमं कृत्वा इन्द्रादिभ्यो बलिं दत्त्वा देव प्रणवेन सम्पूज्य प्रार्थयेत। जीर्णभग्नमिदं देवं सर्वदोषावहं नृणाम्। अस्योद्धारे कृते शान्तिः शास्त्रेऽस्मिन् कथिता त्वया। जीर्णोद्धारविधानं च नृपराष्ट्र विवर्द्धनम्।

तदत्राधिष्ठितं देवं प्रोद्धरामि तवाज्ञया। इति देवस्य जीर्ण दोषं श्रावयित्वा—पुनः क्षीराज्य मधु दूर्वा-समिद्भिर्देवमन्त्रेण अष्टोत्तरशतं हुत्वा देवं प्रार्थयेत्। लिंगरूपं समागत्य येनेदं समधिष्ठितम्। या यास्त्वं सम्मितं स्थानं सन्त्याज्यैव शिवाज्ञया ॥१ ॥

अत्र स्थाने च या विद्या सर्वविद्येश्वरै र्युता। शिवेन सह संतिष्ठेति-मन्त्रजलेन अभिषिच्य विसर्जयेत्। लिंगमादाय रथमारोप्य-वामदेवाय नमः इति नद्यादौ क्षिपेत। प्रतिमां तु प्रणवेन क्षिपेत।

प्रासादे जीर्णे-प्रासादं मन्त्रवत्खड्गेन छुरिकया संयोज्य नूतनप्रासाद सिद्धिपर्यन्तं खड्गादिकमर्चयित्वा प्रासादे मन्त्रान् यथास्थानं प्रतिष्ठा काले न्यस्य यजमानमभिषिच्य, ततो लिंगं प्रतिमां वा तत्रैव विधिना संस्थाप्य—ॐ ध्रुवाद्यौ, र्ध्रुवा पृथिवी ध्रुवासः पर्वतो इमे ॥ ध्रुवं विश्वमिदं जगद् ध्रुवो राजा विशामयम्। ध्रुवं ते राजावरुणो ध्रुवं देवोवृहस्पतिः ध्रुवं ते इन्द्रश्चाग्निश्च राष्ट्रं

धारयतां ध्रुवम्। ध्रुवं ध्रुवेण हविष्याभिसोमं मृशां मसि। अघोर इन्द्रः केवलीर्विशो बलिहृतस्करत ॥ इति ध्रुवसूक्तं पठित्वा स्थिरीकृत्य यथोपचारैः संपूज्य प्रार्थयेत् ॥

भगवन् भूतभव्येश लोकनाथ जगत्पते ।
जीर्णलिंगसमुद्धारः कृतस्य चाज्ञया मया ॥१ ॥
अग्निनादारुजं दग्धं क्षिप्तं शैलादिके जले ।
प्रायश्चित्ताय देवेश अघोरास्त्रेणतर्पितम् ॥२ ॥
ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि यथोक्तं च कृतं यदि ।
तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादेन परमेश्वर ॥३ ॥
कर्तुराज्ञः प्रजानां च शान्तिर्भवतु सर्वदा ।
अस्माकं शिल्पिनां चैव सुप्रीतो भव सर्वदा ॥४ ॥

इति नत्वा पूजास्विष्ट नवाहुतीर्बलिपूर्णाहुत्यन्तकर्म समाप्य आचार्यादिभ्यो ब्राह्मणेभ्यो दक्षिणां दत्वा देवान् विसृज्य ब्राह्मणान् भोजयेत् ।

इति जीर्णोद्धार विधिः ॥

कुछ विशिष्ट निर्णय

१. सर्वतोभद्रमण्डल आदि के मध्य में कलश स्थापन विचार—देव आदि प्रतिष्ठा में प्रतिष्ठामयूख आदि महानिबन्धों में सर्वतोभद्रमण्डल पर कलश स्थापन करना अभीष्ट नहीं । मात्र लोकाचार है, न करने पर किसी प्रकार की क्षति नहीं हैं । देव को शय्या से जाग्रत करने पर सर्वतोंभद्र पर स्थापित करने का विधान है, वहां देव प्रतिमा की स्थापना न करके कलश पर सुवर्ण प्रतिमा के स्थापन की विधि है । इस उद्देश्य से स्थापित होने वाले देवता की सुवर्ण प्रतिमाओं के पूजन के लिये कलश की स्थापना आवश्यक होगी ।

२. योगिनी पूजन विचार—ग्रन्थान्तर में कहा गया है—अकृत्वा योगिनीपूजां यः करोति तदाधमः । जपं होमं तथा दानं तत्सर्वं निष्फलं भवेत् । भस्मीभवति तत्सर्वं योगिनीपूजनं विना । तस्मात्सर्व प्रयत्नेन योगिनीं पूजयेत मखे ॥

३. ग्रह होम में द्रव्यों का विाचर—ग्रह होम में अर्कादि समिधा, तिल-चरु और घृत ये चारों हवनीय द्रव्य हैं । सम्प्रदायों वाले इन चारों द्रव्यों से ही हवन करते हैं ।

४. भिन्न-भिन्न कुण्डीपक्ष में विचार—अष्टोत्तर-शत पक्ष में पांचों कुण्डों में इक्कीस आवृत्ति से हवन होता है । वाइस आवृत्ति में आचार्य आदि कुण्डत्रय में ही नवग्रहों का

होम होता है। पश्चिम और उत्तर कुण्डों में नहीं होता। ग्रहों के अष्टोत्तरशत-आहुति पक्ष में अधिदेवता और प्रत्यधिदेवताओं के लिए अट्ठाइस-अट्ठाइस संख्या से होम होता है। इससे पांचों कुण्डों में पांच आवृत्तियों में हवन कर छठी आवृत्ति में आचार्य आदि कुण्डत्रय में ही हवन करे। न कि पश्चिमोत्तर कुण्डत्रय में।

नवकुण्डी में अष्टाहुति पक्ष नहीं है। वहां पर नौ कुण्डों में तीन-तीन होता रहते हैं। सूर्यादि नवग्रहों के लिये प्रतिदेवता प्रथमावृत्ति में, द्वितीयावृत्ति में, तृतीयावृत्ति में मन्त्रों से हवन करें। चतुर्थावृत्ति में आचार्य कुण्ड में ही तीन होतागण हवन करते हैं।

मत्स्य पुराण के वचन से नवकुण्डी पक्ष में बत्तीस ऋत्विज होते हैं। पंच कुण्डी पक्ष में सोलह, एक कुण्डी पक्ष में आठ ऋत्विज होते हैं। आचार्य आदि छः महाऋत्विज भिन्न होते हैं। नव कुण्डी पक्ष में आठ ब्रह्मा—आठ द्वारपाल (ऋत्विज) आठ जापक और आठ होता होते हैं। आचार्य कुण्ड में आचार्य ही होता है। पंच कुण्डी पक्ष में चार ब्रह्मा, चार द्वारपाल, चार जापक और चार होता होते हैं। एक कुण्डी पक्ष में चार द्वारपाल तथा चार जापक होते हैं, होता स्वयं आचार्य रहते हैं। आहुति पक्ष में अत्यधिक कुण्डों के कारण अनेक प्रकार की जटिलताएं पैदा रहती हैं। सुन्दर विधान एक कुण्डी पक्ष में ही उपयुक्त है।

सामग्री

१. अर्क, पलाश, खदिर, अपामार्ग, पीपल, औदुम्बर आदि की समिधा।

२. रत्न—वज्र, मौक्तिक, वैडूर्य, मंख, स्फटिक, पुष्पराग, इन्द्रनील और महानील—ये आठ रत्न हैं।

३. अष्टधातु—हरिताल, मनःशिला, अभ्रक, कृष्णांजन, माक्षिक, सीमा, सुवर्ण और गैरिक ये आठ धातुएं हैं।

४. वीजाष्टक—यव, मूंग, गेहूं, नीवार, श्यामाक, पीली सरसों और ब्रीहि ये आठ बीजाष्टक कहलाते हैं।

५. सुवर्णादि धातु—सोना, चांदी, तांबा, लोहा, कांसा, सीसा, पीतल और रांगा से आठ सुवर्ण धातुएं हैं।

६. सप्तमृत्तिका—हाथी, घोड़े के बान्धने वाले स्थान की मिट्टी, वल्मीक, संगम, नदी के किनारे की मिट्टी, वाराहखात और राजद्वार के स्थानों की मिट्टी।

७. सर्वौषधि—मुरा, मांसी, वच, कुण्ठ, शैलेय, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, सुंठी, चम्पक और मुस्ता ये सर्वौषधि की वस्तुएं हैं।

८. सप्तधान्य—ब्रीहि, यव, तिल, गोधूम, नीवार, श्यमाक, मूंग ये सात धान्य हैं।

९. प्रतिमा शय्या—सफेद वस्त्र, चामर, विचित्रवितान, तीन रेशमी दुपट्टे।

अन्य वस्तुएं—पुष्प की मालाएं, कुंकुम—रोली-केसर, कपूर, कस्तूरी, चन्दन, गुग्गुल, धूपपात्र, आर्तिपात्र, वेष्टा, पादुका, सीसा, बलिसामग्री, पायस, भोज्य, नैवेद्य, हवन के लिये घृत-तिल-यव-अक्षत, फल, आसन, सफेद ऊन का सूत्र, सफेद, लाल, पीला, नीला और काले वर्ण के रंग, कलश, पंचपल्लव, केले के स्तम्भ, दस पताका, दस ध्वजा, पताका एवं ध्वजा के लिये वांस के दण्ड। दूध, दही, मक्खन, शुद्ध खाण्ड-मधुपर्क, पंचगव्य। सोने की शलाका। स्थापन कलश १६, द्वारकलश आठ, लोकपालकलश, देवी के चार कलश, मण्डलकलश, निद्राकलश, स्नान के लिये कलश, सकोरे आदि।

मौली, धूप, अगरबत्ती, अवीर, हल्दी पीसी हुई, मेहन्दी, यज्ञोपवीत दो कोडी, चावल, सुपारी आधा किलो। पानपत्र, काटी हुई सुपारी, लौंग, इलायची, पंचमेवा, अतर की शीशी, गोबर, गोमूत्र, कच्चा सूत, तुलसी पत्र, विल्वपत्र, तिल, जौं, शक्कर, काठ की चौकी, थाली उड़द-चावल उबले हुए। केवड़ा जल, अन्नाधिवास के लिये। लोहे की कील ८, पूर्णपात्र, कौल, वरणी के वस्त्र, धोती-तौलिया आदि।

कांसे की थाली, मीठा तेल, छाया पात्र, कांसे का कटोरा बड़ा, थाल दो देवता के लिये वस्त्र-पीताम्बर दो दुपट्टा, यदि घृतादिवास करना हो तो घृत, वस्त्रादि वास करना हो तो कपड़ा, फलाधिवास करना हो तो फल, गुग्गल, चन्दोवा, शय्याधिवास के लिए शय्या (छोटा पलंग, रजाई, तलाई, चादर, सिरहाना, छाता, छड़ी)।

वासुदेव प्रतिष्ठायां संक्षिप्त चतुर्थी कर्म

देशकालौ संकीर्त्य प्रतिष्ठांगत्वेन विहिंत अमुकदेवस्य चतुर्थीकर्म करिष्ये इति संकल्प्य प्रथमेऽहनि कुंकुमेन देवं लेपयित्वा पूजयेत। द्वितीय दिनें हरिद्रां सिद्धार्थ चूर्णे। तृतीयदिने पिष्टसिद्ध चन्दन चूर्णेन। चतुर्थदिने मनः शिला प्रिंयंगु चूर्णेन। पंचमदिने कृष्णांजनं तिलचूर्णेन। षष्ठे—रक्त चन्दन पद्म केसर चूर्णेन। सप्तमे गोरोचन, नागकेसर चूर्णेन। सर्व लेपन द्रव्ये घृत-मिश्रणं कर्तव्यम्। ततः चन्दन-पुष्प-धूप-दीप-नैवेद्यं समर्प्य आचार्यः स्वकुण्ड देवमन्त्रेण अष्टविंशतिवारं आज्यं हुत्वा देवसमीपं आगत्य—ॐ मुञ्चन्तु मा शपथ्यादथो वरुण्यादुत। अथो यमस्य षड् बीशात सर्वस्माद् देव किल्विषात्-इति कौतुक-सूत्रं प्रतिमुच्य (वध्वा) पुनः पूजयेत्॥

शिव प्रतिष्ठायां चतुर्थी कर्म प्रयोगः

यस्मिन् दिने देवः स्थापितः ततो द्वितीये चतुर्थे वाऽहनि कर्ता-शुद्ध पुण्य तिथौ अमुकदेव प्रतिष्ठांगभूतं चतुर्थीकर्म करिष्ये। अथ प्राग्वत् एव आचार्यो मूर्तियजमान द्वारपालादिभिः सह अविसर्जित मण्डपं पश्चिमद्वारेण प्रविश्य वेद्याः प्रादक्षिण्ये गत्वा स्वकुण्डे शिव दैवत्यं चरुं श्रपयित्वा पञ्चभिः ब्राह्म मन्त्रैः पञ्चभिः अंगमन्त्रैश्च प्रति मन्त्रं शतं शतं इति सहस्राहुतीस्तेनैव चरुणा अकृतविसर्जनि कुण्डे जुहुयात्। तत्र ब्रह्ममन्त्राः पंच।

१. ईशानः सर्व भूतानाम्।

२. ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्॥

३. ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोर तरेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्र रूपेभ्यः।

४. ॐ वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः काल-विकरणाय नमो बलविकरणाय नमो वलाय नमो बल प्रमथनाय नमः सर्वभूत दमनाय नमो मनोन्मनाय नमः॥

५. ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्यो जाताय वै नमो नमः। भवे भवे नातिभवे भवस्व मां भवोद् भवाय नमः॥

अथांग मन्त्राः पञ्चः—

१. ॐ अद्भ्यः संभृतः पृथिव्यै रसाच्च विश्वकर्मणः समवर्तताधि। तस्य त्वष्टा विद्धद्रूपमेति तत्पुरुषस्य विश्वमाजानमग्रे।

२. वेदाहमेतं पुरुषं महान्तं आदित्यवर्णं तमसः परस्तात्। तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय॥

३. ॐ प्रजापतिरश्चरति गर्भे अन्तर जायमानो बहुधा विजायते। तस्य धीराः परिजानन्ति योनिम्। मरीचीनां पदमिच्छन्ति वेधसः॥

४. यो देवेभ्य आतपति यो देवानां पुरोहतिः। पूर्वो यो देवेभ्यो जातः नमो रुचाय ब्राह्मणे।

५. ॐ रुचं ब्राह्मं जनयन्त-देवा अग्रे तदब्रुवन्। यस्त्वेमं ब्राह्मणो विद्यात्। तस्य देवा असन्वशे॥

ततः ऋत्विजोऽपि घृतेन तिलैर्वा स्व-स्व कुण्डेषु पूर्वोक्तैः दशभिः मन्त्रैः प्रतिमन्त्र दश दश इति शतं हुत्वा ॐ अम्बे अम्बिके—इति मन्त्रेण दश दशवारम् जुहुयुः॥

अथ अन्यदेवतायाः चतुर्थी कर्म प्रयोगः

यो देवः स्थापितो भवति तद् दैवत्यं चरुं श्रपयित्वा तद् देव मन्त्रेण तद् देवपत्नीं लिंगमन्त्रेण च प्रति मन्त्रं पञ्चशतं सहस्रहोमं कुर्यादाचार्यः । एवमृत्विजोऽपि स्व-स्व कुण्डे देवमन्त्र-पत्नीमन्त्राभ्यां शतं शतं जुहुयुः । अत्र प्रतिमन्त्रं पञ्चशदाहुतयः । देवमन्त्राः—ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे—इत्यादयः । पत्नीमन्त्रास्तु—श्रीश्चते लक्ष्मीश्च—इत्यादयः । इति शिवातिरिक्त देवता विषयकं चतुर्थी कर्म ।

कुछ विचारणीय बातें

१. देवताओं के प्रीत्यर्थ प्रज्वलित दीप को कभी भी बुझाना नहीं चाहिये ।

२. शालग्राम एवं वाणलिंग के पूजन करने के समय आवाहन तथा विसर्जन नहीं होता ।

३. जो मूर्ति प्रतिष्ठित हो चुकी है उसका आवाहन तथा विसर्जन नहीं होता ।

४. समस्त देवी-देवताओं का षोडशोपचार पूजन पुरुषसूक्त से हो सकता हैं ।

५. कमल का पुष्प पांच रात तक, विल्वपत्र दस रात तक, तुलसीपत्र ग्यारह रात्रि तक पड़े रहने पर प्रक्षालन करके पूजन में प्रयोग किया जा सकता है । शिवलिंग पर विल्वपत्र उल्टा-सीधा, छिन्न-भिन्न एवं सूखे पत्र का चूर्ण भी चढ़ाया जा सकता है ।

६. पञ्चामृत स्नान में यदि सभी वस्तुएं उपलब्ध न हो सकें तो मात्र दुग्ध स्नान से ही पञ्चामृत का फल मिल जाता है ।

७. ज्योति से ज्योति नहीं जलानी चाहिये ।

८. अक्षत यव को भी कहते हैं, शालग्राम प्रतिमा पर यव चढ़ाने चाहियें । अर्घ्य पात्र में यव का ही प्रयोग होना चाहिए ।

९. सोमवती अमावस्या, रविवार युक्त सप्तमी, भौम वार युक्त चतुर्थी, गुरुवार युक्त अष्टमी के दिन किया गया पुण्य अक्षत हो जाता है ।

१०. होलिका के पर्व पर चतुर्दशी, पूर्णिमा एवं प्रतिपदा के तीनों दिनों में तथा दीपावली-चतुर्दशी, अमावस्या एवं प्रतिपदा के दिनों में, कृष्ण जन्माष्टमी के समय, सप्तमी, अष्टमी एवं नवमी के दिनों में तीनों सन्ध्याओं के समय में निरन्तर जप-पाठ करने से मन्त्रसिद्धि हो जाती है ।

CREATED BY : CK GRAPHICS 94173-784

भारतीय संस्कृत भवन

जालन्धर शहर-8